

Singhi Fain Series No. 2

युरातम अवध संग्रह

Chine attent

Charles to

we also

जन्म नाजिन जिल्ला

(1432)

Indira Gandhi National
Centre for the Arts

यशोधवल	48
यशोभद्र [सूरि]	40
यशोगज	96
यशोवर्मा	५८-६१, ७४, ७६
यशोवीर	909, 902
युगांदिदेव [जिन]	४५, ६६, ८६,
3	904, 900
युधिष्टिर	२२, ८२
युकाविहार	39
योगराज	98, 94
A STATE OF THE PARTY OF THE PAR	£, 90, 92, 906
योगीश्वरि [भट्टारिका]-	प्रासाद १४
₹	
रघु [कुल, राजा]	७३, ८६
रङ्क [वणिक्]	900, 909
रणसिह	998
रति	80
रतिरमण	38
रत्नवरीक्षा ग्रन्थ	49
रत्नप्रभ [पण्डित]	६७
रत्नमाल [पुर]	905
रत्नशेखर	908, 990
रलाहर [पण्डित]	50
रतादित्य	94
-राज [राजपुत्र, क्षत्रिय]	94
राजघरट [बिरुद]	6.8
राजपितामह [,,]	60,69
राजमदनशङ्कर [,,]	२०
राजविडम्बन [नाटक]	39
राजशेखर [कवि, अकार	वजलद] ३०
राजिराज (?)	95
राम [दाशरथी]	98, 28, 44, 63
रामचन्द्र [कवि, प्रवन्ध	शतकती ६३, ६४
	<i>د</i> ع, ۹۷
रामेश्वर-प्रासाद	89
रावण [लङ्कापति]	२४, २८
राष्ट्रकृट [वंश]	9.6
रुद	8, 36, 90
रुद्रमहाकाल-प्रासाद	§ 9
मनावित्र)	
रुहाइच [मंत्री]	२१, २२, २३
रेवा [नदी]	9, 44
रैवत } [पर्वत]	६4, ८७, १०८,
रैत्रतक } [पवत]	1 1, 00, 100,

	922, 923
रोहक [महामात्य]	२०
रोहण, रोहणाचल	9, 2
ल	
लंक [गढ़] (लड्डा)	२३, ५८
लक्खड (लाखाक))	99
लक्ष ,,	94, 98
लक्षराज ,,	26
लक्ष्मणसेन	992
लक्ष्मी	३५, १०४
लक्ष्मी वति	920
लघ (ख) णावती [पुरी]	
लघु भैरवानन्द [योगी]	६० (हि०)
लघु वाग्भट [वैद्य]	933
लङ्का [नगरी] १३,३	२, ३९, ६६, ७२
लच्छ (लक्ष्मी)	४५
छ छितस र	900
छवणप्रसाद [राजा]	98, 96, 900,
	903, 908
लाखाक [फुलउत्र]	96, 98
लाछि [छिम्पिका]	५६
लाट [देश]	३१, ९५
लादेश्वर	9 ६
लीला [ठकुर, राजवैदा]	44
लीलादेवी	94
ॡणिग [मंत्री]	900, 909
छ्णिगवसहि [प्रासाद]	909
व	
A STATE OF THE STA	
वटपद [ग्राम]	90
7	£4
वढीयार [देश]	92
वनराज	
वयज्ञहादेव [तपस्वभूपति	
वयजलदेव [प्रतीहार]	30
वररुचि [पण्डित]	३, ४७
वराहमिहिर [पण्डित]	996, 998
वर्द्धमानपुर	६४, ८६, १२५
वर्द्धमानप्रतिमा	908
वर्द्धमानसूरि	३६, १०९
वडभीपुर	900-9, 977
वलमी भंग	909
वलभराज	२०

	बस्तुपाल [महामाला] ९	
		१०३, १०५
	बाग्भट [मंत्री]	७९, ८६, ८७
		65-68
	,, (लघु, बृहत्) [वै	
	,, [वैद्यक ग्रन्थ]	929
	वाणारसी [नगरी]	२०, ५०, ७४,
		८९, ११४
-	गदिवेतालीय [विरुद]	६६
	वामराशि [विप्र]	89
	वायटीय [गच्छ]	909
-	वायटीय जिनायतन	५६
-	वाराही ग्राम	৬ 9
the same in	वाराहीय ब्रूच	७३
	वाराही संहिता [ग्रंथ]	996
1	वालाक [देश]	৩৭
1	वाल्मीकि [ऋषि]	४२
-	वासुकि [नागराज]	998, 920
1	वासुदेव	43
-	विक (क) मकाल	94, 908
1		२, ४, ६, ७, ९
-	विक्रमार्क १,५,२७	, ८२, १०६, १२१
	विक्रमादिस	3,6
	विक्रमार्क संवत्सर	93
-	विग्रहराज	90
	विचार चतुर्भुख [विहद]	68
	विजयसेन सूरि	88, 908
	विजया [पण्डिता]	8.3
	विदिशा [नगरी]	93
-	विद्याधर [मंत्री]	993, 998
	विद्यापति [महाकवि]	40
-	विनायक [गणपति]	36
-	विनीता [नगरी]	89
-	विभीषण	५८, ७३
	विभलगिरि	رة, ٩٥٥ د د , ٩٥٥
	विमलवसहिका	909
	विमलवाहन	63
	विरञ्जि विश्व विशेष	995
	विरहक [बृक्ष विशेष] विशाला [नगरी]	60
	विशोपक [देश?]	.3 €
	CONTRACTOR OF THE PARTY OF THE	43
	বিশ্বন্ত :	100
		॰ (डि॰), ८२
	विश्वेश्वर	- 68

Indira Gandhi National Centre for the Arts

विष्णु	६३, ८५
वीतरागस्तव [प्रनथ]	८६, १२८
	86,900,903-4
वीरमती [आर्या, गणि	नी] १२
वीसलदेव	908
बृद्धवादी [स्रि]	(टि॰) ६-७
वृषभदेव-प्रासाद	63
वैदिक [धर्म]	85
वैरसिंह	94
वैराग्यशतक [प्रन्थ]	929
व्यास [ऋषि]	85
इ	1
शकटाल [मंत्री]	998
शकुनिका विहार	८६-८८, 900
शकावतार [तीर्थ]	89.
शङ्कर	8,80
शङ्ख [नृपति]	923
शङ्ख [महासाधनिक]	907, 903
शङ्खपुर	923
शची	908
शतानन्दपुर	996
शत्रुक्तय [तीर्थ]	५७, ६५, ८४, ८६,
The second secon	, 93, 903, 904
शरभु	998
शाकटायन [व्याकरण]	
शाकम्भरी [पुरी]	94, 90, 04
शातवाहन [राजा]	998, 980
शान्तिस्रि	44
शारदा [देवी]	88
शासनदेवता	920
शिखण्डि	99
शिप्रा [नदी]	908
शिवि [राजा]	903
शिलादित्य	900, 900, 909
शिव ७,	90, 82, ६३, ९६
शिवनिर्मात्य	98
शिवपत्तन	908
शिवपुराण	90,04
शिवभक्त	48
शिवभवन	42
शिवलिङ	994
शिवा	908
शिञ्जपालवध [काव्य]	३५
शीता [पण्डिता]	83

92, 93	सर्वज्ञपुत
ĘĘ	सहस्रवि
99	
36	संयोगि
48	साङ्काइय
69	साखड
63	साङ्गण
909	सातवाह
, ३७, ४२	सातवाह
85	सातवाह
908	सान्तू म
909	सान्त्व
93	साभ्रम
92	सामन्त
Ę	सामल
68	सालाहा
990	साछिग
990	
३६, १०९	साहसा
	सिंहपुर
	सिहभट
Ęv	सितास्व
40	
, 99 900	-
	सिताम्ब
, 99 900	सिता३ब
, ९९ १००	सिताम्ब सिद्ध च
, ९९ १०० ६७ ७१	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध नृ
, ९९ १००	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध नृ सिद्धपुर
, ९९ १०० ६७ ७१ ६५	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध नृ मिद्धपुर सिद्धभत
, ९९ १०० ६७ ७१ ६५	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध नृ सिद्धपुर
98 900	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध नृ सिद्ध पुर सिद्ध भत
99 900 45 59 45 907 86	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध नृ मिद्धपुर सिद्धभत सिद्धराज
99900 49 49 49 49 49 49 49 49	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध शत सिद्ध शत सिद्ध से
99 900 49 49 907 49 900 49	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध प्र सिद्ध प्र सिद्ध प्र सिद्ध से सिद्ध से सिद्ध से सिद्ध से
99 900 49 907 49 89 89 89 89 89 89 89 89 89 89 89 89 89	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध राज सिद्ध रोज सिद्ध होम सिद्ध होम
99 900 44 907 44 900 48, 94, 99, 98,	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध च सिद्ध प्र सिद्ध पर सिद्ध पर सिद्ध होम सिद्ध होम सिन्धु देव सिन्धु पर्व
903 44 903 44 900 48, 94, 96, 999	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर
903 44 903 24 20 44 900 48, 94, 98, 999	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध रोड सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर
99 900 44 907 44 900 48, 94, 99, 98, 99, 98,	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध भत सिद्ध सेन सिद्ध सेन सिद्ध पेति सिन्धु पेति सिन्धु पेति सिन्धु पेति सिन्धु पेति सिन्धु पेति
99 900 49 49 903 26 20 49 900 48, 94, 97, 99 97, 99 97, 99 97, 99 97, 99	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पाउ सिद्ध पाउ सिद्ध पाउ सिद्ध पाउ सिन्धु पाउ सिन्धु पाउ सिन्धु पाउ सिन्धु पाउ सिन्धु पाउ
९९ १०० ६७ १०० ६५ १०० ६४, ७६, ९१, ९४, १६, ११७ १२० ४५, ८९	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध भत सिद्ध रोज सिद्ध रोज सिन्ध पुर सिन्ध पुर सिन्य पुर सिन्ध पुर सिन्य पुर स सिन्य पुर सिन्य पुर सिन्य पुर स सिन्य सिन्य पुर स स् स् स् स् स् स स् स् स् स् स् स् स्
903 64 903 64 900 64, 900 64, 900 900 900 900 900	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिन्धु सिन्धु पुर सिन्धु सिन्धु सिन्य सिन्धु सिन्
900 200 200 200 200 200 200 200 200 200	सिताम्ब सिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिन्धु पुर सिन्य सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु पुर सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्धु पुर सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्धु सिन्
903 64 903 64 900 64, 900 64, 900 900 900 900 900	सिताम्ब मिद्ध च सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिद्ध पुर सिन्धु सिन्धु पुर सिन्धु सिन्धु सिन्य सिन्धु सिन्
	९९ १८ ५४ १०१ १०१ १०१ १०१ १०१ १०१ १०१ १०१ १०१ १०

	सर्वज्ञपुत्र	v
	सहस्रालिङ्ग [सरोवर]	48, 40, 59,
		६२, ६४, ७४
	संयोगसिद्धि सिप्रा	69
	साङ्काइय [गोत्र]	3 €
	साखड [भाह्याड]	93
	साङ्गण	36
	सातवाहन [राजा]	90
	सातवाहन [संप्रह्गाथाकोः	श] १०
	सातवाहन कथा	90
	सान्त् मंत्री	५६-५८, ७५
	सान्त्वसहिका	40
	साभ्रमती [नदी]	9
	सामन्तिसंह	94, 95
	सामल	45
	सालाहण (शालिवाहन)	99
	सालिगत्रसहिका	99
	साहसाङ्क [नृपति]	98, 28, 994
	सिंहपुर	09
	सिंहभट	, 29
	सिताम्बर ४४, ४९,	६७, ८२, १०७,
		922, 923
200	सिताम्बरदर्शन	903
	सिताम्बरशासन	44
	सिद्ध चकवर्ती (जियसि	₹, 99¥
	सिद्ध नृपति } सिद्धर	[ज] ९१
	मिद्धपुर	59
	सिद्धभर्ता (सिद्धराज)	63
	सिद्धराज (जयसिंह)	५५, ५७-६२,
	६४-६७, ६९	5-00, 09, 99
	सिद्धसेन [सूरि]	9, 6
	सिद्धहेम [व्याकरण]	ξ°, ξ9
	सिद्धाधिप [सिद्धराज]	30,00
	सिन्धु देश	33
	सिन्धुपंति	७६
	सिन्धुराज (सीन्धल)	(टि॰) २१
	सिया [नदी]	929
	सिवभवण (शिवभवन)	38
	सीन्यल (सिन्धुराज)	२१, २२
-	सीलण [कौतुकी]	. ७४, ९६
	सुधर्मा [देवसमा]	७२
	सुप्रतिष्ठान [नगर]	1 9
	सुभगा [ब्राह्मणी]	1906
	स्राताण	the same of the sa

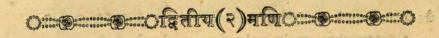
सुराष्ट्रा [देश]	६५, ८६, ९२
सुवर्णपुरुषसिद्धि [विद	ा] ५,९३,१०८
सुवत-प्रासाद	69,66
स्नळदेवी	44
सूहबदेवी	993-998
सेडउ [हस्ती]	49
सेडी [नदी]	920
सैन्धव [देश]	54
सैन्धवा [देवी]	66
सोमनाथ [महादेव]	94, 90, 40, 68
सोमेश्वर [महादेव]	98, 41, 40, 46,
٧٩, ۵	२, ८५, १०१, १२३
सोमेश्वर [किव]	902, 903, 904
सोमेश्वर [प्रधान]	990
सोमेश्वरपत्तन	98, 90, 08, 99
सोमेश्वर-प्रासाद	68

सोमेश्वरयात्रा ५८, ६५,	906, 923
सोलाक [बइकार]	60
सोलाक [मण्डलीकसत्रागार]	५६, ९४
सोहड [मालवन्यति]	90
सौगत [मत]	87, 900
सौगतमठ	900
सौराष्ट्र [देश, मण्डल]	१६, ७६, ९५
सौराष्ट्र घाट	93
स्तम्भतीर्थ ६० (टि०), ७०	9, 39, 902
स्तम्भनक [प्राम]	900, 920
स्थूलिभद्रचरित्र	६० (रि०)
स्मृतिवाक्य	96
स्वर्गारोहण-प्रासाद	904
स्वायम्भु	43
ह	
हनुमान्	३६

हम्मीर	68
हर	36-80, 99
हरि	39,80
हरिपालदेव	७७
हरिभद्र सूरि	36
हर्ष [तृपति]	40
हारीत [ऋषि]	. 33
हिमालय [पर्वत]	२७
हेमखडु	84
हेमड सेवड	99
हेमचन्द्र सूरि] ५७, ५९	, ६०, ६१, ६४,
हेमसूरि } ६६, ६५	0-00,00,00-
	, 64, 60, 68,
52,	93, 90, 909,
	920, 926
हेमनिष्पत्ति [विद्या]	83
हैहय [वंश]	94



सिंघी जैन यन्थमाला





प्रबन्धचिन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्ध संग्रह

1432

Indira Gandhi Nation Centre for the Arts

सिंघी जैन ग्रन्थमाला

जैन आगमिक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, कथात्मक - इत्यादि विविधविषयगुनिफत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूर्जर, राजस्थानी आदि भाषानिबद्ध बहु उपयुक्त पुरातनवाद्मय तथा नवीन संशोधनात्मक साहित्यप्रकाशिनी जैन ग्रन्थावि ।

कलकत्तानिवासी खर्गस्य श्रीमदु डालचन्दजी सिंघी की पुण्यस्मृतिनिमित्त तलापुत्र श्रीमान् बहादुरसिंहजी सिंघी कर्तृक

संस्थापित तथा प्रकाशित

सम्पादक तथा सञ्चालक

जिनविजय मुनि

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ, ज्ञान्तिनिकेतन

सम्मान्य सभासद-भाण्डारकर प्राच्यविद्या संशोधन मन्दिर पूना, तथा गूजरात साहित्यसभा अहमदाबाद; मृत पूर्वाचार्य-गूजरात पुरातत्त्वमन्दिर अहमदाबाद; जैन वाङ्मयाध्यापक विश्वभारती, शान्तिनिकेतन; संस्कृत, प्राकृत, पाली, प्राचीन गूर्जर आदि अनेकानेक ग्रंथ संशोधक-सम्पादक।

प्राप्तिस्थान

संचालक-सिंघी जैन ग्रन्थमाला

भारतीनिवास, नं०. १८, । सिंघीसदन, ४८, गरियाहाट रोड, अहमदाबाद (गूजरात). बालीगंज, कलकत्ता.

सर्वाधिकार संरक्षित.

वि० सं० १९८६

प्रवन्धिचन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्ध संग्रह

प्रवन्धिचिन्तामणिप्रन्थगत प्रवन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धोंका विशिष्ट संग्रह ।

0.89.912

सम्पादक

जिनविजय मुनि

E

मूल पाठ

विशेषनामानुक्रम-पद्मानुक्रमणिकादियुक्त

प्रकारान-कर्ता

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ

कलकता

प्रथमावृत्ति, एक सहस्र प्रतिः

[१९३६ किष्टाब्द

SINGHI JAINA SERIES

A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF MOST IMPORTANT CANONICAL, PHILOSOPHICAL,
HISTORICAL, LITERARY, NARRATIVE ETC. WORKS OF JAINA LITERATURE
IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRAMSA AND OLD VERNACULAR

Rare Book Collection

ACC No.: R-122

Apate: 24: 3:08

RESEARCH SCHOLARS.

FOUNDED AND PUBLISHED

BY

ŚRĪMĀN BAHĀDUR SINGHJĪ SINGHĪ OF CALCUTTA

IN MEMORY OF HIS LATE FATHER

ŚRĪ DALCANDJĪ SINGHĪ.

DATA ENTERED
Date 27 06 08

""GENERAL EDITOR

SANS 089,912 PUR

JINAVIJAYA MUNI

ADHISTHĀTĀ: SINGHĪ JAINA JNĀNAPĪTHA, SĀNTINĪKETAN.

HONORARY MEMBER OF THE BHANDARKAR ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE OF POONA AND GUJRAT SAHITYA SABHA OF AHMEDABAD; FORMERLY PRINCIPAL OF GUJRAT PURATATIVAMANDIR OF AHMEDABAD; EDITOR OF MANY SANSKRIT, PRAKRIT, PALI, APABHRAMSA, AND OLD GUJRATI WORKS.

NUMBER 2

TO BE HAD FROM

SANCĀLAKA, SINGHĪ JAINA GRANTHAMĀLĀ

BHARATINIVAS, ELLIS BRIDGE AHMEDABAD. (GUJRAT)

SIB

SINGHI SADAN, 48, GARIYAHAT ROAD, BALLYGUNGE, CALCUTTA

Founded 1

All rights reserved

[1931. A. D.

Indira Gandhi Nation

PURATANA PRABANDHA SANGRAHA.

A COLLECTION OF MANY OLD PRABANDHAS SIMILAR AND ANALOGOUS TO THE MATTER
IN THE PRABANDHACINTAMANI; INDICES OF THE VERSES AND PROPER
NAMES; A SHORT INTRODUCTION IN HINDI DESCRIBING
THE MSS. AND MATERIALS USED IN PREPARING
THIS PART, ALONG WITH PLATES.

BY

JINAVIJAYA MUNI

SINGHI PROFESSOR OF JAINA CULTURE AT VIS VABHARATI

SANTINIKETAN

ORIGINAL TEXT

- I. IN SANSKRIT AND PRAKRIT WITH INDICES OF THE VERSES AND PROPER NAMES.
 - IL AN INDEX OF PROPER NAMES OF PRABANDHACINTAMANI.

PUBLISHED BY

THE ADHISTHATA-SINGHT JAINA JNANAPITHA

First edition, One Thousand Copies.

[1936 A. D.

V. E. 1992 1

प्रवन्धचिन्तामणि ग्रन्थकी प्रस्तुत आवृत्तिका संकर्तन । इस ग्रन्थकां संकल्ज और प्रकाशन निम्न प्रकार, ५ मागोंमें, पूर्ण होंगा।

(१) प्रथम भाग. भिन्न भिन्न प्रतियोंके आधार पर संशोधित-विविध पाठान्तर समवेत-मूर्लंग्रन्थ; १ परिशिष्ट; मूलुग्रन्थ और परिशिष्टमें आये हुये संस्कृत, प्राकृत और अपभंश भाषामय पद्योंकी अकारादिकमानुसार स्वि; पाठ संशोधनके लिये काममें लाई गई पुरातन प्रतियोंका सचित्र वर्णन ।

(२) द्वितीय भाग. प्रवन्धिचन्तामणिगत प्रवन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धोंका संग्रह; पद्यानुक्रमसूचि; विशेष नामानुक्रम; संक्षिप्त प्रसावना और प्रवन्ध संग्रहोंकी मूल प्रतियोंका सचित्र परिचय।

- (३) तृतीय भाग. पहले और दूसरे भागका संपूर्ण हिंदी भाषान्तर।
- (४) चतुर्थ भाग. प्रबन्धिचन्तामणिवर्णित व्यक्तियोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले शिलालेख, ताम्रपत्र, पुस्तकप्रशस्ति आदि जितने
 समकालीन साधन और ऐतिहा प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनका एकत्र संग्रह और तत्परिचायक उपयुक्त
 विस्तृत विवेचन; प्राक्कालीन और पश्चात्कालीन अन्यान्य ग्रन्थोंमें उपलब्ध प्रमाणभूत प्रकरणों, उल्लेखों
 और अवतरणोंका संग्रह; कुछ शिलालेख, ताम्रपत्र और प्राचीन ताडपत्रोंके चित्र ।
 - (५) पञ्चम भाग. प्रबन्धचिन्तामणिय्रथित सब बातोंका विवेचन करनेवाली विस्तृत प्रसावना-जिसमें तत्कालीन ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, धामिंक और राजकीय परिस्थितिका सविशेष ऊहापोह और सिंहावलोकन किया जायगा। अनेक प्राचीन मंदिर, मूर्तियां इत्यादिके चित्र भी दिये जायँगे।

THE SCHEME OF THE WORK OF PRABANDHACINTAMANI

[The work will be completed in five parts.]

- Part I. A critical Edition of the original Text in Sanskrit with various readings based on the most reliable MSS.; An Appendix; An alphabetical Index of all Sanskrit, Prākrit and Apabhramśa verses occurring in the text and the appendix; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used for the construction of the text along with plates.
- Part II. A collection of many old Prabandhas similar and analogous to the matter in the Prabandhacintāmaṇi; Indices of the verses, and proper names; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used in preparing this Part, along with plates.
- Part III. A complete Hindi Translation of Parts I and II.
- Part IV. A collection of epigraphical records, viz. stone inscriptions, copper plates, colophons and Prasastis from the contemporary MSS.; all available historical data dealing with the Persons described or referred to in the Prabandhacintāmaṇi along with a critical account in Hindi of the above, as also many plates. and A collection of authoritative references and quotations from other works.
- Part V. An elaborate general Introduction surveying the historical, geographical social, political and religious conditions of that period; with plates.

Indira Gandhi Nationa Centre for the Arts

ः ॥ सिंघीजैनंबन्थमालासंस्थापकप्रशस्तिः ॥

अस्ति बङ्गाभिधे देशे सुप्रसिद्धा मनोरमा । मुर्शिदाबाद इत्याख्या पुरी वैभवशालिनी ॥
निवसन्त्यनेके तत्र जैना ऊकेशवंशजाः । धनाव्या नृपसद्दशा धर्मकर्मपरायणाः ॥
श्रीडालचन्द इत्यासीत् तेष्वेको बहुभाग्यवान् । साधुवत् सचिरित्रो यः सिंघीकुलप्रभाकरः ॥
बाल्य एवागतो यो हिं कर्तुं व्यापारिवस्तृतिम् । किलकातामहापुर्यो धृतधर्मार्थिनिश्चयः ॥
कुशाग्रया स्वबुद्ध्येव सद्दृत्या च सुनिष्ठया । उपार्ज्य विपुलां लक्ष्मीं जातो कोट्यिपो हि सः ॥
तस्य मन्नुकुमारीति सन्नारीकुलमण्डना । पतित्रता प्रिया जाता शीलसोभाग्यमृषणा ॥
श्रीबहादुरसिंहाख्यः सद्धणी सुपुत्रस्तयोः । अस्त्येष सुकृती दानी धर्मप्रियो धियां निधिः ॥
प्राप्ता पुण्यवताऽनेन प्रिया तिलकसुन्दरी । यस्याः सोभाग्यदीपेन प्रदीप्तं यद्गृहाङ्गणम् ॥
श्रीमान् राजेन्द्रसिंहोऽस्ति ज्येष्ठपुत्रः सुशिक्षितः । यः सर्वकार्यदक्षत्वात् बाहुर्यस्य हि दक्षिणः ॥
नरेन्द्रसिंह इत्याख्यस्तेजस्ती मध्यमः सुतः । सुनुर्वीरेन्द्रसिंहश्च किनष्ठः सौम्यदर्शनः ॥
सन्ति त्रयोऽपि सत्पुत्रा आप्तभक्तिपरायणाः । विनीताः सरला भव्याः पितुर्मार्गानुगामिनः ॥
अन्येऽपि बहुवश्चास्य सन्ति स्वस्नादिबान्धवाः । धनैर्जनैः समृद्धोऽयं ततो राजेव राजते ॥

अन्यच-

सरस्तत्यां सदासक्तो भूत्वा लक्ष्मीप्रियोऽप्ययम् । तत्राप्येष सदाचारी तिचत्रं विदुषां खलु ॥ नं गर्वो नाप्यहंकारो न विलासो न दुष्कृतिः । दृश्यतेऽस्य गृहे कापि सतां तद् विस्मयास्पदम् ॥ भक्तो गुरुजनानां यो विनीतः सजनान् प्रति । बन्धुजनेऽनुरक्तोऽस्ति प्रीतः पोष्यगणेष्विष ॥ देश-कालिश्वितिज्ञोऽयं विद्या-विज्ञानपूजकः । इतिहासादिसाहित्य-संस्कृति-सत्कलिप्रयः ॥ समुन्नत्ये समाजस्य धर्मस्योत्कर्षहेतवे । प्रचारार्थं सुशिक्षाया व्ययत्येष धनं घनम् ॥ गत्वा सभा-सित्यादौ भृत्वाऽध्यक्षपदाङ्कितः । दत्त्वा दानं यथायोग्यं प्रोत्साह्यित कर्मठान् ॥ एवं धनेन देहेन ज्ञानेन ग्रुभनिष्ठया । करोत्ययं यथाशिक्त सत्कर्माणि सदाशयः ॥ अथान्यदा प्रसङ्गेन स्वित्रुः स्मृतिहेतवे । कर्तुं किञ्चिद् विशिष्टं यः कार्यं मनस्यचिन्तयत् ॥ पृत्यः पिता सदैवासीत् सम्यग्-ज्ञानरुचः परम् । तस्मात्तज्ज्ञानवृद्ध्यर्थं यतनीयं मया वरम् ॥ विचार्येवं स्वयं चित्ते पुनः प्राप्य सुसम्मितम् । श्रद्धास्पदस्विमत्राणां विदुषां चापि तादशाम् ॥ जैनज्ञानप्रसारार्थं स्थाने शान्तिनिकेतने । सिंघीपदाङ्कितं जैनज्ञानपीठमतीष्ठिपत् ॥ श्रीजिनविजयो विज्ञो तस्याधिष्ठातृसत्यदम् । स्वीकर्तुं प्रार्थितोऽनेन शास्त्रोद्धारामिलािषणा ॥ अस्य सौजन्य-सौहार्द-स्थ्यौदार्यादिसद्धणेः । वशीभूयाति मुदा येन स्वीकृतं तत्यदं वरम् ॥ तस्यव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंधीकुलकेतुना । स्वितृश्रयसे चैषा प्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्वजनकृताल्हादा सिच्चदानन्ददा सदा । चिरं नन्दित्वयं लोके जिनविजयभारती ॥

॥ सिंधीजैनयन्थमालासम्पाद्कप्रशस्तिः ॥

स्वस्ति श्रीमेदपाटाख्यो देशो भारतिवश्चतः । रूपाहेलीति सन्नाम्नी पुरिका तत्र सुस्थिता ॥ सदाचार-विचाराभ्यां प्राचीननृपतेः समः । श्रीमचतुरसिंहोऽत्र राठोडान्वयभूमिपः ॥ तत्र श्रीवृद्धिसिंहोऽभूत् राजपुत्रः प्रसिद्धिमान् । क्षात्रधर्मधनो यश्च परमारकुलात्रणीः ॥ मुझ-भोजमुखा भूपा जाता यस्मिन्महाकुले । किं वर्ण्यृते कुलीनत्वं तत्कुलजातजन्मनः ॥ पत्नी राजकुमारीति तस्याभूद् गुणसंहिता । चातुर्य-रूप-लावण्य-सुवाकसोजन्यभूषिता ॥ क्षत्रियाणीप्रभापूर्णां शौर्यदीप्तमुखाकृतिम् । यां दृष्ट्वेव जनो मेने राजन्यकुलजा त्वयम् ॥ सृतः किसनसिंहाख्यो जातस्तयोरित प्रियः । रणमल इति ह्यन्यद् यन्नाम जननीकृतम् ॥ श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । ज्योतिभेषज्यविद्यानां पारगामी जनप्रियः ॥ श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । स चासीद् वृद्धिसिंहस्य प्रीति-श्रद्धास्पदं परम् ॥ तेनाथाप्रतिमप्रमणा स तत्सुनः स्वसन्निधौ । रिक्षतः, शिक्षतः सम्यक्, कृतो जैनमतानुगः ॥ दौर्भाग्यात्तिच्छशोर्बाल्ये गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमुद्धेन ततस्तेन त्यक्तं सर्वं गृहादिकम् ॥ दौर्भाग्यात्तिच्छशोर्बाल्ये गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमुद्धेन ततस्तेन त्यक्तं सर्वं गृहादिकम् ॥

तथा च-

परिभ्रम्याथ देशेषु संसेव्य च बहून् नरान्। दीक्षितो मुण्डितो भूत्वा कृत्वाऽऽचारान् सुदुष्करान्॥ ज्ञातान्यनेकशास्त्राणि नानाधर्ममतानि च । मध्यस्थवृत्तिना तेन तत्त्वातत्त्वगवेषिणा ॥ अधीता विविधा भाषा भारतीया युरोपजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं प्रत्न-नूतनकालिकाः ॥ येन प्रकाशिता नैका ग्रन्था विद्वत्प्रशंसिताः । ठिखिता बहवो ठेखा ऐतिहातथ्यगुम्फिताः ॥ यो बहुभिः सुविद्वद्भिस्तन्मण्डलैश्च सत्कृतः । जातः स्वान्यसमाजेषु माननीयो मनीषिणाम् ॥ यस्य तां विश्वतिं ज्ञात्वा श्रीमद्गान्धीमहात्मना । आहूतः सादरं पुण्यपत्तनात्स्वयमन्यदा ॥ पुरे चाहम्मदाबादे राष्ट्रीयशिक्षणालयः । विद्यापीठ इतिल्यातः प्रतिष्ठितो यदाऽभवत् ॥ आचार्यत्वेन तत्रोचैनियुक्तो यो महात्मना । विद्वजनकृतस्राघे पुरातत्त्वाख्यमन्दिरे ॥ वर्षाणामष्टकं यावत् सम्भूष्य तत्पदं ततः । गत्वा जर्मनराष्ट्रे यस्तत्संस्कृतिमधीतवान् ॥ तत आगत्य सँछयो राष्ट्रकार्ये च सिकयम् । कारावासोऽपि सम्प्राप्तः येन स्वराज्यपर्वणि ॥ कमात्तस्माद् विनिर्मुक्तः प्राप्तः शान्तिनिकेतने । विश्ववन्द्यकवीन्द्रश्रीरवीन्द्रनाथभूषिते ॥ सिंघीपदयुतं जैनज्ञानपीठं यदाश्रितम् । स्थापितं तत्र सिंघीश्रीडालचन्दस्य सूनुना ॥ श्रीबहादुरसिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्यर्थं निजतातस्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥ प्रतिष्ठितश्च यस्तस्य पदेऽधिष्ठातृसञ्ज्ञके । अध्यापयन् वरान् शिष्यान् शोधयन् जैनवास्त्रयम् ॥ , तस्यैव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंघीकुलकेतुना । स्विपतृश्रेयसे चैषा ग्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्वजनकृताल्हादा सचिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दत्वियं होके जिनविजयभारती ॥

उदारात्मा क्षमामूर्तिः साधुश्रेष्ठो गुणित्रियः।
यो मम परमः पूज्यो गुरुवत्, शिष्यवत्सलः॥
यस्य शिक्षाप्रसादेन प्राप्ता मया विशिष्टहक्।
यया दृष्टो ग्रन्थराशिरीहक् पौरातनो महान्॥
सुगृहीतनाम्नस्तस्य प्रवर्तकशिरोमणेः।
कान्तिविजयपादस्य पावने करपङ्कजे॥
अनन्यभक्तिभावेन विनम्रशिरसा मया।
पुरातनप्रबन्धानां संग्रहोऽयं समर्प्यते॥

ः पुरातनप्रबन्धसंग्रहविषयानुक्रमणिका ।

16	प्रास्ताविक वक्तव्य	A 156	(==	4) (m)	nd/fill	mar and	१-२५
1 -	प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टस	ांग्रह	6	三.担)的		7	4-32
. 2	. विक्रमार्कप्रवन्धाः	6.0		(1.2)	Park P.	TOTAL APP	,07
	THE REPORT OF THE PARTY OF THE					JE # 2	127
	§१ विक्रमार्कसत्त्वप्रबन्धः (B.)•	***	****	••••	****	••••	\$
	§४ दरिद्रक्रयप्रबन्धः (B. Br.)		••••	****	****		2
	§५ वीकमद्युतकारप्रवन्धः (B.)		****		****	••••	3
	§६ स्त्रीसाहसप्रवन्धः (B.)	****	••••	****	****	••••	"
	§७ स्त्रीचरित्रप्रबन्धः (P.)	****	****	****	****	* ****	8
	§८ देहलक्षणप्रबन्धः (В.)	**** ****	****	nin.	****	*****	***
	§९ मनि-मनुप्रबन्धः (B. Br.)	****		••••	••••	••••	4
	§११ विक्रमपुत्रविक्रमसेनसम्बन्धप्रबन्धः	(B. G.				••••	* **
PQ.	§१२ विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथाप्रबन्ध	(B.P.	3 .)	****	****	••••	6
13	§१३ G. संग्रहगतं विक्रमवृत्तम्	****			****	••••	9
₹.	§१९ सातवाहनप्रबन्धः (P.)				****		88
13	G. संग्रहे सातवाहनसम्बन्धि गाथाइ	नुम्.			****		. 11
₹.	§२० वनराजवृत्तम्. (G.)					2 92	१२
8.	§२१ लाखाकवृत्तम्. (G.)	****			••••		"
4.	§२२ ग्रुज्जराजप्रबन्धः (P.)						83
Ę.	§२४ श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रबन्धः (B. Bi	2.)			****	••••	१५
				••••	••••	****	१७
	§३१ कुलचन्द्रप्रबन्धः (B.)						36
9.	§३२ पड्दर्शनप्रबन्धः (B. Br.)		••••			••••	28
	§३३ नीलपटवधप्रबन्धः (B.)			(F)			"
2.	§३४ मोज-गाङ्गेययोः प्रबन्धः (B.)			105 E		A 9	२०
2	§३५ भोजदेव-सुभद्राप्रबन्धः (B.)			H 1			**
201	§३६ G. संग्रहंगतं भोजवृत्तम्			- 41 to			**
3	§४७ धाराध्वंसप्रवन्धः (B.)	****			****	ti	23
5	१४९ सिद्धराजीदार्यप्रबन्धः (B.)	****		*****	****	41 707 53	58
0+	20 1.408 (1014) 444. 44						-17

१५. ९५१ मदनब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीतिप्रबन्धः (B.)	28
१६. ९५३ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Br.)	24
१७. ९५६ आरासणीयनेमिचैत्यप्रवन्धः (P.)	30
१८. १५७ फलवर्द्धितीर्थप्रबन्धः (P. Br.)	ु ३१
१९. ९५८ मिश्रसान्तूप्रबन्धः (B. Br.)	"
२०. §५९ मित्रउदयनप्रबन्धः (P.)	३२
२१. §६१ वसाहआभडप्रवन्धः (B. Br. P.)	33
२२. §६२ मं ० सञ्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रबन्धः (P.)	38
२२. §६३ महं आंबाकारितगिरिनारपाजप्रबन्धः (P.)	"
्र ६४ P. संग्रहे सोनलवाक्यानि	, -
् §६५. G. संग्रहे सिद्धराजसम्बन्धिवृत्तम्	
९७४ G. संग्रहे हेमचन्द्रस्रिसंबन्धिवृत्तम्	् ३७
२४. १७९ कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः (P.)	,,
२५. §८१ राणक आम्बडप्रबन्धः (P.)	39
२६. १८३ कुमारपालकारितामारिप्रवन्धः (B. P.)	88
३७. १८४ कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रबन्धः (B.)	85
२८, §८६ कुमारपालपूर्वभवप्रबन्धः (B.)	88
२९. §८७ द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रबन्धः (Br.)	799
्र ६८८ G. संग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्	
३०. §१०४ अजयपालप्रबन्धः (P.)	80
§१०६ G. संग्रहगतं अजयपालवृत्तम्	88
३१. ११०८ धर्मस्थेर्भे सजनदण्डपतिप्रबन्धः (B.)	88
३२. §१०९ मित्रयश्लोवीरप्रवन्धः (P.) ()	3,
ु G. संप्रहे यशोवीरोहेखः	
३३. ३११२ विमलवसतिकाप्रबन्धः (B.)	9 1
३४. १११४ ॡिपगवसहीप्रबन्धः (B. Br.)	40
३५. १११५ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. Ps.)	43
३१४९ P. संग्रहे वस्तुपाल-तेजःपालविशेषवर्णनम्	49
B. संग्रहे ,, सम्बन्धिकाव्यानि	90
§१५८ G. संग्रहगतं ,, ,, ,, क्वम्	
१९६ ,, ,, वीरधवलवृत्तम्	196
११७७ ,, ,, वीसलदेवद्वत्त्रम्	山山

Centre for the Arts

.35.	\$86	विश्वासम्बातकविषये नन्दपुत्रप्रबन्धः	(B.)	1. T)	700	100		100
9.5								
. 30.		n /n ,		•	-			4
		G. संग्रहे वलमीभङ्गवत्तम्						
		n	und rud		- 00			68
399	\$894	G. संग्रहगतं श्रीमातावृत्तम्	1000 3535		. 100	i.,) 3	I	12
		जगद्देवप्रबन्धः (G.)			***	300	••••	64
80.	\$299	पृथ्वीराजप्रबन्धः (B. P.)		****				८६
PP.	\$20	G. संग्रहे पृथ्वीराजविषयकवृत्तम्.		, 100 lit	DEPLOY N	712571518 	****	603
		3733777	183	1.11	100	1	***	25
	\$208	G. संग्रहे जयचन्द्रनृपवृत्तम्.				****	1	90
82.	\$200	ਰਸਤਮਿਰਿਤਤਸ਼			****	****		***
		=12115=113-11		****				98
88'	§२१०	पादलिप्तसूरिप्रबन्धः (B.)		****	****			92
	§२१३	G. संग्रहे पादलिप्तस्रिरवृत्तम्.			••••	••••		88
		अभयदेवसूरिप्रबन्धः (B. Br.)	(Table)	****			****	94
४६.	§२१६	वाग्भटवैद्यवृत्तम्. (G.)						९६ '
80.	85.88	रैवततीर्थप्रवन्धः (P.)			****			90
86.	§२२०	देव्यम्बाप्रबन्धः (B. Br.)			****			**
		उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः (P.			****			38
40.	§२२२	वज्रस्नामिकारितशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्धः	(P.)		••••		•	99
42.	§२२४	कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः (Br.)			••••	****		200
42.	§२२५	लाखणराउलप्रबन्धः (B. P.)				****		१०१
		चित्रक्रोत्पत्तिप्रबन्धः (P.))			****	****	••••	१०३
48.	§२२९	श्रीहरिभद्रसूरिप्रवन्धः (B)			••••			***
44.	§२३१	सिद्धविंप्रवन्धः (B. Br.)			••••			१०५
		शान्तिस्तवप्रबन्धः (P.)			••••		••••	909
		न्याये यशोवर्मनृपप्रबन्धः (B. Br.						**
		अम्बुचीचनृपप्रवन्धः (B. Br. P						१०८
		विधिविषये उदाहरणम्. (P.)				****		१०९
		परोपकारविषये उदाहरणम्. (P.)				****	••••	280
{ ?.	§२३७	उद्यमविषये उदाहरणम्. (P.)	. 7			****		11

Indira Gandhi Nationa Centre for the Arts

६२. §२३८ दानविषये उदाहरणम्. (P.)	6 888
The state divisits of the safety	o ansi ,,
६३. §२३९ कर्णवाराविषये उदाहरणम्. (.P.)	
ु १२४० G. संग्रहगता अविशष्टा प्रवन्धाः • • ···· • • • • • • • • • • • • •	११२-११५
§२५८ परिशिष्टम्-प्रवन्धचिन्तामणिगुम्फितकतिपयप्रवन्धसंक्षेपः	११६-१३४
G. संज्ञकसंग्रहस्थान्ते पातसाहिनामावितः	१३५
P. संज्ञकसंग्रहस्थान्तिमोक्षेखः	१३६
पुरातनप्रबन्धसंग्रहस्य अकाराद्यनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका	\$\$<-5,38
पुरातनप्रबन्धसंग्रहान्तर्गतविशेषनाम्नां सूचिः	१८५-१५५
प्रबन्धिचिन्तामणियुन्थान्तर्गतविशेषनाम्नां सचिः	2-6

....

1114

455.0

....

....

....

1122

Fos

22

11

पु रा त न प व न्ध स ङ्ग ह

. प्रास्ताविक वक्तव्य

पण्णाञ्चथपादसिद्याचार्यदेवस्याकाश्चातामसगरीवितवर्मागङ्गाभयविक्रमभागरा एव नामायश्रीदोनायोजादातत्ररातस्य प्रतिमाणानाम्यनी। प्रवचीलस्यतिस्यक्षमानि । वतिवद्याताक्तनाक्तती।त्रेगद्यादवीत्रागध्यतापातियम्यामस्यागिधतासा। वद्यते व स्वास्त्र कात्ववाकि मर्थम् ताण्यं तायाशिताक प्रवासी विता व यो के बहु शख विद्य धराजाश्रीका लकावियोः ज्ञातम्यविद्याधातामगञ्जानवश्रीवनामस्विगास्त्रसम्बन्धि मोतगरी आग ने प्रशासिया जाना प्रनास्य पादार के प्रिवत वाया हिनी का वता नरका ति गतास्त्र खुम परवस्तालम् कियाव विषयः मंग्रा ख्मागहताष्ट्रशिका एडंग त्यापीतंयद्यस्मित्रविदि ग्रेथ्न कि।मतत्रि। खनोक्तं ग्रम् गोमादादक तंतताल अव बताद जायोजनो। पत्यारा याद्वये सावार गरातर प्रयावयां साधा तरित्ञाता। तते य्याद्वतवनवं वन्न विनारमार्ष्यकः नावं यक्त वस्यादान वन्न सम् प्युनिकोमलवागिरावलाषित्राद्यविष्यविष्यान्यान्याद्यक्रिकानिकम्द्रतस्मान प्रमित्रज्ञेवाक्ययतात्र्रशितेव हासात्रि हिनाकालेनागांद्वप्रस्वा तारं अनेपास्तमंगल्यां अत्राक्षिण हेतिसर्येन महा सन्वहीताना गर्दे हिना सन्य गरित स्थानित स्थानीत स्थानीत स्थानीत स्थाने स्थानित स्थानीत ने पार्यपारित भवात्ये पियरिवरोजा तथा कदा जनार्थे व हा पिति विहरात्रा गतेत्रालां



यानदारिक मानिक भवानविष्याकेणानिसम्बितानिकोषिकोष्यनविषयायोग्यानिसम्बितानिवयमात्रीकयनिषयेनास्रितान्त्रिके मन्वितिनो अरमेन वार्ताण कर्यने गुसाबितियां के पिनगरमयेवी यानायानायां वित्रो कर्याता कर्याता कर्याता कराता के त वारी मत् अन्य स्वराष्ट्र प्रवादियमे एकादिवदनस्य गेर्मात्र भाष्ट्र स्थानसम्बद्धिकान्याकि वर्षे। समायात् । कामनार एका तयावधितां अरेवकाववितानगरम्थालासम्माकासम्माकास्त्रात्रात्रवैवलासानामभाद्रद्वतरं द्वासमान्यन् विकापिनक्रमधाअन्यवालध विश्वाकायिनम्बार्यामानवहम्पितस्पर्वाचनामि।ममग्रीतिल्यंकिष्यायमः।भिर्शिग्रश्पिनियतिमसङ्गलकं नारस्यितं विश्वासि न्छन्नस्यृष्टस्यवितिष्तितत्तिकदरस्थितेनकत्वागतस्यम्भायोदवदन्नेअपविष्याक्षांवागकवितास्यवदारिणव्यवागियाकारिताः १६०१३ न्भुनर्तस्य स्वितः पितल्तिः तर्रास्ति निज्ञत्वाणारम् । प्रवित्राताः तेषाम् भाषे ११तः कावयसान् । कत्यस्य प्रयोगार्थमार्थितानात्यातस्य । वस्य । वस्य । वस्य । वस्य । वस । किस्यादितस्य । वस्य तेवायावनात्राणसंतिनावन्यावाताक्रवेववगरिपरत्रानितेः। ॥निव्यतिततेम्बन्येष्टियोग्यानिरक्ततिमस्यिनानियार्योश्ययतितः।कर्तिनाग्य जालेपिसमर्थयामाराजे याज्यात्वाक्रेक् स्मादिशद्धराजयास्या परनोकिपश्रेष्ट्रिप्रज्ञातांसेरसंवित्वियांसर्यताम् ज्ञातः॥रविष्ण ॥वृकरज्ञाल स्यप्रं जातास्त्रः सत्यां कर्तवारा अर्वता इस्या। विज्ञासरहत्वाका । जारधली बिहुलो धुन्ववरागयानारा नातारा अर्थित रामपरंग हत्या गरनारका हुउम्रीनम दुर्गीधिपत्री। उस्ने नहते वित्रियमा नलादवी नगदेश बर्र देशिया यस्यित्रभारीतां बंगारप्रदिनतरनटा लाउँ भवेजलियां बीजावार मारवमस्राविधा हुण्यसभाष्य तं हारलाई तर्तत्वम् लाउभार वतां बोलम्माणिक विमक्ष घर कदि दिवियानाम् सामितम्बनास्यित्रम् वास्तिम्बनियम् विमवादवनियम् सन्। विस्तिमनवित्रमनवित्रमनवित्रमनवित्रमनवित्रम हिलवाडरक्तम्बद्धानिहरवाणांगरवारम् तात्वासान्यं ताव्यप्रध्ववित्रकस्त्राणिरनाराबीहर्ताम्यणे करदानीयुत्र राजपाणीहरवहरा पुरशीयान्यस्त्रवीणि पानिमलवक्त्रमिविकात्^{त्रे}विवाज्ञमानोत्रमुक्तीणगरः हेवियादगयानिगगरते तिहमित्रधेमीवरम्नामुक्तीणस्य देशिकाला वस्त्रवाच रागाणस्यवीण माजभाववण्डमावकाहरणावाद्यसाम्बद्धस्याच्यावाद्यस्याच्यावाद्यस्याच्याव्यस्य स्थानव्यस्य स्थानव्यस्य स्थानव्यस्य स लेसेने मजे पद्धस्य स्थानव्यस्य स्वीर्थन्य विशेष्णाव्यस्य स्थानव्यस्य स्थानव्यस्य स्थानव्यस्य स्थानव्यस्य स्थान भागाम्बद्धाः स्थानव्यस्य स्वीर्थन्य स्वीर्थन्य स्वीर्थन्य स्थानव्यस्य स्थानव्यस्य

जिनस्ति इ व्यवपार

विकास में स्वार्धिक स्वर्य स्वार्धिक स्वार्धिक स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्

मा-११ व . २४

峤

30

गर्नास्तितिव्यान्तर्येनेवर्यस्ति।जानेन्यन्थन व नामस्दःखमञ्जूनाखनर्येना।न्थंकप्राणाजानः।कोस्पिन्यस्निअधेस्कनानप राकारीयूसीनदास्पाद्यअधात्रराभविर्धलकाराकालमानादास्तरकेयांद्यसिताग्यूष्टिश्वतदेसीयादा।एवंयुणपानिकवा वर्षेष्ठसंयूसनिवा मंप्राप्यश्चनधानादिपेरेरवयेमगान्। खबद्यसंस्थात् जानं। चयः शानकाः संजानाः।। विन्त्र्या सदक्या देखने छ।। ।। ।। अध्यः। ।। स्वस्यानस्यपन विवाससम्बद्धाः ॥ श्रीतस्य स्वारसे वा अविस्व रखन्ये उपस्या गर्न सामा अवस्य अवस्य स्वार स्वरत्य स्वरत्य सामा स्व स्याक्तिनवस्मनेकालकारायविभावकश्चकंठकंगकलियनतावरकंयद्यायाच्रियात्रम्यावयदं अदस्य पाले। यित्रीया। ग्रामणकं र्वसे जपाल। १९ त्यः सप्तासाकश्माकश्माकश्माकश्माद वी ४सी द गा पने कका ६वस मार्चनाप्यनापमंत्रील (णिगोशमसदेनोपरः वस्य पालस्त्रती सञ्ज्ज तकारवारी पद्मलदेवीने घांकमाहिमाः समसादर्यः॥२धर्मवि भावस्य यन विषयान विनाय संभाव। स्थित नान दिस्य अपनि मन्त्राम नि।नेजःपनस्पपं-बीऽउपमदेवीनिभक्तांवा।।४ल्लिगस्त्रदेवादऽल्या बारसस्या। अद्याचास्यालपनी मलमारेवी निविद्या नाजग स्तावनाविषयस्मासंकरतः। इतायाध्यस्भोयागाकवानाकाचामे द्याचानानामानाज मंत्रीधवलक मासासा। नववामः कतः। न्ष्रात्राग्न्यकिकारामि। पदानिसानः सन्देन्त्रगोकि रयामी नि। यत्रानस्माय प्रसानितारेकासीमनिगनः।पश्चित्रहेनाका विनः।नासानिवाकांवि नमञ्जाल्यासादनासः स्वयधानस्थादकानवारमवारधवालासानाइनोजवणप्रसादनवीरमसानासङ्गावियक्तो।स्रांमहनाग्रामवास व्यनिवस्त्रमिद्राकाद्विके मध्ना। लब्णात्रमारी वत्मागणासनस्य एदि संधायां त्रविष्टः। इतः कोदं विकः कोनसाविका लिकासो पानवित्तिस् नो कं। ग्राकारसानविष्टं विनागरंनोको नसाविबेक्षडं को पिनविग्रनिष्ट्र नो तथ्या प्रसादनिनिन। यवेगम मकाना को नाकम पर मम्यादणस द्रबारंसेरवानासी।त्रवःकपूरं व्याव्हतिबिवियप्रकरोहानःतेनात्यप्तिनः।किमधीस्त्राविकःसेनायाः प्रभ्यर्पानिर्जाता।ससीवितः। वस्त्राविर सप्रदिन। इतःसक्ते गर्ना नरे यग जानभानः सतः। रालामारका। सराज्य विनोक बेप्रवृतः। सप्रक्रणाने विकलः। स्वन्य प्रसारे नराज्य मा साय

्रीयाबिलव**र्दमानंत्रपःकर्दपारेखः।शीसंग्वश्यरयपाशैनाद्यान्य**द्यसम्बद्धस्य सम्बद्धस्य पारणकंक्रियाम्।संश्लेत निदेवंतंबंप्रस्थिताःसार्प्यानाम्ह्यिना एकस्पनाराभनलेदेवंनमस्तृत्पानदाना द्विन छाः यूंसंबद् श्वराधिरादाकाजानाः। छावेनसंतिणागितसंत्रेष् प्रिवृद्या । अजानानो महाविद्द ह्यां भी प्रध्वेन मकत्य प्रश्वाच गवद्य पानजीवः क्यून । स्वामी साह्य देविद्द ह्या का वर्गा वेजसाह खंडरी किएषा कर बड़ोना मन् पिननीतः। सरनी समावसे स्पनि। युख्य मरेवी जी वः श्रेष्टिनः खना श्रेतेव विनये जाता। साउ स्वापि काउसा निरौदिनाराज्ञानां प्रवीकारिमासः पनिपार्कार्ययि। इतितन् यनिरणायनवानवस्त्रपाराष्ठ्रपमरेयोप्रितः प्रकरीकता। इतिप्रावस्त्रपा ल प्रवास ग्रम पारंपसी कि रिवती के प्रवास विज्ञाति । पाउचा लक्सरम्बन्ड कंसा थिकंकिल पंच जाते या पंचकं च्यान पंचकित में स्यंदनानचरपिति खिकानां॥६ पद्याना निचा शार्यांना दिनी नांस्यासनानांप्रिनिस्त्राध्यानपोधनानांदिवानीसरकेवानंभर छं विशालां।।।इहिन्द्राद्विम मान्रिमाना वरा गारिमास नानां रुप जो निमानो ज्ञाना निच त्री लिउ मा ग्रभनो प्रः सर्घा य उरंगमानां।।६४ ग्रेष्टी महा गाञ्च रचः ग्राना निल्हा सन्धास सनि सानवानां। श्रीवस्त्र पालस्यकत्पद्य यात्रासंख्या यसानंद करी जनानां॥ ॥ उद्यक्तित्र। व्रसनोकाकविजनजननी नापनी व्रस्त वर्गी भागो श्रीबस्यालंकशालयनिस्याकायीसन विवेद्यां साम्यकलाई कत्याः सक् तस्र ननमानाश्चना सापिनो जस्त्रमासीदन एने जगनिश्वक्त निनार कर्णा याव विवाण स्विशी स्मिनासादि पिनपरिसराक्षी पनापि साधः इ द्यात्राव्खपानं तितिभवमविवंबोध्यन्याराषणा अस्पात्रस्माक्ष्याःकषक्षकितःको (वचोपन्यदोषोनिःवोषः।वापनोकुष्टणाउणनव नाष्ठलो मानीनायः॥१० छर्व छर्वा भर्मान्यस्थनिकावस्थिते विषेत्राचे विष्या छर्।। श्रावस्थान्यने विषयः स्वाप्य स्थ निविनवाधानप्रनाप्ः छनः प्राविकामपिनिगमर सिम्हसां बुद्धिनं भगविना। प्रक्ति। वस्ति। प्रक्ति। वस्ति। स्वाविकामपिना सिक्सी विजनवा प्रियस्ति। गतःश्रीब्खुपालियां। १ रमहंपद्यायाचारेण। लक्तीनंदयनांप निकलस्यताचिश्वंचयो। कर्वनायके ताप्य ताखनी खस्यनाचि। वसनानापमा। संसे

का दिनाक्य ने निवर्तान समुद्रसम्बन्धित के अवश्याशतसामाह ने सब का संगाक दिया छ प्रमालाय विकासानाना देवाल प्रमाण वाक्रियाच्यानम् ह्रनाः प्रयाश्च । अधिकः रूः। सन्देनाः हार्यताचा मद्यमदिनात्वसा समदानिनाः नचनारा मद्यविद्यक्षेत्रस्य टम्मुम्बागर्थपानाकाष्ट्रसंक्रियमस्य। एको मप्ताबङ्गस्य नाक्षित्रियम् नाक्ष्यस्य नाकाष्ट्रस्य सामित्रस्य स्थिति नाः। चयेन ४५ प्राथमार्थं मा (नर्गः विस्राव्यति छ। मारु जो। ग्राचने योगी प्रचारिता। । इतिना जवनन्य प्रचये। ।। महि।। ।। सुर्वय विशेषस्थाः । । बापायस्य निर्मायमीन । क्रीतिसागप्रस्थतन । क्षियसमातिसारसाग्यस्य विशेषस्य ।। । यस्य प्रतिष्ठानासीय सर त्र। द्वस्यदेशसन्त्र सार विविष्णान सुरवेत्र श्रेष्ठनाध्यः। ४० । साधिनाष्ट्रस्ति विकालाईन्स्याना कापातास्त्रनाधाकोष्ट्रः। अवस् ली लाक लिनः कि ना से गांडा इददग इंड नियनी ने शिक्ष ने जिल नानग्यक्रानोत्रनियुरुवेतिचंडः॥४दः विसानकाभावनारामा-विकितिवादस्यविक्षयस्य विविवादियोतिया।।।।। बिक्या। पहिंचारिय सहिवले स्विकालि युक्त समिति एसपो । अबेक प्रवास कागाज सं अतारे वस्त्रिय विभागता बिद्यान स तिकाणेतिवसमाञ्चनवसायमा। सर्गाचान्यसभक्तनारञ्जास्य वरिवर्गावनस्यविनायंत्रः॥ समावदेशिनस्यारिववसङ्गेहीत विश्तायुवि। मिष्यास्वाबवं(मित्रिणदेवीनसान्ह्याया। हत्यासाय अन्यनस्वित्रा राष्ट्रवं अन्यासाक्षा अस्य दीः स्थानमा वंतात् चयुप्ताव छनिकं ऋवा यो धीनत् वानश्या मध्युष्ताति वया छ णिस्यास्यस्थितस्यारास्याति।एकस्राञ्जानेचे इस्रशस्यवि हा प्राप्ति सम्बन्धाः विष्णासाम् वेदमासानान् । इति पाने विद्याची विदेशानी मार्गा प्रमाणि समानि स्थानि । नान सदा च एका तुद्देशानी व क्तिममानीन्। युक्तिनेक्ण्यान्वेजक्षभ्रेश्वकाश्मेष्टिक्प्नामदानाग्यम्बन्नह्यदेमर्नवकसम्बन्धाराकानाचीपरेष्ट्रान त्रे नेन जस्या विशिन्या सर्वोद्योतिक। सविना (समञ्जेष्टिना श्रिके व्यानकमा श्रमणं देवं । सविन्य वन्स इत्रयो एपाव यो देश देश प्रभारक क स्वाधितारामापुः व्यवस्तियेवाग्रमात्वा विश्ववा किति । त्राक्षणे को । ति र १० तेवाण विश्ववानि के मार्थी ने का सामित्र को स्वि प्रश्च प्र त्राधानार्वे प्रमुक्तानार्वे नामान्दिनाम्यक्तराणिकुषाञ्चनित्रामान्द्रविद्यामान्यक्त्रपति । सम्बद्धान्यक्तिमान् विवर्धि नगारियामार विवर्धित निवर है याना इतियान स्थित्र स्थाति अधि वास ने नातन स्थायन से ते। 🚉 अधि विवर्धन स्थायन स्यायन स्थायन स्थाय ्विति स्पास्त्रवाचार्याः । विकास स्वाधित्याः । विकास स्वाधित्याः स्वाधित्याः । विकास स्वाधित्याः । विकास स्वाध इयाताः क्षिण्याः स्वाधित्याः । विकास स्वाधित्याः । विकास स्वाधित्यः । विकास स्वाधित्यः । विकास स्वाधित्यः । व इत्याधित्यः । विकास स्वाधित्यः । विकास स्वाधित्य हि वससायोशिल्डियंक्सर्थं भृतिगाती हिस्ति । संगतिभ पानवालके विश्वाधि । यहनकामिताम्यानहरीसमादिक प्रवासिक पानवालक स्वित्वालि । अन्याक्षेत्राक्षं प्रवासिक पानवालके विश्वाधि । यहनकामिताम्यानहरीसमादिको तहने विश्वासिक प्रवासिक प स्वित्वराणके सम्बद्धाः विश्वासिक प्रवासिक प्रविक प्रवासिक प ्रताथरात्राक्षद्रमारस्य अन्तराधिकात्राक्षण्यात्र समयद्रियावियात्र स्वत्यात्र सम्बद्धान्तरस्य सम्बद्धान्तरस्य विकृताक्षण्यस्य सम्बद्धान्तरस्य सम्बद्धान्तरस्य विकृताक्षण्यस्य सम्बद्धान्तरस्य

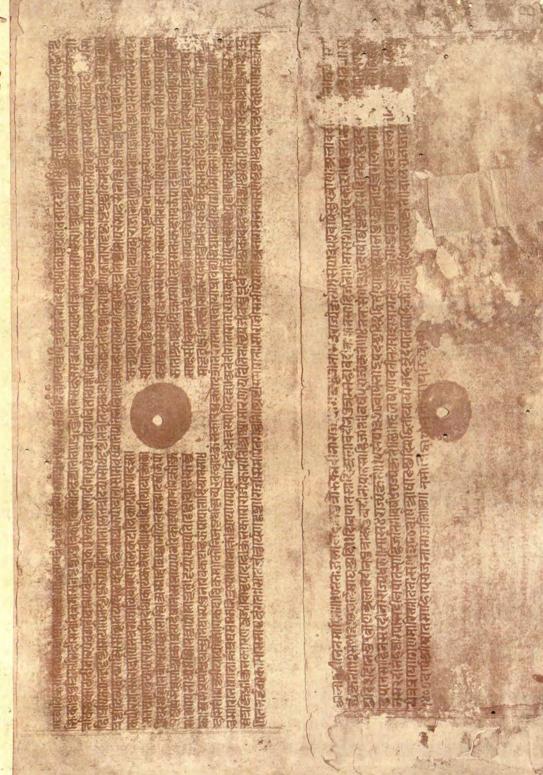
भिरुक्तित्रिक्रान्य्णात्**म् नवक्षं**जिमसाङ्खंबक्षतंबिङ्गंबोङतिववणुनुसामीश्रदेशयनमसमेदेघामकनम्बद्धानास्य ध्रास्त्रयस्य ल विकासिक्रीविधियाने विकासिक्री विकासिक्री विविश्ती विविश्ती विकासिक्री विकास लाह्मार्ज्ञीस्थासाम॰विवरिनेविवेनसन्यासावसव्यवस्थानस्य तालिक्षात्राचेनम्बन्धानम्बन्धानम्बन्धानम्बन्धानस्य तालिक तालिक्षात्राचनस्य स्थितिकारम्बन्धानस्य स्थानस्य स्थानस्य स्थानस्य स्थानस्य स्थानस्य स्थानस्य स्थानस्य स्थानस्य तालिकारम्बन्धानस्य स्थानस्य स् व्यातंत्रावावातित्रात्रावावद्यदेवत्रसाद्याम्द्रविभिन्नव्यत्रम्भक्ष्येत्रक्षेत्रक्षेत्रम्भवस्यावस्यावस्यावस्यावस्य प्राणास्य केस्प्रीक मिवि॰ अपरित्रस्य प्राप्तस्य । ज्ञास्य वरायश्चान्यमान्यसम्बद्धारयोजनात्र्यसम्बद्धारयोजनात्रम दिक्रचापता।कामेंचेच्यः भावेचास्त्रिः यसीभ्रखम्दास्य अवस्थानेद्दितमार्थे देशस्य क्रेतंचमा कर्त्तरम्य भावति । अस्यामादया स्यद्रविश्वास्य विकासम्बद्धाः तिर्भासायोगच्चितिकार्ममप्तरभपलेकम्यवैतिक्रिमसर्भित्वस्यासम्मन्त्रमस्याविधरप्रितायस्य प्रवर्धावात्रात्राः । कर्मप्राधावस्य विधासायम् यणज्ञास्यीश्रीसामग्रयात्रायां वाद्वेजोर्द्धशह्यां मित्रवर्षारे तपहस्यार को दिस्त्यादमञ्जी वजा वस्तारिनामनी मृत्रविद्यापास मुद्रोपिर सामनी वर्ष व्यान्यनी परिगर्जितिक भवाकामात्रात्रासम्बद्धाः विकालप्या चित्रिकतार वीक्षित्रमगनायिनासनीयाच्यमानायारहामकियद्यविशामिया सिहा अहंतिसार नारावयोजनाति। राह्मा गणनाक न्येहतीपवासा पारणकारिनेवानमा।रपिखलं प्राच्याच्या वेशनेवां संस्थ्या तरेश मतिव होर वा पारिला हो प्राच वती।यस्यावनेविधंकरेवदानादि।ममत्यत्रक्षेत्रसंत्रानः। बदिन कवासिनराचुवे।मनाधिकंपुर्वाचासंपत्तीनियमः अत्रो।महनंवि।यम प्रति। ह्यराम् मित्रल्यामितिकातायकचाता। रानं रिरस्मा शित्र विज्ञाताम्स्राम्यण्लादवीयात्राञ्चसाष्ट्रशीसिट्राजःसागरकं ववशी। बाला विदानित्राण्यास्य । विञ्च द्रात्यं वक्तं वेदान्य के वेदा देश विदान हरू विश्व विदान व

अवविद्वालिक के सामक स्मानिक के विद्यालिक सम्मान साविते स्वाज कृष्णित हो नेत्र मात्र स्वाज के जानात्रादश्वरमारार्यामयानामागणकव्यस्यमोत्नागर्नाद्वयामन्यावग्राक्षक्रिन्य। छष्टमयाममापिष्ट्रताम्बद्धितयानाम्बद वर्णा वीक्षिकसम्प्रितिक्रा मारा इमेरेडितामाम्यामवलीक्रलालम्यक्रात्वासारालयमन्द्रास्त्रीन्वरूपः वालिर्रपर्याक्र क्रातिपर्यः पश्चितिक्रात्वा याणावात्रक्षस्यात्रम्यः । सिविमानार्वेशभीयः माद्रवेशम्बद्धनिद्यादेशद्वः सन्तिनस्याये समावस्थितः कालितोगरं तोष्ठः सृष्ट्वेतार्वमाणान्यः स नवारणानाः विभावभागिति विज्ञानाः विज्ञान्यानोगमाद्यम् वृद्धाश्चन्नः । चुन्नः । चुन्नः । चुन्नः । चन्नः । सार्थाः विज्ञान्यः । चन्नः । चन्न

६— ब्रंगोरामध्यवित्रलेकातसातेऽविभागस्तरमन्त्रेसरसिते टिबपन्निः संपन्निः। स्पुरतिखुकातप्रस्वयक्ततः १ तिनेगः।

यसस्य असे वस्पतितस्य प्रस्तोत्तरम् । तस्य प्रस्ताणे व राणभाकायातस्य । तस्य वित्र स्वयं सी बाव वस्य स्वयं सामानितस्य वस्य स्वयं सामानितस्य वस्य सामानितस्य वस्य सामानितस्य वस्य सामानितस्य वस्य सामानितस्य स्वयं सामानितस्य स्वयं सामानितस्य स्वयं सामानितस्य सामानितस्य स्वयं सामानितस्य सामानितस्य सामानितस्य स्वयं सामानितस्य स्वयं सामानितस्य सामानितसस्य सामान **ण्स्रिंगहपोर्हेन सोभग्रे सोत्सिरण्यातिश्रेन्तिया**विहिन्नोजित्सार्यम् गार्वस्थात्रा प्रतिभाष्यात्र स्थानित्र स्थानित कं**रकार्यायाचाचुनार्याकृतियोक्ते प्रस्वायोक्तायाकृते यत् प्रस्त्राय कायराख्यकारम्य कार्यायाच्याय भारामस्यात्रे सर्वकरकं प्रकारिका प्रसारिकार्य वेतेनस्य रिक्षेत्र के विकार कार्य स्वतंत्र रिक्स करावेतन्त्र तर्म स्वतंत्र रिक्स करावेतन्त्र स्वतंत्र रिक्स स्वतंत्र** क्ति उपामस्याम्बर्वतत्त्रमञ्जानिक्षम् वाद्यानिकारम्भित्रवारम्भित्रवारम्भित्रवारम्भित्रकः मुक्ति । स्वतिकारम्भि सम्बद्धानिनतः सन्ताम्बर्वे इस्योवस्थितिकाः इस्योत्सायरम्बर्यः तिमस्यानिकस्याते विकस्यानिकारम्भित्रताम् सम्बद्ध तम्परकारभे साम्प्रभाष्ट्रव वर्तम्यावहारिणानमेकविते बाद्यातस्या बात्राममस्य स्थापात वराजार प्राप्ताम नावसर्वा स्थापता वर्तमध्यात्रकार स्थापता त्रात्र व प्रत्यात्र प्रत्यात्र प्रतिकृतिक स्वत्यात्र स्वत्यात्र स्वत्यात्र स्वत्यात्र स्वत्यात्र स्वत्यात्र स स्वत्यात्र वाकलाम्बन्धवानिक्रेन्सान्तेचे दस्य श्रीतम् आपलिपाठ शार्रात उद्धक्षयवृहर्तााणीर्वात्रववाताकराति । अमिनिश्वादिःखल रमनलकीलांख्यारी तस्तितार राष्ट्री तरा

सिंघी जैन प्रन्थमाला



प्रास्ताविक वक्तव्य।

§१. प्रबन्धैचिन्तामणिसम्बद्ध पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रह

रातन-प्रबन्ध-सङ्ग्रह नामका यह प्रन्थ प्रबन्धचिन्तामणिके द्वितीय भागके रूपमें प्रकाशित किया जा रहा है, इसिलये इसका पूरा नाम हमने 'प्रबन्धचिन्तामणिसम्बद्ध-पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रह' ऐसा रखा है।

प्रवन्धचिन्तामणिके सम्पादन करनेका जबसे हमने सङ्कल्प किया, तभीसे उसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली. साहित्यिक और ऐतिहासिक, सब प्रकारकी यथाप्राप्य साधन-सामग्रीके सङ्कृतित करनेका प्रयत्न शुरू किया। भिन्न भिन्न प्रकारके और भिन्न भिन्न विषयके जैन प्रन्थोंका अवलोकन करते हुए, हमने देखा कि कई उपदेशात्मक और कथात्मक यन्थोंमें भी इस विषयकी कितनी ही सामग्री छुपी हुई पडी है। कई यन्थ, जिनका मुख्य विषय तो है आचारप्रतिपादक, लेकिन उनमें भी, इस प्रकारकी कुछ इतिहासोपयोगी बातें लिखी हुई मालूम दीं। इसलिये हमने सोचा कि यदि यह सब सामग्री, चाहे उसमें कुछ अधिक विशेषता या नवीनता न भी हो, उन उन ग्रन्थोंमें से चुन चुन कर एकत्रित की जाय और उसे एक संग्रहके रूपमें प्रकट कर दी जाय, तो इस विषयके विद्वानों और विद्यार्थिओं-दोनोंको संशोधनादि कार्य करनेमें बहुत कुछ सरलता और नवीनता प्राप्त हो सकेगी। इस विचारसे प्रेरित होकर, हमने उन उन प्रन्थोंमेंसे इस सामग्रीको, एक एक करके चुनना ग्रुरू किया। हमारी पूर्व कल्पना थी कि इस सामग्रीको, प्रबन्धचिन्तामणिके परिशिष्टके रूपमें, उसी ग्रन्थके अन्तमें, दे दी जायगी। लेकिन एकत्रित करते करते हमें वह सामग्री इतनी विस्तृत माळ्म देने लगी कि जिससे उसको, प्रवन्धचिन्तामणि ही जितने बडे, अलग प्रन्थ के रूपमें, दूसरे भागके तौर पर, निकालनेका निश्चय करना पडा। उस निश्चयानुसार, प्रस्तुत द्वितीय भाग उस सामग्रीसे समलङ्कृत होता; लेकिन पाठक देखेंगे कि इसमें वह सामग्री भी नहीं है। इसमें जो सामग्री उपस्थित की जा रही है वह उससे भिन्न संग्रह प्रन्थोंमेंकी है; और वह सामग्री, अब इसके बादके प्रन्थमें, तीसरे भागमें, प्रकाशित होगी । ऐसा होनेमें कारण यह है कि-ज्यों ज्यों हम इस विषयमें अधिक खोज करते गर्ये त्यों त्यों हमें कुछ और भी अधिक उपयुक्त और स्वतंत्र बन्थात्मक कितनीक सामग्री प्राप्त होने लगी। पाटण, पूना, भावनगर, अहमदाबाद, राजकोट वगैरह स्थानोंसे हमें कुछ ऐसे पुराने प्रन्थ मिल आये, जो खास कर प्रबन्धिचन्तामणि-ही-के ढंगके स्वतंत्र संग्रहरूप मालूम दिये, लेकिन जिनमें कर्ता वगैरहका कोई उहेख नहीं पाया गया। इनमें कोई कोई संग्रह तो बहुत पुरातन माळूम दिये-शायद प्रबन्धचिन्तामणिकी रचनासे भी पुरातन । जब हमने इन संग्रहोंका परस्पर मिलान करके देखा तो, इनमें कुछ प्रकरण तो ऐसे मिले जो एक दूसरे संग्रहके साथ शब्दशः साम्य रखते हैं। कई प्रकरण परस्पर न्यूनाधिक वर्णनवाले मालूम दिये। कोई प्रकरण किसीमें कुछ पाठ-फेर वाला है, तो कोई किसीमें कुछ भाषा-भेद वाला है। और, कितनेएक प्रकरण एक दूसरेसे सर्वथा मिन्न भी हैं और नवीन भी हैं। इनमें कोई कोई प्रकरण ऐसे भी दिखाई दिये जो प्रबन्धचिन्तामणिगत उस प्रकरणके साथ सर्वथा एकता रखते हैं। ईंछ प्रकरण ऐसे हैं जो प्र० चिं० में तो नहीं हैं लेकिन प्रबन्धकोशमें हैं। और कोई कोई प्रकरण प्र० जिं० या प्र० को० की पूर्तिके लिये ही लिखे गये हों ऐसे मालूम देते हैं।

• इस प्रकारके इन संप्रहों में से, हमने कुछ पूर्ण और कुछ अपूर्ण ऐसे समूचे ५ संप्रहोंका प्रस्तुत प्रन्थके लिये, पृथक् तारण किया है। इनमें के प्रायः बहुतसे प्रबन्धों या प्रकरणोंका सम्बन्ध, किसी-न-किसी रूपमें प्र० चिं० के साथ है। जो कुछ थोड़ेसे प्रकरण ऐसे भी हैं जिनका सीधा सम्बन्ध उक्त प्रन्थके साथ नहीं है, तथापि उनका रंगढंग और पु॰ प्र॰ प्रस्ता॰ १ ्विषय-वर्णन उसी प्रकारका है। इसिलये हमने उनको भी, अलग न निकालकर उनके सजातीय प्रकरणोंके साथ, इस संप्रहमें शामिल ही रखना उपयुक्त समझा है। इनमेंसे कुछ तो ऐतिहासिक प्रकरण हैं, जो, चाहे जिस दृष्टिसे महत्त्रके ही गिने जाते हैं; और कुछ लोककथात्मक हैं जिनका विशेषत्क, हमारे देशके प्राचीन सामाजिक संस्कार और लौकिक व्यवहारकी दृष्टिसे, अवश्य ही अनुशीलनीय है।

§२. संग्रह ग्रन्थोंका सामान्य परिचय

पाठक देखेंगे कि, प्रस्तुत प्रनथके, प्रथम पृष्ठ पर, शिरोलेखके नीचे ही चतुष्कोण रेखाके भीतर

[P. B. Br. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः]

ऐसी पंक्ति हमने लिखी है। इसका अर्थ यह है कि-इस पुरातनप्रवन्धसंप्रहमें जितने प्रवन्ध या प्रकरण हैं, वे, जिनको हमने P. B. Br. G. Ps. ऐसी संज्ञा दी है उन पुराने लिखे हुए संप्रह प्रन्थों परसे सङ्कलित किये गये हैं। इन संप्रहोंमें ये सब प्रकरण या प्रवन्य, उस कममें नहीं लिखे हुए हैं जिसमें हमने उन्हें यहां छपवाया है। यहां पर जो इनका कम दिया गया है वह प्रवन्धिनतामणिके अनुसरणके रूपमें है। प्र० चिं० में जो प्रवन्ध या प्रकरण जिस कममें आया है उसी कममें हमने इन प्रकरणोंको मुद्रित किया है। यह भी ध्यानमें रहे कि ये सब प्रकरण सभी संप्रहोंमें नहीं मिलते। कोई प्रकरण किसी संप्रहमें मिलता है तो कोई किसीमें। कोई कोई प्रकरण एकाधिक संप्रहमें भी मिलता है। एवं कोई प्रकरण एक संप्रहमें एक ढंगसे लिखा हुआ मिलता है तो दूसरे संप्रहमें दूसरे ढंगसे। इस प्रकार इन ५ संप्रहोंमें परस्पर जितनी समानता है उतनी ही विभिन्नता भी है। एक हिसाबसे ये न एक-कर्न्टक हैं, न एक-कालिक हैं, न एक-किस कें। तथापि हैं ये सब समान-उद्देशक और समान-विषयक। इनमें से कौन प्रकरण, किस संप्रहमें मिलता है उसका ज्ञापन करानेके लिये, प्रलेक प्रकरणके शिरोलेखके साथ, P. B. G. आदि तत्तत संप्रहका निर्देशक सङ्कताक्षर दे दिया है। एकाधिक संप्रहमें जो कोई प्रकरण मिला और यदि उसमें कुछ पाठ-भेद प्राप्त हुआ तो उसे हमने या तो पाद-टिप्पनीमें उद्धत कर दिया है, या प्रचलित पंक्ति-ही-में, चतुष्कोण रेखावृत करके, प्रक्षिप्त कर दिया है। अर्थानुसन्धानका ठीक विचार कर, जहां जैसा उचित माल्य • दिया वहां वैसा किया गया है।

§ ३. संग्रह ग्रन्थोंका विशेष परिचय

(१) P संज्ञक संग्रह - संघके भण्डारके नामसे पहचाने जानेवाले पाटणके प्रसिद्ध जैन प्रन्थागारमेंसे प्राप्त ३० पन्नोंका यह एक बहुत जीर्ण-शीर्ण प्रन्थ है। वर्तमानमें, इसकी प्राप्ति हमें, विद्याविलासी साहिलोपासक मुनिवर श्रीपुण्यविजयजी के द्वारा हुई है इसलिये इसका संकेत हमने, पाटण और पुण्यविजयजी दोनोंकी स्मृतिमें, P अक्षरसे किया है। इस प्रतिका दर्शन सबसे पहले हमको कोई सन् १९१४ - १५ में हुआ था जब हमने पाटणके उक्त भण्डारके सब प्रन्थोंका, एक एक करके, सूक्ष्म अवलोकन किया था और प्रशस्ति आदि ऐतिहासिक साधनोंके, सर्व प्रथम, टिप्पन करने शुक्त किये थे। यह प्रति उस समय, उक्त भण्डारमें यों ही अनुहिखित-सी और अज्ञात-सी पढी थी। हमने इस पर रेपर वगैरह चढाकर और उस पर प्रवन्धसंग्रह ऐसा नाम लिख कर व्यवस्थित रूपसे रख दिया। तब हमें यह खयाल नहीं था कि भविष्यमें, किसी दिन, इस प्रवन्धसंग्रहका हमारे ही हाथसे, ऐसा समुद्धार होगा। हमें इसकी स्मृति भी नहीं रही। पीछेसे, जब हमने इस सिंघी जैन प्रन्थमालाका प्रारम्भ किया और उसमें प्रवन्धिनता-मणि-ही-को पहले हाथमें लिया तब, हमारी प्रार्थना पर उक्त मुनि श्रीपुण्यविजयजीने और और प्रन्थोंके साथ इस संग्रहको भी भेज दिया, जिसकी प्राप्ति हमें एक बहुमूल्य रलके जितनी श्रीतिकर प्रतीत हुई। इस संग्रहको मुख्य रख कर ही हमने इस प्रसावित संग्रहका संकलन करना आरंभ किया।

इस प्रतिके कुछ ३० पन्ने हैं। पहले पन्नेकी पहली पूंठी बिना लिखी—कोरी रखी गई है। दूसरी पृंठीके दाहिने भागपर ३ इंच चौडाई और ४ है इंच लंबाई वाला, जिनप्रतिमाका एक बहुरंगी चित्र आलेखित है। पाठकोंको

इस चित्रके देशनका प्रत्यक्ष लाभ हो इसलिये हमने, पन्नेके अतिरिक्त, चित्रकी पूरी नापका भी एक हाफ्टोन ब्लॉक अलग बनवा कर उसकी छबी इसके साथ दे दी है। तदुपरान्त, १ ले, १२ वें और अन्तिम ३० वें पन्नेकी द्वितीय पृष्ठि (पूंठी) के चित्र, भी हम साथमें दे रहे हैं जिससे इस प्रतिके अक्षर, पंक्ति और लिखावट अपदिकी. पाठकोंको प्रत्यक्षवत्, ठीक ठीक कल्पना हो सके। प्रतिके पन्नोंकी लंबाई प्रायः १२ इंच और चौडाई ४ ई इंच है। पंक्तियों और अक्षरोंका परिमाण सब पन्नोंमें एक-सा नहीं है। किसी पृष्ठ पर १३ पंक्तियां, किसी पर १४. किसी पर १५ और किसी किसी पर १९-२० तक हैं। अन्तिम पृष्ठपर लिपिकर्ताने जो अपनी परिचायक पंक्ति लिखी है उसे हमने प्रन्थान्तमें, पृष्ठ १३६ पर, मुद्रित कर दिया है। इस पंक्तिके लेखसे मालूम होता है कि-'संवत १५२८ वें वर्षके मार्गसिर मांसकी १४ - वदि या सुदि सो नहीं लिखा - सोमवारके दिन, कोरण्ट गच्छके सावदेव स्रिके शिष्य मुनि गुणवर्धनने, मुनि उदयराजके लिये इसकी प्रतिलिपी की'। लेकिन प्रतिका साद्यन्त अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि यह पूरी प्रति मुनि गुणवर्धनकी लिखी हुई नहीं है। इसकी लिखावट दो तीन तरहकी माछ्म दे रही है। प्रथम पत्रसे लेकर १५ वें पत्रके प्रारम्भकी दो पंक्तियों तककी लिखावट किसी दूसरेके हाथकी है - और फिर उसमें भी दो तरहकी कलम माल्म देती है- और उससे आगेकी सब लिखावट मुनि गुणवर्धनके हाथकी है। प्रतिका लेख कुछ अञ्चवस्थित और अशुद्धप्राय है। कहीं कहीं ब्रुटित भी है। कई स्थलों पर . छिपिकर्ताने अक्षरों तथा पंक्तियोंकी पूर्तिके लिये '......ंइस प्रकारकी अक्षरशून्य कोरी जगह रख छोडी है। ७ वें पन्नेकी दूसरी पृष्ठि पर तो पूरी ४-५ पंक्तियां ही इस प्रकार खाली रखी हुई हैं। इससे दो बातें सूचित होती हैं - एक तो यह कि यह पूरी प्रति एक साथ और एक हाथसे नहीं लिखी गई; इसका प्रारंभ किसी दूसरेने किया और समापन किसी दूसरेके हाथसे हुआ। दूसरी बात यह है कि इसका मूल आदर्श भी कोई एक ही संग्रह न होकर जुदा जुदा दो तीन संग्रह होने चाहिए। सिवा इसके, मूल आदर्शों मेंसे कोई प्रति ऐसी भी मालूम देती है जो ब्रुटित या खण्डित हो। ऐसा होना यह ज्ञात कराता है कि वह प्रति तालपत्रात्मक होनी चाहिए और उसका कुछ अंश नष्ट-भ्रष्ट और कोई पत्र विलुप्त हो गया होना चाहिए। तालपत्र लिखित पुरातन प्रन्थोंमें प्रायः ऐसा होता रहता है। उनके उद्घार खरूप, जो पीछेसे कागज पर प्रन्थ लिखे गये, उनमें ऐसे खण्डित या ब्रुटित भागकी सुंचना करनेवाले अनेक रिक्त स्थान, जिस उस प्रन्थमें देखे जाते हैं। इसके उपरान्त, यह प्रति भी बहुत जीर्ण दशाको प्राप्त हो गई है और प्रायः प्रत्येक पन्नेका, बायें ओरका, उपरका कुछ हिस्सा, जो या तो आगसे कुछ जल गया हो या पानीसे कुछ सड गया हो, नष्ट हो रहा है। इससे हमको तत्तत् स्थलोंपर कुछ अक्षर या शब्द और भी अधिक छोड देने पडे हैं। पृष्ठ ११.१४.३४.३५.४१.४८.५० आदि पर जो पंक्तियोंके बीच बीचमें'ऐसे अक्षरच्युत बिंदुमात्र वाले पंक्यंश रखे गये हैं वे इसी बातके सूचक हैं। इस प्रतिका आयुष्य अब बहुत नहीं है। इसके लिखनेमें जो स्याही प्रयुक्त हुई है उसमें क्षारकी मात्रा बहुत अधिक होनेसे वह कागजको पूरी तरह खा गई है। जितनी दफह इसे हाथ लगाया जाता है उतनी ही दफह इसके कागजके दुकडे खिरते जाते हैं और पन्ने टूटते जाते हैं। सिर्फ प्रारम्भके ५-७ पन्ने कुछ ठीक हालतमें हैं; पिछले पन्नोंकी स्थिति उत्तरोत्तर खराब हो रही है।

§४. P संग्रहका आन्तर परिचय

हम उपर लिख आये हैं कि, प्रस्तुत प्रन्थमें प्रबन्धों या प्रकरणोंका जो कम दिया गया है वह मूळ संब्रहोंके कममें नहीं है। यहां पर हमने उनको प्र० चिं० के कममें मुद्रित किया है। मूळ संप्रहोंमें, वे, इससे भिन्न रूपमें, आगे पीछे; लिखे हुए हैं। प्रसावित संग्रहका कम कैसा है, और कौन प्रकरण किस पन्नेमें, कहांसे प्रारंभ होता है और कहां समाप्त होता है, इसका दिग्दर्शन करानेवाली सूची नीचे दी जाती है जिससे संग्रहगत प्रबन्धकम, और उसका आन्तरिक परिचय भी, पाठकोंको ठीक ठीक हो जायगा।

					° to a	
P	संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम	1118	to the same of	100	पस्तुत प्रत्थमें मुद्रित-	सम
	प्रवन्धनाम 💮		पत्र. पृष्ठि. पंचि	े प्रबन्ध	गांक , प्रकरणांक	प्रष्ठांक
?	*पादलिप्ताचार्य प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	37 9			
2	*रत्नश्रावक प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	3998		F 7 14 7 12 02 -	
* 3	उज्जयन्ततीर्थआत्मकरण प्र०	्रप्रा° स॰	42 ६	86	§ २२१	96-99
8	मुञ्जराज प्रबन्ध	∫ प्रा° स°	€99₹ ७₹ €	9	§ २२-§ २३	१३-१५
4	अमारिविषये कुमारपाल प्र॰	{ प्रा॰ स॰	63 y	२६'	\$28	88-88
Ę	राणकआंबड प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	S9 4 S 9	* 79	\$68-862	\$6-88
9	रामराज्योपरि कथा	{ प्रा॰ स७	909 0	*†?	885	6-6
6-0	रैवततीर्थोद्धार तथा पाज प्रबन्ध	∫ प्रा॰ स॰	909 9	२२-२३	§ ६२-§६३	\$8
20	आरासणसत्कनेमिचैत्य प्र॰	{ प्रा॰ स॰	90790	20	§ ५ ६	30-38
33	रैवततीर्थ प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	999 9	80	\$ 286	99
१२	फलवर्द्धिकातीर्थ प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	99२ ३	38	849	35
23	पृथ्वीराज प्रबन्ध	(प्रा° स॰	39290	80	§ १९९-§ २००	62-52
38	जयचन्द्र प्रबन्ध	प्रा° स॰	989 ¢	85	§ २०२–§ २०५	66-90
१५	शत्रुञ्जयोद्धार प्रवन्ध	प्रा° स°	989 2	40	§ २२२–§ २२३ .	66-600
?इ.	मंत्रियशोवीर प्रवन्ध	(प्रा° स°	949 3	32	§ १०९-§ ११0	- 86-65
१७	सीतवाहन प्रबन्ध	्रग्रा ^० स॰	989 & 987 &	٦.	\$ 20	
35	शान्तिस्तव प्रबन्ध	प्रा॰	182 9	५६	§ २३२	2009

^{*} ये दोनों प्रवन्ध, राजशेखर सुरिके प्रवन्धकोशमें हैं। पिछले प्रवन्धके अन्तमें उल्लेख है कि 'रत्नश्रावकप्रवन्धो विसर्जिताः (तः ?) श्रीराजशेखरसूरिभिर्मलधारिगच्छीयैविरचितः। श्रवन्थकोशमें आ जानेसे अर्थात् ही हमने इनको प्रस्तुत प्रन्थमें स्थान देना अनावश्यक समझा।

† इस कथाके बाद, सिद्धराजकी स्तुतिविषयक निम्नलिखित सुप्रसिद्ध श्लोक लिखा हुआ है-

महालयो महायात्रा महास्थानं महासरः। यत्कृतं सिद्धराजेन क्रियते तन्न केनचित् ॥१॥

इसके बाद वे दो तीन पंक्तियां लिखी हुई हैं, जो प्रस्तुत संप्रहमें, विक्रमप्रबन्धके 🖇 १० वें प्रकरणमें हमने (प्रष्ठ ५, पंक्ति १९-२३) दीं हैं। इसमें प्रारम्भकी पंक्ति 'अन्यदा एकं पण्डितं द्विजं कणावचयं कुर्वाणं विक्रमादित्यः प्राह-।' इस प्रकार है; और दोनों गाथाओं में कुछ थोडासा पाठ-मेद भी नजर भाता है। इस प्रतिमें ये गाथाएं इस प्रकार हैं-

निअउअरपूरणिम असमत्था किं च तेहिं जाएहिं। सुसमत्था जे न परोवयारिणो तेह(हिं)वि न किंचि॥१॥

तेह(हिं)वि न किंचि भणिए विक्रमराएण देवदेवेण। दिन्नं मायंगसयं एगा कोडी हिरण्णस्स ॥ २॥

*† विक्रमके साथ सम्बन्ध रखनेवाले, जितने प्रकरण हमको इन संप्रहोंमें मिले, उन सबको हमने, इस प्रन्थमें, 'विक्रमप्रवन्ध' ऐसा एक मुख्य बिरोलेख दे कर, उसके अवान्तर प्रकरणोंके रूपमें सङ्कलित किया है। इसलिये यह 'रामराज्योपरि कथा'वाला प्रस्तुत • प्रतिमेंका प्रकरण भी, इस १ संख्याबाळे मुख्य प्रवन्धके अन्तर्गत एक प्रकरण-खण्ड है। ऐसा ही आगे भी वस्तुपाळ आदिके प्रवन्धमें समझना चाहिए। İ इस प्रवन्धके बाद, एक वह श्लोक लिखा हुआ है जिसमें, सिद्धराजने देवसूरिके कथनसे सिद्धपुरमें, एक चतुर्दारवाले जैन मन्दिरके

बनवानेका उल्लेख है। प्रस्तुत प्रन्थमें, वह श्लोक (क्रमांक ९६) पृष्ठ ३० पर, मुद्रित है।

	रात्रुक्षय माहात्म्य प्रबन्ध	{ प्रा∘ स॰	303 3 20338	*34	§१२२ं-§१४८	98-89
	[वस्तुपाल प्रवन्धान्तर्गत उत्तर भागां] त्रूणिगवसही प्रवन्ध • •	{ प्रा॰ स॰	\$0998 \$0998	×	· ×	५३ग
28	मयूर सर्प प्रवन्ध	{ प्रा॰	₹0996	•	•	•
22	मंत्रि उद्यन प्रबन्ध	∫ प्रा॰	२०२ ५	20	§५९-§६०	32
23	777 9	∫ प्रा॰	₹99 ६	28	§ इ.१	33
28	श्रीमाता प्रबन्ध	∫ प्रा॰	२१२ २ २१२२०	36	§ १९ ६	68
29-	२६ तारणगढप्रासादरक्षण तथा	्रप्रा° स°	२१२२० २२२ ९	30	११०४-११०५	89-86
	अजयपाल प्रबन्धं	7	Sun & Act		The street	APPE W.
20	वस्तुपाल प्रबन्ध				OH THE REAL PROPERTY.	. e. e.
	[१] आशाराज प्रबन्ध ⁸) स॰	२२२ १२ २२२ १७	×	×	५३
	[२] वस्तुपाल प्रवन्धान्तर्गत पूर्व भाग	∫ प्रा॰	२२२१८	39	§११७-§१२२	48-46.
\$770 53.2	[३] वस्तुपाल प्रवन्धगत परिशिष्टात्मक- अन्तिम वर्णन ⁵		२४२ ७ २५११८	"	§ १४९-§ १५७	\$e-9\$
26	विधिविषयक उदाहरण) प्रा॰ स॰	२५२ १ २६१ ७	90	§ २३५	१०९-११०
20	स्त्रीचरित्र प्रबन्ध	∫ प्रा° {स°	२६१ ७ २६२ २	?	89	8

॥ इस प्रबन्धका समावेश वस्तुपाल अवन्धके अन्तर्गत होता है। यह इस जगह बिना किसी पूर्वसंबन्धके यों ही छुड़ होता है। इसका आदि वाक्य 'श्रीशात्रुअयमाहात्म्यं लिख्यते' ऐसा है और उसके बाद, फिर वे सब पद्य लिखे हैं जो इस संग्रहमें १५७ से लेकर १६५ तकके कमांकमें दिये हुए हैं। इसके बाद, उसीके आगेके § १२३ वें प्रकरणवाला वर्णन चाल होता है जो आखिरमें § १४८ वें प्रकरणके साथ, समाप्त होता है। यह एक प्रकारसे वस्तुपालप्रबन्धका उत्तरभाग है। पूर्वभाग आगे जा कर लिखा है, जो २७ वें प्रबन्धमें मिलता है।

¶ यह प्रबन्ध इस P संप्रहके अतिरिक्त Be संप्रहमें भी लिखा हुआ है, और वह कुछ जरा विस्तृत रूपमें है; इसलिये हमने प्रस्तुत ग्रंथमें, उसीको मुख्य स्थान दिया है और इस प्रतिवाले प्रबन्धको उसकी पाद-टिप्पनीके रूपमें उद्धृत कर दिया है।-देखो पृष्ठ ५३ परकी पहली टिप्पनी।

1 इस प्रबन्धको हमने छोड दिया है। एक तो इसका सम्बन्ध, यों ही प्रबन्धिनितामणिगत विषयके साथ नहीं है; और दूसरा कारण यह है, कि, प्रस्तुत प्रतिका वह पन्ना जिसमें यह प्रबन्ध लिखा हुआ है, एक किनारे पर इतना खिर गया है कि जिससे इसका पाठोद्धार करना सर्विथा अशक्य-सा हो गया है।

2 प्रतिमें तारणगढप्रासाद्रक्षणप्रवन्ध तथा अजयपालप्रवन्ध ये दोनों प्रकरण जुदा जुदा प्रवन्ध करके लिखे हैं। हमने

इनको एक ही 'अजयपालप्रवन्ध' के शीर्षकके नीचे दो जुदा जुदा प्रकरणोंके रूपमें मुदित किये हैं।

[विक्रमचरित्रान्तर्गत]

3 'आशाराजप्रवन्ध' वस्तुपाल प्रवन्ध-ही-का आदिम भाग होनेसे हमने इसे, उसी प्रवन्धके अन्तर्गत § ११६ वें अंकवाले प्रकरणके तौर पर रख दिया है। यह प्रकरण, इस प्रतिके सिवा Ba और Ps संज्ञक संप्रहोंमें भी मिलता है और वह कुछ विशेष स्पष्टतावाला है इस 'लिये हमने मुख्य स्थान उसको दे कर, इस प्रतिवाले उल्लेखको पाद-टिप्पनीमें प्रविष्ठ कर दिया है।—देखो, वहीं, पृष्ठ ५३ परकी तीसरी टिप्पनीमें

4 इसका प्रारम्भ, § ११७ वें प्रकरणके (पृष्ठ ५४, पंक्ति १२) "इतो व्याघ्रपछीयो राणक आनाए" इस वाक्यसे होता है, और समाप्ति पूर्वोक्त शत्रुंजय माहात्म्यवाळे उल्लेखके (पृ० ५८, पंक्ति ११) पूर्ववर्ता "तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति।" इस वाक्यके साथ होती है।

5 यह वर्णन, पृष्ठ ६९ पर मुद्रित, § १४९ वें प्रकरणके "अत्राग्नेतनः प्रवन्धः कथनीयः ।" इस वाक्यसे प्रारंभ होता है और पृष्ठ ७१ की ५ वीं पंक्तिमें मिलनेवाले "[सं०] १२०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।" इस उल्लेखके साथ समाप्त होता है ।

~					0		
30	वलभी भंगप्रवन्ध	प्रा ॰ स॰	₹€₹ ₹	0	6.	e	0
38	न्यायविषयक यशोवर्भन्य प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	२७११० २७२ २	६७	§ २३२	200	-906
32	ेलाखणराउल प्रबन्ध	प्रा° स°	२७२ ३ ०	५२	§ २२५-§ २२७	508	-907
33	चित्रक्टोत्पत्ति प्रवन्ध	प्रा° स°	२८२ ९ २८२११	५३	§ २२८		१०३
38	परोपकारविषयक उदाहरण	प्रा° स°	₹८₹99	80	§ २३६		११०
39	उद्यमविषयक उदाहरण	(प्रा° स°	२८२१८	इ१	§ २३७		११०
38	दानविषयक उदाहरण	्रप्रा ^० स॰	२९१ ५ २९११५	६२	§ २३८		355
39	अम्बुचीच नृप प्रबन्ध	्रप्रा॰ स॰	२९११५ २९२ ४	46	§ २३४		१०८
36	कुमारपालराज्यप्राप्ति प्रवन्ध	प्रा॰ स॰	२९२ ४ ३०११५	२४	§ 99-§C.0	39	-39
30	कर्णवाराविषयक उदाहरण	∫ प्रा° स°	₹0994 ₹0₹99	83	§ २३९	355	-११२
80	सोनलवाक्यानि'	∫ प्रा॰	30799		§ ६ ४		38
1	पुष्टिपकालेखात्मक गाथाद्रय ⁸	0 -					१३६
1	पंक्तिद्वय [°]				C-TO-10		१३६

इस प्रकार ये ४० प्रबन्ध इस संग्रहमें संग्रहीत हैं। इस सूचीके अवलोकनसे ज्ञात होता है कि प्रथमके दो प्रबन्ध, राजशेखर सूरिके प्रबन्धकोशमेंसे लिख लिये गये हैं, और ३० वां प्रबन्ध, सम्भवतः मेरुतुङ्ग सूरिके प्रबन्धचिन्तामणि प्रन्थमेंसे नकल किया हुआ है। इनके सिवा, कुमारपाल और विक्रमचरित्रके सम्बन्धवाले कुछ प्रकरण, इसमें ऐसे हैं जिनका प्रबन्धकोशगत तत्तत् प्रकरणोंके साथ बहुत घनिष्ठ साम्य दिखाई देता है। विशेष

करके निम्न सूचित प्रकरण तुलना करने योग्य हैं -

10 Section of the section of	पुरातनप्रबन्धसंग्रह ी	प्रबन्धकोश
कुमारपालप्रबन्धान्तर्गत प्रकरण	\$28	896
विक्रमचरितान्तर्गत प्रकरण	\$??	\$66

ये प्रकरण इन दोनों संप्रहोंमें, शब्द और अर्थ दोनों प्रकारसे, प्रायः समान प्रतीत होते हैं, लेकिन हैं ये भिन्न

6 यह प्रबन्ध, प्रबन्धचिन्तामणिके, पृष्ठ १०७-९ पर मुद्रित, प्रकरणांक २०२-२०३ वाले इसी नामके प्रबन्धके साथ शब्दशः

मिलता है-और बहुत करके उसी प्रन्थमेंसे यह नकल किया गया है-अतः हमने इसे यहां पुनः मुद्रित करना निरर्थक समझा है।

7 सिद्धराज जयसिंद्दे इतिहासके साथ सम्बन्ध रखनेवाले सोनलदेवीके ये वाक्य, जो गूजरात और सौराष्ट्रमें, लोक गीतके रूपमें ख्व प्रसिद्ध हैं और जिनके शब्दोंमें सिद्धराजके जीवनकी, घर घर गाई जानेवाली एक इतिहासानुल्लिखत, कलंकित कथा ओतप्रोत हो रही है, विना किसी विशेषोल्लेखके इस प्रतिमें, अन्तमें, लिखे हुए मिलते हैं। हमने इनको, सिद्धराजके समयके प्रकरणोंके अन्तमें, पृष्ठ ३४ -पंक्ति ३० पर, एक गौण प्रकरणके ढंगसे, कमांक ६ ६४ के नीचे, सुद्दित किये हैं।

8 प्रस्तुत ग्रन्थके पृष्ठ १३६ पर, प्रथम जो दो प्राकृत गाथाएं मुद्रित हैं, वे इस प्रतिमें, पत्र ३० की पहली पूंठी (पृष्ठि=पार्श्व) पर, सबसे नीचेकी पंक्तिमें लिखी हुई हैं। पंक्तिके प्रारंभमें '×' ऐसा चिह्न दिया हुआ है जिसका अर्थ होता है, कि यह पंक्ति, ऊपरकी किसी पंक्तिमें लिखते लिखते छूट गई अतः यहां नीचे (हांसियेमें) लिख दी गई है। लेकिन ऊपर किस जगह और कौन पंक्तिमें यह लिखनी-

रह गई इसका सूचक कोई चिह्न इस सारे पत्रेमें कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। इसकी विशेष मीमांसा आगे चल कर की है।

9 इन दो पंक्तियोंमें से, पहलीमें, सं० १४३० में खर्गवास प्राप्त करनेवाले किसी सावदेव सूरिका उल्लेख है। इसका पूर्वापर क्या सम्बन्ध है सो ठीक माल्स नहीं देता। दूसरी पंक्तिमें लिपिकर्ताका -जिसने इस प्रतिका कमसे कम उत्तरी हिस्सा लिख कर पूरा किया-समयादि स्चक निर्देश है। ये दोनों पंक्तियां भी प्रन्थान्तमें, पृष्ठ १३६ पर मुदित हैं।

भिन्न-कर्न् । हमारा अनुमान है, कि प्रबन्धकोशकी अपेक्षा प्रस्तुत प्रतिवाले इन प्रकरणोंकी रचना पुरातन है। राजशेखर सूरिने शायद कुछ थोडा बहुत भाषा-संस्कार करके इनको अपने प्रन्थमें सिन्निविष्ट कर लिया है। क्यों कि, अस्तुत संप्रहगत इन प्रकरणोंकी भाषा, अधिक लौकिक ढंगकी—परिकार विहीन और शिथिल सहपमें—है; और प्रबन्धकोशमें वह परिष्कृत और सुश्चिष्ट ह्रपमें है। अतः, इससे यह सूचित होता है, कि राजशेखर सूरिके पहले, किसीने, इन प्रकरणोंको, किसी प्रथमाभ्यासी विद्यार्थीके पढनेके लिये, इस प्रकारकी बहुत ही सीधी-सादी भाषामें लिखा, और फिर राजशेखर सूरिने उनमें उक्त प्रकारका कुछ संशोधन-परिमार्जन किया। प्रवन्धकोशके कर्ताने अपने पहलेकी कृतियोंमेंसे ऐसे कई प्रकरण ज्यों के लों, अथवा कुछ थोडा फेरफार कर, अपने प्रन्थमें किस प्रकार सिम्मिलित कर लिये हैं, इसकी कुछ आलोचना हमने उस प्रन्थकी भूमिकामें की है।

इसी प्रकार यदि, प्रस्तुत संग्रहके कुछ प्रकरणोंका मिलान, प्रवन्धिचन्तामणिगत उन उन प्रकरणोंके साथ किया जाय तो उनमें भी कुछ ऐसी शाब्दिक और आर्थिक समानता जरूर दिखाई देगी। यद्यपि वह समानता प्रवन्धकोशके जितनी विपुल और विशेषरूपमें नहीं है, जिससे यह स्पष्टताके साथ निर्णीत किया जा सके कि प्र० चिं० के कर्ताने भी इस संग्रहके कुछ प्रकरणोंका अनुसरण किया है; तथापि उसके लिये कुछ अनुमान अवश्य किया जा सकता है। प्र० चिं० प्रथित मुझराज प्रवन्ध, प्रस्तुत संग्रहिलिखत उस प्रवन्धके साथ बहुत ही सदशता रखता है। इसी तरह कुछ और और प्रवन्धोंमें भी परस्पर कितनाक साम्य दिखाई देता है। निम्न सूचित प्रकरण इस दृष्टिसे मिलान कर देखने योग्य हैं—

प्रबन्धनाम	प्र० चिं०	प्रस्तुत मन्थ
उदयन प्रबन्ध	\$60	899
रैवततीर्थोद्धार प्रबन्ध	8800	§ ६ २
सोनलवाक्य	१०६	§ इप्र
अंबड प्रबन्ध •	8 ? 3 9	\$28
अजयपाल प्रबन्ध •	§ १७¢	§ 208-

इस तुलनासे यह बात स्चित होती है कि-प्रस्तुत संप्रहमें कुछ प्रकरण या प्रवन्ध तो ऐसे हैं जो प्रवन्धिवन्तामणि या प्रवन्धकोशमेंसे लिखे हुए या उद्धृत किये हुए हैं, अतएव उनसे अर्वाचीन हैं; लेकिन कुछ प्रकरण ऐसे हैं जो उन प्रन्थोंसे भी पुरातन हो कर, उक्त प्रन्थोंके कर्ताओंने, शायद इन्हीं परसे अपने प्रकरण गुम्फित किये हों। यह बात तभी सिद्ध हो सकती है जब इसका प्रमाणभूत कोई उल्लेख इस संप्रहमें दृष्टिगोचर होता हों। प्रस्तावित प्रन्थके पृष्ठ १३६ पर जो दो प्राकृत गाथाएं मुद्रित हैं वे, इस कथनके लिये, प्रमाणभूत कही जा सकतीं हैं। ये दोनों गाथाएं, इस मंप्रहके ३० वें पत्रके प्रथम पृष्टमें, सबसे नीचेकी पंक्तिमें, हासियेमें लिखी हुई हैं। इसके प्रारंभमें '×' ऐसा चिन्ह दिया हुआ है जिसका मतलब होता है कि यह पंक्ति, उपर चाल लिखानमें, लिखते समय, भूलसे छूट गई है जिससे इसको यहां पर हासियेमें लिखा गया है। लेकिन, उपर चाल लिखानमें, यह किस जगह छूटी हुई है इसका सूचक कोई चिन्ह कहीं नहीं दिखाई देता। इससे यह निश्चततया ज्ञात नहीं होता कि यह पंक्ति यथार्थमें किस प्रकरणके या प्रवन्धके अन्तमें होनी चाहिए; तथापि, जैसा कि इस संप्रहकी पृष्टवार दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इस अन्तिम पत्रके प्रथम पार्थ पर कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्ध समाप्त होता है, और उसके बाद कर्णवारा-विषयक उदाहरणभूत प्रवन्ध लिखा हुआ है। सो इस पंक्तिका स्थान, नियमानुसार, उक्त कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्धके अन्तमें होना चाहिए। परंतु, हमारा अनुमान है कि इसका वास्तविक स्थान, या तो उसके आगेके कर्णवारा प्रवन्धके अंतमें होना चाहिए या उसके बाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यरूप १०-११ प्राकृत पद्य लिखे हुए हैं उनके अन्तमें अंतमें होना चाहिए या उसके बाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यरूप १०-११ प्राकृत पद्य छिले हुए हैं उनके अन्तमें

होना चाहिए। कहीं भी हों, लेकिन है वह पंक्ति इसी संबहके साथ सम्बन्ध रखनेवाली; इसमें कोई सन्देह नहीं है। इन गाथाओंका अर्थ है यह कि—"नागेन्द्र गच्छके आचार्य उदययभ सूरिके शिष्य जिनभद्रने, मंत्री-श्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, विक्रम संव्रत् १२९० में, इस नाना-कथानक-प्रधान प्रबन्धावलिकी रचना की।"

इस उहेखसे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि प्रस्तुत संग्रहके लिपिकर्ताने जिन पुराने संग्रहोंमेंसे ये सब प्रबन्ध नकल किये उनमें 'नाना कथानक प्रधान प्रबन्धावित' नामका (या उसके सूचक वैसे ही किसी और नामका) एक संप्रह वह भी था जिसकी रचना, मंत्रीश्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, संवत् १२९० में उदयप्रभसूरिके शिष्य जिनभद्रने की थी। जिनभद्रकी इस नाना कथानकवाली प्रबन्धावलिका स्वतंत्र अस्तित्व अभी तक और कहीं हमारे देखनेमें नहीं आया इससे यह पता नहीं लग सकता कि इस प्रबन्धाविलिमें सब मिलाकर कितने कथानक थे और कौन कौन विषयके थे। प्रस्तुत संग्रहके लिपिकर्ताने, जैसा कि ऊपर दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इन प्रबन्धोंको कई भिन्न भिन्न प्रन्थों मेंसे लिखा है और सो भी अस्तव्यस्त ढंगसे। इससे इसमें पुराने और नये प्रवन्धोंका एक साथ संमिश्रण हो कर उनकी एक तरहसे खिचडी बन गई है, जिससे यह जानना या निश्चय करना भी कठिन-सा हो गया है कि, इसमें उक्त गाथा-कथित जिनभद्रके रचे हुए प्रबन्ध कितने और कौन कौन हैं; तथा उसके पीछेके कितने और कौन कौन हैं?। तथापि भाषा और रचना शैलीका सूक्ष्मतया निरीक्षण करने पर इसमेंके कितनेएक प्रकरणोंका कुछ कुछ विश्लेषण या पृथकरण किया जा सकता है। पूर्वोक्त राजदोखर सूरिके रचे हुए जो पादलिप्ताचार्य और रत्नश्रावक नामके दो प्रबन्ध इसमें संगृहीत हैं उनकी तथा प्रबन्धचिन्तामणिमेंसे नकल किये गये वलभी भंग प्रवन्धकी भाषा, और और प्रवन्धोंकी भाषासे विल्कुल अलग पड जाती है। मंत्रियशोवीर प्रबन्ध और वस्तुपाल-तेजःपाल प्रबन्ध-ये दोनों प्रकरण भी किसी दूसरेकी कृति होने चाहिए। क्यों कि इन दोनोंमें वर्णित कितनीक वस्तु-घटनाएं संवत् १२९० के पीछेकी हैं। यशोवीर प्रवन्धमें, संवत् १३१० में जलालुद्दीन सुल्तान द्वारा, मारवाड अन्तर्गत जालोरके दुर्ग सुवर्णगिरिप्र किये जानेवाले आक्रमणका उद्धेख हैं; और इसी तरह, वस्तुपाल प्रबन्धमें, संवत् १३०८ में होनेवाले मंत्री तेजपालके मरणका निर्देश है। अतः ये दोनों प्रवन्ध अर्थात् ही जिनभद्रके बाद की रचना है। इनके अतिरिक्त, और सब प्रवन्ध, यदि उक्त जिनभद्रकी कृतिकृप मान लिये जांय तो उसमें कोई बाधक प्रमाण हमें नहीं दिखाई देता।

§ 4. P संग्रहके कुछ महत्त्वके प्रवन्ध

इस संग्रहमें, कुछ प्रबन्ध, ऐतिहासिक दृष्टिसे बडे महत्त्वके हैं। पृथ्वीराजप्रबन्ध (१३), जयचन्द्रप्रबन्ध (१४), मंत्रि यशोवीरप्रबन्ध (१६), वस्तुपालतेजःपालप्रबन्ध (१९, २०, २७), मंत्रिउदयनप्रबन्ध (२२), वसाह आभडप्रबन्ध (२३), अजयपालप्रबन्ध (२५-२६) और लाखणराउलप्रबन्ध (३२) आदि प्रकरणों इतिहासोपयोगी जो सामग्री मिलती है वह बहुत ही विश्वसनीय और विशेषत्ववाली है। इसका विशेष कहापोह करना यहां अप्रासंगिक है। इस प्रन्थके अगले भागों में उसका यथेष्ट अवलोकन और आलोचन आदि करनेका हमारा संकल्प है ही।

हम यहां पर, एक बात पर विद्वानोंका लक्ष्य आकर्षित करना चाहते हैं; और वह बात यह है कि इस संग्रह गत पृथ्वीराज और जयचन्द विषयक प्रबन्धोंसे हमें यह ज्ञात हो रहा है, कि चन्दकिव रचित पृथ्वीराजराँसों नामक हिन्दीके सुप्रसिद्ध महाकाव्यके कर्नृत्व और कालके विषयमें जो, कुछ पुराविद् विद्वानोंका यह मृत है कि 'वह प्रन्थ समूचा ही बनावटी है और १७ वीं सदीके आसपासमें बना हुआ है' यह मत सर्वथा सत्य नहीं है। इस संग्रहके उक्त प्रकरणोंमें जो ३-४ प्राकृत-भाषा पद्य [पृष्ठ ८६, ८८, ८९ पर] उद्धृत किये हुए मिलते हैं, उनका

पता हैमने उक्त रासोमें लगाया है और इन ४ पद्योंमें से ३ पद्य, यद्यपि विकृत रूपमें लेकिन शब्दशः, उसमें हमें मिल गये हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि चंद कवि निश्चिततया एक ऐतिहासिक पुरुष था और वह दिल्लीश्वर हिंदुसम्राद पृथ्वीराजका समकालीन और उद्धका सम्मानित एवं राजकिव था। उसीने पृथ्वीराजके कीर्तिकला-पका वर्णन करनेके लिये देश्य प्राकृत भाषामें एक काव्यकी रचना की थी जो पृथ्वीराजरासोके नामसे प्रसिद्ध हुई। इस यहां पर, पृथ्वीराजरासोमें उपलब्ध विकृत रूपवाले इन तीनों पद्योंको, प्रस्तुत संग्रहमें प्राप्त मूलरूपके साथ

साथ, उद्भृत करते हैं, जिससे पाठकोंको इनकी परिवर्तित-भाषा और पाठ-भिन्नताका प्रत्यक्ष बोध हो सकेगा।

प्रस्तुत संग्रहमें प्राप्त पद्य-पाठ।

इक्क बाणु पहुवीसु जु पहं कहं बासह मुक्कों, • इर भितिर खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्कउ। बीअं किर संधीउं भंमह सूमेसरनंदण!, पहु सु गडि दाहिमओं खणह खुहह सहंभरिवणु। फुड छंडि न जाह इहु जुन्भिज बारह पलकज खल गुलह। नं जाणउं चंदबलिहेड किं न वि छुटह इह फलह॥ —पृष्ठ, ८६, पर्यांक (२७५).

अगहु म गहि दाहिमओं रिपुरायखयंकर, कूड मंत्रु मम ठवओं एडु जंवूय(प?)मिलि जग्गर । सद नामा सिक्खवउं जइ सिक्खिविउं बुज्झइं, जंपइ चंदवलिडु मज्झ परमक्खर सुज्झइ । पहु पहुविराय सहंभरिधणी सयंभरि सउणइ संभरिसि, कहंवास विआस विसट्टविणु मच्छिबंधिबद्धओं मरिसि ॥ —पृष्ठ वही, प्यांक (२०६).

त्रिण्हि लक्ष तुषार सवल पाषरीअई जसु हय, चऊदसय मयमत्त दंति गज्जंति महामय। वीसलक्ष पायक सफर फारक धणुद्धर, स्हूसह अरु बलु यान संख कु जाणइ तांह पर। छत्तीसलक्ष नराहियइ विहिविनडिओं हो किम भयउ, जइचंद न जाणउ जल्हुकइ गयउ कि मूउ कि धरि गयउ॥

—पृष्ठ ८८, पद्यांक (२८७).

पृथ्वीराजरासीमें प्राप्त पद्य-पाठ।

पक बान पहुमी नरेस कैमासह मुक्यो ।
उर उप्पर थरहुन्यो बीर कष्वंतर चुक्यो ॥
वियो बान संघान हन्यो सोमेसर नंदन ।
गाढो किर निम्रह्यो पनिव गड्यो संमिर घन ॥
थल छोरि न जाइ अभागरी गाड्यो गुन गिहं अग्गरी ।
इम जंपै चंदबरिद्या कहा निघट्टे इय मलो ॥
—रासो, पृष्ठ १४९६, प्रय २३६.

अगह मगह दाहिमो देव रिपुराइ षयंकर।
कूरमंत जिन करो मिले जंबू वे जंगर॥
मो सहनामा सुनौ पह परमारथ सुज्झै।
अब्बै चंद विरद्द वियौ कोइ पह न बुज्झै॥
प्रथिराज सुनवि संभरि धनी इह संभिल संभारि रिस।
कैमास बलिष्ठ बसीठ विन म्लेच्छ बंध बंध्यौ मरिस॥
—रासो, पृष्ठ २९८२, पद ४७ई.

असिय लष्य तोषार सजड पष्पर सायद्दल ।
सहस हस्ति चवसिट्ठ गरुथ गर्जात महावल ॥
पंच कोटि पाइक सुफर पारक धनुद्धर ।
जुध जुधान वर बीर तोन वंधन सद्धनभर ॥
छत्तीस सहस रन नाइबौ विही त्रिम्मान ऐसो कियौ ।
जैचंद राइ कविचंद कहि उद्धि बुड्डि के धर लियौ ॥
—रासो, पृष्ठ २५०२, प्रव २१६.

इसमें कोई शक नहीं है कि पृथ्वीराजरासो नामका जो महाकाव्य वर्तमानमें उपलब्ध है उसका बहुत बडा भाग पीछेसे बना हुआ है। उसका यह बनाबटी हिस्सा इतना अधिक और विस्तृत है, और उसमें मूल रचनाका अंश इतना अल्प और वह भी इतनी विकृत दशामें है, कि साधारण विद्वानोंको तो उसके बारेमें किसी प्रकारकी कल्पना करना भी किटन है। मालूम पडता है कि मूल रचनाका बहुत कुछ भाग नष्ट हो गया है और जो कुछ अवशेष रहा है वह भाषाकी दृष्टिसे इतना श्रष्ट हो रहा है कि उसको खोज नीकालना साधारण कार्य नहीं है। मनभर बनाबटी मोतीके देरमेंसे मुद्दीभर सबे मोतीयोंको खोज नीकालना जैसा दुष्कर कार्य है वैसा ही इस सवालाख श्लोक प्रमाण-वाले बनावटी पद्योंके विशाल पुंजमेंसे चंद कविके बनाये हुए हजार पांच सौ अस्त-व्यक्त पद्योंको ढूंढ नीकालना

कित कार्य है । तथापि, जिस तरह, अनुभवी परीक्षक, परिश्रम करके, लाख झूठे भोतीयोंमें से मुद्दीभर सचे भोतीयोंको अलग छांट सकता है उसी तरह भाषाशास्त्र-मर्भज्ञ विद्वान् इन लाख बनावटी श्लोकोंमें से उन अल्पसंख्य क सचे पद्योंको भी अलग नीकाल सकता है जो वास्तवमें चन्द कविके बनाये हुए हैं।

हमने इस महाकाय प्रन्थके कुछ प्रकरण, इस दृष्टिसे, बहुत मनन करके पढे तो हमें उसमें कई प्रकारकी भाषा और रचना पद्धितका आभास हुआ। भाव और भाषाकी दृष्टिसे इसमें हमें कई पद्य ऐसे अलग दिखाई दिये जैसे छासमें मक्खन दिखाई पडता है। हमें यह भी अनुभव हुआ कि काशीकी नागरी प्रचारिणी सभाकी ओर से जो इस प्रन्थका प्रकाशन हुआ है वह भाषा-तत्त्वकी दृष्टिसे बहुत ही अष्ट है। उसके संपादकों को रासोकी प्राचीन भाषीका कुछ विशेष ज्ञान रहा हों ऐसा प्रतीत नहीं हुआ। विना प्राक्षत, अपभंश और तद्भव पुरातन देश्य भाषाका गहरा ज्ञान रखते हुए इस रासोका संशोधन—संपादन करना मानों इसके अष्ट कलेवरको और भी अधिक अष्ट करना है। इस प्रन्थमें हमें कई गाथाएं दृष्टिगोचर हुई जो बहुत प्राचीन हो कर शुद्ध प्राक्षतमें बनी हुई हैं; लेकिन वे इसमें इस प्रकार अष्टाकरमें छपी हुई हैं जिससे शायद ही किसी विद्वान को उनके प्राचीन होनेकी या शुद्ध प्रक्षतमय होनेकी कल्पना हो सके। यही दशा शुद्ध संस्कृत क्षोकोंकी भी है। संपादक महाशयोंने, न तो भिन्न भिन्न प्रतियोंमें प्राप्त पाठान्तरोंको चुननेमें किसी प्रकारकी सावधानता रखी है, न खरे-खोटे पाठोंका पृथकरण करनेकी कोई विन्ता की है; न कोई शब्दों या पदोंका व्यवस्थित संयोजन या विश्लेषण किया गया है न विभक्ति अथवा प्रत्यका कोई नियम ध्यानमें रखा गया है। सिर्फ 'यादशं पुस्तके दृष्टं तादशं लिखितं मया।' वाली उक्तिका अनुसरण किया गया माल्यम देता है।

माल्यम पडता है कि चंद कि विकी मूल कृति बहुत ही लोकप्रिय हुई और इस लिये ज्यों ज्यों समय बीतता गया त्यों त्यों उसमें पीछेसे चारण और भाट लोग अनेकानेक नये नये पद्य बनाकर मिलाते गये और उसका कलेवर बढाते गये। कण्ठानुकण्ठ प्रचार होते रहनेके कारण मूल पद्योंकी भाषामें भी बहुत कुछ परिवर्तन होता गया। इसका परिणाम यह हुआ कि आज हमें चंदकी उस मूल रचनाका अस्तित्व ही विलुप्त-सा हो गया माल्यम दे रहा है। परंतु, जैसा कि हमने उपर सूचित किया है, यदि कोई पुरातन-भाषा-विद् विचक्षण विद्वान, यथेष्ट साधन-सामग्रीके साथ पूरा परिश्रम करे तो इस कूडे-कर्कटके बडे ढेरमेंसे चन्द कविके उन रक्षरूप असली पद्योंको खोज कर नीकाल सकता है और इस तरह हिन्दी भाषाके नष्ट-श्रष्ट इस महाकाल्यका प्रामाणिक पाठोद्धार कर सकता है। नागरीप्रचारिणी सभाका कर्तव्य है कि, जिस तरह पूनाका भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट महाभारतकी संशोधित आवृत्ति तैयार कर प्रकाशित कर रहा है, उसी तरह, वह भी हिन्दी भाषाके महाभारत समझे जानेवाले इस पृथ्वीराजरासोकी एक संपूर्ण संशोधित आवृत्ति प्रकाशित करनेका पुण्य कार्य करें।

§ ६. (२) B संज्ञक संग्रह

३३ पेन्नोंका स्थमाव है। ७५ मेंसे ४२ पन्ने विद्यमान हैं। पन्नोंका नाप, प्रायः छंबाईमें १०ई इंच और चौडाईमें ४६ई इंच है। प्रत्येक पृष्ठि॰ (पार्थ) पर १५-१५ पंक्तियां लिखी हुई हैं। अक्षर सुवाच्य और लिखान प्रायः छुद्ध है। अनितम भाग अप्राप्य होनेसे, यह प्रति कुब लिखी गई थी इसके जाननेका कोई निश्चित साधन नहीं रहा। प्रतिकी स्थितिको देखकर अनुमानसे यह कहा जा सकता है कि कमसे कम कोई च्यार सौ वर्ष पहले की यह लिखी हुई जरूर होगी।

§ ७. B संग्रहका आन्तरिक परिचय

जैसा कि ऊपर सूचित किया गया है, इस संग्रहका अन्तिम भाग अनुपलब्ध होनेसे, इसका संग्रहकर्ता या संक-छनकर्ता कौन है और उसका क्या समय है इसादि बातें जाननेका कोई उपाय नहीं है। वैसे ही यह भी ठीक नहीं जाना जा सकता कि इस संप्रहमें सब मिला कर ऐसे कितने प्रबन्ध या प्रकरण संगृहीत थे। जो अन्तिम पत्र (७५ वां) विद्यमान है उसमें नीलपटवधप्रबंध [देखो प्रस्तुत प्रन्थका पृष्ठ १९, प्रवन्धांक १०, प्रकरणांक (३३] समाप्त हुआ है और आगे फिर देवाचार्यप्रबन्ध प्रारंभ हुआ है। नीलपटवधप्रबन्धका क्रमांक इसमें ६६ दिया हुआ है, लेकिन, जैसा कि आगे दी हुई सूचिसे प्रतीत होता है, उसका वास्तविक क्रमांक ७० होना चाहिए। यदि, इसके आगे लिखे हुए देवाचार्यप्रबन्धके साथ ही इस संप्रहकी समाप्ति होती हों तो, इस प्रकार इसमें कमसेकम ७१ प्रबन्धोंका संग्रह होगा। इस संग्रहगत प्रबन्धोंका आकार-प्रकार देखनेसे हमारा अनुमान होता है कि, उपदेशतरंगिणी अन्थके कर्ता रह्मान्दिरगणीने, महामात्य वस्तुपालके कीर्तिदान प्रवन्धोंका वर्णन करते हुए, तद्विषयक विशेष ज्ञापनके लिये जिस २४ (चतुर्विशति) प्रबन्ध अर्थात् प्रबन्धकोश नाम प्रनथके साथ, (उसके जैसे ही विषयवाले) ७२ (द्वासप्तति) प्रबन्ध और ८४ (चतुरशीति) प्रवन्ध नामक जिन और दो प्रन्थोंका सूचन किया है, * उन्हींमें से यह एक प्रन्थ हों। यदि यह अनुमान सही हों तो, कमसेकम विक्रम संवत् १५०० के पहले इसका संकलन हुआ होना चाहिए। क्यों कि रत्नमन्दिर गणीके १६ वीं शताब्दीके प्रथम पादमें विद्यमान होनेके प्रमाण पाये जाते हैं । अतः उनके सूचित ७२ या ८४ प्रबन्धोंके संप्रह अवश्य ही उनके पूर्व की रचनायें होनी चाहिए। लेकिन हमारा यह अनुमान तबतक विशेष बलवान् नहीं माना जा सकता, जबतक, कहींसे इसका समर्थक और कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता।

§ ८. इस प्रतिमें प्रबन्धोंका संप्रह-क्रम कैसा है और हमने प्रस्तुत संप्रहमें उनको किस क्रममें मुद्रित किया है, इसका क्रमपूर्वक परिचय होनेके छिये यहां पर दोनों-छिखित और मुद्रित-संप्रहोंकी पृष्ठ-पंक्ति-आदि सूचक विस्तृत सूचि दी जाती है और उसके नीचे पाद-टिप्पनीमें जो कुछ विशेष ज्ञातव्य वस्तु माळूम दी, वह भी, सूचित कर दी गई है।

^{*} उपदेशतरंगिणीमें यह उक्केख इस प्रकार है—'इत्यादि श्रीवस्तुपालकीर्तिदानप्रबन्धाः रातशो यथाश्रुताः खयं वाच्याः ८४, २४, ७२ प्रबन्धेभ्यः । [यशोविजयजैनप्रस्थमाला, बनारस, में सुद्रित प्रति, ए० ७९]

[†] यद्यपि रत्नमन्दिर गणीने, उपदेशतरिक्षणीमें, अपना समय-सूचक कोई उल्लेख नहीं किया है, छेकिन इन्हींका बनाया हुआ एक भोजप्रबन्ध नामका प्रन्थ है उसके अन्तमें जो प्रशस्ति पद्य है उसमें, उस प्रन्थके बननेके समय आदिका निर्देश इस प्रकार किया हुआ है-

जातः श्रीगुरुसोमसुन्दरगुरुः श्रीमत्तपागच्छपस्तत्पादाम्बुजषट्पदी विजयते श्रीनन्दिरत्नो गणी। तच्छिष्योऽस्ति च रत्नमन्दिरगणिभोजप्रवन्धो नवस्तेनाऽसौ मुँनि-भूति-भूते-दादौधृत् संवत्सरे निर्मितः॥

इस प्रथमें ज्ञात होता है कि वि॰ सं॰ १५९७ में रलमन्दिरगणीने भोजप्रबन्धकी रचना पूरी की थी। सिवा, इसके उपदेशतरंगिणीकी वि॰ सं॰ १५९९ के चैत्र शु॰ के दिनकी हस्तलिखत प्रति पूनेके, भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट में, संरक्षित राजकीय प्रन्थसंप्रहमें विद्यमान है।

В:	संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम		(Same	प्रस्तुत	ा पुस्तकमें मुद्रित	क्रम '
	् प्रबन्धनाम		पत्र. पृष्टि. पंक्ति	प्रबन्धांक	् प्रकरणांक	पृष्ठांक
2-9	[विनष्ट'॥ १-७॥]		0000			
6	श्रीपुंजराजस्तत्पुत्रीश्रीमातावृ- त्तांतः ॥ ८॥	{प्रा∘ स∘	····992	•	•	•
9	वराहमिहरप्रबंधः ॥ ९॥	{प्रा∘ स॰	۶۰۹ و د۹ و	•	•	•
१०	नागार्जुनोत्पत्ति-स्तंभनकतीर्थाव-	{ प्रा° स°	89 9 99	·	•	•
28	भर्तृहरोत्पत्तिप्रबंधः ॥ ११ ॥	{ प्रा॰ स॰	S990	•	0	•
१२	वैद्यवारभटप्रबंधः ॥ १२॥	{ प्रा∘ स॰	9990 9293	•	•	0
23	पादलिप्तसूरिप्रबंधः ॥ १३ ॥	{ प्रा॰ स॰	99798	88	§२१०-§२१२	65-68
. \$8	मानतुंगाचार्यप्रबंधः॥ १४॥	∫ प्रा॰ स॰	997 8	ę	§ २४–§ २७	१५-१६
29	वीरगणीप्रबंधः ॥ १५॥	{प्रा° स°	12212	0	•	. 0
१६	अभयदेवसूरिप्रबंधः ॥ १६॥	{मा° स°	385 8	86	§ २१४-§ २१५	९५-९६

1 प्रारंभके १ से ६ तकके पत्र अनुपलब्ध होनेसें, १ से ७ तकके प्रबन्ध विनष्ट हो गये हैं । ये विनष्ट प्रबन्ध किस किस विषयके थे इसके जाननेका कोई साधन नहीं है ।

2 यह ब्रतांत प्रबन्धिचिन्तमणि गत इसी नामके प्रबन्धिक साथ [हमारी आवृत्तिके पृष्ठ १०९-११०; प्रकरणांक २०४-२०५] प्रायः शब्दशः मिलता हुआ है। इससे संभव है, कि इसके संप्राहकने यह प्रबन्ध उसी प्रन्थमें से नकल किया हो। संभव कहनेका कारण यह है कि इन दोनोंमें यथिप पाठकी समानता प्रायः शब्दशः मिलती हुई है, तथिप, किचित्, किंचित् प्रकारका पाठमेद भी मिलता है; और यह पाठमेद उससे कुछ भिन्न प्रकारका है जो प्रबन्धिचन्तामणिकी अन्यान्य सब प्रतियोंमें मिलता है।

3-6 ये चारों प्रबंध भी प्रबन्धिचन्तामणि स्थित उन्हीं नामोंके प्रबन्धोंकी प्रायः शब्दशः नकल हैं। इनका कम भी बैसा ही है जैसा प्र• चि॰ में है। [देखो, हमारी आवृत्तिके पृष्ठांक १९८ से १३२; और प्रकरणांक १९१८ से १२२४ तक] इनमें भी उसी प्रकारका कुछ पाठमेद मिलता है जो ऊपर वाली टिप्पनीमें स्चित किया गया है। प्र॰ चि॰ स्थित वराहमिहर प्रबन्धमें जो दो पद्य मिलते हैं [पद्यांक १६१-२६२] वे इस संग्रहमें नहीं हैं।

7 संग्रहका १३ वां पत्र अनुपलब्ध होनेसे इस प्रबन्धका विशेष भाग अप्राप्य है। विद्यमान १३ वें पत्रमें इस प्रबन्धकी निम्न उद्भुत पंक्तियां प्राप्त होतीं हैं—

श्रीमद्वीरगणस्वामिपादाः पांतु यदादरात् । कषायादिरिपुत्रातो भवेन्नागमनक्षमः ॥ १ ॥

श्रीमालं नगरं, तत्र धूमराजवंशीयो देवराजो नृपः। तत्र विणग्मुख्यः शिवनागो महाविणजः। अन्यदा श्रीधरणेंद्वाराधनात् परितोषे कलिकुंडकमं सर्वसिद्धिकरं अष्टनागकुलविषहरधरणेंद्रावाप्ततनमंत्रगर्भे धरणेंद्रस्तोत्रं चके।
तद्धापि जगति विषहरम्। तस्य पूर्णलता प्रिया। तत्पुत्रो वीरः। अनेककोटिद्रव्याधिपः। पित्रा सप्त कन्याः परिणावितः। ततः पितरि मृते वैराग्यान्नित्यमेव श्रीवीरवंदनाय याति। अन्यदा मार्गे संजातचौरोपद्रवेन खशालकगृहं गतः।
तस्य माता शुद्धार्थमायाता। शालेन हास्याचौरैवीरविनाशे.....।

8 इस प्रवन्धकी प्रारंभकी ५-६ पंक्तियां, विनष्ट १३ वें पत्रमें विद्धप्त हैं कैकिन BR संग्रहमें भी यह प्रवन्ध उपलब्ध होता है इस लिये उसमेंसे इसकी पूर्ति हो जाती है। विद्धप्त पत्रमें, प्रारंभकी पंक्तिसे के कर, प्रस्तुत सुद्रित संग्रह [प्र० ९५] की पंक्ति १४ वीमें आये हुए 'नवाज्ञानां युक्ति' शब्द तकका पाठ चला गया है।

			•		-	
29	ऋषिदत्ताकथानकंम्'॥ १७॥	{ प्रा॰ स॰	982 4			
26	कुमारपालपूर्वभंवप्र०॥ १८॥	{श्रा° स∘	36232	. 26 .	§८६	。 88
36	मोरनागप्रबंघः ॥ १८*॥	{ प्रा॰ स॰	902 ३ 902 ६	•	•	° 0
२०	मदनब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीति- प्रबंधः॥ १९॥	{ प्रा∘ स∘	90₹ ६ 9८₹99	१५	§५१–§५२	28-24
23	श्रीमाताप्रवंधः॥ २०॥	{ प्रा॰ स॰	98998	35	§ १ ९६	68
22	विमलवसतिकाप्रवंधः ॥ २१॥	{ प्रा∘	१९११५	* \$\$	\$? ? ? - ? ? 3	99-97
२३	त्रूणिगवसहीप्रवंधः॥ २२॥	{ प्रा॰ स॰	₹0₹ ₹	\$8	8888	49-3
28	भोज-गांगेयप्रबंधः [॥ २३†॥]	{ प्रा॰ स॰	₹0₹ १	28	8 \$ 8	२०
29	भोजदेव-सुभद्राप्रबंधः ॥ २४॥	{ प्रा∘ स॰	२०२ १२ २११ ५	१२	§ 34 ,	70
२६	धाराध्वंसप्रबंधः ॥ २५ ॥	{ प्रा॰	२१२ ५	23	28-688	23-28
२७	सिद्धराजीदार्यप्रबंधः ।	{ प्रा॰ स॰	२१२११ २२१ १	\$8	889-40	28
26	देव्यम्बाप्रबंधः ॥ २५ ॥	{ प्रा॰ स॰	२२१ २	28	§ 220	39-09
29	विक्रमार्कसत्त्वप्रबंधः॥ २६॥	{म्रा° स°	२२१ १० २३१ ७	? **	§ ₹-₹	१-२
30	दरिद्रऋयप्रबंधः ॥ २७ ॥	{प्रा° स°	२३२ २	"	88	?
38	वीकमस्त्रकारप्रवंधः॥ २७ ॥	{प्रा° स°	२३२ २ २४१ ९	"	89	3
37	स्त्रीसाहसप्रबंधः॥ १८॥	{प्रा° स°	२४२ ५	33	89	₹-8
33	मनिमनुप्रवंधः॥ २९॥	{ प्रा॰ स॰	₹8₹ ६	2	89	. 4
\$8	देहलक्षणप्रवंधः ॥ ३०॥	{ प्रा॰ स॰	₹8₹99	***	\$6	8-4

¹ यह कथानक पौराणिक ढंगका है। इसकी कथावस्तुका, प्रस्तुत संप्रहके विषयके साथ किसी प्रकारका संबंध न होनेसे, हमने इसकी संप्रहके अंतर्भूत न रख कर, पृथक् परिविष्टके रूपमें इसी प्रस्तावनाके अन्तमें मुद्रित कर दिया है।

⁷ इस प्रवन्धके बाद वे दो पंक्तियां लिखी हुई हैं जो प्रस्तुत संप्रहके पृष्ठ ५ पर, प्रकरण §१० वेंमें मुदित की हुई हैं।



² यह प्रवन्ध भी अनैतिहासिक होनेसे, इसको चाछ कममें मुद्रित न कर, जगरके प्रकरणके साथ, परिविष्टके रूपमें दे दिया है।

^{*} अतिमें इस प्रबंधका कमांक भी, गलतीसे १८ ही दिया गया है। † इस प्रबंधका कमांक प्रतिमें लिखना रह गया है।

³ प्रतिमें प्रबंधका कोई नामामिधान नहीं दिया गया है। सिर्फ अंतमें '॥ २४॥' ऐसा क्रमांक लिखा हुआ है।

⁴ प्रतिमें इस प्रबंधका भी कोई नाम निर्दिष्ट नहीं किया गया; और न खतंत्र प्रबन्धका सूचक कमांक ही दिया गया है। इससे प्रतिके लेखानुसार, यह प्रकरण, इसके पूर्वके धाराष्ट्रंस प्रबंधके परिशिष्टके जैसा माल्यम देता है।

⁵ इसका कमांक भी गलतीसे '॥ २५ ॥' दिया गया है। ऊपर घाराष्वंसप्रवंधका भी यही अंक है।

^{**} विकमार्क राज्यके विषयके जितने प्रकरण हैं उन सबको हमने "विक्रमार्कप्रवन्धाः" इस नामके एक ही मुख्य शिरोलेखके नीचे दे दिये हैं,।

⁻⁶ इन दोनों प्रबंधोंका भी कमांक एक-सा '॥ २७ ॥ २७ ॥' लिखा हुआ है ।

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धात्मकाः	2.9
३५ आद्यपत्तिकाप्रबंधः ॥ ३१ ॥ भारता १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १	-
	. 6
३६ द्वितीय ,, ,, [॥ ३२ ॥] (मा० २५११)	6
11 ₹ 2 11 ∫ 110 ₹4₹ 9	8
	-
३८ तुर्घ ,, ,, ॥ ३४॥ र्म रू११ ,,	2-6
३९ विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथा- र्वा १००० १००० १००० १००० १००० १००० १००० १०	6-9
प्रबंधः ॥ ३५॥ रिक २७२ ६ , ११	6.5
४० विश्वासघातकविषये नन्द्पुत्र- र्पा० २७२ ६ ३६ ६१८८	68
प्रबंधः ॥ ३६ ॥ स० २८११० ३६ १८८	0,
४१ उद्यत्तन्रपप्रबंधः ॥ ३७॥	0.
122	2-82
Service Comments of the second	
४३ कुमार्पालकृततीर्थयात्रा- र्मा० २९२ ७ २७ ६८४-६८५ ४	2-83
प्रबंधः ॥ ३९ ॥	5.3
४४ मंत्रिसांतूप्रबंधः॥४०॥ र्मा ३००० १९ १९ १९	8-33
४५ सज्जनदंडपतिप्रबंधः ॥ ४१ ॥ र्मा॰ ३११ ४ ३१११	86
	33
विष आमडवसाहमबवः ॥ वर ॥ सि० ३२१३ १९	33
४७ वस्तुपालमबंधः'; प्रा॰ ३२१ ३ ३५ ६११५-६१४८ ५	3-69
,—वस्तुपालकाव्यानि ॥ ४३ ॥ ्रेस॰ ४२१ ५ २२ ३ऽऽ२ ३ऽ००	7 7 7
४८ न्यांचे चर्तावर्मन्पप्रबंधः॥४४॥ र्मा० ४२१५ ५७ ६२३३ १०	30-0
थ्र अस्त्र किन्याम्बंधः ॥ थ्रद्धः॥ श्रा० ४२२ १	308
हर अम्बुचाचरुपम्बवन ॥ ठर ॥ ्रास्ट १२२ द	7.0

¹ यह प्रबन्ध, राजशेखरस्रि रचित प्रबन्धकोशमें उपलब्ध इसी नामके प्रबन्धके साथ [हमारी आवृत्तिके पृष्ठ ८६-८८, प्रकरणांक §१०३-६१०५] प्रायः शब्दशः मिलता है। संभव है कि प्रबन्धकोशकारने यह प्रबन्ध इसी संग्रहमें से नकल कर लिया हो। इस संभवतामें वही कारण स्चित किया जा सकता है जो अपरकी टिप्पनी नं. २ में उल्लिखित किया गया है। प्रबन्धकोशवाले पाठमें और इस संप्रहवाले पाठमें किंचित् किंचित् ऐसा पाठमेद उपलब्ध होता है, जो मात्र किसी लिपिकर्ताका किया हुआ न हो कर किसी विद्वान् संग्रहकर्ताका किया हुआ प्रतीत होता है। और इसी लिये यह पाठमेद उन पाठमेदोंसे मिन्न है जो प्रबन्धकोशकी अन्यान्य प्रतियोंमें उपलब्ध होते हैं।

इस पंक्तिके बाद, वस्तुपालकी प्रशंसावाले वे २४ पद्य लिखे हुए हैं जो पृ० ७१ से ७३ पर, पद्यांक २२२ से २४६ तक मुद्रित हैं।

[🕇] प्रबन्धकोशमें उपलब्ध होनेसे इस प्रबन्धको हमने प्रस्तुत संग्रहमें पुनर्सुद्रित करना उचित नहीं समझा।

² इसका प्रारंभ 'अथ श्रीवस्तुपालप्रबंधो यथाश्रुतः।' इस वाक्यसे होता है। फिर वह पद्य लिखा है, जो पृष्ट ५३ पर, पद्यांक १४४ के तौर पर मुद्रित है।

प्रस्तुत आदर्शमें, पत्र ३४, ३५, ३६, और ३७ अनुपब्ध हैं। लेकिन यह प्रबंध BR. P. और Ps. संप्रहोंमें भी किंचित पाठमेदोंके साथ, और कुछ वर्णन-भेदोंके साथ, उपलब्ध होनेसे त्रुटित भागकी पूर्ति उन संप्रहों परसे कर ली गई है। इसका समाप्तिवाक्य इस प्रकार है-

^{&#}x27;॥ इति श्रीवस्तुपालप्रवंधो गुरुपारंपर्याह्निखितो न पुनः खबुद्धा ॥'

५० े पृथ्वीराजप्रबंधः ॥ ४६॥	{ प्रा॰ ४२२ ९ स॰ − − −	80	१९९-१२००	6-69-
५१-५२ [विनष्टं ॥ ४७-४८॥]	000		•	
५३ नादृडराजप्रबंधः ॥ ४९॥	• {प्रा॰ स॰ ४६१ ८	•	•	
५४ लाखणराउलप्रबंधः ॥ ५०॥	{ प्रा॰ ४६१ ८ स॰	42	१२२५-२७	१०१-०२
५५-५८ [विनष्ट [®] ॥ ५१-५४ ॥]	000		•	•
५९ कुलचंद्रप्रबंधः ॥ ५५ ॥	प्रा० ५०१ ८ स० -५०११६	6	§ 3 ?	85-86
६० भोजप्रबंधः ॥ ५६ (१) ॥	श्या॰ ० ० ०	•	•	•
27 727	- 10 - See 3 - 27 1		The same of the sa	the state of the s

1 ४३, ४४, और ४५ ये ३ पत्र विद्धप्त हैं इस लिये यह प्रबंध इस संप्रहमें अपूर्ण ही है। मुद्रित पृष्ठ ८६ की पंक्ति १२ में 'कष्ट मुक्तम् । इतः'' इस शब्दके साथ, आदर्शका ४२ वां पत्र समाप्त होता है।

2 ऊपरवाली टिप्पनीमें सूचित किये मुताबिक यहां पर आदर्शके ३ पत्र विद्धप्त हो जानेसे पृथ्वीराजप्रवन्धके बादके दो और प्रवन्ध संपूर्णतः नष्ट हो गये हैं । वे प्रवन्ध किस विषयके थे इसके ज्ञानका कोई साधन नहीं है ।

3 विनष्ट पत्र ४५ में इस प्रबन्धका आदि भाग नष्ट हो जानेसे, और, इस B संप्रहके सिवा अन्य P आदि संप्रहोंमें इसकी प्राप्ति न होनेसे प्रस्तावित संप्रहके चाळ् कममें इसको स्थान नहीं दिया जा सका। पत्र ४६ में इसकी सिर्फ निम्नोन्द्रत शेष पंक्तियां प्राप्त होतीं हैं।

.....व्याहतम्-भवान् किमपि स्मरसि?। तेनोक्तम्-न। तृतीयवेठायां मृतकेनोत्थाय योगिनः शिरिइछन्नम्। नाहडेन स ज्वाळितः। वहाँ निश्चितः। स्वयं तटस्थे प्रासादे स्थितः। प्रात्यवठोकयित, योगी ज्विळतो न वा। तावत्स्वर्ण-पुरुषं द्द्री। तस्य वठात् क्रमेण राज्यं प्राप। अर्बुदाद्रौ नाहडतटाकं कारियत्वा गर्जनप्रतोव्याः कपाटमादाय तत्र प्रचिश्चिपे। तथा जावाळिपुरे राजधानिः कृता। पंडितयक्षदेवस्य मातुरुमिति भणित्वा भिक्तं कर्तुं प्रवृत्तः। एकदा कापि कटके गवस्तत्र सर्वपरिकरो मारितः। मात्रा ग्रुद्धिमरुभमानया पंडितः पृष्टः। भागिनेयस्य सारा न प्राप्यते। वं उक्तम्-एकाकी वस्त्रं विना मृध्यरात्रौ समेत्य गुकायां स्थास्यति, तत्र चीवराण्यादाय जनः प्रेष्यः। स तत्र स्थितः। तस्य मिलितम्। वस्त्रपरिधानं कृत्वा मध्ये समायातः। मात्रा पंडितेनोक्तं कथितम्। तद्नु हृष्टः। एकदा पंडितेनोक्तम्-वत्स ! अस्माकं योग्यं किमपि कीर्तनं कार्य। भूमिं दर्शयत। पंडितेन भूमिर्दर्शिता। तत्र नाहडसरः कारितम्। पुनः पंडितो रुष्टः। चरणयोर्निपत्य राज्ञोक्तम्-अधुना कारियध्ये। तत्र दर्शितायां भूमौ नाहडवसहीति प्रासादः पंठ यक्षदेवनाम्ना कारितः। एवं नमस्कारप्रभावाद् विपद् गता। सुवर्णपुरुषः प्राप्तः। स नाहडराज्ञा जावाळिकुंडे निश्चिप्तः॥ इति नाहडराजप्रवंधः॥ ४९॥

4 मूल आदर्शके ४७, ४८ और ४९ ये ३ पन्ने विद्यप्त हैं इसिलये इस प्रवन्धके समाप्ति-सूचक पत्रांकादि नहीं दिये गये। परेतु ४६ वें पन्नेमें जो इस प्रवन्धका अन्तिम शब्द उपलब्ध है उस परसे यह कहा जा सकता है कि अगले पत्रकी पहली ही पंक्तिमें यह प्रवन्ध समाप्त हो गया होगा। यह अन्तिम शब्द 'जींदराज' है जो मुद्रित पृष्ठ १०२ की पंक्ति २८ में दृष्टिगोचर हो रहा है।

• 5 ५० वें पन्नेमें जो कुलचन्द्र प्रबन्ध उपलब्ध है उसका कमांक ५५ दिया हुआ है, इसलिये, ऊपरवाली टिप्पनीमें स्चित किये गये ४७, ४८, और ४९ इन ३ विनष्ट पन्नोंमें ५१ से ५४ तकके ४ प्रबन्ध विद्युप्त हो गये हैं।

6 इस ५० वें पन्नेमें जो वर्णन विद्यमान है वह सब भोजप्रबन्ध विषयक ज्ञात होता है और उपर्युक्त कुलवन्द्र नामक प्रबन्ध भी उसीका एक अवान्तर-सा प्रकरण है। मुख्य प्रबन्ध जो भोज नृप विषयक है उसका ३६ वां पद्य, इस ५० वें पत्रकी पहली पंक्तिमें समाप्त होता है। अन्तिम पंक्तिमें जो पद्य पूर्ण होता है उसका कमांक ६० है। इससे यह विदित होता है कि, पिछले विनष्ट ३ पन्नोंमें से, कमसे होता है। अन्तिम पंक्तिमें जो पद्य पूर्ण होता है उसका कमांक ६० है। इससे यह विदित होता है कि, पिछले विनष्ट ३ पन्नोंमें से, कमसे कम ४९ वां पत्र तो इसी भोजप्रबन्ध के वर्णनसे व्याप्त होगा, और कुछ गद्य पंक्तियों साथ १ से ३६ तकके पद्य उसमें होंगे। शेष ४७ और ४८ इन दो पन्नोंमें किस किस विषयके प्रबन्ध ये उसके जाननेका कोई साधन नहीं रहा। इसी तरह यह भोजप्रबन्ध भी कितना वडा होगा, तथा अगले कैनसे पन्नेमें समाप्त हुआ होगा; उसके ज्ञानका भी कोई उपाय नहीं है। क्यों कि ५० के बाद, ७० तकके एक साथ २०, पन्ने अप्राप्य हैं। इन पन्नोंमें भोजप्रबन्धके अतिरिक्त और भी ३-४ प्रबन्ध विनष्ट हो गये हैं। ७१ वें पत्रमें जो 'सिद्धसेनदिवाकरप्रितिबोध-प्रबन्ध' पूर्ण होता है उसका कमांक ६० दिया हुआ है।

			0			0
5 2-	-६३ [अनुपलब्ध ॥ ५७-५९ ॥]	2	000	0		0
E 8	सिद्धसेनदिवाकरमतिबोध- प्रबंधः ॥ ६०॥	{ प्रा∘ स∘	 099 E			•
	हरिभद्रसूरिप्रबंधः॥ ६१॥	{ प्रा॰ स॰	99 9	48	§२२९-३०	703-04
	सिद्धर्षिप्रबंधः'॥ ६२॥	{ प्रा∘ स∘	92993	99	§ २३१	१०५-०७
69	[विनष्ट॥६३॥]		000	•	•	0
56	श्रीपालकविप्रबंधः ^३ ॥ ६४ ॥		٥٤١٠ ٩	• .	•	
50	षड्दर्शनप्रबंधः ॥ ६५ ॥	रे स॰	8 9 9 949	. 6	§ ३२	36
90	नीलपटवधप्रबंधः ॥ ६६ ॥	{ प्रा° स°	8550	20	§ ₹₹	36
98	देवाचार्यप्रबंधः ॥ ६७॥	{ प्रा∘ स॰	945 y	१६	६५३-६५५	79-30

1 उपर्युह्णिखित टिप्पनीमें सूचित किये गये मुताबिक इस प्रबन्धकी सिर्फ ५-६ पंक्तियां ही, विद्यमान पत्र ७१ में, उपलब्ध हैं; इसलिये यह अपूर्ण प्रबन्ध प्रस्तुत संग्रहमें सम्मीलित नहीं किया गया।

2 ७२ के बाद ७३ और ७४ ये दो पत्र विद्धप्त हैं इसिलये यह प्रवन्ध अगले पत्रमें किस जगह समाप्त होता है सो अज्ञात है। इस आदर्शके सिवा Be संप्रहमें भी यह प्रवन्ध उपलब्ध होता है इसिलये इसिक शेषपूर्ति वहीं से की गई है। इस प्रतिमें, यह प्रवन्ध, सुद्रित पृष्ठ १०६ की पंक्ति २४ में आये हुए 'निवेदितः' शहके साथ खण्डित होता है।

3 विद्यमान ७५ वें पत्रमें इस प्रबन्धकी नीचे दी हुईँ सिर्फ अन्तिम ८ ही पंक्तियां उपलब्ध होतीं हैं। और सब विशेष भाग पिछले

विद्धार पत्रमें विनष्ट हो गया है, इसलिये इस त्रुटित प्रकरणको भी प्रस्तुत संप्रहके चाद्ध कममें स्थान नहीं दिया गया।

तेजस्विवातसन्ये नभिस नयसि यत्र्यांशुप्रप्रतिष्ठाम् । असिन्नुत्थाप्यमाने जननयनपथोपद्रवस्तावदास्तां सोदुं शक्यं कथं वा वपुषि कलुषतादोष एष त्वयैव ॥ ४॥

एकचक्षुर्विहीनोऽयं शुक्रोऽपि कविरुच्यते । चक्षुर्द्वयविहीनस्य युक्ता ते कविराजिता ॥ ५ ॥ नृषेणोक्तम्-किमपि परं पृच्छवताम् । भगवता समस्यार्पिता-'अन्ध ! कियन्ति वियन्ति भवन्ति ।'

> 'एकमनेकमिदं वियदासीन्मध्यमवाप्य घटप्रभृतीनाम् । तद्वत्तेषु घटादिषु नष्टेष्वन्घ ! कियन्ति वियन्ति भवन्ति ॥ ६ ॥

> > पुनरपिता-

वक चट तपसे त्वं शाखिनि कापि सान्द्रे श्रय झटिति तटिन्याष्टिहिभस्त्वं तटानि । इह सरसि सरोजच्छन्ननीडे समंता-छुळितगतिरिदानीं रंस्रते राजहंसः ॥ ७ ॥

भगवन्नतारके गत्वा स्थानमार्जारयोरमेध्यं युगलान्वितं सरस्तीं प्रति होमं प्रारेभे । देव्युवाच-रे ! मम शारीरे स्फोटकान् किमुत्थापयसि । तेनोक्तम्-मया सप्त भवानाराधिता । षट्सु भवेषु स्तोकस्तोकमायुर्मत्वा सप्तमे बाहुन्यादायुष एवं याचिता 'यदहमजेयो भूयासं,' मयाऽत्र पत्तने श्रीदेवाचार्याणां पुरतस्तथा श्रीपालस्य पुरतो हारितम् । देव्याह-मया पत्तनं वर्जितमासीत्, कथं नु त्वसिहायातः । सनृपस्य छन्नं निःसृत्य गतः ॥ इति श्रीपालकवेः प्रबन्धः ॥६४॥

4 प्रस्तुत B संप्रहमें, इस प्रबन्धकी सिर्फ वे ही ६ पंक्तियां विद्यमान हैं जो मुद्रित पृष्ठ २६ की टिप्पनीमें दी गई हैं। आगेका भाग पत्रोंके विनष्ट होजानेसे खण्डित है। यह प्रबन्ध BR संप्रहमें भी, कुछ पाठमेद के साथ, उपलब्ध होता है इसिलये इसकी स्थानपूर्ति, उसी संप्रह परसे की गई है।

§९. (३) BR संज्ञक संग्रह

पाटणके सागरगच्छके 'उपाश्रयमें सुरक्षित प्रन्थ-भण्डारमेंसे हमें इस संग्रहकी प्राप्ति हुई है। भण्डारकी स्चिमें इसका नाम आशाराजादिप्रवन्ध लिखा हुआ है। वर्तमान सूचिके मुताबिक, इसका डिव्वा नं० १८, और प्रति नं० ५० है। इसकी पत्रसंख्या कुछ ७ है। पत्रोंकी नाप लंबाईमें प्रायः १० इंच और चौडाईमें ४ई इंच है। इसमें सब मिला कर कोई २३ प्रवन्ध लिखे हुए हैं जिनमेंसे ५–६ प्रवन्धोंको छोडकर शेष सब प्रायः उपर्युक्त B संग्रहके साथ पूर्ण समानता रखते हैं। इस संग्रहका लिपिकर्ता पंडित रविवाद न गणि है। यद्यपि लेखकने इस प्रतिके लेखनकालकी सूचक कोई मिति आदि नहीं दी है-केवल लिखित एं रविवाद न गणि मा। 'इतना लिखकर अपना नामनिर्देश मात्र किया है-तथापि इनके हाथके लिखे हुए बहुतसे ग्रंथ और पत्रादि पाटण वगैरहके भण्डारोंमें जो हमने देखे हैं और जिनमेंसे कुछ पर संवत् मिति आदिका भी उड़ेख किया हुआ मिलता है, उससे इनका अस्तित्व विक्रमकी १८ वीं शताब्दीके पूर्व भागमें निश्चिततया ज्ञात होता है। इस कारणसे, यह संग्रह कोई ढाई सौ पौनेतीन सौ वर्षका पुराना लिखा हुआ कहा जा सकता है। विशेषतया B संग्रहके साथ समानता रखनेसे, और पं० रविवर्द्धनका लिखा होनेसे इस संग्रहका संकेत हमने BR अक्षरोंसे किया है। इसमें संग्रहित प्रवन्धोंके कमादिका सूचन करनेवाली संपूर्ण तालिका इस प्रकार है।

В	संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम		प्रस	तुत पुस्तक	में मुद्रित कम	4-2 2
	प्रबन्धनाम	पत्र. पृष्ठि. पंक्ति Bस	तंत्रहका कमांक	प्रवन्धांक	प्रकरणांक	पृष्ठांक
?	कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्ध	• {म्रा॰ १२ १ स॰ १२१७	•	५१	§ २२४	200
2	आंशराजप्रबन्धं का	्रप्ता० १२१७ स० १२२१	•	39	§ ११६	५३
3	†भर्तृहसेत्पत्तिप्रवन्ध	शा॰ १२२२ स॰ २१ ३	88	•	•	•
8	मानतुङ्गसूरिप्रवन्ध '	{ प्रा० २१ ३ स० २१२५	58	٩	§ 28-§ 20	, १५
9	अभयदेवसूरिप्रबन्ध	{ प्रा० २२२५ स० २२१५	१६	४६	§ २१४-१५°	९५
8	*मोरनागप्रबन्ध	शा॰ २२१५ स॰ २२१८	16	•	0	. 0
9	ट्रिणिगवसहीप्रबन्ध	्रिया॰ २२१८ स० २२२५	२३	\$8	8888	43
6	अम्बिकादेवीप्रबन्ध	शा॰ २२२५ स॰ ३१ ३	26	86	§ २२०	60
9	दरिद्रनरऋयप्रवन्ध	{ प्रा० ३१ ३ स० ३१११	\$0	3	88	2
30	•मनइ मन इति प्रवन्ध	{ प्रा॰ ३१११ स॰ ३११४	33	"	§ 9	4
28	नागार्जुनप्रबन्ध	{ प्रा० ३११५ स० ३२ ३	•	83	8206-06	68
१२	महं सांतूपवन्ध	{ प्रा० ३२ ३ स० ३२ १२	88	36	896	\$\$

^{•1} इस प्रबन्धकी समाप्तिके बाद प्रतिमें यहां पर वे २ पद्य लिखे हुए हैं, जो प्रस्तुत पुस्तकके पृ० ३१, पद्यांक ९५-९८ के साथ मुद्रित हैं। इनमें आरासणके नेमिनाथ चैल्यकी प्रतिष्ठाका वर्णन है।

[†] यह प्रबन्ध, प्रबन्धचिन्तामणिगत इसी नामके प्रबन्धकी प्रायः शब्दशः प्रतिकृति है इसलिये इसको प्रस्तुत संप्रहमें मुद्रित नहीं किया गया। देखो, ऊपर पृ॰ १२ की 3-6 वाली टिप्पनी।

^{*} देखो, ऊपर पृ० १३ पर की गई इसी प्रबन्ध परकी टिप्पनी।

23	वसाहआभडप्रबन्ध	श्रा० ३२१२ स० ३२२६	४६	58 .	§ इ ? °	33
	न्याये यशोवर्मप्रबन्ध •	∫ प्रा० ४१ १	86	49	§ २३३	2009
0.01	अंबुचीचप्रबन्ध	∫ स० 83 ८	86	66	§ २३४ -	305
	ज्ञाचित्रवाद्यम्य द्वाचित्रहाद्रिहार्मतिष्ठामबन्ध	्रिमा॰ ४११९ सि॰ ४२३	•	79	628	88
	्रंबप्प भद्दिप्रबन्धान्तर्गतप्रकरण	श्रा० ४२ ४	•	•	•	•
	सिद्धर्षिप्रवन्ध	्रिया० ४२१० स्	45	. 99	§ २३१ -	१०५
	माघपण्डितप्रबन्ध	{ प्रा॰ ५१ ६ स॰ ५२१३		. 9	§ २८-३०	50
-	भोजषड्दर्शनप्रबन्ध	शा॰ ५२१३ स॰ ५२१५	इद	9	§३२	56
100	देवाचार्यप्रवन्ध	्रिपा॰ ५२१६ स॰ ६२२१	69	१६	६५३-५५	79
	फलवर्द्धितीर्थप्रवन्ध	शि० ६२२२ स० ६२२५		38	१५७	38
· 23.	जिनप्रभस्रियबन्ध	श्रा० ७१ १ स० ७२२०	•	•	•	•
\$ 20	. (४) G संज्ञक संग्रह	11/17		22.0	- P	- 44

राजकोट (काठियावाड) निवासी जैन गृहस्थ श्रीयुत गोकुलदास नानजीभाई गान्धीके निजी पुस्तक संग्रहमेंसे यह प्रति हमें प्राप्त हुई है। गोकुलदास नामका सूचन करनेके विचारसे इस प्रतिका संकेत हमने G अक्षरसे किया है। इसकी पत्रसंख्या कुल १९ है, लेकिन वीचमें ८ के वादका १ पत्र विल्लप्त हो गया है इसलिये अब इसके १८ ही पत्रे विद्यमान हैं। ये पत्रे चौडाईमें ४% इंच और लंबाईमें १२% इंच जितने हैं। पत्रके प्रलेक पार्श्वमें १५-१६ पंक्तियां लिखी हुई हैं। लिखावट बहुत अच्छी है—अक्षर सुवाच्य और सुन्दराकार है। प्रति कहीं, कभी, पानीसे कुछ भींग गई माल्यम देती है और इसलिये किसी किसी पत्रेका कुछ कुछ हिस्सा एक दूसरे पत्रेके साथ चिपक जानेसे, कहीं कहीं कुछ अक्षर या शब्द नष्ट हो गये हैं। प्रस्तुत पुस्तकके पृष्ठ ३५ और ४५ आदिमें जो खण्डित पाठ दिया हुआ दिखाई देता है, वह इसी सबबसे है। प्रति अच्छी पुरानी है। लेकिन, खेद है कि लेखकके नामादिका कोई निर्देश नहीं मिलता। इसके अन्तमें जो पातसाहिनामाविल लिखी हुई है उससे इतना अनुमान किया जा सकता है कि, वि० सं० १४०७ के बाद, दिलीके बादशाह पेरोज (फिरोजशाह) के राज्यकालमें यह लिखी गई होनी चाहिये।

यद्यपि, यह संग्रह एक प्रकारसे संपूर्ण ही है-आद्यन्तका कोई भाग खण्डित नहीं है, लेकिन, इसके पन्नोंपर जो मूलभूत कमांक लिखे हुए हैं उनसे सूचित होता है कि यह एक किसी बहुत बडी पोथीका एक छोटासा हिस्सा मात्र है। पन्नोंके ये मूलभूत कमांक प्रत्येक पन्नेकी दूसरी पूंठी (पृष्ठि) पर, दाहिनी ओरके हासियेके मध्यभागमें, नेरूआ रंगसे रंगे हुए चंद्रक पर लिखे हुए हैं। इसमें प्रथम पत्रका यह कमांक १२६ है और अन्तिम पत्रका १४४।

[‡] बप्पमिहिस्रिके प्रबन्धमें का एक प्रकरण इस संग्रहमें लिखा हुआ मिलता है लेकिन अन्यान्य संग्रहोंमें इस विषयका कोई प्रकरण या वर्णन न होनेसे हमने इसको मूल प्रन्थमें सम्मीलित नहीं किया। बप्पमिहिस्रिके सम्बन्धमें अनेक ऐसे छोटे वहे खतंत्र प्रबन्ध लिखे हुए भण्डारोंमें मिलते हैं, और इन सबका एक खतंत्र पृथक् संग्रह करनेका हमारा संकल्प है। इसलिये प्रस्तुत संग्रहमें इस प्रकरणको केवल संग्रहकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिचिष्ट रूपमें दे दिया है।

[ा] जिनप्रमसूरिका सम्बन्ध प्रबन्धचिन्तामणि वर्णित व्यक्तियोंके साथ न होनेसे तथा विविधतीर्थकल्प नामक प्रन्थ, जो इन्हींकी एक विशिष्ट कित है और इस प्रन्थमालामें इतःपूर्व मूल रूपसे प्रकाशित भी हो चुका है, उसके द्वितीय भागमें इनके विषयका समप्र साहित्य एकत्रित करनेका निर्धार है, इसलिये, इस प्रबन्धको भी प्रन्थान्तर्गत नहीं किया गया । परंतु संप्रहमात्रकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिशिष्टमें मुद्रित कर दिया गया है ।

इससे ज्ञात होता है कि इस पोथीमें, इन पत्रोंके पहले, १२५ पत्रे और अवस्य थे। लेकिन जब तक वे कहींसे मिल न आवें तब तक, उन पन्नोंमें क्या लिखा हुआ था उसके जाननेका कोई उपाय नहीं है।

६११. G संग्रहका आन्तर परिचय.

यह संप्रह, ऊपरके P. B. Br. संप्रहोंके जैसा कोई सुसंकलित या सुप्रथित प्रन्थस्वरूप नहीं है। यह एक प्रकारका, परानी कथा वार्ता विषयक संक्षिप्त टिप्पणोंका प्रकीर्ण संग्रह मात्र है. जो किसी विद्वान्ने अन्यान्य प्रन्थोंमें पढ कर या अन्य जनोंके मुखसे सुन कर निजकी स्मृतिके लिये लिख लिया है। इसमें, प्रारम्भमें जो विकमादिय प्रवन्ध लिखा हुआ है वह एक मात्र किसी पुरातन लिखित-प्रवन्धकी अनुलिपि-रूप है; और वाकी सब इस संग्रहके लिपिकर्ताका स्वयं किया हुआ संक्षिप्त और अव्यवस्थित संचयन है। इसमें, विक्रमादिस प्रबन्धको छोड कर कोई १३५-३६ कथा-वार्ताओंका संचय है। इसमें न किसी त्रकारका कोई कम है, न पूर्वापरका कोई सम्बन्ध है; न भाषाकी संस्कारिता है, न वर्णनकी व्यवस्थितता है। एक ही व्यक्तिके विषयकी कोई वार्ता कहीं लिखी हुई है और कोई कहीं। इनको कुछ व्यवस्थित रूप देनेके लिये हमने इन सबको अलग छांट छांट कर, प्रस्तुत पुस्तकमें, प्रबन्धचिन्ताम-णिगत विषयवर्णनके कममें संकलित की हैं। जैसे कि सिद्धराजके साथ सम्बन्ध रखनेवाली सब बातें सिद्धराजके वर्णनप्रसंगमें एकत्रित दे दी हैं और वस्तुपालके इतिवृत्तके साथ सम्बन्ध रखनेवाली बातें वस्तुपालके प्रबन्धके साथ . अधित कर दी हैं। वैसे ही प्रकीर्ण या फुटकर जो दृष्टान्तादि हैं उन सबको अवशिष्ट प्रकरणके रूपमें एक जगह संकलित कर दिया है (देखो, पृ. ११२ से ११५)।

इस संग्रहमें ये सब कथा-वार्ताएं किस कममें लिखी हुई है उसका यथार्थ बोध होनेके लिये, P. B. आदि संग्रहोंकी सचिके मुताबिक इसकी संपूर्ण सूचि भी यहां पर, उसी तरह विस्तारके साथ दी जाती है।

G संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम प्रबन्धनाम		पत्र	प्रश्चि	पंक्ति	प्रस्तुत पुस्तकमें मुद्रित कम प्रकरणांक	पत्रांक
†विक्रमार्कप्रबन्ध	प्रा° स॰		-	- 9	\$ 22	4-6
	प्रा° स°	350	3	30	588	.6-9.
	स°	१२८	3	33	§9 ?	36
२ सभाक्षोभविषयक अन्यवृत्तान्त	स°	55	3	१५	§ २६२	338
३ जीव-इन्द्रियसंवादवृत्तान्त*	स°	"	2	3	0.00	0
४ गूर्जरविद्वत्ताविषयक डामर-भोजसंवाद	स°	33	2	8	358	35
५ अनुपमाकारितनन्दीश्वरप्रासादकथा	स°	"	2	38	§ १६ ५	७६
६ भोजराज-सिद्धरसवर्णनवृत्तान्त	स°	"	2	१५	88\$	२२
	स°	336	3	8	ee §	59
	स°	"	3	20	\$ 296	७३
	स°	77	2	2	. १२०१	62
	स°	11.	2	Ę	§ १०१	89

^{• †} विक्रमविषयक इन दोनों प्रबन्धोंके लिये इस संग्रहमें कमसूचक संख्यांक नहीं दिये गये हैं; इसके आगेके सब प्रकरणोंके साथ 9. २. ३. ४. आदि क्रमांक बरावर दिये हुए हैं। इससे मालूम होता है कि ये दोनों प्रवन्ध किसी पुरातनकृतिके अनुलिपि मात्र हैं, और बाकीका सब लिखान, इस संप्रहके लेखकका निजका संकलन है।

* इस कथाका विषय आध्यात्मिक हो कर, प्रस्तुत प्रन्थके विषयके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रखता । इसलिये हमने इसको मूलमें प्रविष्ट

नहीं की, लेकिन संप्रह्की दृष्टिसे टिप्पनीके परिशिष्टके रूपमें पृथक् दे दी है।

			•
र ११ वीसलदेवगीतिशक्षणवृत्तान्त	स॰ ,, २११	. 3088.	90
१२ नागलदेवीगीतोपदेशवृत्तान्त	स॰ ,, २ १३	.§ १७९	90
१३ जगडूवसाहप्राप्तअश्ववृत्तान्त	स॰ १३० १ .२.	\$ \$ \$ \$ \$.60
१४ पृथ्वीपुरश्रेष्ठीवृत्तान्त‡	स॰ ,, १ ४	•	
१५ गयणा-मयणा इन्द्रजालिकवृत्तान्त	स॰ "१६	\$90	38
१६ विक्रमरोगोत्पत्तिवर्णन	स॰ ,, १ ७	388	१०
१७ मयणल्ला पापघटवृत्तान्त	स॰ ,, ११०	\$\$6	36
१८ अभयदेवसूरिवृत्तान्त	स॰ ,, १ १३ '	§ 282	???
१९ वलभी-यवनागमनवृत्तान्त	स॰ ,, २ १	\$? ? ?	63
२० अमरचन्द्रकविवृत्तान्त	स॰ ,, २ ८	\$ 200	30
२१ कच्छदेशीयजिणहाच्यापारीवृत्तान्त	स॰ " २ ११	§ २५३	११५
२२ यशोभद्रसूरिपारणावृत्तान्त	स॰ ,, २ १३	§ 798	११५
२३ कर्णाटचपपुलकेशिमृत्युवृत्तान्त	स॰ ,, २१५	§ ६९	35
२४ जगडूदानवृत्तान्त	स॰ १३१ १ ६	\$? < 9	60
. २५	₹° ,, १ ८	Contract that	The same
२६ जगदेवदानवृत्तान्त+	H° ,, ? ??	18896	64
२७	स° " १ १३	o i dei espera	
२८ सीतापण्डितावृत्तान्त	स॰ ,, २ १	880	28
२९ हेमाचार्यछत्रशिलावृत्तान्त	स॰ " २ २	\$96 .	39
३० भोजराजनमोविधानवृत्तान्त	स॰ ,, २ ४	. §88	२२
३१ कालीदाससमस्यापूर्तिवृत्तान्त	स॰ ,, २ ९ .	688	20
३२ नागलदेवी-मयणसाहारवृत्तान्त	स॰ " २१६	\$268	90
३३ उदयप्रभसरस्रतीध्यानवृत्तान्त	स॰ १३२ १ - ३	\$ 200	७६
३४ कुमारपालराज्यपाप्तिदाकुनवृत्तान्त	H° ,, ? \$	\$60	84
३५ कर्णमातादेमतिमृत्युवार्ता	स॰ ,,, १ ७	886	23
३६ भोजकुण्डलोत्कीर्णकाव्यवार्ता	स॰ ,, १९	885	77
३७ हैमव्याकरणकरणवत्तान्त	स॰ " ६ ६८	808	39
३८ ओज-भीम-कर्णयुद्धवृत्तान्त	स॰ ,, ११७	. १४६	स् १ ६ ६
३९ लघुवारभटकृतीषिवृत्तान्त	स॰ ,, २ ३	\$286	९ ६
४० वारभटजलोदररोगवृत्तान्त	स॰ " २ ६	§ २१ ६	९६
४१ श्रीमातावृत्तान्त	स॰ ,, २ १०	\$? ? 9	68

रूं इस कथाका भी इतिहासके साथ कोई संपर्क न होनेसे, इसे भी टिप्पनीके परिशिष्टमें मुद्रित की है।

⁺ पद्यांक (२७१) के बाद जो ३ क जिल्हायें दी गई हैं और जिनमें कमसे (२७२), (२७३), (२७४), के पद्यांक दिये हुए हैं वे ही तीन किन्डिकायें ये २५, २६, और २७ संख्या वाली कथायें समझनी चाहिए।

	Til silver a say	ara 5		27
४२ वंराहमिहिरवृत्तान्त	स° ,;	२ १३	. § 700	90
83 *	स° ,,	2 88	•	. 0
४४ रामवनवासकलभक्षणवार्ता‡	स° ,,	२१५ •	•	
४५ घृतवस्रतिकाउत्पत्तिप्रवन्ध	स॰ १३३		. ११६६	. 94
४६ हेमसूरि-वादि-शब्दच्छलवृत्तान्त	स° ,,	2 4	804	. 39
४७ यशोधनव्यवहारिवृत्तान्त	स° ,,	8 88	§ २४३	222
४८ मयणसाहारनासाच्छेदनवृत्तान्त	स° ,,	2 24	\$ 260	90
४९ सारंगदेवप्रधानवृत्तान्त .	₹° "	2 30	§ 28 \$	११२
५० सिद्धि-बुद्धियोगिनीवृत्तान्त .	₹° ,,	2 2	808	35
५१ सिद्धराज-सान्तूमंत्रीवृत्तान्त	स° "	2 88	§ ६६	34
५२ उन्मत्तप्रधानवृत्तान्त	₹° ,,	2 88	§ 288	११३
५३ मित्रचतुष्कवार्ता	J. Land	२ १६	§ 284 .	११३
५४-६१ [विनष्टपत्रांक १३४ तमे नष्टा	रताः सर्वाः	वार्ताः]		THE ALCOHOL
६२ मुंज-भोज-बन्धमोक्षवृत्तान्त ×	स॰ १३५	2 4	§ ३ ६	90
६३ भाग्यविषयकराजिलदृष्टान्त	स॰ १३५	2 9	§ २४३	११३
६४ भोजराज-दामरवृत्तान्त	स° "	2 2	§ 3.9	28
६५ वाक्पतिराजकविवृत्तान्त	स° "	2 8	§ 280	222
६६ राज्यन्धकथानक	स° ,,	2 9	१२४७	283
६७ व्यवहारिस्रताकथानक	स° "	२ १३	THE SHALL SH	75
६८ चातुर्थिकज्वरवृत्तान्त	स° ,,	२ १४	EAST OF ST PRESSURE OF THE	"
६९ काचमयपेटीवृत्तान्त	स° ,,	२ १६	10 Hz 30 Street	388
७० राजपुत्रीकथानकं	स॰ १३६	9 2	***	"
७१ भोजराज-खात्रपातकवृत्तान्त**	स° ,,	8 4	AUARMAINTE !! !!	

प्रासाविक वक्तव्य

* सिर्फ आधी पंक्तिमें इस ४३ वें प्रवन्धकी सूचना है। इसमें कीनसी वार्ता या कथाका सूचन है सो स्पष्ट ज्ञात नहीं होता। जो आधी पंक्ति लिखी हुई है वह इस प्रकार है—

"विवाहयित्वा यः कन्यां ।। १ ॥ इति हेतोर्जलिधभुक्तराजपत्नीसुतसपादलक्षद्वीपार्पणप्रवन्धः ॥ छ ॥ ४३ ॥"

🙏 प्रस्तुत प्रनथमें उपयोगी न होनेसे इस वार्ताको भी हमने प्रनथान्तर्गत नहीं किया । यह इस प्रकार है-

श्रीचित्रकृटपर्वते प्रथमवनवासे सौमित्रिणा वने भ्रान्त्वा वनफलान्यानीय श्रीरामदेवात्रे मुक्तानि । तदा फलानि हृष्ट्वा देवेद निगदितम्-

पृथिव्यामञ्जपूर्णायां वयं च फलकांक्षिणः।

सौमित्रे ! नूनमसाभिः पात्रे दत्तं पुरा नहि ॥ ४॥

× इस वृत्तान्तका प्रारम्भका कुछ कथन, विनष्ट पत्र १३४ में रह गया है इसिलिये इसके प्रारंभमें......ऐसी खण्डित भाग सूचक बिंदुराजि दी गई है।

** अमनका, यह वृत्तांत, मूल संग्रहमें मुद्रित होनेसे रह गया है, इसलिये, इसे यहां पर उद्भुत कर दिया जाता है-अन्यदा श्रीभोजेन निश्चा सौधोपरिस्थितेन निजराज्यस्य स्फातिं विलोक्य गर्वितेन प्रोक्तमिति-

चेतोहरा युवतयः खजनोऽनुकूलः सद्धान्धवाः प्रणयगर्भ [गिरश्च भृत्याः। गर्जन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गा.....]



७२ गूढमहाकालोत्पत्तिवृत्तान्त	स	,	? ??	. § 89	? .
७६+ छगद्देवदानवृत्तान्त			१ १३	. \$? ? < < +	
७७ वराहमिहिरवृत्तान्त		-	2.8	\$200	. 90
७८ वाग्भटवैद्यवृत्तान्त			२ ४	\$ 780	. 95
७९ वीसलदेवचश्चपीडावृत्तान्त			२१०	\$\$28	90
८० कुमारपाल-कालिंगीयकवृत्तान्त	स° ,	2	२ ११	§ 9 ₹	84
८१ , द्विकलत्रव्यवहारिवृत्तान्त	स° ,	,	२ १५	§68	, ,,
८२ सोमेश्वरकृत वस्तुपालप्रशंसा	स॰ १	१७	१ ३	. १६६४	98
[े] सातवाहनसम्बन्धिगाथावृत्तान्त	स° ,	,	3 3 3	\$ 86	??
८३ जलोदररोगि-आचार्यवृत्तान्त	स°,	,	११३	285 §	558
८४ शिवतपोधनकवितावृत्तान्त	स° ,	,	१ १६	§ १ ६	१०
८५ वस्तुपालअन्त्ययात्रावृत्तान्त			२ २	\$?94	30
८६ कुमारपालशकुनप्राप्तिवृत्तान्त	स°,	, ;	२ ५	\$66	84
८७ कुमारपालराज्यनिवेशवृत्तान्त	स°,	, ;	5 38	\$68	. 55
८८ कुमारपाल-कडीतलारक्षवृत्तान्त	स॰ १ः	6	? ?	§ 9 9	४इ
८९ कुलचन्द्रक्षपणकवृत्तान्त	स°,	,	8 9	\$ 39	78
९० कुष्टरोगि-आचार्यवृत्तान्त	स°,	,	११२	\$ 286	558
९१ सामुद्रिकशास्त्रवेदिवृत्तान्त	स°,	,	\$ \$8	§ \$8	१०
९२ लाखाकपुळ्ळडवृत्तान्त	स° ,	, :	8 8	§ ? ?	??
९३ वनराजजन्मवृत्तान्त	स° ,	,	११२	. § 20	"
९४ ज्यसिंहकूतधाराभंगवृत्तान्त	स° १३	१९	8	, § ६ ५	39
९५ " त्रिभुवनपालघातवृत्तान्त	स° ,	, {	9	§93	\$5
९६ कुमारपालखर्णसिद्धीच्छावृत्तान्त }	स° ,			§ 9 9	84
,, सिद्धराजगुणतुलनावृत्तान्त ∫	"			398	80
९७ अम्बाकारितपद्यावृत्तान्त	स° "			\$ 99	"
९८ अजयपाल-कपर्दिमंत्रीवृत्तान्तं	स° ,	, {	१३	§ १० ६	98

वारं वारं पदत्रयमिति पठ्यमाने दरिद्रोपहुतेनैकेन पण्डितेन खात्रपातं कुर्वता इति पठितम्-"संमीलने नयनयोर्निखिलं न किञ्चित्।"

इत्युक्ते राजा धीरां दत्त्वा प्रसादितः॥ ७१॥

+ मूल आदर्शमें ७३, ७४ और ७५ ये कमाइ छोड दिये गये हैं और ७२ के बाद ७६ का अंक दिया हुआ है। इसका कारण कुछ समझमें नहीं आता। क्या भूलसे ऐसा किया गया है या अन्य किसी विचारसे सो अस्पष्ट है।

ए॰ ८५ पर जो जगहेव प्रबन्ध दिया हुआ है उसकी प्रथम कण्डिका मात्र ही [पंक्ति १० से १६ तक] इस कमांक वाले वृत्तान्तका भाग है। शेष ३ कण्डिकार्ये ऊपर निर्दिष्ट २५, २६, २७, कमांक वाले वृत्तान्तकी अंशभूत हैं।

A पृ० ७४ परकी पंक्ति १८ से २६ तकका अंश ।

1 इन गाथाओं के साथ कोई कमांक नहीं दिया गया है।

2 मूलमें इसका कमांक भी ९७ ही लिखा हुआ है और यह गलती आगेके सभी कमांकोंके साथ चलती रही है। इसी तरह आगे १०१ और ११६ कमांक भी दो दो दफा लिखे हुए हैं।

	k.				Later and the second second	
९९ आम्बडकृतमिहिकार्जनवधवृत्तान्त	स॰	336	2	9	\$ 9 (4) 19 H)	84
१०० आम्बडोचारितप्रतिज्ञावृत्तान्त	स॰	"	2	9	§ 9 9	"
१०१ भृगुकच्छीयबालइंससूरिवृत्तान्त .	स°	"	2	80.	\$ 208	. 98
१०२ राजीमतीर्छिपिकावृत्तान्त	स°				\$258	60
१०३° हेमाचार्योक्तकुमार्पालमृत्युवृत्तान्त	ा स°				\$ 909	89
१०४ कुमारपालमृत्युप्रसंगवृत्तान्त		180		3	\$ 20\$	"
१०५ स्रोमेश्वरत्यक्तव्यासवृत्तिवृत्तान्त	स°	"	?	3	8588	60
१०६ विक्रमादित्य-कार्पटिकवृत्तान्त	स°	19	?	9	§ ? ₹	9
१०७ वस्तुपालदानवृत्तान्त	स°	"	8	8	§१ ६२	98
१०८ खलकृतवस्तुपालनिन्दावृत्तान्त	स॰	"	3	88	§ ? \$ 3	"
१०९ भोजराजप्रदत्तवैद्यग्रासवृत्तान्त	स°	55	?	7	§88 ·	99
११० लघु-वृद्ध-वाग्भटवैद्यवृत्तान्त	स°	"	2	9	§ 286° .	99
१११ षड्दर्शनसम्मेलनवृत्तान्त	स°	"	2	9	§ ३२	199.
११२ वस्तुपालमंडितचचरवृत्तान्त	स°	"	2	88	\$? \$?	७३
११३ देपाकदत्तपुण्यवृत्तान्त	स॰	888	3	3	\$? 4 ?	. 50
११४ व्यवहारिजगडूवृत्तान्त	स॰	17	3		\$? 64	Co
११५ पुञ्जराज-श्रीमातावृत्तान्त	स	"	3	8	\$? ? 9	C8
११६ पादलिस-नागार्जनवृत्तान्त	स°	"	3	30	§ ? ?३	68
११७ वामनस्थलीयपण्डितवृत्तान्त	स॰	"	3	25	१२५०	558
११८ व्यवहारिमुख-उन्दक्तिावृत्तान्त	स°	"	3	88	§ 79?	"
११९ वलभीविनाशसूचनवृत्तान्त	स°	"	2	8	§ १९४-९¢	ं ८३
१२० वस्तुपालकृतसंघामंत्रणवृत्तान्त	स॰	"	2	1910	११६८	७५
१२१ वस्तुपाल-माणिक्यसूरिमीलनवृत्तान्त	स°	"	2	\$8	\$ \$ \$ 9 \$	98
१२२ हरिहर-मदनकविद्वयवृत्तान्त	स॰	१४२	3	8	§ ? 9 ₹	99
१२३ कुमारपालसन्तत्यभाववृत्तान्त	स°	"	3	8	\$66	84
१२४ कुमारपालसोमेश्वरदर्शनवृत्तान्त	स°	"	8	9	\$ 200	89
१२५ मयणल्लामोचितवाहुलोडकरवृत्तान्त	स°	"	3	9	\$ \$9	38
१२६ हेमसूरिसर्वरसवेदकवृत्तान्त	स°	33	3	88	§७६	39
१२७ रामकृतधान्यकुशलप्रच्छावृत्तान्त	स॰	"	3	१६	§ २५ ५	229
१२८ पादलिप्तसूरिकृतवादिपराजयवृत्तान्त	Iस॰	"	2	3	§ २१३	99
		1 100			the part of the second of the second	

^{° 3} प्रतिमं गलतीसे इसका क्रमांक दुवारा १०१ दिया गया है।

⁴ पृ० ९७ की पंक्ति ४ से ८ तकका अंश।
5 पृ० १९ पर मुद्रित षड्दर्शनप्रवन्धका संक्षिप्त सूचन मात्र किया गया है इसलिये यह पंक्ति संप्रहमें पुनर्मद्रित नहीं की गई।

I पृ॰ ९५ पर, मुद्रित पंक्ति ३ से ७ तकका अंश ।

.१२९ खरतराचार्यप्रदर्शितदयावृत्तान्त	स॰ १४२	2	6	. १२५६	224
१३० चारणकृतयशोवीरप्रशंसावृत्तान्त	स° ,,	2	33	· 8888×	: ०५१
१३१ राज्ञीभ्रातृबुद्धिपरीक्षावृत्तान्त	स° "	2	.99	§ 740	386
१३२ पं० रामचन्द्रविपत्तिवृत्तान्त	सः १४३	3	2	\$ \$ \$ \$ \$	86
१३३ वस्तुपालसैनिकभूणपालवृत्तान्त	स॰ ,,	3	4	११६०	. 98
१३४ सोमेश्वरकृतवस्तुपालस्तुति	स° "	3	6	§ १ ६ १	77
१३५ वामनद्विजकृतवस्तुपालचाडावृ०	सº "	8	१५	§ ? \$ \$.	. 93
१३६ वस्तुपालकारितमूलराजहस्तच्छेदवृ०	स° ,,	2	2	\$ \$ \$ 98	. 99
१३७ पिप्पलाचार्यप्रदर्शितविनोददानवृ०	स° "	2	° 4	§ १ ६ ७	93
१३८ हरदेवचाचरीयाकवृत्तान्त	स° "	2	85	§ १७ ६	30
१३९ पाटलीपुरीयनन्दन्पवृत्तान्त	स° "	?	१५	\$? 6 9	८२
१४० जयचेन्द्रसपृथ्तान्त	स॰ १४४	3	9	१२०६	60
पातसाहिनामावलि ।	स° "	3	9		१३५

§१२. (५) Ps संज्ञक संग्रह

पाटणके संघके नामसे प्रसिद्ध प्रन्थ भण्डारमें ६ पन्नोंकी एक प्रति हमें मिली जिस पर वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्ध ऐसा नाम लिखा हुआ है। पाटणके संघका नाम सूचित करनेके लिये हमने इसका संकेत Ps अक्षरसे किया है। नाम मात्र देखनेसे तो ऐसा अम होता है कि यह वही प्रवन्ध होगा जो राजशेखर सूरिके प्रवन्धकोषमें अन्तिम भागमें प्रथित है; क्यों कि इस प्रवन्धकी स्वतंत्र प्रतियां भी कहीं कहीं दृष्टिगोचर होती हैं। लेकिन प्रतिका प्रसक्ष अवलोकन करने पर विदित हुआ कि यह प्रवन्ध राजशेखरकृत प्रवन्धसे सर्वधा भिन्न है। उतना ही नहीं परंतु इस प्रवन्धके प्रणिवताका उद्देश तो उक्त प्रवन्धकोषगत वस्तुपाल-तेजपाल प्रवन्धमें जो जो वातें अनुहिस्तित रहीं हैं, खास करके उन्हींका संप्रह करनेका है। इस बातका उद्देश प्रवन्धप्रणेताने स्वयं प्रकरणके प्रारम्भ-ही-में 'अध श्रीवस्तुपालस्य २४ प्रवन्धमध्ये यन्नास्ति तद्त्र किश्चित्विख्यते।' यह पंक्ति लिख कर किया है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि इसका प्रणयन, राजशेखरकृत प्रवन्धके पश्चात् हुआ है। इसका प्रणेता कौन है सो ज्ञात नहीं होता। प्रतिमें कहीं भी कर्ताका नामनिर्देश किया हुआ नहीं मिला। संघके भण्डारकी यह प्रति है बहुत पुरातन। यद्यपि इसमें लिपिकर्ता वगैरहका कोई उद्धेख नहीं होनेसे इसका लेखन-समय ठीक निश्चित नहीं कर सकते; तथापि इसकी स्थिति देखते हुए, संभवतः वि० सं० १५०० के पहले या उसके आसपास इसका समय सूचित किया जा सकता है। इस प्रवन्धके प्रणेताने, प्रवन्धगत वृत्तान्तोंमें बहुतसे तो B और P संज्ञक पुराने संप्रहों ही परसे नकल किये माल्यम देते हैं। सिर्फ कहीं कहीं कुछ वृत्तान्त या पंक्तियोंमें न्यूनाधिकता दृष्टिगोचर होती है।

§१३. (६) परिशिष्ट

प्रस्तुत संग्रहके अन्तमें, पृष्ठ ११६ से १३४ तक, प्रबन्धचिन्तामणिगुम्फितकितपयप्रबन्धसंक्षेप इस शिरोलेखके नीचे जो १ परिशिष्ट दिया गया है उसकी मूल प्रति हमें अहमदाबादके डेलाके उपाश्रयबाले भण्डारमेंसे प्राप्त हुई है। इसकी पत्रसंख्या ५ है। अन्तमें 'श्रीजयसिंहप्रबन्धाः।' ऐसा पुष्पिकावाक्य लिखा हुआ होनेसे भण्डारकी सूचिमें 'जयसिंहप्रबन्ध' के नामसे इसका निर्देश किया हुआ है। परंतु प्रतिका साद्यन्त अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इसमें, प्रायः प्रबन्धचिन्तामणिसंकलित कितनेएक मुख्य मुख्य प्रबन्धोंका किसी विद्वान्ते संक्षिप्ती-

[×] इस कण्डिकाका अन्तिम भाग,-पृ० ५१ की पंक्ति १२ से १७ तक।

करण किया है। इस संक्षेपका कर्ता कौन है सो अज्ञात है, वैसे ही प्रतिके लेखन-समयादिका सूचक भी कोई उल्लेख प्राप्त नहीं हुआ। प्रतिका रूप रंग देखते हुए अनुमान कर सकते हैं कि कोई ३००-४०० वर्ष जितनी प्रतिन तो जरूर होगी। प्रतिके हांसियोंमें कई भिन्न भिन्न प्रकारके हस्ताक्षरोंमें टिप्पनादि किये हुए दृष्टिगोचर हो रहे हैं इससे ज्ञात होता है कि इसका पठन वाचन कई जिज्ञासुओंने किया है।

§ १४. उपसंहार

इस प्रकार प्रस्तुत संग्रहका संकलन करनेमें हमने मिन्न भिन्न ऐसे ६ संग्रह प्रन्थों का सम्पूर्ण उपयोग किया है; जिनमें ५ तो स्वतंत्र प्रवन्ध-संग्रह हैं और १ प्रवन्धिचिन्तामणि-ही-के कुछ भागका खल्प संक्षेप मात्र है । एक Ps संग्रहको छोड कर शेष पांचों प्रतियोंके कितनेएक पत्रोंके हाफ्टोन च्लाक बनवा कर उनकी प्रतिकृतियां इसके साथ संलग्न कर दी गई हैं जिससे पाठक प्रतियोंके वर्णनगत परिचयके साथ इनके आकार—प्रकार आदिका प्रत्यक्ष दर्शन भी कर सकेंगे। अन्तमें हम इन प्रतियोंके संरक्षक, और इस प्रकार यह समुद्धार करनेमें हमें पूर्ण सहानुभूति पूर्वक इनका यथेष्ट उपयोग करनेमें सुलभता प्राप्त करा देने वाले सज्जनोंके प्रति हम अपनी आदरपूर्ण कृतज्ञता प्रकट करते हैं। इनमें P प्रतिके साथ विद्वान सुनिवर श्रीपुण्यविजयजी महाराजका, तथा G प्रतिके साथ उसके संप्राहक श्रीयुत गोकुलदास नानजी भाई गान्धीका नाम निर्देश हमने ऊपर स्पष्ट कर ही दिया है। यहां पर B प्रतिके संरक्षक, स्वर्गत सुनिवर श्रीभक्तिन्वजयजी सहाराजके प्रति हम अपना सविशेष कृतज्ञतभाव प्रकट करते हैं जिन्होंने कई वर्षों तक इस प्रतिको हमारे पास पडी रहने देनेकी उदारता बतलाई है तथा और और भी पुस्तकादि प्राप्त करने-करानेमें जो सदैव हमारे प्रति सोतसाह प्रेरणा एवं प्रयत्न करते-कराते रहते हैं।

महावीर जन्मतिथि, चैत्र, सं० १९९२. } भारतीनिवास; अहमदाबाद.

जिन विजय

SANS 089.012 POR



प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टसंग्रह

[१] B संग्रहगत ऋषिदत्ता कथानक।

रथमईनं नगरम्, राजा हैमरथः, सुयशा राज्ञी, पुत्रः कनकरथः। इतश्च कौबेरी नगरी, राजा सुन्दरमाणिः, राज्ञी वासुला, सुता रुक्मिणी। प्राप्तवरा जाता, कनकरथस्य दत्ता। ततः परिणेतुं तस्यागच्छतो देशसीम्नि आवासेषु दत्तेषु केनापि पुरुषेण इति विज्ञप्तम्—यत्, अस्य देशस्य स्वामी राजा अरिदमन इति ज्ञापयति—मम सीम्नि राजचिन्हानि मुक्त्वा त्वया एकािकना गन्तव्यम्। अन्यथा युद्धसञ्जो भव। तथा तस्य दूत[स्य] मुखादमुं श्लोकं श्रुत्वा—

यदि मत्तोऽसि मतंगज! किममीभिरसारसरलद्रुनैः। हरिमनुसर खरनखरं व्यपनयति स करटकण्ड्रतिम्।। १।।

श्लोकमाकर्ण्य युद्धाय समागतः ।

12 3

एयति घोडा एअ बल एअति निसिआ खग्ग । इत्थ मुणीस जाणीअइ जो निव वालइ वग्ग ॥ २ ॥ धडु घोडइ सिरु घरणिअलि अंतावलि गिद्धेहिं । महु कंतह रिणसामीअह दिश्नं तिहु खंधेहिं ॥ ३ ॥

स राजा कुमारेण जितः । आज्ञाविधायी जातः । स व्रतं पालियत्वा मुक्तिं जगाम । कुमारेण श्रीनेमितीर्थं [प्रति] प्रयाणं कृतम् । एकसिव्रिपे सरित आवासेषु जातेषु वनमध्ये काञ्चित्कन्यकां दृष्ट्वा गतां ज्ञात्वा परिश्रमन् श्रीयुगादिचैत्यं गतः । देवस्तवनानन्तरं यावत्पद्यायां निविष्टः, तावदेको वृद्धतपोधनः कन्यासिहतः पूजोपचारयुतो दृष्टः । कन्या कुमारं विलोक्येति चिन्तितवती—

किमिन्द्रः किम्रु वा चन्द्रः किम्रु वासौ दिवाकरः । देवः किमथवा साक्षादयं मकरकेतनः ॥ ४॥

अथवा

कलङ्की रजनीजानिस्तपनस्तपनः पुनः । अनङ्गस्तु मनोजन्मा तत्कोऽयं सुभगाम्रणीः ॥ ५ ॥

अथ कुमारेण स नमस्कृतः । मुनिना इत्युक्तः—त्वं कस्य सुतः १, केन कारणेनात्रायातः १ । कुमारस्य भट्टेन पूर्ववृत्तान्तः किथितः । कुमारेणापि मुनेः पार्श्वादिति पृष्टम्—कथमत्र १, के यूयम् १, का कन्या १, कथमत्र देवगृहम् १ । कारणं कथयत । ततो मुनिना देवपूजाऽनन्तरं कुमारं निजाश्रये नीत्वा स्वचित्रमिति कथितम्—वत्स ! श्रूयताम् , अस्मिन् भरते मंत्रिवती पुरी, हिरिषेणो राजा, प्रिया प्रियदर्शना, पुत्रोऽजितसेनः । कदाचित्स राजाऽश्वापहृतो वनेऽस्मिन् कच्छ-महाकच्छानुकमे कुरुपतिं विश्वभृतिं प्रणम्य उपविष्टः । आशीर्वादः प्रदत्तस्तेन । राजन् !

यसांश्रयोः खेलति कुन्तलाली श्रियेस्तु वः स प्रथमो जिनेन्द्रः । गम्भीरसंसारसमुद्रमध्यादुनमञ्जतः शैवलवल्लरीव ॥ ६ ॥

ततोऽनन्तरं रुक्षणैर्नृपं विज्ञाय मुनिना पृष्टम्—कृतो यूयमेकािकनः ?, कथिमहागताः ? । तेन वृषमान्वयेन श्रीआिदनािथः प्रासादः कारितः । मुनिना तस्य विषापहो मंत्रो दत्तः । ततः स राजा स्वपुरं गतः । तत्र समये मंगलावती पुरी, त्रियन् दर्शननरेन्द्रस्य प्रीतिमती दुहिता । केनचित् पुरुषेण राज्ञः सर्पदष्टा कथिता । ततो हरिषेणस्तत्र गत्वा, तां निर्विषक्तित्य परिणीय च स्वपुरं समायातः । कियत्यपि काले वृद्धत्वे भार्यया सह तापसी दीक्षां जम्राह । तां प्रकटगर्मा निरीक्ष्य, राजिषमुपालस्य कुल्पितरन्याश्रमं तो त्यक्त्वाययो । तेन दुःस्वितो यावदास्ते तावत्पुत्री जाता, राज्ञी मृता च । पश्चात्तेनाष्टवर्षाणि यद्यप्रदत्ता

सुता पालिता ने ततस्तां रूपवर्ती ज्ञात्वा लोकापहारभयेनादृश्यीकरणमञ्जनं दत्तम् । सा बाला, या, हे राजकुमर! त्वया दृष्टा । तया च त्वं दृष्टः । परस्परानुरागतः सांप्रतं मम सुतामिमां त्वं परिणय । तेन सा ऋषिदत्ता परिणीता । ऋषिणा कुमारं प्रत्युक्तम्—अस्यास्त्वं जीवितेशवत् इति ज्ञेयं भवता ।

युक्तोऽसि भ्रवनभारे मा नम्रां कन्धरां कृथाः शेष!।
त्वय्येकस्मिन् दुःखिनि मुखितानि भवन्ति भ्रवनानि ॥ ७ ॥
सम्प्रति न कल्पतरवो न सिद्धयो नैव देवता वरदाः।
जलद्! त्विय विश्राम्यति जगतोऽपि हि जीवितारम्भः ॥ ८ ॥

मुनिः पुत्रीं प्रति शिक्षां ददाति-

रक्लाकंडयमंतोसंहीभि मा खिनसु पुति! अप्पाणं ।
छंदाणुवत्तणं पिअयमस्स एअं वसीकरणं ॥ ९ ॥
कुलवध्वा विधातव्यं श्वश्रुशुश्रुपणवतम् ।
देवतं हि पतिः स्त्रीणां माता तस्यापि देवतम् ॥ १० ॥
संसारभारनिर्वाहे वामा वामाङ्गवाहिनी ।
प्रसादपात्रं मोहस्य तेनैवालमलंकृता ॥ ११ ॥
अभ्युत्थानसुपागते गृहपतौ तद्भाषणे नम्रता
तत्पादापितदृष्टिरासनिविधिस्तस्योपचर्या स्वयम् ।
सुप्ते तत्र श्यीत तत्प्रथमतो जह्याच श्रूर्यामिति
प्राच्यैः पुत्रि! निवेदिताः कुलवध्रुशुद्धान्तधर्माश्रमाः ॥ १२ ॥
इति शिक्षा प्रदत्ता ।

मा भूः सुखे च दुःखे च वत्से! धर्मपराश्चुखी। धर्म एव हि जन्तूनां पिता माता सहत् प्रश्चः ॥ १३॥

पश्चान्मुनिः राजसुतं सुतां मुत्कलाप्य स्वयं नमस्कारपरः सन् अमो प्रविष्टः । तत आत्मीयकलतं रुदिन्नवार्यं पेतकृत्यं कृत्वा तत्स्थाने वेदीं विधाय निजपुरं प्रति कुमारश्चलितः । तया मार्गे सर्वत्रापि देवतादत्तवीजैर्नृक्षा रोपिताः, उद्गताश्च । प्रयाणैः पश्चाद्वहं गतौ । पित्रा मात्रा वद्धीपनं कृतम् । सुखेन तिष्ठन्ति ।

इतश्च, राजधुता रुक्मिणी ऋषिद्तां परिणीतां श्चत्वा कुमारं वाञ्छती महादुःखिता योगिनीं सुल्सामिधां षट्ट्रकर्मितितां सपल्यास्त्यागाय रथमईनपुरे पेप्य तयाऽवखापिनीं विद्यां दत्वा पुरुषवध-नरमांसभक्षणे ऋषिदत्तायाः कलंकमारोप्य श्चगुरपार्श्वाद् देशमध्यानिष्कासिता । सा केनापि सार्थेन सह औषधप्रभावेण पुरुषवेषं विधाय खजन्मभूमौ पैत्रिकं वनं गता । सा योगिनी खपुरं गता । तया रुक्मिण्या अभे सर्व निवेदितम् । ततो रुक्मिण्या पितुरभे ऋषिदत्तामृतवृत्तान्तं कथित्वा पाणिम्रहणार्थं कुमारस्याकारणाय विज्ञसेन जनकेन मनुष्यान् पेष्य स्रतादानं विधाय प्रगुणितः । तैर्मनुष्यैः समं पाणि महीतुं पूर्ववनं यावन्त्वमारः समायातः, तां पूर्वभूमिकां दृष्टा ऋषिदत्तागुणान् स्मृत्वा मुक्तकण्ठं रोदनं विधाय यावचैत्यं गतः, तावद्क्षिणाङ्गस्फुरणं विचार्य, अत्र किं गुमं भावि १ इति किञ्चिचन्तयन् यावदास्ते तावत्युष्पो [प]हारहस्तः तपिसकुमारस्त्रपधारी कोऽपि मुनिः समायातः । रूपपरावर्चेन पुष्पाणि कुमारस्य समर्थं खयं देवपूजादिकृत्यं विधाय इति चिन्ततम्—यत् एष परिणेतुं गच्छति । ततः कुमारेण स मुनिः पृष्टः—कुतो यूयम् १ कथमत्र १ । मुनिनोक्तम्—अत्राश्रमे पूर्व हरिषणराजिः सुतां ऋषिदत्तां कस्यापि आगतस्त्र राजकुमारस्य दत्वा काष्टमक्षणं कृतवान् । अस्मिन् शून्याश्रमेऽहं तस्य शिष्यतुत्त्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः । पञ्चवर्षाणि बमूनुः । निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्रमेऽहं तस्य शिष्यतुत्त्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः । पञ्चवर्षाणि बमूनुः । निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्रमेऽहं तस्य शिष्यतुत्त्यः देशान्तरे तीर्थयात्रां मुनि

स्नेहास्त्रभाषणपूर्व भोजनवस्ताभरणादिदानं विधाय कीबेरीं प्रति तेन मुनिना समं गृहीत्वा गतः । रुक्मिणी परिणीता । तया रुक्मिण्या एकान्ते महास्रेहे जाते पतिः ऋषिदत्तावृत्तान्तः पृष्टः । तेन कथितम्—ऋषिदत्तायाः शीलगुणो विनयगुणो रूपगुणा-दिकोऽनिर्वचनीयस्तत्र किं कथ्यते । उक्तं च—

> रूपलक्ष्मीयुषो यसाः समस्या कामकामिनी । कर्णिका-मेनिका-नागयोषितः पदपांश्चवः ॥ १४ ॥ जाते तद्विरहे दैवाद्दासी त्वमिस मे प्रिया । यत् क्षीरेण विना घृष्टिरपि प्रीतिकरी न किम् ॥ १५ ॥

तदमावे त्वं मया परिणीता । यथा षर्रसपेशलस्य भोजनस्याप्राप्त्या किं कथितालं न भुज्यते । तद्वनं श्रुत्वा गृह-वासमवगणय्य सा रुविमणी पूर्वकारितं निजं पौरुषं सर्वं कथितवती । कुमारस्तदाकण्यं महासकोपस्तामङ्कात्यक्ता, रे! पापिष्ठे! आत्मानं मां च नरके कथं क्षिपसि । गच्छ, मम नेत्रादपसर । अदृष्टमुखी भव । सा रूपवती महासती कथाशेषी कृता । लोकद्वयविरुद्धमभेक्ष्य तदा मुनिस्तद्वचनं श्रुत्वा निजकलङ्कगमनेनातीव हृष्टः । निशान्ते राजाङ्कणे चितां कारियत्वा कुमारः काष्ट्रभक्षणाय श्रुग्रेण लोकेन च वार्यमाणोऽपि यावचलितः, तदा सर्वलोकवचनोपरोधात्तपिश्चमुनिनोक्तम्—हे कुमार! कोऽपि मृत्वा कर्मवशाद् भिल्नगतिक आत्मप्रियस्य मिलितः । इति वारितोऽपि यदा न तिष्ठति तदा मुनिनेत्युक्तम्—देव । तव लेहाकृष्टा सा मृताऽपि मिलिप्यति, इति ज्ञानेन जानामि । कुमारः पृच्छति—भवद्भिः कापि सा दृष्टा ज्ञाता वा । कथं किंवा ह्यस्यपद्म श्रु-हति पृष्टे यमपुरे कृतान्तमन्दिरे तव प्रिया विद्यते । यदि तस्याः स्थाने महणके कोऽपि मुच्यते, तदा समिति । इत्युक्ते कुमारश्चिन्तातुरः तत्र को याति, कित्तिष्ठति ?; इत्युक्ते मुनिनोक्तम्—देवहं यास्यामि । यतो दुस्त्यजः स्नेहस्त्वया समम् । यदि भवान् ममादेशं दास्यति तदाहं यास्यामि । कुमारः प्राह—मयाभे तुभ्यं जीवितव्यं हृदयं दत्तम्, रोषं जीवितव्यं विद्यते तद्वि गृहाण । तेनोक्तं पुनर्मते कार्यं यिकिश्चिदहं याचि (१) तिन्वपेधियत्वयं नहि । ओमित्युक्ते प्रतिश्चते स मुनिलक्षमस्वय्योकसमसं प्रान्तरे प्रविष्टः । क्षणान्तरे मुक्तं पूर्वम् । दृष्टः क्षिसा । ततोऽतीव हृष्टः कुमारः । ऋषिदत्तायुतः श्रुग्रेण पूजितः । निजा मुता निर्मितिता । अकृत्यकारिणीति भणित्वा । पश्चात्याणकमुद्धते ऋषिदत्ताया अमे इति भणितम्—अहं समित्रं यममन्दिरे तत्र (व१) स्थाने मुक्ता कथं यामि गृहम् । यहं मित्रसमीपे गमिप्यामि । तदा हिसत्वा प्रिया प्राह—देव! एतस्पव जनकदत्तीषधविल्यतित्व। मर्वद्वित्त्यन्तावधारणीयम् । परं यथा हिक्नप्यां प्रसादो भवति तथा करिव्यम् । यतः—

न हसंति परं न थुणंति अप्पर्य विष्पिअं पि न चवंति । एसो जाण सहावो नमो नमो ताण पुरिसाण ॥ १६ ॥

प्रियावचनं श्रुत्वा हृष्टः । श्रञ्जरेण प्रेषितः । प्रियाद्वययुतो निजिपतृगृहं ययौ । ततो हेमरथो राजा निजापराधिवरुक्षो वधूमनुनीय कुमारं राज्ये संस्थाप्य भद्राचार्यपार्श्वे वतं गृहीत्वा मुक्ति गतः ।

ततः कनकरथस्य पृथ्वीं पालयतः ऋषिदत्तायाः सिंहरथो जातः । हर्षपूरितस्य राज्ञः कियत्यपि गते काले गवाक्षोप-विष्टस्य मेघमण्डलं संपूर्णं हृष्ट्वा प्रचण्डपवनेन खण्डीकृतं गलितं च विज्ञाय चेतिस विरागवान् जातः संसारोपरि । इति चिन्तयित—

> जजरइ जहा देहं खणेण तहा जोवणं विणासेइ। खणदिइनद्ररूवा इह इद्वसमागमा सबे॥ १७॥

ऋषिदत्तायाः समं यावत् रात्रौ इति चिन्तयति, तावत्यभाते उद्यानपालकेन तत्रायातसूर्यागमनं कथितम् । ततः पियया सह गुरुं मणम्य देशनां श्रुत्वा प्रियाया राक्षसीकलङ्ककारणं निष्कारणं पृष्टवान् । उक्तं च- इह भरते गंगापुरे गंगदत्तराज्ञः गंगाकुक्षिसमुद्भवा गंगसेना सुताऽऽसीत् । चंद्रयशासाध्वीसमीपे सुता सम्यक्त्वसारं धर्मे प्राप्यातीव सदाचारचतुरा वर्भूव । कदाचित्तत्रेव पार्धे गंगामिघा तपोधना तपस्तपति । तां लोकी नमति स्तौति च । अस्याः सदशी तपःपात्रं साध्वी काणि न दृश्यते जगति—इति प्रशंसावाक्यं श्रुत्वा गंगसेनाऽसहमाना लोकाम्ने इति कथयति—इयं गंगा दम्भपरा दिवा तपः करोति रात्रौ राक्षसीव सृतकमांसं भक्षयति । अस्या नामापि न प्राह्मम् । सा गंगा क्षमापरा सती सवें सहते न किमपि वदति । तदलीकदूषणेन दृषिता गंगसेना महत्तपः कृत्वा मिथ्यादुःकृतस्यादानात् सृत्वा स्तर्गं गता । पश्चाद् भवं आन्त्वा मुहुर्मुहुः, गंगापुरे राज्ञः सुता जाता । ततो मुनिसुत्रततीर्थनाथस्य पार्थे धर्म प्राप्य सकपटं विकटं त्यो विधाय पर्यन्तेऽनालोच्यानस्यानाम्मृत्वा ईशानेन्द्रस्य प्रिया जाता । ततः पश्चाद् हरिषेणमहीपतेः सुता जाता ऋषिदत्ताभिधाना । अस्याः स कलक्क उदयं गतः । सा गंगा साध्वी भवान् आन्त्वा रुक्मिणसप्ती जाता । तेन कलंकोऽ-दायि रुक्मिण्याः । अतो भवशतेरपि कर्मभ्यो न कुळ्यते । ततः सूरिवचनाज्जातिसरणतः पूर्वभवस्तरूपं विज्ञाय राजा सुतं सिहरथाभिधानं राज्ये संस्थाप्य सकलत्रो वतमम्महीत् । ऋषिदत्तासाध्वी भिद्दलपुरे श्रीशीतलतीर्थे[श]जन्मभूमौ केवलज्ञानं प्राप्य मुक्तिं जगाम ।

॥ इति ऋषिदत्ताकथानकं समाप्तम् ॥ १७ ॥

[२] B और BR संग्रहस्थित मोरनागप्रबन्ध।

एकदा श्रीशत्रुंजये राजादनतरोरधः श्रीआदिनाथे (Br श्री ऋषभदेवे) समवस्ते मयूर्मुलात् सर्पश्चरणात्रे पपात । मयूरः पृष्ठिमाययो । लामी विस्मितः । वैरं दृष्ट्वा तयोर्भगवानाह—भोः ! पूर्वभवाभ्यासादिहापि वैरमारव्धम् !। शृणुतः— बालाकदेशमध्ये सुप्रामप्रामे दत्तः श्रेष्ठी । तस्य द्वौ सुतौ । एकदा श्रेष्ठी अनशनं जगृहे । निर्व्यंजनं मत्वा लघुना कटाहिः कृष्टा । इतो वृद्धो आता आययो । तेन दृष्टा...गार्थे कल्लहं कृत्वा मृतौ । तत्रैव सर्पी जातौ । युद्धा मृतौ । तृतीयनरकं गतौ । तद्नु संढो जातौ । मिलितौ, युद्धा मृतौ । तदनु सर्प-मयूरौ जातौ । अत्रापि तदेवारव्धम् ! । ततो जातजातिस्मृती भगवता दत्तमनर्शनमादाय मृतौ । चतुर्थदेवलोकं गतौ ॥

॥ इति मोरनागप्रबन्धः ॥ १८ ॥

[३] BR संग्रहोपलब्धबप्पभिटसूरिकथाप्रकरण।

एकदा प्रेक्षणे जायमाने गुरूणां वप्पभिट्टसूरीणां पुस्तकं (१) दृष्टिस्तिमिरेणावृता वप्पभिट्टसूरिभिर्नर्त्तक्या नीलीकं चुके दृष्टिः क्षिप्ता । आमनृपेण ज्ञातं मम मित्रस्थेतस्थामिलाषोऽस्ति । अत्र किं दुष्करम् । कांठुलीमाहूय रात्रौ मम मित्रमठे वसनीयम् । इतः सा रात्रौ छन्ना मठं गत्वा गुरूणां चरणसंवाहनं चके । गुरुमिरुक्तम्—का त्वं १। अहं नर्तकी देवेन प्रहिता । इतो गुरुवो रोदितुं प्रवृत्ताः । तथा ज्ञातं दशम्यां कामावस्थायामेते । यथा—

नयनप्रीतिः प्रथमं चित्तासङ्गस्ततोऽथ सङ्कल्पः । निद्राच्छेदस्तनुता स्वभावव्यत्ययस्वपानाशः ॥ उन्मादो मूर्च्छा सृतिरित्येताः स्मरदशा दशैव स्युः ॥

तयोक्तम्—मयि खाधीनायां किमिति रुवते ?। ताभ्यामु(तैरु ?)कम्—अस्माकं गुरवः स्मृताः । कथं ? –िश्चात्वे गुरूणां पाश्चासप्रदेशेषु छठनं तव पयोधरैः स्मृतम् । तदनूकम्—

चक्षुः संवृणु वक्तवीक्षणपरं वक्षः समाच्छादय रुन्द्रि स्फूर्जदनेकभङ्गि चतुरं शृङ्गाररम्यं वचः । अन्ये ते नवनीतिपण्डसदृशा मर्ला भवन्ति क्षितौ मुग्वे ! किं परिखेदितेन वपुषा पाषाणकल्पा वयम् ॥



प्रातर्नेपेण पृष्टा-

गयइ (?) वइकेरइ देव मिं नहु केणइ 'परिभुत्त । निचोरइ गुजररिज जिम पाय पसारिव, सुत्त ॥

नृपेण प्रातश्चरणयोर्छगित्वा मानिताः।

[४] В संग्रहस्थितजिनप्रभसूरिपवन्ध*।

एकदा सभास्थे सुरत्राणे सूरिभिः समं धर्मगोष्ठीं कुर्वाणे कोपि सुलाण आगतः। तेन निजटोपिका आकारो स्थापिता। तदा च सभासदां चमत्कारः समजनि। तद्नु सुरत्राणेन सूरेर्मुखं विलोकितम्। ततः सूरिणा निजरजोहरणसुच्छाल्य टोपिका पातिता, परं रजोहरणं नभसि स्थितम्। गुरुणोक्तम्—यस्य कस्थापि शक्तिरस्तु स पातयतु। परं केनापि नापाति। ततसौरेव दक्षिणकरेणाप्राहि। द्वितीयदिने तेनैव सजलकुम्भो नभसि स्थापितः। ततो गुरुणा सुरत्राणानुज्ञया रजोहरणेन कुट्टियत्वा घटो भगः, पानीयं तत्रैव मोदकाकारेण स्थितम्। तेन चमत्कारेण जिनशासने महती प्रभावना जाता।
एकदा सुरत्राणेनोक्तम्—भोः सभ्याः! शर्करा कस्य मध्ये श्विप्ता मिष्टा स्थात्। ततः सभ्यैः स्वधियोक्तं परं तन्मनसि न चमत्करोति। ततस्तेन सूरिः पृष्टः। सुस्तमध्ये। तेन रिक्षतः। अन्येद्युः स्वसुद्रिकां स्वयं पर्यद्वपादतले संस्थाप्य सूरिं प्रति
प्राह्—मम सुद्रिका गता सम्प्रति कास्ति? सूरिणोक्तम्—योगिनीपुरमध्ये। पुनः पृष्टे, राजभवनान्तः। पुनः पृष्टे, सभामध्ये। पुनः पृष्टे पत्यद्वे पादचतुष्ट्यमध्ये। तत एकं पत्यद्वपादसुत्पाद्यांगुल्यपिता । तेन स रिक्षतः।

एकदा पृष्टम्—दुनीमध्ये किं पुष्पं वृद्धम् ? । सभ्यैः स्विधयोक्तम्—परं तन्न मनश्चमत्कारकारि । सूरिणोक्तम्—दुणिफलं वृद्धम् । येन नवसंडपृथ्व्या छजा ढंक्यते । तेन हेतुना जगढंकणीति बिरुदं दत्तम् । एकदा ततः सुरत्राणः समुत्थाय सूरिणा सह स्वावाससोपानकानुष्ठंध्यमानः, एकस्मिन् सोपानके श्रीवीरिबिम्बं म्लेच्छैः स्थापितमस्ति, तदुपरि सूरिणा पादो न दत्तः । सुरत्राणेनोचे—कुतोऽस्मिन् प्रस्तरे पादं न ददासि ? । तेनोचे—महावीरोऽसौ कथ्यते । सुरत्राणोऽनक्ष्यसावीहम् नाम विरुदं धत्ते तदा कस्मान्मौनेन स्थितः । सूरिराह—हे देव ! यतः कथितं देवेभ्योऽपि दानवा बलिनः स्थः । दुरवस्थापतितानां सर्वेषामीहगवस्था स्थात् । तदनु सुरत्राणेन निजनरा निष्कासनहेतवे प्रहिताः परं सहस्रेरिष् न निःसरति । तदनु सुरत्राणेन पृष्टः सूरिराह—यदि स्वयमेव गत्वोत्पाट्यते तदा निस्सरति नान्यथा । तथा कृत्वाऽऽक-

^{*} एष प्रवन्धः BR सङ्ग्रहे लिखितो लब्धः । तथैवैकस्मिन् अन्यकथासङ्ग्रहेऽप्युपलब्धः । अतोऽस्य पाठमेदा अपि अत्र सङ्ग्रहीताः सन्ति । 1 रविवर्द्धनप्रतो 'देवी' नास्ति । 1 एतदन्तर्गता पंक्तिः पतिता प्राचीतादर्शे । 2 प्रवन्तर्गतापितम् ।

र्षितः । निज्ञाबाससम्मुखं प्रौढं जिनालयं कारयित्वा स्थापितः । पृष्टम्-भोः सूरे ! श्रीवीरः पृष्टस्सन् किमप्युत्तरं दत्ते न वा । सूरिराह—सर्वं कथयति । तदनु, अन्ते अवनिकां बद्धा सुरत्राणेनोक्तम्—अस्मित्रगरे कियन्तः सुरत्राणा आताः ?। वीरेषोक्तम्-सर्वेषां नामायूराज्यपद्पालनपूर्वकं संख्यादि । तेनातीव हृष्टोऽभूत् । पुनः पृष्टम्-भवन्तः कियन्तः सन्ति ?। वीरेणोक्तम् वयं ऋषभप्रभृतयः २४ संख्याः साः । तद्नु अतिहृष्टेन तेन पंचाशतं द्रम्माणां प्रतिदिनं भोगपुष्पादि मूरितम् । परमेतत्सर्वं सूरिध्यानबलेनैव । तस्मिन्मेले जिनालयं कारितं येन निजावासिक्षतो नित्यं प्रणामं करोति । एकदावसरे सूरिणा विजययत्रप्रभावः प्रोक्तः । तद्नु पंचाशतद्रम्मैः स कारितः । सुरत्राणेन पृष्टम्-कः प्रभावः ?। सूरिणा कथितम्-यत्रायं यत्रो भवति तत्रारिः कोऽपि नायाति । ततः सुरत्राणेन निजच्छत्राधराखुर्न्यसाः । ततो मार्जारी मुक्ता परं छत्रच्छायायां कथमपि औतुर्नेति । अपरः प्रभावः -यस्य देहे असौ वध्यते तस्य प्रहारो न छगति। तद्तु सुरत्राणेन छागमानाय्य तस्य देहे विजययश्ची वद्धः । बहवः खङ्गप्रहारा मुक्ताः परमेकोऽपि न छग्नः । एकदा सुरत्राणो गूर्जरधरित्री प्रति यात्राभिप्रायेण सूरिं प्राह-पांडे! अहं कस्यां प्रतोल्यां निस्सरिष्यामीति पृष्टे सूरिणा चिठडिकां लिखित्वा सर्ववृत्तान्तयुतां गोलकान्तस्तां क्षित्वा मुद्रां दत्त्वाऽर्पितो गोलकः । हे देव! त्वया योगिनीपुरबहिर्गत्वा गोलकं स्फोटयित्वा वाचनीयमिति प्रोक्तम् । सुरत्राणेन तथा कृतम् । यत् सुरत्राणः काकराख्यकोटस्य एकत्रिंशच्छराणि पातयित्वा निस्सरिष्यति । तेनाभिज्ञानेन स हृष्टः । सच्छायमंजरीफलभ्राजिष्णोराम्रस्य तले सर्वकटकं मेलयित्वा . प्रस्थानं साधितम् । तेन सूरिः पृष्टः-भो पांडे! कीहशो नयनानंदकारी सहकारोऽस्ति ?। सू० सत्यमेतत् । ततः सूरिणा स वृक्षः प्रयाणद्विकं सुरत्राणोपरि छायां कुर्वन् सार्द्धं चालितः । सूरिः सुरत्राणेन पृष्टः-भो पांडे ! असौ वृक्षः कस्मा-त्सार्द्धं समेति ?। सूरिणोचे-यदि सुरत्राणो विदाहिं ददाति तदा पश्चाद्वित्वा स्वस्थाने याति नान्यथा। तद्तु सुरत्राणेन विसर्जितश्रुतो निजस्थाने गतः । स सूरिः कियत्प्रयाणैनीगपुरादिमार्गेण मरुखल्यां प्राप । प्रतिप्रामं तन्निवासिना-र्योऽक्षतनालिकेरकुसुममालाचन्दनादिभिः [सूरिराजं] सुरत्राणं च वर्द्धापयन्ति । स ताः सर्वा विलोक्य कंचन पार्श्वस्थ नरं प्राह-एताः स्त्रियो विभूषणपट्टकूलमौक्तिकादिमिर्विवर्जिताः कथम् ?। केनापि दंडिता वानीपाते पातिता वा; येनेट-शीनिःश्रीका दृश्यते । (?) तद्नु तेन नरेणोचे-हे देव ! अयं देशो निर्द्धनः स्वभावेनैव, अन्यत्किमपि कारणं नास्ति । ततः सुरत्राणेन परोपकारियया प्रतिस्त्रियं द्वीनारटङ्ककाः स्वर्णमयाः समर्प्य प्रणामं कृत्वा स्वगृहे प्रहिताः । एवं प्रतिप्रामं समस्तिनिद्धेनजनानामाशाः सफलयन् पत्तनं यावत्पूर्वरीत्या प्राप । जंबरालनगरे बहिः कटकमुत्तिरतम् । श्रीजिनप्रभ-सूरयः पत्तननगरं गच्छन्तः तपापक्षश्रीसीमप्रभसूरिशालायामीयुः । श्रीसोमप्रभस्रिभिस्तेषां प्रशंसा कृता । श्रीप्रभूणां प्रभावादेव सम्प्रति श्रीजिनधर्ममाहात्म्यमस्ति इति । तैः प्रत्युक्तम् वयमविरताः सुरत्राणेन सार्द्धं रात्रिंदिवं ब्रजामः । सर्वदाऽस्वतन्त्राः। यूयं चारित्रिणः। युष्माकमाधारे चारित्रमसीति। एवंविधप्रसावे साधुभिः प्रतिलेखनार्थं सिकिको-त्तारिता। एकस्य साधोः सिकिका मूपकैर्जग्या। तद्वचः श्रुत्वा श्रीसृरिभी रजोहरणं भ्रामितम् । ततः सर्वे मूषकाः शाला [तो बहिः] निःसृत्य सूरेरप्रे उपविष्टाः। सूरिभिरुक्तम् – अहो आखव! एते साधवः कीटिकाया अपि विरूपं न चिन्त-यन्ति; भवद्भिः कस्माद्विनाशोऽकारि ? । पुनरुक्तम्-वयं कस्यापि विरूपं न चिन्तयामः, एवं यः कश्चिद्पराधी स तिष्ठतु, अन्ये गच्छन्तु । ततस्तस्य मृषकस्य देशपट्टो दत्तः, शालान्तर्न स्थेयम् । ततः स द्वारेण निःसृत्यान्यत्र गतः । कियद्दिनानि पत्तने स्थित्वा गूर्जरत्राव्यवहारिभिः सह सुराष्ट्रां प्रति चलितः । एकदा सूरिः पृष्टः-भो पांडे ! हीन्दूजनमध्ये किं तीर्थं बृहत् ?। सूरिराह-राजाद्नो दुग्धेन वर्षति । तद्नु पातसाहिना संघपतीभूय पूजामहाध्वजाऽऽवारिकारात्रिकादिकं कृत्वा संघेन सार्द्धं सहस्रठोकेन सूरिभिः सह त्रिःप्रदक्षिणां कृत्वा राजादनितरोरधः स्थितम् । तावता सूरेर्ध्यानवलेन संघसहितसुरत्राणोपरि कुंकुमकेसरकर्पूरमिश्रं दुग्धं राजादनितो ववर्ष । ततश्चमत्कृतचित्तेन सुरत्राणेन सह गिरिनारं प्रति चिलतः । तीर्थासन्नगतेन तेन सूरिः पृष्टः-अस्य तीर्थस्य कः प्रभावः ? । सूरिराह-अच्छेद्योऽभेद्योऽयम् । किन्तु वन्नमयी

¹ प्र०-कोष्टस्य । 2 प्र०-वदाहि । 3 प्र०-विलित्वा' नास्ति । 4 प्र०-नागपुरनगरमार्गेण । 5 प्र०-एतत्पर्द नास्ति ।

मूर्तिः । ततः सुरत्राणेन सुद्गरघाते दत्तेऽप्रिस्फुलिंगाः प्रकटीभूताः, परं न भगः । तेन प्रभावेण रिक्षतेन स्थालं टक्किर्शृत्वा नेमिर्वर्द्धापितः । रात्रो केनापि म्लेच्छेन सर्वाः र्यामलप्रतिमा एकत्र मध्ये संस्थाप्य रात्रो सुप्तम् । एवं च व्यवहारिणामग्ने कथितम्—ययेते भूता रात्रो मम् प्रत्ययं द्र्शयिष्यांति तदा छोटयिष्यामि नोचेत्सर्वाश्चर्णाकरिष्यामि । एवं
कथित्वा सुप्तः । परं कालवरोन कोऽपि चमत्कारो न दृष्टः । प्रातः श्राद्धजनेन म्लेच्छव्यतिकरं विम्पव्यतिकरं च
सुरत्राणाग्ने निवेदितम् । सुर० स आहूतः पृष्टश्च—भो ! तवाग्ने भूतैः किमपि कथितं न वा ? । तेनोक्तम्—निह निह । ततः
सुरत्राणेनोक्तम्—सर्वेर्भूतिर्ममाग्ने मीनितः कृता, अयं दृष्टः अस्मानिभभवति तेन त्वया शिक्षा दातव्या । ततः स धृतो
निर्घातनार्थं श्राद्धेः कृच्छ्रेण मोचितः । एवं प्रकारेण गमनागमने सर्वजनाशां पूरयन् योगिनीपुरे सूरिभिस्सह महामहोत्सवपूर्वकं प्रावीविशत् सुरत्राणः ॥

॥ इति श्रीजिनमभसूरीणां प्रबन्धोऽयं ॥ लिखितं पं० रविवर्द्धनगणिभिः ॥

[४] प संग्रहस्थित जीव-इन्द्रियसंवादकथा।

अन्यदा जीवस्थेन्द्रियैः सह विवादः । तानि भणन्ति—वयं भव्यानि, अस्पद्विना न स्युः किञ्चन । स जीवो भणे-दहं चारः । एवं सित जीवेनोक्तम्—यान्तु भवन्तः । गते नेत्रे । ताभ्यां विनापि अमणादिकाः क्रियाः क्रुरुते । ततः कर्णों गतौ । ताभ्यां विनापि जातं सर्वम् । नाशिकापि जिह्वापि गता । स्वादं न छभते । गतैः सर्वेरपि जीवः सर्वोनपि व्यापारान् क्रुरुते । ततो जीवेनोक्तम्—आयान्तु भवन्तः । अहं यामि । तथा कृतम् । जीवो वपुषो दूरे स्थित्वा स्थितः । ततः मृत इव स्थितः । वाछोव्यां (?) भणत—को गरीयान् ?। तैरुक्तम्—भवान् । एवं निर्णयः झकटकस्य । अतो जीवो नरके न क्षेप्य इन्द्रियाणां स्वार्थं साधियत्वा ॥ ३ ॥

[५] G संग्रहगत धनश्रेष्टीकथानकः।

पृथ्वीपुरे धनश्रेष्ठी । तस्य चत्वारः पुत्राः । श्रियमाणेन पित्रा श्राय्याधः स्थिताश्चत्वारः कलशा विभज्य समर्पिताः । तेषु रजो-ऽस्थि-भूर्ज-हेमादि विद्यते । ततः पितुर्मृतेरनन्तरं ते परस्परं विवादं कुर्वाणाः पशुपालेनैकेन वारिता एवम्-रजः स्रेत्रम्, अस्थि पशुअश्वमनुष्यादि, भूर्जं लेख्यादि, कलाहीनः किमपि न वेत्ति सुवर्णम् ॥ १४ ॥

प्रबन्धचिन्तामणिसम्बद्धः-

॥ पुरातमप्रबन्धसङ्ग्रहः ॥

[P. B. BR. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः ।]

१. विक्रमार्क-प्रबन्धाः।

विक्रमार्कसत्त्वप्रबन्धः (B.)

(१) अकार्षीदन्यणामुर्वी विक्रमादित्यभूपतिः। स्वर्णे प्राप्ते तु है रंकस्तुरष्काकुलितां व्यधात्॥

(२) हुणवंदो समुत्पन्नो विक्रमादित्यभूपतिः। गन्धर्वसेनतनयः पृथिवीमनृणां व्यधात्॥

§१) उज्जियन्यामुच्छित्रवंशो विक्रमादित्यनामा जननीसहायोऽस्ति। तस भट्टमात्रो नाम मित्रम्। स एकदा द्रव्यार्जनाय मित्रेण सह जननीमाप्रच्छ्य चचाल। वजाकरं स्मृत्वा तदुपरि प्रस्थितः। क्रमेण रोहणाचले क्रगतस्तत्र ग्रामे रात्रौ वसितः। प्रातः स्वितत्रमादाय रोहणाद्रौ गतः। तत्र कौपीनमाधाय त्रिवेलं 'हा दैव' इत्युक्तवा ललाटं करेण हत्वा घातो दीयते। अतो भट्टमात्रेण चिन्तितम्—असौ सच्चवानस्ति। अपूर्ववातां विना न 'हा दैव' इति वक्ष्यति। अतो भट्टमात्रेणोक्तम्—देव! उज्जियन्या एको जनः समायातस्तेन तव मातुरिनष्ट- मुक्तम्। इति श्रुत्वा विक्रमार्केण 'हा दैव' इत्युक्त्वा करात्कुदालकः श्लिप्तस्तस्य संघातेन दिव्यं रतं प्रादुरास। विक्रमोणाक्ते मित्रेणोक्तम्—कुशकं गृहे, कोऽपि नायातः। तिहं कथमलीकमुक्तम्?। तदनु इमं श्लोकं पठता 10 विक्रमार्केण करान्यक्तं दृरे—

(३) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिद्यत्रणरोहणम् । दत्ते हा दैवमित्युक्ते रत्नान्यर्थिजनाय यः ॥

इत्युक्त्वा यथागतं ययो। पुनरुजियन्यामायातस्तत्र पटहो वाद्यमानः श्रुतः। कमि नरं पत्रच्छ-को हेतुरत्र १। तेनोक्तम्-अत्र राजा विलोक्यते। कथम् १। योऽत्र राजा भवति स रात्रो विपद्यते। विक्रमेणोक्तम्-अहं भिविच्यामि। इत्युक्ते प्रधानै राज्ये स्थापितस्तेन सन्ध्योपिर नैवेद्यानि कारितानि। पुष्पाद्यपस्करः सकलोऽपि सजी-15 कृतः। पल्यङ्कपार्श्वे पुष्पगृहं तत्र नाना नैवेद्यानि हौकयित्वा खयं सङ्गमाकृष्य जाग्रन्नस्ति। इतो गवाश्वविवरात् धूमो विस्तृतः। कमेण वर्षरो वेतालः प्रकटीभृतः। नैवेद्यं सेच्छ्या श्रुक्तवान्, विलेपनं च। पश्चानुष्टः सन् विक्रममाह्यं वभाषे—राजन् ! तव भक्त्याऽहं तुष्टः। तवं राज्यं कुरु। परिमयिद्देने दिने देयम्। तस्मिन् गते नृपः सुप्तः। प्रातर्नृपकर्षकाः समाजग्रः। ते नृपं जीवन्तमालोक्य हर्षकोलाहलं चक्तः। प्रधानपुरुषेनृपोऽभिषिक्तः। नित्यं नित्यं तावन्नैवेद्यं निष्पद्यते। एकदा नृपेणोक्तो वर्व्वरः—कस्त्वम् १। तेनोक्तम्—इन्द्रसेवकः। तिर्हं मद्राक्यादिन्दं 20 पृष्टा कल्ये वाच्यम्—यद्विक्रमस्य कियदायुः। स द्वितीयदिनेऽवादीत्—वर्ष १ शतम्, नाधिकं न न्यूनम्। तिर्हं इन्द्रपार्थान्मे वर्षद्वयमधिकं कुरु। तेनोक्तम्—इन्द्रणाप्यनेनायुरिषकं न भवति। तिर्हं वर्षद्वयं न्यूनं कुरु। तद्पि न भवति। इति विमृत्य द्वितीयदिने नैवेद्यं नाकार्षात्। स श्लुधितः सन् नृपं प्राह—त्वं स्ववाक्याच्युतः। अतः शक्तं कुरु। शक्ते कृते नृपेण भूमौ पातयित्वा कण्ठे चरणः प्रदत्तः। तेनोक्तम्—मा मारय। तवाहं किक्रः। स्मृतेरत्त समेष्यामि॥

- § २) एकदाऽग्निकवेतालेनोक्तम्—त्वं नारीहृद्यं वेत्सि परं चिरत्रं न । एकदा नृपस्तद्विषणस्य चिलतः । किसिश्चित्पुरे गतः । तत्रैको द्विजस्तत्सुता कुमारिकाऽस्ति । नृपेण भोजनार्थे द्विजोऽभ्यर्थितः । कुमार्या.....(अत्र कियन् पाठो मूलादर्थे पतितः प्रतिभाति)...चिन्तितम्—मृत्युरुप्रस्थितः । सेवोक्ता । तव किङ्करः । मां किं मारयसि । तयोक्तम्—तिर्हे अवाञ्चुलो भृत्वा पत । तया दिघकरम्बोऽग्रे त्यक्तः । मुलं च लरिटतम् १ जनेन पृष्टं किमिदम् १ । असौ देशान्तरिको भोजनाय भणितोऽस्य ऊर्द्धं गाढं जातं अतो प्तकृतम् । सस्ये जाते जनो गतः । तयोक्तम्—त्वं स्त्रीहृद्यं वेत्सि परं चिरतं न वेत्सि । नृपः स्त्रीहृद्यपरीक्षां कृत्वा स्वराज्ये गतः ॥
- § ३) इत एकदा नगरमध्ये दन्तकः श्रेष्ठी नृपमान्योऽस्ति । तेन गृहार्थे भूरात्ता । स्त्रधारानाह्मोक्तम्—
 ताद्दग्गृहं मण्डयत यत्र सप्तान्वयिनः खादन्ति पिवन्ति च । द्रव्यं खेच्छ्या दास्यामि । निमित्तज्ञानाहृय ग्रुअसुहूर्ते
 गर्नापूरः कृतः । भव्येष्टिकासश्चयेन भव्यकाष्ठैः कृत्वा सप्तपणः (खण्डः) प्रासादो नृपप्रासादसहृकारितः ।

 10 पूर्णो निष्पने स्त्रधारेरुक्तम्—एप ईद्दशोऽस्ति याद्दशे धनिकभाग्यात् सुवर्ण्णपुरुषः पति । तेन सत्कृतास्ते
 सत्रधाराः । निमित्तज्ञेर्म्यहूर्तं दत्तम् । तत्र प्रवेशे प्रारव्धे राजपर्यन्तो जनो भोजितः । द्वजातीनां दानं दत्तम् ।
 तदन्ता रात्रौ सुप्तस्तदा 'पतामि' इति वचनमश्रणोत् । चिन्तितमभिनवगृहे धृंसकः । द्वितीयवेलायासुक्तम्—पतामि ।
 तावत्परिजनं प्राह—रे ! रे ! उत्तिष्ठत वहिनिस्सरत् । एप पतिष्यति । यावदुत्तिष्ठति तावत्पतामीति श्रुत्वा
 निःसृतः । कृपितो गत्वा नृपं प्राह—देव ! तव राज्ये सत्रधारैनिमित्त्रज्ञेश्च सुपितः । कथम् ? । सक्ष्पपुक्तम् । नृपेण

 15 सत्रधाराः पृष्टाः । देवासौ निद्रिष ईद्दशोऽस्ति यसात्सुवर्णनरः पति । निमित्त्रज्ञेर्महूर्त्तं निद्रिपतोक्ता । राज्ञोक्तम्—
 कियद्वयं लग्नम् ? । वससि नवा । तेनोक्तम्—देव ! त्राहिस्त्रपात्रक्तम् । खद्वाप्रे सुवर्णपुरुषः पपात ।
 प्रातर्न्येण सर्वेषां दन्तकस्य च द्रितः । सपश्चात्तापः स प्राह—देव ! याद्दग् तव भाग्यं तव सत्त्वं च, ताद्दग् न कस्य । इति सुवर्णनरप्राप्तिः सत्त्वात् ॥ इति श्रीविक्रमार्कसत्त्वप्रवन्धः ॥

20 दरिद्रक्रयप्रबन्धः (B. Br.)

§ ४) अथैकदा सर्वत्र देश-देशान्तरे इयं वार्ता-यहुज्जियन्यां सर्वं विक्रियमामोति । एकेन राज्ञोक्तम्-तदहं प्रेषिय्यामि यत् कोऽपि न लाति । तेनायोमयो दरिद्रनरः कारितः । एकिसन् करे सर्व्यमन्यसिन् प्रमार्जनी । एवं कृत्वा व्यवहारिणोऽपितवान् । उज्जियन्यां गतः सर्वं वस्तु विक्रीय एष दर्शनीयः । लक्षं मूल्ये वाच्यम् । यदि कोऽपि न गृह्णाति तदा नृपप्रतोल्यां शब्दं क्षिप्ता पुरस्य दोषं दस्त्वा व्यावर्त्तनीयम् । तेन तत्र गत्वा सर्वं विक्रीतम् । व्यवहारिभिरुक्तम्-किमसिन् शक्टे १, उद्घाव्यताम् । तेन दर्शितो दरिद्रनरः । किमिदम् १ । नाम्न्युक्ते सर्वः कोऽपि नेत्रे निमील्य नष्टुं प्रवृत्तः । तेनोक्तम्-लक्षं दस्त्वेष गृह्णताम् । पुर्या दोषं नानयतेति वदतोऽपि जनो दूरं गतः । तेन नृपद्वारे नीत्वा व्याहृतम्-असाकं दरिद्रनरं न कोऽपि गृह्णति । पुरदृषणं दस्ता यामः । नृपेणाहृतः । दरिद्रपुत्तलः समानीतः । सभाजनस्तु नेत्रे निमील्य स्थितः । नृपेण लक्षं दस्ता कीतः । भाण्डागारे क्षिप्तः । इति रात्रेः प्रथमे यामे सुप्ते पुमानेकः समेल्य नृपं प्राह—देवाहं यामि । कस्त्वम् १ । गजाधिष्टाता । कथं व्यासि १ । दरिद्रक्रयात् । यत्र दारिद्यं तत्र गजाः कः १ । तिर्धे याहि । तस्तिन्यते वितीये यामेऽप्येकयोक्तम्—देव ! सुत्कलापयामि । का त्वम् १ । श्रीः । कथम् १-दारिद्ये क्रीते श्रीः क । मत्संघातो याति । सत्वरं याहि । इतस्तुरीययामे पुमानेत्य वभापे-देव ! सुत्कलाप्यसे । कस्त्वम् १ साहसपुमान् । नृपेणोक्तम्—त्वं मा त्रज । कथं त्वया दारित्रं क्रीतम् १ । यत्र तत् तत्र साहसं कः १ । नृपेणोक्तम्—यदि सत्त्वमासीत्त्वा क्रीतम् । येषां न, तैः कथं न क्रीतम् । यदि यास्यति तदा विक्रमादित्ये मृतेः इत्युक्त्वा क्षुरिका कृष्टा । तेनोक्तम्—देव ! मैवं कुरु । सकलः सार्थो मिष

वीकमद्यूतकारप्रबन्धः (B.)

६५) तथैकदा नृपतिरन्थकारपटमावृत्य पुरे अमन्नेकां दिव्यरूपां स्त्रियं दृष्ट्वा प्राह-देवि! क यासि?। तयो-क्तम्-तव पार्थे । तेनोक्तम्-चल । साऽग्रे नृपैः पृष्ठे । एकसिन् प्रासादे गतौ । तत्र प्राहरिका आकृष्टेखङ्गा उपविष्टाः सन्ति, परं चित्रलिखिता इव । तत्र शुनः सन्ति [तेऽ]पि तथैव । सा मध्ये प्रविष्टा, नृपोऽपि । सा तं पश्चमभूमौ निनाय । तत्र स्नानसामग्रीं कृत्वा स्नापितो नृपः । सा तु च्छद्मना नृपं विश्वत्वा मध्ये पल्यङ्के 5 विवेश । नृपस्तु द्वारमागत्य ऊर्द्धीभूय स्थितः । पल्यङ्कद्वयं दृष्ट्वा सन्देहपरः कं पल्यङ्कं श्रयामि । तत्र स्त्रीयुग-मुपविष्टनिस्त । नृपे सन्देहपरे मुख्या जगाद-रे! कोऽयं नृपशुः समानीतः । बहिः कृष्ट्वा कमपि नरमानय । चेटी उत्थाय नृपं बहिर्निनाय। तदनु नृपेण चिन्तितम्-मां विनाऽन्यं विदग्धं कमानेष्यति। तदनु चतु-ष्पथान्तर्श्रमति । इतो वीकमो द्युतकारी द्युतादुत्थितः । कान्दविकगृहे दत्ते, बहिः स्थित्वा द्वारमुद्धाटयेत्याह । तेनोक्तम्-कस्त्वम् ?। वीकमओं इत्युक्ते स आह-कस्ते द्वारमुद्धाटयति । मम किं त्रङ्गटकं ग्रहीतुकामः ?। तेनो-10 क्तम्-बाढं बुस्रक्षितः । द्रव्यमर्पय, बहिः खस्यैवानं दश्चि । तेन किश्चिद्पितम् । कान्द्विकेनोक्तम्-कथं गृह्णासि ?। भाजनमर्पय । तेनोक्तम्-गृहीत्वा यातुकामः । तर्हि कर्परे कृत्वा समर्प्यताम् । तेनार्पितम् । आदाय प्रपां प्रति वजन् तां चेटीं यान्तीं प्राह-रे! दासि क यासि ?। तयोक्तम्-तवानयनाय। तर्हि भोज्यं गृहाण। तयोक्तम्-परित्यज । तत्रापि भविष्यति भोज्यम् । तया सह चिलतः । नृपः पृष्ठे लग्नः । तत्र नीतः स्नापितश्रीवराण्य-र्पितानि भोजितश्च । नृपस्य पञ्यतस्सा तदृष्टिं वश्चयित्वा पल्यङ्के उपविष्टा । नृपे चिन्तातुरे स मध्ये प्रविश्य 15 एकसिन्पल्यक्के उपविष्टः । सा स्त्री उत्थिता । पत्राण्यादायाग्रे कर्त्तनं कृत्वाऽर्पितवती । तेन विण्टकर्त्तनं कृत्वा पुनर्गितानि । तयोक्तम्-शयनं कुरु । स पल्यङ्के किश्चिदृष्टिं दन्वोच्छीर्पके मस्तकं कृत्वा सुष्वाप । नृपो विस्सितः । कथमनेन खामिनी ज्ञाता, कथं पत्राण्यर्पितानि, कथमुच्छीर्पकं ज्ञातम्?। स क्रीडितुं प्रवृत्तः। नृपस्तु खस्थाने गतः । प्रातवींकमो निष्कासितः । प्रपां गत्वा सुप्तः । रात्रिवृत्तं पृच्छ्यमानोऽपि न वक्ति । नृपेण शूलोपरि प्रहितः। यदि रात्रेर्वृत्तं वक्ति तदा न क्षेप्यः। स शूलोपरि नीयमानोऽस्ति। आरक्षकस्त्वित वक्ति-यन्नृपो रात्रि-²⁰ वृत्तं पृच्छत्यसौ न वक्ति। तया नार्या गवाक्षस्थया शब्दः श्रुतः। स दृष्टः। चेटीं प्राह-अरे दृष्टौ विल्वयुगं भञ्ज। तया तथाकृते तेनोक्तम्-कथयिष्यामि नृपनीतः । नृपेणानायितः । रे ! कथय-मया सा चेटीति [न] व्याहृताः त्वया चेटी किमिति ज्ञाता ? । तेनोक्तम्-देव ! चेटीजनस्य सुरभिवस्तुप्राप्तिः प्रस्तावे भवति । अतोऽस्याः शरी-रेऽम्लो गन्धः । अतथेटीत्युक्ता । तत्र प्राहरिकाणां किं कृतमस्ति यत्ते न श्वसन्ते ? । धूपवशात् । कथं खामिनी-चेटी-पल्पङ्को ज्ञातः ? । देव ! उत्तमस्य मनुष्यस्य गृहस्य दक्षिणे भागे पल्यङ्कः स्यात् । पत्राण्यग्रं छिन्वा तवार्षि-25 तानि, त्वया तु विंटमपाकृत्यः तित्कम् ? । तयोक्तम् अहं तव खहृद्यमर्पयामि परं वहिर्न वाच्यम्। मया व्याह-तम्-यूत् शिरो याति, परं न विना । तर्हि कथं कथयसि ? । तथैवोक्तम् । तया कथम् ? । चेटीं प्रेष्य महृष्टौ विल्वं बिल्वेनाहत्य भग्नम् । अत उक्तम्-तत्कथय । पल्यङ्के उच्छीर्षकं प्रान्तो वा कथं ज्ञातः? देव! उच्छीर्षके चूर्णोन पादः खरिंटतो भवति । एवं तस्य वचः श्रुत्वा राज्ञोक्तम्-यूतं त्यज । त्वया सदैव मत्समीपे स्थेयं मत्पुत्रवत् । स प्रसादपात्रं कृतः । इति वीकमधूतकारप्रबन्धः ॥ 30 स्त्रीसाहसप्रबन्धः (B.)

्र ६) एकदा विक्रमादित्ये जननीं नन्तुं गते माता तस्याशिषं ददौ—वत्स! स्त्रीणां ते साहसं भवतु । नृषे-णोक्तम्-मातः! किमिदं साहसम्? स्त्री तृणसमा । देव्याह—दर्शयिष्यते वत्स! प्रातः प्रतोलीद्वारे आवासान् दत्त्वा स्थियम् । नृपस्तत्र गतः । अथ देव्या मालिन्येका पृष्टा—रे! कोऽत्र व्यवहारी मुख्यः?। कस्य गृहे बाढं गृहिणीरक्षा?। तयोक्तम्—देवि! सोमभद्रश्रेष्टिनः । तत्र त्वं यासि?। तयोक्तम्—पृष्पाण्यादाय यामि । तस्या 85 गृहिण्याऽग्रे वाच्यम्—यद्विक्रमार्कस्त्वामिमलपित । तया तत्र गत्वा निवेदितम्। तयोक्तम्—अहं सप्तमभूमेरध उत्त-रितं न लेमे । तया देच्यप्रे व्याहतम् । देव्या द्वितीयदिने प्रेपिता । अहं रक्षं प्रेपिप्थामि, तत्प्रयोगेण त्वयाऽऽगन्तव्यम् । तया मानितम् । मालिनी पुष्पथ्याने रक्षमादाय गता । तस्या अप्रितः । तया सामभे बद्धा बिहिः क्षिप्तः । देव्यादेशाद्राज्ञा गुड्डरस्य सामभे बद्धः । सा भत्तिर सुप्ते दवरकेण भृत्वा बहिर्गता । नृपश्चय्यान्ते उत्तीर्य ग्रेपा । नृपण पृष्टा—का त्वं देवि ? । व्यवहारिपत्ती । राज्ञोक्तम्—सर्भवकां नाहमिमलपामि । सा तेनैव प्रयोगेण गृहं गता । सुप्तं पति हत्वा पुनरागता । नृपेणोक्तम्—पतिमारिकां न भेजे । तयोक्तम्—देव ! यञ्जातं तन्नान्यथा भवति । परं प्रातर्मे साहसमवलोकनीयम् । सा वेश्मिन गता । रज्जं क्षित्वा प् चक्रे—यत् धावव धावत, श्रेष्ठी केनापि हतः । कलकले जाते जनो मिलितः । किमिदं न ज्ञायते । सा मुक्तकेशा काष्टारोहणे सजा जाता । जनो वारयित सा तु न निवर्चते । इतः प्रातर्नृपस्तत्र जनाज्ज्ञात्वा तद्वासे आयातः । नृपेणोक्ता—रात्रिष्ट्चं तत्, 10 आधुनिकमिदं निवर्तस्य । मद्वपुरलंकुरु । कोऽपि न ज्ञास्ति । देव ! नैतदक्तव्यम् । बीटकं देहि । अस्य त्रतस्ति देवोद्यापनम् । सा विसर्जिता । पत्या सहाग्रो प्रविष्टा । नृपस्तु जननीं नन्तुं गतः । वत्स ! स्त्रियः साहसं तेऽस्तु । नृपेणोक्तम्—देवि ! तथ्यमिदं दृष्टम् । इति स्त्रीसाहसप्रबन्धः ।। स्त्रीचरित्रप्रबन्धः (२)

§ ७) कएदा नुपविक्रमेण देव्ये धावनाय वामपादः पूर्वमर्पितः । तयोक्तम्-यदि स्त्रीचरितं वेत्सि तदा वामं 15 पादं प्रक्षालयामि । नृपस्तमन्वेष्टं चचाल । मार्गे कसिंश्रितपुरे जलहारिणीमेकां ददर्श । तया व्याहृतं कुतः समायातः ? तेनोक्तमुज्जयिन्याः । क यास्यसि ? नारीचरितमन्वेष्टम् । तर्हि मया सह मद्वृहे एहि, यथाऽत्रैव ज्ञापयामि । परमहं यद्वचिम तत्त्वया पृष्ठानुगेन वाच्यम्। नृपो गृहे नीतः । सकलेऽपि कुटुम्बे इति व्याहृतम्-एप मद्भाता बाल्यादिप मातृशाले वर्द्धितः। अधुना मम मिलनाय समायातः। राज्ञा नितः कृता। तित्रयो भगिनी-पतिरिति कृत्वा नतः । गौरवेण भोजितः । तया रात्रौ स्वपतिरुक्तः - यदावयोः सम्बन्धो जन्माविध । परम-20 द्यतनो दिनो आतालभ्यः । एकान्ते भृत्वाऽस्य पार्श्वात्पितृगृहवार्त्तां शृणोमि सुखदुःखकरां च । दिवा वक्तमपि प्रस्तावो नाडभृत । उपवरकान्तर्नृपस्य शय्या । राजा भगिनीपतिना सह वार्त्तां कृत्वा शय्यायां गतः । सा स्वयं पृथक शय्यां क्षित्वा मध्ये विवेश । पत्युर्ग्ने प्राह-तालकं दन्ता खं समीपे गृहाण । मा जनापवादो भवत । तेनोक्तम्-को जनापवादो मयि सति ?। तयोक्तम्-एवं क्रुरु । तथा कृते वार्चात्रसङ्गादनु तयोक्तम्-मद्भिलिपतं कुरु । राज्ञोक्तम् -त्वं मे भगिनी । तयोक्तम्-कुतः ? त्वं पथिकः । को आता का भगिनी । तयो(तेनो)क्तम्-25 जिह्नयोक्ता, तदहमकुत्यं [कथं] करोमि?। न विधास्यसि, तर्हि पश्य यद्भवति। तया पूत्कृतम्-धावत धावत सत्वरम्। द्वारमुद्वाटयत । नृपेण विनष्टमपि सिश्चत्योक्तम्-मा मारय यत्कथयसि तत्करिष्ये । तर्द्वधःपत श्वासस्तु न ग्राह्यः। तया पादेनाहत्य करम्बकरोटं पूर्वधृतं त्यक्तम् । नृपवदनं खरिडतम् । तावत्पत्या द्वारमुद्धादितम् । दीपः कृतः । जनेन पृष्टम्-किमिदम् ? । पापाहं किं जाने । अस्य मद्भातुः पानीयरसो जातः । उदरंच्यथाऽस्य रवात्पपात । मया तु भीतया पूत्कृतम् । जलमानीय वदनं क्षालितम् । शकटिकामाधाय उद्रसेकः कृतः । 30 नृपस्तु श्वासमेव न गृह्णाति । सर्वः कोऽपि निष्कासितो मध्यात् । क्षणं सुखासिकाऽस्ति । यदि निर्जनं भवति तदा निद्रा एति । इति कृत्वा जने गते द्वारं दत्त्वोक्तम्-इदं स्त्रीचरितम् । ज्ञातं न वा ? । राज्ञोक्तम् स्वकुलादि आगमनकारणं च । प्रातर्भुत्कलाप्य स्त्रियो मुद्रारतं दत्त्वा खपुरे गतः । पत्न्यै वृत्तान्तमावेदितवान् । तयोक्तम्-कथं वामपादमर्पयसि ? । तेनोक्तमतः परं न । इति स्त्रीचरितप्रवन्धः ॥

देहलक्षणप्रबन्धः (B.)

[§]८) एकदा नृपो राजपाट्यां त्रजन् केनापि पण्डितेन दृष्टः।तं दृष्टा पण्डितः श्चिरःकम्पं चक्रे। नृपस्तु राजपाटीं

कृत्वा धवलण्रहे गतः । केनाप्युक्तम्-देव ! पण्डितः कोऽपि देशान्तरीयश्रतुष्पथे सामुद्रिकशास्त्रपुक्तकानि ज्वालयस्ति । नृपेणाकारितः । कथं ज्वालयसि ! देव ! मया जन्मावधि इदमेवाभ्यस्तम् । तव देहमालोक्य एषु विरक्तिर्जाता । तव देह तृष्ठक्षणं नास्ति भेन कापि भद्रवेला भवति । त्वं तु राजराजेश्वरोऽसि । राज्ञोक्तम्— पुनमें सर्वश्ररीरलक्षणान्यवलोक्य । देहद्शिते तेन विशेषतो मुखमोटनं कृतम् । नृपेण पृष्टम् । देव ! किमिदमु- ज्यते, किमिप न पश्यामि । पुनः किमिप गुप्तं प्रकटं वा सर । तेनोक्तम्—यदि वामकुक्षौ कर्नुरमन्नं भवति तदा कि सर्वमेवास्ति । तन्न ज्ञायते । देवेनोक्तम्—ज्ञास्यते । श्वरिकां कृष्ट्वा यावदिदारयति कृष्धि तावत्तेन करे धृत्वोक्तम्— देव ! सर्वलक्षणानि सन्ति । कथम् ! । यदि सत्त्वमस्ति, तत्सर्वाण्यपि । देव ! भिक्षरहम्, मद्रचसा प्रवृत्तः । उक्तं च "सर्वं सत्त्वं प्रतिष्ठितम् ।" नृपेण प्रसादं दत्त्वा विसृष्टः । इति देहलक्षणप्रवन्धः ॥ मनि-मनुप्रबन्धः (В. Вв.)

- §९) एकदा विक्रमार्को भट्टमात्रं प्राह—भो ! 'मिन मनु' इति किम्रच्यते । देव ! दर्शयामि । पुरोपान्ते पाद-10 मवधारयत । द्वाविप पुरो बाह्ये गतौ । तदवसरे एकः काष्ट्रभारवाहको दृष्टः । भट्टेनोक्तम्—देव ! अस्योपिर तव चित्तं की दृश्य ! । न वर्यम् । स भट्टेन चोदितः—अरे ! कस्ते काष्ट्रानि लास्यति । अद्य नृपः परामुरासीत् । तेनोक्तम्—बलिस्ते जिह्वाया अद्य विशेषतो मम काष्ट्रानि महार्घ्याणि विकेष्यन्ते । बहवो जनाः काष्ट्रभक्षणं किरिष्यन्ति । अग्रे चलितौ । अग्रे महीरीआ एकाऽभ्यति । भट्टेनोक्तम्—अये मध्ये क यासि ? । अद्य नृपः परोक्षो जातः, कस्ते दिघ लास्यति ? । तथा तत्कालं गोलिका त्यक्ता । रुदितुं प्रवृत्ता । भट्टेनोक्तम्—तव नृपेण किं 15 दत्तम् ? । न किमपि । स पृथिच्या आधार आसीत् । भट्टेनोक्तं नृपस्य । अनेन नरेण पश्चादागतेन क्षेममुक्तम् । सा हृष्टा । नृपेण मुद्रारतं दत्त्वा प्रहिता । अतो मनिस मनो भवति । नृपः स्वगृहे गतः । इति मनि-मनु-सम्बन्धप्रवन्धः ॥
 - § १०) एकदा राजपाट्यां राजा त्रजन् द्विजमेकं कणावचयं कुर्वाणं दृष्टा प्राह-
 - (४). निअउअरपूरणंमि वि असमत्था किं पि तेहिं जाएहिं।
 - [द्विज:-] सुसमत्था वि हु न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥
 - (५) 'तेहि वि न किं पि' भणिए विकमराएण देवदेवेण। दिशं मायंगसयं जचसुवन्नस्स दो कोडी॥

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धप्रबन्धः (B. G.)

- §११) अथ विक्रमार्के दिवं गते विक्रमसेनकुमारस्य राज्याभिषेकसमये पुरोधसाऽऽशीर्वचः प्रोक्तम्-यन्वं 25 महाराजः ! विक्रमार्कस्याधिको भावी । तदा राज्याधिष्ठात्रीभिर्देवीभिरिषष्ठिताभिः सिंहासनस्थाभिश्रतसृभिः पुत्तिकाभिरीषद्वसितम् । राज्ञा पृष्टाः-किमिति हस्यते ? । ताः प्रोज्ञः-देव ! तेन सह साम्यमि न घटते, कृतोऽधिकत्वम् ? ।
- 1. आद्याह-तव पिताऽपूर्वां वार्तां श्रुत्वा [G वार्ता कथकाय]दीनारपंचश्चतीं ददाति । एवं श्रुत्वा खापरकां-चौरेण दीनारपंचश्चती याचिता । [G वार्ता चैका कथिता] देव ! पातालविवरं गन्धवहश्मशानतीरेऽस्ति । तत्र 30 विवरे देवीहरिसिद्धिक्षिप्तो दीपः पतन्मया दृष्टः । तस्यानुपदिकेन मयापि झम्पा दत्ता । पाताले दि्व्यं सौधं दृष्टम् । तत्रोत्कलमाना तैलकटाहिका दृष्टा । तत्पार्श्वे एको नरो दृष्टः । पृष्टश्च किमर्थमिह ? । तेनोक्तम्-अत्र सौधे

20

¹ प्रत्यन्तरे—जानेऽमुं पापं मारयामि । तर्हि पश्यताम् । 2 प्र०—मनहं मन । 3 G खर्परक० ।

श्वापश्रष्टा देव्यस्ति । योऽत्र झम्पां यच्छिति स तस्या वर्षश्चतं पितर्भविति । अतोऽहं तिद्च्छयात्रासि । [दि परं साहसं नीस्ति] इत्युक्ते दीनारपंचश्चतीं दत्त्वा नृपोऽपि तेन खर्प्परदिर्शितेन पथा गतस्तत्र भत्वरं कटाहिकायां झम्पां ददी । स तया नार्या जीवितः । यावत्सा राजानं वृणोति तावसूपेणोक्तम् अधं नरं वर, मे पूर्णिमित्युक्त्वा परोपकारं कृत्वा खपुरे समायातः । एवं यः परोपकारी । [दि तद्धिकोऽयं कथं भावी ।]

5 2. द्वितीययोक्तम्-एकदा काशीतो द्वौ द्विजौ समागतौ। नृषेणापूर्वं पृष्टौ। ताभ्यामुक्तम्-असादेशे [G पाताल]विवरमित । तत्रान्धो राक्षसोऽित । असादेशस्वामी यशोवर्मस्तैलकदाहिकायां झम्पां दत्ते [G दत्त्वा स्वमांसेन
राक्षसस्य पारणं कारयित] स राक्षसस्तं पुनर्जीवयित । प्रतिदिनं रात्रौ सप्तापविकाः सुवर्णाः करोति १ नृपस्त
प्रातद्ते । इदं श्रुत्वा तयोद्विजयोदीनारसहस्रमदात् । नृपस्तत्र गत्वा कटाहिकायां झम्पां ददौ । राक्षसेन भिवतो
जीवितश्व । राक्षसस्यान्ध्यशापस्यान्तोऽभृत् । नेत्रैनिरीक्ष्य विक्रमं प्राह-तुष्टोऽस्यि तव सन्वाद् । विक्रमार्कः-परं
10 यदि तुष्टस्तदाऽस्य नृपतेर्झम्पां विना नित्यं सुवर्णा देयम् । इत्युक्त्वा परोपकारं कृत्वा स्वस्थाने गतः । तत्कथं

विक्रमाद्धिकस्त्वं भवसि । 3. तृतीययोक्तम्-एकदा केनाप्युक्तम्-देव! त्वं परकायप्रवेशविद्यां न वेत्सि । नृपेणोक्तम्-को जानाति ?। श्रीपर्वते भैरवानन्दोऽस्ति, स जानाति । नृपः खल्वाटं कुम्भकारमादाय तत्र गतः । योगी मिलितः । स शुश्रुपया तुष्टः प्राह-विद्यां गृहाण । पूर्वं मम मित्रस्य देहि । तेनोक्तम्-असौ कुपात्रं विद्यायोग्यो न । नृपेणाग्रहाद् 15 दापिता । नृपस्त्ववन्त्यां गतः । नृपस्तु द्वारे स्थित्वा कश्चित्ररं नगरस्य शुद्धि पत्रच्छ । तेनोक्तम्-नृपस्य पट्ट-इस्ती अद्य विपन्नः । नृपस्त्वन्तःपुरपरीक्षायै मित्रं प्राह-भो ! यदि मम शरीरं रक्षसे, तदाहं परीक्षां करोमि । तैनोक्तम्-करिष्ये। शरीरमेकान्ते मुक्त्वा तं प्रहरके मुक्त्वा गजे प्रविश्य गजं सजीवमकरोत्। स स्वपादैः पुरान्त-र्गातः । इतो मित्रेणाचिन्ति-अमुं भ्रण्डतरं त्यक्त्वा नृपश्चरीरमिथिष्टाय भोगान्भोक्ष्ये । स खश्चरीरं त्यक्त्वा नृप-शरीरे प्रविक्य मध्ये आयातः । नृषे आयाते गजो जीवितः इति वर्द्धापनकान्यभूवन् । गजेन चिन्तितम् असौ 20 पापो ममोपरि चटिष्यति । इति सश्चिन्त्य गजः स्तम्भग्रुन्मृत्य बहिर्गत्वा प्राणानौज्झत् । इतः प्रत्यासन्ने आखेटक एकः शुकान् व्यापादयन्नस्ति । नृपजीवस्त्वेकस्य शुकस्य देहे विवेश । स शुको छुब्धकं प्राह-रे ! रे ! शुकान्मा मारय । मां गृहाण । यदि ते द्रव्यस्पृहा पुरे चल । परमहं यत्र कथयामि तत्र विकेयः । सर्वोऽपि जनो याचते । शुको न वक्ति । मुख्यदेवीचेट्या याचितः । तेन पृष्टम्-दिश्व ? । देहि । तेन दीनारानादाय चेट्या अर्पितः । सा देवी शुकं दृष्ट्वाऽऽकृष्टा । सुवर्णपञ्जरे चिक्षेप । नृपोऽन्तःपुरमाययौ । देवी तं दृष्ट्वा खिन्ना सती प्राह-देव! त्विय 25 देशान्तरं प्रस्थिते मया चिन्तितं क्षेमेणागतेऽपि देवे ततोऽपि मासं यावद्वस्वचर्यम् । तदनु कुलदेवीपूजनं कृत्वा नियममपाकरिष्ये । स पश्चाद् गतः । जनस्तु चिन्तयति-कथं नृपतिरन्य एव जातः ? । देहमस्ति परं सम्यग् न ज्ञायते । देवी शुकेन वाढं संस्कृत-प्राकृतकाव्यैस्तथा रिक्कता यथा त्विय जीवित जीवामि । इतो देव्या शुक आकारितः । तेनोक्तम्-देवि ! मार्जार्या विभेमि । देव्याह-यदि मरिस तदाहमपि त्वामनु मरिष्यामि । एकदा शुकोऽपि परीक्षार्थं मृतां गृहगोधां दृष्ट्वा शुकदेहमुत्सृज्य तत्र विवेश । सा भित्तौ चटिता । शुकं मृतमालोक्य देवी 30 तेन सह काष्टाधिरोहणसञ्जा नृपेण वारिता । सा वक्ति यदि शुको जीवति तदा जीवामि, नान्यथा । नृपस्त्वपव-रिकां प्रविक्य देहमुत्सृज्य ग्रुकदेहे प्रविष्टः। इतो विक्रमार्कः पछीदेहमुत्सृज्य खशरीरमादाय बहिरायातः। ग्रुको जीवितः, परं देव्या दृष्टोऽपि न सुखायते । नृपं दृष्ट्वा तत्कालमभ्युत्थानं चक्रे । नृपेण शुको भाषितस्तेनोक्तम्-देवाहमदृष्टच्यमुखः। मां वामपादेन हत्वा मुश्च। नृपेणोक्तम्-तव सान्निध्येन मया देवीपरीक्षा लब्धा। स

कीरदेही द्विजो गतः।

¹ G कन्ययासौ मृतेन जीवितः। 2 G राज्यस्वरूपं। 3 G निर्वन्धात्तस्यापि दापिता।

(६) विप्रे पाहरिके तृपो निजगजस्याङ्गेऽविदाद्वित्यया, विप्रो भूपवपुर्विवेश तद्नु ऋीडाशुकोऽभूत्ततः। पहीगात्रनिवेशितात्मनि तृपो व्यामृद्य देव्या मृतिं विप्रः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविक्रमो लब्धवान्॥

एवं यः परोपकारी कथं तेन समी भविष्यसि ।

4. तुर्ययोक्तम्—एकदा विक्रमार्केण उत्तमं सौधं कारितम्। राजा तत्र गतः। तत्र चटकयुग्ममितः। चटकेनीक्तम्—सुधु सौधमितः। चटकयोक्तम्—याद्यं स्त्रीराज्ये लीलादेव्या बाह्यगृहमितः ताद्यमेतत्। राज्ञा श्रुतं तत्।
नृपत्तत्र गमनोत्सुकः। स्थानं तु न वेति। सचिन्तं नृपं दृष्ट्वा भट्टमात्रस्तदाश्यं परिज्ञाय तत्स्थानविलोकनाय
चिलतः। तन्मार्गे लवणसमुद्रः। तमुत्तीर्याग्रे रात्रौ मदनायतने स्थितः। निशीथे हयहेपारवस्चितं दिव्यालङ्कारभूषितं दिव्यं स्त्रीष्ट्रन्दं आगतम्। तत्स्वामिन्या कामपूजनं कृतम्। व्यावर्त्तमानानां तासामेकस्याश्यस्य पुच्छे लिगत्वा 10
तत्र गतः। दासीभिर्दृष्टः। स्वामिनीसमीपे नीतः। तया स्नानादि कारितः। रात्रौ तत्रैव सुप्तः। तया स्वपन्त्योकम्—मम विक्रमार्कः पतिर्भावी, किं वा मां यश्रतुभिः शब्दैर्जागरयति। इत्युक्त्वा सुप्ता। तेन चिन्तितम्—
चतुर्भिरपि शब्दैर्न जागित्तं तिर्हं एनामहमेव जागरिष्यामि। शब्दाः कृताः। न जागित्तं। तदा पादाङ्कुष्टश्रमिपतः। .
तया पादेनाहत्य तत्र क्षिप्तः, यत्र विक्रमार्कः प्रसुप्तोऽस्ति। राज्ञा पृष्टं किमिदम्—तेन वृत्तान्तः प्रोक्तः। राजाऽग्निकवेतालमारुद्य तत्र गतः। वेतालश्चनं स्थितः। राजा दासीभिस्तत्र नीतः। तयोपचरितः। तदृपदर्शनात्सरागा 15
जाता। परं शयानया पूर्ववत्प्रतिज्ञा कृता।

A. राज्ञा दीपस्थो बेताल उक्तः—भो दीप! तावद्य कुवासको जातः। यस्या गृहे आगताः, सा वक्त्येव न। अतस्त्वं कामिष कथां वद। तेनोक्तम्—देव! कोऽपि विग्रस्तस्य सुता चतुर्णां वराणां दत्ता। एकस्य पित्रा, परस्य भाताः, एकस्य मातुलेन, एकस्य भाता। एवं चतुर्णां दत्ता। चत्वारोऽपि आगताः। विवादे जाते कन्यया काष्ट्रभक्षणं कृतम्। एकश्चितायां तामनु निवेश। एको देशान्तरं गतः। एकस्त्वस्थीन्यादाय गङ्गां गतः। एकस्तु उटजं कृत्वा 20 तत्र स्थितः श्मशानं रक्षति। देशान्तरिणा सञ्जीविनी विद्या शिक्षिता। चत्वारोऽपि मिलिताः। देशान्तरिणा विद्या जीविता। पुनर्विवादो जातः। सा राज्ञश्चतुर्णां मध्ये कस्य पत्नी १। राज्ञोक्तम्—नाहं वेश्वि, बृहि। स आह—यश्चित्तायाः सहीत्थितः स भ्राता। योऽस्थिनेता स पुत्रः। येन जीविता स पिता। यो भस्मरक्षकः स भर्ता, पालकत्वात्।

B. द्वितीययामे राज्ञा ताम्बृलस्थिगिका पृष्टा-रे ! कथां काश्चित्कथय । वेतालाधिष्टाता साऽप्याह-कापि पुरे एका मृता ब्राह्मण्यस्ति । तस्या जारेण सह सुता जाता । सा तां त्यक्तुं रात्रौ बहिर्गता । इतस्तत्र कोऽपि 25 श्रूलाक्षिप्तो जीवन्नस्ति । तस्याः पादेन स्वलितः । तेनोक्तम्-कः पापी दुःखिनोऽपि दुःखम्रुत्पादयित ? । तयोक्तम्-

* G सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे एषा कथा किञ्चिद्भिन्नक्रपेण लिखिता लभ्यते। यथा-

तृतीययोक्तम्-एकदा विक्रमाकों निजपूर्वासव्यखल्वाटकुम्भकारयुक्तो देशान्तरं गतः। परकायाप्रवेशविद्यावेदी योगी मिलितः। स आवतृतीययोक्तम्-एकदा विक्रमाकों निजपूर्वासव्यखल्वाटकुम्भकारयुक्तो देशान्तरं गतः। परकायाप्रवेशविद्यावेदी योगी मिलितः। स आवजिंतः। तुष्टश्च विद्यां दातुमारेमे । राज्ञोक्तम्-प्रथमं मम मित्रस्य । तेनोक्तम्-अयोग्योऽसौ । निर्वधात्तस्यापि दत्ता । अवंतीं गतो राजा राज्यं
करोति । एकदा पट्टाश्चो मृतः । विद्यापरीक्षार्थं राज्ञा स्वजीवस्तत्र क्षिप्तः। कुंभकारेण स्वजीवो नृपदेहे । कुंभकारो राज्यं करोति । अश्चो
करोति । एकदा पट्टाश्चो मृतः । विद्यापरीक्षार्थं राज्ञा स्वजीवस्त क्षिप्तः । सुक्षेत्रका स्वजीवस्त प्रविद्या । सा त्वातुर्येण
मारणाय चितितः । नृपजीवस्तु पूर्वमृतकुकदेहे प्रविष्टः । आकोऽपि सोमदक्त्रेष्ठिभार्या-प्रोधिकादेहे गतः । राज्ञ्या तिद्वयोगेन काष्टमक्षणदृष्टा । राज्ञीसमीपं न गच्छित । श्रेष्ठी समागतः । सा राज्ञीसमीपं गता । अनागमनकारणं पृष्टा । शुकचातुर्यकारणं प्रोक्तम् । तया
दृष्टा । राज्ञीसमीपं न गच्छित । श्रेष्ठी समागतः । सा राज्ञीसम्वप्ति । राज्ञ्या कृता । राज्ञ्या तिद्वयोगेन काष्टमक्षणवाचितः सः । सा रंजिता तेन-यथा राज्ञा पूर्वमेकदा शुकेन सर्वो वृत्तांतो राज्ञ्ये कथितः । राज्ञ्या कुंभकारस्यावर्जना कृता । तेन तुष्टेन
मारब्धम् । नृपजीवेन शुको जीवापितः । सा ब्यावृत्ता । शुकेन सर्वो वृत्तांतो राज्ञ्ये कथितः । राज्ञोक्तम्-न भेतब्यम् , नाहं त्वत्समो भावी ।
विद्याप्रदर्शनाय मृतवोत्कटदेहे स्वजीवः क्षिप्तः । नृपो निजदेहं गतः । अजो भयात्कम्पते । राज्ञोक्तम्-न भेतब्यम्, नाहं त्वत्समो भावी ।
सङ्गपोऽस्मि । त्वं सुखं जीव चर पिव । ततः कथं तेन समो भविष्यसि ।

अस्य किं दुःखम्?। देहपीडादिकमेकमपुत्रत्वमपरम्। चौरेणोक्तम्-त्वमपि कथयं का त्वम्? कथिमहागतासि?। निजचिस्तं तयोक्तम् । शूलात्थनरेणोक्तम्-मां विवाहयेमाम् । मया पुरादाहृतं भृक्षिप्तं द्रव्यं गृहाण च ऋये । ब्राह्मणी आह-त्वं मरिष्यसि । सुता रुघ्वी, पुत्रः क ? । तेनोक्तम्-अस्या ऋतुकाले कस्यापि द्रव्यं दत्त्वा पुत्रमुत्पाद्येः । तया सर्वं कृतम् । यावत्पुत्रो जातः । मात्रा छर्त्रं नृपद्वारे मुक्तः । केनापि राज्ञे निवेदितम् । 5 नृपेणापुत्रेण पालितः । राज्यं दत्तम् । राजा मृतः । स पितुः श्राद्धं कर्तुं गङ्गायां गतः । जलात्करत्रयं निर्ययौ । राजा विसितः । कसिन्करे पिण्डं मुश्चामि । वेतालेनोक्तम्-देव ! वद । स पिण्डं कस्य करे मुश्चतु । राज्ञोक्तम्-चौरस्य । येन परिणीता यस्य वित्तम् ।

C. राज्ञा सुवर्ण्णपालकं जल्पितम् । तदिप कथां प्राह-कसिन्निप ग्रामे कंश्वित् कुलपुत्रः । स परिणीतोऽन्य-ग्रामे । तत्पत्नी श्रञ्जरगृहे न याति । स जनैर्हस्यते । एकदा जनत्रेरित आनयनाय गतो मित्रान्वितः । मार्गे 10 सरस्तीरे यक्षदेवकुलम् । तत्र यक्षं नत्वा प्राह-देव! यदि मे पत्नी समेष्यति तदा वलमानस्ते शिरो दास्यामि । तत्त्रभावाच्छुशुरकुले सत्कृतः । सा हृष्टा तेन सह चलिता । स चलन् मार्गे वाहिन्या उत्तीर्य यक्षं नन्तुं गतः । यक्षाग्रे स्त्रीलाभाच्छिरञ्छेदितम् । स नायाति । मित्रं तु तमनुगतम् । विनष्टं दृष्ट्वा जनापवादात् भीतेन तेनापि शिरिक्छन्नम् । तसिन्नप्यनागच्छति, सा गता । द्वाविप तदवस्थौ दृष्टौ । चिन्तितम् जनोऽग्रेऽपि मां पतिद्वेषिणीं कथयति । अधुना पतिर्झी कथयिष्यति । ततः सापि शिरवछेत्तं प्रवृत्ता । यक्षेणोक्ता साहसं मा कुरु । तयोक्तम्-15 द्वाविप जीवापय । तेनोक्तम्-निज २ कबन्धे शिरोदानं कुरु । तयोत्सुकभावादन्यान्यकबन्धयोर्न्यस्ते । द्वाविप जीवितौ । परस्परं भार्याविवादो जातः । एको मदीयां वक्ति, द्वितीयस्तु मदीयाम् । तेनोक्तम्-देव! सा कस्य भवति ? । नृपेणोक्तम्-यस्य शिरस्तस्य भार्या । ['सर्वस्य] गात्रस्य शिरः प्रधानमि'ति वचनात् ।

D. वेतालवशात्कर्प्समुद्रकः पृष्टः-रे! कामपि कथां कथय । देव! कुतोऽपि पुराचत्वारः कलाविद्ग्धा-श्रेलुः । एकः काष्ट्रघटकः सूत्रधारः । अपरः खर्ण्णकारः । तृतीयः शालापितः । तुर्यो द्विजः । कापि वने रात्रौ 20 स्थिताः । प्रथम[यामे] सत्रधारः प्रहरके स्थितः। काष्ठमयी पुत्तलिका कृता । स सुप्तः । द्वितीयप्रहरे सुवर्ण्णकार उत्थाय [यामिके] स्थितः । तेन सा पुत्तलिकाऽऽभरणैर्मण्डिता । तृतीये आलापतिस्तेन दुक्लं परिधापिता । चतुर्थे द्विजेन सजीवा कृता। प्रातः सजीवां दृष्ट्वा विवदितुं प्रवृत्ताः। इतस्तेन वैतालेनोक्तम्-देव! विक्रमादित्य! सा कस्य भवति ? । [G नाम श्रुत्वा सा चुक्षोभ] राज्ञोक्तम्-नाहं वेद्रि, यदियं सुप्ता वेत्ति । [G तयोरकथ-यतीश्र तया जल्पितम्-भो राजन्!] कस्य सा ?। राज्ञोक्तम्-स्वर्ण्णकारस्य। पतिं विना को नारीं मण्डयति। 25 [G सा पत्रच्छ-के यूयम् ? । दीपस्थेन वेतालेनोक्तम्-असौ स विक्रमादित्यः ।] सा हृष्टा, राज्ञा परिणीता च । [G तामादायावन्तीमागमत् ।] य ईद्दग् हे महाराज! तत्समः कः ?; आधिक्ये तु का कथा इति हसितम् । इति श्रुत्वा विक्रमसेनेन गर्वस्त्यक्तः । इति विक्रमसेनगर्वत्यागप्रवन्धः ॥ विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथाप्रबन्धः (B. P. G.)

§१२) अथैकदा विक्रमसेनः पुरोधसमप्राक्षीद्-यदेताः काष्टपुत्रिका मम पितरमद्भुतगुणं वर्णयन्ति, तर्हि स 30 एव लोके प्रथमः । [G तत्प्रथमतयोत्तमत्वेनावतीर्णो भविष्यति । प्राक् तु न कोऽपि ताद्दगुत्तमोऽभूत्-इति ब्रूमः ।] पुरोधाः प्राह-राजन् ! अनादिर्भृ रत्नगर्भेयम् । [G अनादिश्रतुर्युगी ।] युगे युगे रत्नानि जायन्ते । अहमेव प्रधान इति गर्वो न श्रेयःकारी [G न निर्वहते]। तव पितुर्मनिस एकदा इत्यभृत्-यथा रामेण जनः सुखी कृतः तथाऽहमपि करिष्यामि [G ततो रामायणं व्याख्यापितम् । तत्र यथा-] रामस्य दानं सत्रागार-स्थापनं वर्णाश्रमव्यवस्थादि गुरुभक्त्यादि तथा सर्वमारब्धम् । ततोऽभिनवो राम इत्यात्मानं पाठयति । मित्रिभि-

35 रचिन्ति-असावनुचितकारी । [G असत्त्रभुर्यो गर्वादात्मानं तद्वन्मनुते] यतः-

· (७) *उत्क्षिप्य टिटिभः पादावास्ते भङ्गभयाद्भवः। स्वन्तित्तकल्पितो गर्वः कस्यान्यस्य न विद्यते॥

[G उपायेनोत्तारियतव्यः प्रस्तावे] एफदा राज्ञोक्तम्-स कोऽप्यस्ति योऽश्वतपूर्वा रामकथां कथयति । एकेन बुद्धमित्रणा प्रोक्तम्-राजन् ! कोशलायामेको बुद्धद्विजोऽस्ति । स पारम्पर्येण कामपि रामवार्क्ता विक्त । [G आहूय पुच्छचते] स राज्ञा सगौरवमानीतः पूजितश्च । पृष्टं च-हे वृद्ध ! कांचिद्रामवार्त्ता [नव्यां] वद । सोऽभाणीत्- 5 देव! कोशलायां यद्यागच्छिस तदा किमप्यपूर्वं दर्शयामि [G इह स्थितस्य तु वक्तं न पारयामि]। राजा मित्रपु राज्यं न्युस्य खयं कटकेन सह कोशलां प्रति चचाल । तत्र गत्वा बहिःस्थितः । वृद्ध ! दर्शय । देव ! अत्र जन-पार्श्वात्खानय । तथा कृते, स्वर्णकलशः प्रकटो जज्ञेः तदनु हैमी मण्डपिका च । पुनः खनिते एकक्षण-द्विक्षण-हतीयक्षण-चतुर्थक्षणे प्रकटीकृते महती खर्णीपानदेका प्रकटी जाता। खर्णवालकगुम्फिता सर्वरह्मखिता। विस्मितेन गृहीत्वा हृदि कण्ठे च दत्ता नृपेण । वर्णनं कुर्वति, द्विजेनोक्तम्-देव ! चर्मकारपत्था उपानदेषा न 10 स्प्रष्टुमर्हति । नृपेणोक्तम्-सा चर्मकार्यपि धन्या, यसा ईद्युपानत् । परं कथ्यतां कथम् ? । देव ! श्रीरामे सत्यत्र चर्मकारगृहाण्यासन् । इदमेकस्य गृहम् । तत्पत्नी लाडबहुला, अतः सगर्वा । विनयं न करोति । सा भर्ता हिकता शिक्षिता च । उक्तश्च-मद्भृहाद् याहि । सा वाणहीमेकां पतितां मुक्त्वा एकां च पादे कृत्वा पितृगृहं गता । . पत्युरपमानमूचे । पित्रा दिनद्वयं स्थापिता पश्चादुक्ता-वत्से ! कुलिखयः पतिरेव शरणम् । त्वं तत्र याहि । सा द्वित्रिवारं भणिताऽपि न याति । तदा पित्रा प्रोक्तम्-वत्से ! श्रीरामः सलक्ष्मणः सप्रियश्च त्वामनुनेष्यति । 15 साऽप्यलीकाऽभिमानिनी प्राह-यदि समेष्यति तदैव यास्यामि [G नापरथा]। इयं वार्चा छन्नेर्नृपपुरुषैः श्रुता। तैर्नृपाय न्यवेदि । श्रीरामस्ततः श्रुत्वा तद्गेहद्वारे स्थितः । तेन कथितम्-देव ! पादमवधार्यताम् । मम रङ्गस्य गृहेऽद्य कल्पद्धमागमनम् । तव पुत्रीमानयितुं वयमागताः सः । मात्रा सा त्वरितं पत्युर्गृहे नीता । तस्या औत्सु-क्येन त्रजन्त्या. इयमत्रैवोपानद्विस्मृता । श्रुत्वा देवस्तु खस्थानं गतः । देव ! रामराज्यमीदशमासीत् । तच्छत्वा विक्रमादित्यः गर्वं त्यक्त्वा निजपुरीं प्राप् ।। इति विक्रमादित्यविविधप्रवन्धाः ॥

(G.) सङ्ग्रहगतं विक्रमवृत्तम् (

§ १३) श्रीविक्रमादित्यसत्रागारे नित्यं कार्पटिका विनक्यन्ति । तदपवाददोषभयेन राजा प्रच्छन्नः स्थितः । तावता

* अति नास्त एव श्लोकः । ‡ एतद्न्तर्गतपाठस्थाने असङ्ग्रेह कियानिधको विस्तृतश्च पाठः प्राप्यते । यथा—
ततो देवः श्रीरामः प्रजावस्तलः प्रातः ससीतः सल्ह्मणः समागत्य तद्ममेकारभवनमगात् । तन्मध्यं प्रविष्टः पूजितः कारुमिविसितै
विज्ञसश्च-देवायमस्मान् कीटकान् प्रति कियान् प्रसादः कृतः । स्क्षोऽपि नेदं संभाड्यते, यहेवोऽस्मानुपतिष्ठते । किं कारणमागमनस्य ।
श्रीरामः प्राह्-स्वपुत्र्याः स्वग्रुरकुलप्रेषणायायातोऽस्मि । तस्या हि वराक्यास्त्रथाविधा सन्धाऽऽसे । ततो हृष्टसज्जनकः । अपवरकं गत्वा दुहितरमाई सा-मुग्धिके ! तव प्रतिज्ञा पूर्णा । रामदेवोऽप्यायातः सदेवीकः । पृष्टि वन्दस्त तं जगत्पतिम् । ततस्तुष्टा रामान्तिकमागता । ववन्दे
तम् । आलापिता प्रजातातेन-वत्ते ! गच्छ स्वग्रुरमन्दिरम् । तया भणितम्-आदेशः प्रमाणम् । ततो गता पिनृ(पित)गृहम् । रामः स्वस्थानमयासीत् । श्रीविकमस्य द्वितीया उपानत् तत्रापि गृहे खन्यधोमाने (अधःखन्यमाने) छप्यते । स्वामिद्वायाति तत्र खान्यते । गतो राजा
तत्र । खानितं तत् । छन्धा द्वितीया उपानत् । दृष्टं हेमगृहम् । एवमन्यान्यपि तेन विप्रेणाखानियत् । छातं तद्वेम । राज्ञा विप्रः पृष्टःविप्र !श्लिमीहशं सम्यग् जानासि ? । विप्रेण गदितम्-पूर्वजपारंपर्योपदेशात् ज्ञातं तुभ्यमुकं च । परं गर्व माधाः । स रामः स एव । तस्यास्था जलज्ज्वलनौ संभ्यते सा । पतन्त्यो सत्त्रयां तदाज्ञायां न पेतुः । छता द्विष्यसाहम् सम्यग् माद्याः समिविशतिः, रकोटिका अष्टोतरं शतं, विद्वराणि दोषाश्च सर्वे व्यनेशन् । या तु तहेवी सीता, ये तद्भातरः, ये तद्भव्याहम्मसुप्रीवादयस्त्रणं महिमानं वर्षशतेनापि
वाक्पतिरिपु वक्तं न शक्तः । इति श्रुत्वा विक्रमेण गर्वो मुक्तः । वि[रृ]दं निषिद्धं 'अभिनवराम' इति । पुनरुज्ञयिनीमगात् । यथाशक्ति छोकमुद्रभरत् । तस्य हि अभिवेताल-पुरुपसिद्धिभ्यां मुवर्णसिद्धाः चोपकारैश्वरं तद्र निरुपममासीत् । ततो विक्रमो घन्य एव । ततोऽभिकास्य
परे कोटकोटयोऽभूवन् । इत्याकरर्यं विक्रमसेनो विवेक्यभूत् ॥

भोगीन्द्रः समागतः। राज्ञा पृष्टं-कथं त्वं कारणं विना नित्यं तीर्थकरणप्रवणपात्राणि मारयसि। तेनोःक्तं-[कथय] किं पात्रं?। राज्ञोक्तं-'भोगीन्द्र! बहुधा ।' इति तुष्टो मनुष्यपात्राणि ररक्ष।

ई.१४) केनापि सामुद्रिकशास्त्रवेदिना मध्याहे चतुःपथे कस्प्रापि काष्ट्रभारवाहकस्य चरणलक्षणानि भ्रवि प्रतिविवितानि वीक्ष्य शास्त्रं वितथमिति विचार्य पुस्तकैः सह राजद्वारे काष्ट्रभक्षणं प्रारब्धम् । ततो राज्ञा पृष्टं-मम ठलक्षणानि कथय । तेनोक्तं-नैकमपि । तत्कथं राज्यम्? । पुनरुक्तं-यदि वामकुक्षौ करडांत्रं भवति । तदा राज्ञा भ्रुरिकामाकुष्योक्तं स्थानं दर्शय । तेनोक्तं-सन्त्वेनैव राज्यम्? । राज्ञापि दरिद्रमुखे कणिकगोलिकाप्रयोगेन तालुनि काकपदं दर्शितम् ।

§ १५) अन्यदा सिद्धसेनदिवाकरेण गुरुचरणसंवाहनां विधीयमानेन गुरव उक्ताः—यदि यूयमादेशं ददत, तदाहमागमं संस्कृतेन करोमि । गुरुभिरुक्तं—तव महत्पातकमजिन । त्वं गच्छयोग्यो न, गच्छ ! । तेनोक्तं—प्रायिश्वं

10 ददत । गुरुभिरुक्तं—यत्र जिनधम्मों न तत्र जिनप्रभावनां विधाय पुनः समागन्तव्यं । इत्यवधृतवेषेण चितः ।
ततः सप्तवर्षानन्तरं मालवके गूढमहाकालप्रासादे शिवाभिमुखं चरणौ विधाय सुप्तः । तत्र वारितोऽपि तथैव ।
अत्रान्तरे राज्ञा रक्षकपुरुषान् प्रेषयित्वा उपद्वतः । तावतान्तःपुरे प्रदीपनकं लग्नम् । ततो राज्ञा समागत्य पृष्टः—
कथं शिवनमस्कारं न विद्धासि ? । तेनोक्तं—मम नमोऽसौ न सहते । राज्ञोक्तं—विधेहि । तेन सकललोकसमक्षं
द्वात्रिंशतिका विहिता । तदा लिंगमध्यादवन्तीसुकुमालद्वात्रिंशत्विकारितप्रासादे श्रीपार्श्वनाथिवम्बं प्रकटीभृतम् ।

15 तन्नमस्कृतम् । असन्नमस्कारमसौ सहते । तदाप्रभृति गूढमहाकालोऽजिन ।

§ १६) अन्यदा सकलकवीनां दानं द्दानं राजानं वीक्ष्य शिवतपोधनचतुष्टयं कविताकृतेऽरण्यमगमत् । तत्र

गजवर्णनमारब्धं तैः, एकैकेन प्रहरेण एकैकश्वरणो विहितः । तद्यथा-

(८) च्यारि पाय विचि दुडुगुसु दुडुगुसु, जाइ जाइ पुणु रुडुघुसु रुडुघुसु । आगलि पाछलि पुंछु हलावह,.....

20 तुर्ययामे तुर्यपादो न भवति । तदा श्रीकालिदासकविना वृक्षान्तरितेन चतुर्थश्ररणः पूरितः.....अंधार उं किरि मूला चावइ ॥

तुर्यतपोधनेनोक्तं-मम सरखतीप्रसादो जातः । तैर्नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तं-तुर्यचरणोऽमीषां न भवति । इदम्रप-मानं कालिदासस्यव नान्यस्य ।

§ १७) अथ कुमारसम्भवमहाकाव्ये नविभः सग्गैः शृंगारसुरतवर्णनकुपितयोमया कालिदासकवेः शापो दत्तः।

25 यत्-त्वं स्नीव्यसनेन मरिष्यसि। तेन वेश्याव्यसनी वभूव। राज्ञा श्रीविक्रमेण व्यसनिनं मत्वा तिरस्कृतः। वेश्यासदने स्थितः। अत्रान्तरे राजपाटिकायां गतेन राज्ञा सरिस कमलं कम्पमानं विलोक्योक्तं—'पवनस्थागमो नास्ति । ।

कैरिप किविभिः प्रत्युत्तरं न दत्तम्। राज्ञा नगरे पटहो वादितः। यः कोऽपि समस्यां पूर्यित तस्य सुवर्णलक्षं दिन्न ।

इति वेश्यया कालिदासस्य निवेदितम् । तेनोक्तं—अहं पूरियत्वा तव समर्पयिष्यामि । पूरिता । तया सुवर्णलोभेन समारितः। तदनु तया राज्ञोऽग्रे न्यगादि समस्या। यत्—'पावकोत्सिष्टवर्णाभः शर्वरी०।' राज्ञोक्तं—केन पूरिता?।

30 तयोक्तं—मया। 'कांते॰' इति पदेन त्वया न बद्धा। ततस्तयोक्तं—कालिदासेन। स च मया मारितः। राज्ञो विषादोऽजनि।

§१८) अन्यदा श्रीविक्रमस्य रोगः समजिन । वैद्येन कुचेष्टां वीक्ष्य काकमांसभोजनेनाऽऽरोग्यं कथितम् । राज्ञोक्तं-भवतु । ततो वैद्येनोक्तं-राजन् ! धर्मीषधं विधेहि । त्वं प्रकृतिन्यत्ययेन न जीविस ॥

॥ इति विक्रमप्रबन्धः ॥

२. सातवाहनप्रबन्धः (P.)

११९) मरहट्टदेशे प्रतिष्ठानपत्तनम् । नरवाहनो नृपः । सुभटोऽङ्गरक्षः । तत्पत्नी मनोरमा । गर्भाधाने सित शुभदोहदे जाते नैमित्तिकाः पृष्टाः । तैरुक्तम् सुतो भावी, परं पोडशवर्षाणि भूमिगृहे स्थाप्यश्चनम् । तेन तथा कृते, पश्चवार्षिकः कलाभ्यासं करोति । इतश्च नृपो राज्यर्द्धे स्नीविलापं श्चत्वा प्राहरिकानाह [कोऽत्र १] सुभटेनो-क्तम् —देवाहमस्मि । इमां पृष्ट्वा समागच्छ कथं रोदिति १। स गतः । पुरे भ्रान्त्वा समेतः । देव ! नगरमध्ये कापि व हष्टा । तिईं बहिर्गत्वा विलोकय । पृच्छां कुरु । स विद्युत्करणात्सनृपस्तत्र गतः । वने स्नियं दृष्ट्वा पप्रच्छ—कथं रोदिषि १ राज्याधिष्ठात्री देवी । तिईं कथं रोदिषि १। तया क[थितम्] पण्मासान्ते नृपः पश्चत्वं प्रयास्यति ।

(९) वैधव्यसदृशं दुःखं स्त्रीणामन्यन्न विद्यते।धन्यास्ता योषितो यास्तु स्त्रियन्ते भर्त्तुरस्रतः॥

तत्कथं निवर्तते ? इति सुभटे पृष्टे तयोक्तम्-यदि चासुण्डाग्रे द्वात्रिंशह्रक्षणो वध्यते, तदा नृपस्य क्षेमम् । इत्युक्त्वाऽदृश्या जाता । नृपाग्रे उक्तम् । नृपः स्वस्थानं प्राप्तः । प्रातर्नृपेण सुभटाग्रे उक्तम्-यदि द्वात्रिंशह्रक्षणं 10 नरमानयसि तदाऽर्द्वराज्यं ददामि । तेन गृहे गत्वा स्वपत्ती पुत्राय याचिता । पोडशवाह(हाय)नः सुतो दत्तः । नृपायोक्तम्-देव ! स्थाने कृतोऽ निष्कास्य वध्यस्य नेपथ्यधरं कृत्वा चासुण्डाग्रे नीतः । नृपस्तत्र । गतः । नैवेद्येन सह कल्पितः । मात्रा केशैर्धृतः पित्रा खङ्गं कृष्टम् । तेन द्वसितम् ।

(१०) राजा खयं हरति मां यदि जीवितार्थे द्रव्येच्छयान्धवधिरौ पितरौ मदीयौ। त्वं देवता मनुजमांसरसस्पृहासि प्राणाः खयं हसत किं [प]रि[दे]वितेन॥

देवी सत्त्वेन तुष्टा। वरं वृण् । याचितः - िकमर्थमिहानीतः ?। देव्या खभाव उक्तों, तेनोक्तम् - नृपाय राज्यं देहि, त्वं जीववधाद्विरमस्व । तयोक्तम् - राज्यं मया दत्तं राज्ञे, [जीवे] ज्वभयः । जीववधानिवृत्ता । सर्वोऽपि क्स्थानं गतः । प्रातलोंकापवादमसहता नृपेण राज्यं सर्वं सातवाहनाय दत्त्वा स्वयं तापसीं [दीक्षां] जगृहे । सृपोऽपि राज्यं कुर्वन् समाताअस्त (?) । अन्यदा नृपेण मन्नी पृष्टः - ममाज्ञा कियतीं भूमिं यावदिस्त ?। देव ! मथुरायां न वर्तते । नृपेण कटकं प्रहितम् । जाते मित्रिभिद्धिंघा कृतं तेन मथुराद्वयम् । स्वरोंदये पुत्रजन्म-20 वर्द्वापनम् । द्वितीये प्रहरे वापीमध्यात् कोटि ९ सुवर्णलाभः । तृतीये प्र० दक्षिणमथुरा । चतुर्थे प्र० उत्तरमथुरा वर्द्वापनम् । एवं दिवसमध्ये वर्द्वापनचतुष्के जाते नृपो हृष्टश्चिन्तयित - किं मया पूर्वभवे पुण्यमकारि ?। प्राता राजवर्द्वापने । एवं दिवसमध्ये वर्द्वापनचतुष्के जाते नृपो हृष्टश्चिन्तयित - किं मया पूर्वभवे पुण्यमकारि ?। प्राता राज्यां गतः । हदे गोदावर्यां मत्स्यहसने विस्तितो गृहे गतः । सर्वः कोऽपि पृष्टः परं कोऽपि न वेत्ति । इतश्च प्रात्यां गतः । हदे गोदावर्यां मत्स्यहसने विस्तितो गृहे गतः । सर्वः कोऽपि जत्रेव काष्टवाहकस्तेन सक्तुभिरि-श्चित्रावर्यां परितः । तन्मत्स्येन दृष्टम् । अतो जलदेवतया हितं मत्स्यमिषात् । तव दानप्र[भावा]त् वर्द्वापनं जातम् ॥ इति सातवाहनप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे सातवाहनसम्बन्धिगाथावृत्तम्।

- (११) ताण पुरओं य मरीहं कयलीथं भाण सरिसपुरिसाणं। जे अत्तणो विणासं फलाइं दिंता न चिंतंति॥१॥
- (१२) जह सरसे तह सुके वि पायवे धरइ अणुदिणं विंझो । उच्छंगसंगयं निग्गुणं वि गरुया न मुंचंति ॥ २॥
- (१३) सरिसे माणुसजम्मे दहइ खलो सज्जणो सुहावेइ। लोह चिय सन्नाहो रक्खइ जीयं असी हरइ॥३॥

30



10

15

20

(१४) सयलजणाणंदयरो सुक्तस्सं वि एस परिमलो जस्स । तस्स नवसरसभावंमि होज्ञ किं चंदणदुमस्स ॥ ४ ॥

-इति गाथाचतुष्ट्यं श्रीसानवाहनेन राज्ञा चतुःकोटिभिर्गृहीतम् ।

- (१५) हारो वेणीदंडो खडुग्गलियाइं तहय तालु ति। सालाहणेण गहिया दहकोडीहिं च चउगाहा॥ १॥
- (१६) मग्गु चिय अलहंतो हारो पीणुन्नयाण थणयाण । उन्विंबो भमइ उरे जउणाणइफेणपुंज व ॥ २॥
- (१७) कसिणुज्जलो य रेहइ०....। ३॥
- (१८) परिओससुंदराइं सुरए जायंति जाईं सुक्खाई। नाइं चिय निवरहे खडुग्गलियाइं कीरंति॥ ४॥
- · (१९) ना किं करोमि माए खज्ज सालीउ कीरनिवहेहिं०॥ ५॥
 —इति गाथाचतुष्टयं कोटिमिर्दशिमिर्गृहीतम्।
 - (२०) अहलो पत्तावरिओ फलकाले मुयसि मृढ! पत्ताई। इण कारणि रे विड विडव मुद्ध! तुय एरिसं नामं॥ १॥
 - (२१) निव्वृद्धपोरिसाणं असचसंभावणा वि संभवह। इक्काणणे वि सीहे जाया पंचाणणपसिद्धी॥२॥
 - (२२) आसक्ने रणरंभे मूढे मंते तहेव दुव्भिक्खे। जस्स मुहं जोइज्जइ सो चिय जीवउ किमन्नेण ॥ ३॥

-इति गाथात्रयं कोट्या गृहीतम्।

३. वनराजवृत्तम् (G.)

§२०) आंबासणवास्तव्यचापोत्कटज्ञातीयचंड-चाग्रंडाभिधी आतरावभृताम्। ततः केनापि नैमित्तिकेनोक्तम्चाग्रंडपत्नीगर्भेण चंडो मरणमगमिष्यदिति सा सगर्भा परिहृता। ततः सा पंचासरग्रामं गता। ओञ्छ्रहृत्त्या जीवति।
अन्यदा श्रीशीलगुणस्वरिभिर्वाह्यभूमी गतैर्वणच्छायामनमन्तीं वीक्ष्य सुलक्षणं बालकं दृष्ट्वा च सा निजचैत्ये स्थापिता। कियतापि कालेन वार्यमाणोऽपि वनराजो मृषकमारणं कुर्वन् गुरुभिर्निर्वासितः। चरडः सन् सेहर-सेष25 राभ्यां सह संखेश्वर-पंचासरग्रामान्तरे चौर्यवृत्तिं वितन्वन् शरहयभञ्जकं श्रेष्ठिजाम्बाकं पत्रच्छ। तेनोक्तं-यूयं त्रयः।
अतो द्वयं भग्नम्। तेन बाणत्रयेण परीक्षा दिश्चिता। तेन प्रीतिर्जाता। अन्यदा काकरग्रामे श्रेष्ठिगृहे क्षात्रपातं कृत्वा
सर्वस्वं गृह्वतस्तस्य करो मंजूषान्तर्दिधभांडे पतितः। ततस्तेन सर्वमिपि ग्रुक्तम् । प्रातः श्रीदेव्यास्तत्पत्या पंचागुलीप्रतिविम्बं दिश्च वीक्ष्य कुलीनः कोऽपि चौरोऽयं इति विज्ञाय, चौरे मिलितेऽहं भोक्ष्ये, हति अभिग्रहो गृहीतः। स
सप्तमे दिने समेत्य तां भगिनीमिति नमश्रके। अन्यदा श्रीकन्यकुब्जदेशीयमहणकराज्ञ्याः [पश्चकुलं] गूर्जरधरोद्धा30 हणके गच्छति। अन्तरा युद्धं विधाय वनराजेन सर्वं जगृहे। ततः शश्केनैकेन स्वानभंगाभिज्ञानेऽणहिल्लपञ्चपालेनापिते वीरक्षेत्रेऽणहिल्लपुरस्थापना। श्रीदेव्या वर्द्वापनकं कृतम्। गुरुभिर्मन्त्राभिषेकश्च।।

४. लाखाकवृत्तम् (G.)

§ २१) परमारवंशे सम्रुत्पन्नया प्रासादे रममाणया कामलया स्तम्भभानत्या फूलडाभिधः पशुपालो चृतः ।

तत्सुतो लापाकः । स कच्छेश्वर एकविंशतिवारत्रासितमूलराजः समजिन । द्वाविंशतिवेलायां किपलकोटिस्यतो लापाको रुद्धः । माहेचनाम्भः पदातेराकारणं महितम् । सोऽन्तराविंशतिभीमूलराजिमिक्छैः महरणानि मृहीतः । ततः तिस्मिन् निरायुथे समागते लापाकेन राज्ञा, समं युद्धमकृत । लापाको रणश्चिव पतितो राज्ञा रोपाचरणेनाहतः । ततो लापाकस्य मात्रा राजा शक्षः । ततः प्रांते स्फोटिका समजिन । ततो राज्ञा तांबुलमध्येऽलिका विलोक्य सार्चाः शुभमरणं पृष्टाः । तैरुक्तं—इंगिनीं साध्य । तथा विहिते सप्तमिदिने खिविमानमायांतं वीक्ष्य सुदितः । उ पुनरन्यतो गोकार्यमृतखपाकमानियत्वा (१) समेते तत्र पुनः सार्चाः पृष्टाः । एवं सित सुखमुत्यो कथं मम कष्टमृत्युरुपिदृष्टः । तैरुक्तं—राजन् ! कस्तव भूमो गोम्नहं तनोति । एवं विपनः ॥

५. मुञ्जराजप्रबन्धः (P.)

§ २२) श्रीउजायिन्यां नगर्यां सिंहो नृपः । स एकदा मृगयां गतः । तत्र शरवणमध्ये [बालः] पतितो दृष्टः । नुपेण गृहीतः । प्रच्छन्नमन्तःपुरे प्रहितः । देव्यैकया स्रतिकर्माणि कृतानि । वालस्य मुझ इति नाम द्त्रम् । स्रहेन 10 वृद्धिं गतः । इतो नृपस्थापरस्यां पत्न्यां सिन्धुलनामा पुत्रो जातः । उभाविप निरवशेषभावेन वृद्धिं गतौ परिणीतौ च । इतो नृपो वृद्धो जातः । एकदा मुझावासे गतः । आवासान्तर्मुझः सपत्नीकोऽस्ति । नृपेण बहिःस्थेनोक्तम्-रे मध्ये कोऽप्यस्ति ? । नृपशब्दं श्रुत्वा मुझश्शंकितः । प्रियां भद्रासनाधो निवेश्य व्याहृतवान्-देव ! मध्ये पादमवधारयत । नृपः सिंहासने उपविष्टः । कुमारः प्रणम्य भद्रासने निविष्टः । आदिश्यतां कार्यम् । नृपेणी-क्तम्-राज्यं कस्य दीयते ? । मुझः प्राह-तातः प्रमाणमत्र । वत्स ! त्वं मम पालितः पुत्रः । सिन्धुलस्त्वङ्गजः । 15 व्यतिकरे उक्ते मुझेनोक्तम्-मम आतुर्देव! राज्यं भवत्वहं तस्य सेवां तावत् करिष्यामि । नृपेणोक्तम्-एवं मा भण । राज्यं तवैव । अधुना परावर्त्ते कृते जनो न मन्यते । परं मम शिक्षां शृणु । सिन्धुलो नापमान्यः । मन्नी रुद्रादित्यो न पृथकार्यः । गोदावरीं तीर्त्वा परतीरे न गम्यम् । तेन सर्वं मानितम् । नृपे वहिर्गते मेदभयाद्राज्ञी खङ्गेन पातिता । तस्या आऋन्दं श्रुत्वा नृपो विलतः । वधूं पतितां दृष्ट्वा प्राह-रे पाप ! किमकार्यमकार्षाः ? अपरा-मपि शिक्षां न करोपि । अतोऽनहोंऽपि निवेश्यः, वाक्यभङ्गभयात् । मुझस्य राज्यं जातम् । नृपो दिवं ययौ ।20 स सिन्धुले सदा प्रसादपरो वर्तते । जनः सर्वोऽपि सिन्धुलेऽनुरक्तः । एकेन मित्रणा प्रोक्तम्-देव ! सिन्धुलात्तव विनाशो भावी । नृपेण तद्वचनमङ्गीकृत्य ग्रासो निषिद्धः । सिन्धुलः खावासे तिष्ठति । एकदा नृपो राजपाट्या गजारूढो वजन सिन्धुलगवाक्षाधः प्राप्तः । सिन्धुलेनोपरि निविष्टेन दक्षिणकरे आदर्शे सति वामकरेण करी वर-त्रया धृतः । तद्नु पुच्छे धृतः । पदमपि न चलति । आधोरणे नैष्टिष्ट । नृपेणोक्तम्-करी किं न चलति ? देव नृसिंहेणाक्रान्तः । तावत्कुमारो दृष्टः । वत्स ! मुश्च । तेनोक्तम्-अहं देवपादानां केनाभक्त उक्तः, यद्वासः स्थितः । 25 गजं मुख्र, द्विगुणं गृहाण । सिन्धुलेनोक्तम्-एष गजस्त्रुटितः, अपरमानयत । नृपस्तु द्वितीये निविष्टः । करी तत्रैव पतितः । नृपेण वलं बन्धोर्दृष्ट्वा वर्द्धापनं प्रारब्धम् । पिशुनेन मित्रणा देव उक्तः-एष त्वां हनिष्यत्येव । नृपेण देशपट्टी दत्तः। सोऽर्बुदे कासहद्यामे गतः। दीपदिने रुमशाने गतः। तत्र स्करं वीक्ष्य वाणसन्धानमकरोत्। इतो र्जन (१) सुप्तः।तेन प्रत्यासन्तं मृतकं जानोरधः प्रदत्तम्।तत् सलसलितम्।तेन वामकरेण वारितम्-वाणेन शुकरो विद्धः । तत्साहसेन तुष्टः, वरं याचख । तेनोक्तम्-मालवराज्यं देहि । तव भाग्यं न, परं तत्र याहि । तव पुत्रस्व ३० भविष्यति । पुनर्नृपाहूतः स्वघरे गतः। राज्ञा दुर्जनवचसा नेत्राकर्षणं कृतं सिन्धुलस्य । तत्पुत्रो भोजः। स नृपस्या-तीव वल्लभः। यौवनाभिम्रुखो जनेनानुरागात् सेन्यते । अतस्तेन कूटमित्रणा नृपस्रोक्तम्-देव! त्वां इत्वा कुमारो राज्यं महीष्यति । राज्ञा रुद्रादित्येन मित्रणा छत्रमाज्ञापितः । मित्रणा एकान्ते नीत्वा नृपाज्ञा उक्ता । कुमारेणो-क्तम् -शीघं कुरु । किमपि राज्ञः कथापयसि ? । तेन 'मान्धाते'ति लिखित्वा पत्रिकाऽर्पिता । काले दर्शनीया ।

मित्रणा प्रोक्तम्-त्विय मारिते राज्यं निमजति । अतर्रेछनं तिष्ठ । मित्रणा कार्यं कृतं निवेदितम् । तेनापि 'किम-प्युक्तम् १' तदा पत्रिका दर्शिता । नृपः काष्टारोहणाय गतः । मित्रणा कुमारो दर्शितः । अथ नृपो हृष्टः ।

§२३) अथ कर्णाटे उरङ्गलपत्तने तैर्लपदेवो नृपः। तस्य मन्नी कमलादित्यः। स मालवेशेन सह वैरप्रारम्भं कर्जुं स्वां नासां कर्णाविष बुध्या अपाकृत्य नृपेणापमानितो ग्रुञ्जनृपमाययो। देव! मया स्वामिनोंऽग्रे उक्तम्- कर्जुं स्वां नासां कर्णाविष बुध्या अपाकृत्य नृपेणापमानितो ग्रुञ्जनृपमाययो। देव! मया स्वामिनोंऽग्रे उक्तम्- कृष्णोति तावद्वद्वा[दित्यो]मुत्कलाऽप्य स्थितः। गोदावरीतटे नृपः कमलादित्यवचसा कटकं सम्मील्य चितः। क्रद्वादित्योऽपि चितां प्रविष्टः। कमलादित्येन कटकं सम्मुलमाकारितम्। मन्त्रिणो वचसा कोऽपि न युध्यति। मुञ्जो नष्टः। बुमुक्षितः कस्मिन् वासे गतः। तत्र शीताशनं याचन् महीआरीं गर्वोद्धतां दृष्टा पपाठ-

(२३) मा गोलिणि मन गव्यु करि पिखि वि पडुरूआई। पंचइ सई बिहुत्तरां मुंजह गय गयाई॥

10 इति पठन् नृपचरैरानीतः । नृपायापितस्तेन गुप्तौ क्षेपितः । मृणालवती चेटी परिचर्याकृते मुक्ता । नृपस्तस्यामासक्तो जातः । इतो धारायां रुद्रादित्येन भोजो राज्ये मुख्यः कृतः । स सैन्यं कृत्वा गोदावरीतीरमागत्य
स्थितः । भोजेन सुरङ्गा दापिता सिद्धा च । पुमानेको नृपानयने प्रहितः । स सुरङ्गाद्वारेण गत्वा नृपमाह—चल्यताम् । राजाऽऽह—प्रतीक्षस्य, यावन्मृणालवती आयाति । देव ! किं चेट्या ?, चल्यताम् । नृपे स्थिते, विनष्टं नृपं
मत्वा गतः । चेटी आयाता । भोजनमादाय नृपं सचिन्तं वीक्ष्य पप्रच्छ—देव ! किं चिन्ता ? । न विक्तः । तया
15 भोजनमध्ये लवणमुष्टिः क्षिप्ता तेन नाज्ञायि । तया निर्वन्धेन पृष्टः प्राह—चल्यताम् , त्वां प्रतीक्ष्यमाणोऽसि ।
तयोक्तम्-आभरणान्यादाय त्वरितमेमि । गत्वा तैलपदेवाय सुरङ्गाद्यमुक्तम् । नृपेणागत्य बन्धितः । स बध्यमानः प्रोचे—

अच्छ(अत्रादर्शे गाथाप्रमाणा पङ्किरक्षरश्र्न्या मुक्ताऽस्ति।).....।

भिक्षां भ्रामयित्वा वनमध्ये नीत्वा शूलाप्रोतः कृतः ।

20(२४) यदाःपुञ्जो मुञ्जो गजपतिरवन्तीक्षितिपतिः सरखत्यावासः समजिन पुराविष्कृतगितः । स कर्णाटेदोन स्वसचिवबुध्यैव विधृतः कृतः ग्रूलाप्रोतस्त्वहह विषमाः कर्मगतयः॥

(२५) गय गय रह गय तुरय गय गय पाइक अनु भिच । सम्मिष्टिय करि मंत्रणउं महँता रुद्दाइच ॥

(२६) मुंज भणइ मिणालवइ केसा काई चुयंति । लडुउ साउ पयोहरहं बंधण भणीअ रअंति ॥

(२७) मुंज भणइ मिणालवइ गउ जुवण मन झूरि । जइ सकर सयखंड किअ तोइ स मिट्टी चूरि ॥

25 (२८) इच्छउ इअरमणोरहाण मणवंछिआण संपत्ती। न पहुप्पइ बंधणदोरिआ वि दिवे पराहुत्ते॥

(२९) झोली तुद्दवि किं न मूच न हूच छारह पुंज। घरि घरि भिक्खभमाडीइ जिम मंकड तिम मुंज॥

(३०) मा मण्डक! कुरुद्वेगं यदहं खण्डितोऽनया। रामरावणभीमाचा योषिद्भिः के न खण्डिताः॥

(३१) वेसा छंडि वडाइ ती जे दासिहिं रचंति । ते नर मुंजनरिंद जिम परिभव घणा सहंति ॥

(३२) आपद्गतान् इसिस किं द्रविणान्धमूढ ! लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमत्र चित्रम् । »

30 एता न पदयसि घटीर्जलयन्त्रचन्ने रिक्ता भवन्त्यविरतं भरिताश्च रिक्ताः॥

(३३) क तरुरेष महावनमध्यगः ।। (३४) उत्तंसकौतुककृते तु विलासिनीभिर्छनानि ॥



^{1 &#}x27;यः कृतिरिति' इति प्र० चि० शुद्धपाठः ।

(३५) इयं कटी मत्तगजेन्द्रगामिनी०॥ (३६) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे०॥ मुझे धृते राजपुत्रीवाक्यम्-'चिन्तामिमां वहसि किं गजयूथनाथ॰'॥ सिन्धुलवाक्यानि-(३७) अद्धां अद्धां नयणलां जह मुं मुंज न लिंत। सत्तइ सायर सधर धर महि सिंधलु भंजंत॥ (३८) पश्चाद्यात्पश्चवर्षाणि षण्मासाश्च दिनत्रयम् ।

॥ इति मुझराजप्रवन्धः ॥

६. श्रीमानंतुङ्गाचार्यप्रबन्धः (B. Br.)

(३९) प्रभोः श्रीमानतुङ्गस्य देशनायां रद्त्विषः। जयन्ति ज्ञानपाथोधिशारदेन्दुसहोद्राः॥

§ २४) वाणारस्यां हर्षो राजा। तत्र ब्रह्मक्षत्रियो धनदेवः श्रेष्टी। मानतुङ्गः सुतः। सोऽन्यदा दिगम्बरचैत्ये जिनं नत्वा गुरुपादान्ते गतः । प्रतिवोध्य दीक्षितः । चारुकीर्तिर्नाम । स्त्रीमुक्ति-केवलिभ्रुक्तिर्न मन्यते । दिगम्बरत्वं 10 दुष्करं कुर्वन् भगिनीपतिलक्ष्मीधरेण सगौरवं निमंत्रितो गृहमायातः । अशुद्धेर्यावत् कमंडलुजलेनाचमनं गृह्णाति, तावद् भगिन्या श्वेताम्बरभक्तया पूतरानालोक्य तद्वतं निन्दयित्वा श्वेताम्बराणां पश्चसमित्यादि स्तुत्वा प्रतिबोध्य कथितम्-समायातान् जैनाचार्यान् मेलयिष्यामि । परिमदं पयो यसाजलाशयादानीतं तसिन्नेव क्षिप । यथान्यान्यजलसंपर्कात् पूतरका न म्रियं[ते] । अन्यदा श्रीअजितसिंहस्ररीणामागमने गङ्गातीरोद्याने मिनन्या कथिते मानतुङ्गः पूर्विर्षिसामाचारीश्रवणात् तदीक्षां गृहीत्वा समग्रसिद्धान्तमधीत्य गुरुभिर्दत्तस्वरिपदः सुललितं-15 काञ्यकर्ता बभ्रव।

§ २५) इतश्र तत्र पुरि मूर्तांत्रक्षा मयूरो नाम महाकविरस्ति । तस्य श्रीनाम्नी पुत्री रूपवती ।

(४०) पङ्के पङ्कजमुज्झितं कुवलयं चापारनीरे हदे बिम्बी चापि वृतेर्बहिः प्रकटिता क्षिप्तः दादी चाम्बरे। यस्याः पाणिविलोचनाधरमुखान् वीक्ष्य समृष्टिं विधि-रुद्विष्टेव पुरातनी समभवद्दैवाद्विधा येहताम्॥

20

25

तद् नुरूपं बाणनामानं कविमुद्वाहिता। ततः श्रीहर्षस भेटयित्वा तस्य धान्यादि पृथक् धवलगृहं च कारितम्। अन्यदा बाणपत्नी सञ्जातकलहा पितृगृहं गता । बाणेनागत्य प्रदोपेऽनुकूलियतुमारब्धा ।

(४१) मानं मुश्च खामिनि रात्रुं जगतो विनाशितखार्थम्। सेवक-कामुकपरभवसुखेच्छवो नावलेपभृतः॥

अमानिते पण्डितं गृहाद् बहिः प्रेषयित्वा सखी तां जगाद । तथापि न मानयति । उक्तं च-

(४२) लिखन्नास्ते भूमिं बहिरवनतः प्राणद्यितो निराहाराः सख्यः सततरुदितोच्छूननयनाः। परित्यक्तं सर्वे इसितपठितं पञ्चरशुकैस्तवावस्था चेयं विस्रज कठिने मानमधुना ॥

सख्या बहिरागत्य कथिते विभातसमये बाणेन गत्वा-

(४३) गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णित इव । प्रणामान्तो मानस्तद्पि न जहासि मानमधुना कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते सुभु कठिनम्॥ इति भित्तिपुरतः सुप्तेन मयूरेण-सुभुशब्दस्थाने चण्डीत्याख्यां कथय, यतोऽस्या दृढकोपाः । श्रण्डीशब्द उचितः । इति पित्तर्वचनेन कृपिता लिजता भर्तृवचनं मानयित्वा सतीत्वप्रभावेण पितरं कृष्टीभरेति शप्तवती । सञ्जातकृष्टेन मयूरेण राजभणितेन सूर्याराधनाय पद्पादं रञ्जयचं बद्धा खिदराङ्गस्रचितां काराप्य तत्स्तवने एकैकवृत्ते छुरि-क्या एकैकरञ्जपादच्छेदे यावता पश्च च्छिनाः । पष्टच्छेदे सूर्यपरितोषे नच्यदेहद्गिनेन मयूरप्रमोदे बाणपक्षीयेरुक्तं इराजसभायाम्-

(४५) यद्यपि हर्षोत्कर्षं विद्वति मधुरा गिरो मयूरस्य । बाणविजृम्भणसमये तदपि न परभागभागिन्यः॥

राज्ञोक्तम्-यूयं गुणिषु मत्सरिणो यस्य शक्तिर्भवति किमप्यधिकं दर्श्यते । ततो बाणेनोक्तम्-मम इस्तपादौ छेदय, यथा नव्यान् करोमि । ततिश्छिनेषु चण्डिकास्तुतौ सप्तमाक्षरे नव्या जाताः । तथाप्युभयोविवादे राज्ञो-10 क्तम्-काश्मीरे श्रीसरस्रती विवादं भञ्जयति । यो हारयति तेन पुस्तकानि ज्वाल्यानि । इति प्रतिज्ञाय राजपुरुषैः समं काश्मीरगमने देव्या समस्याऽप्यन्त । पदे पृष्टे बाणस्य शीघ्रपूरणे मयूरस्य सविलम्बे-तथाहि-

(४५) दामोदरकराघातविह्नलीकृतचेतसा । दृष्टं चाणूरमल्लेन दातचन्द्रं न भस्तलम् ॥
मयूरेण पराभूतत्वादागत्य पुस्तकन्वालने श्रीसूर्यशतकपुस्तकेऽदग्धे उभयोर्मानदानैः राजप्रसादः ।

\$ २६) अन्यदा राज्ञा मिन्नसम्मुलं भिणतम्-पश्य भूमिदेवानां कीद्दक् प्रभावः १। मिन्नणोक्तम्-जिनशासनेऽपि

15 महाप्रमावोऽस्ति । यदि कौतुकं ततः श्रीमानतुङ्गाख्यं स्रिमाकार्य विलोकय । राज्ञोक्तमाकारयस्व । ततो मिन्नणा

गत्वा भक्तिवचनैर्दर्शनप्रभावार्थं निरीहा अपि तत्रानीताः । राज्ञो धर्मलाभाशिषं दत्त्वा यथोचितासनसमासीनाः ।

नयुर-वाण-प्रशंसापूर्वं राजोवाच-यदि भवतां काचिच्छक्तिरस्ति तत्किञ्चित् कौतुकं दर्शयत । गुरुभिरुक्तम्-अस्माकं

किमपि कार्यं निह । जिनमते मोक्षार्थं एवाभ्यस्यते । तथापि शासनोत्कर्षाय दर्शयामः । ततो राज्ञा तमसि

आपादमस्तकं चतुश्रत्वारिश्रह्णोहश्रंखलाभिनियंत्र्यापवरके श्विष्ट्वा तालकं दत्त्वा मोचिताः । ततो 'भक्तामरस्तवः'

20 कृतः । एकैकवृत्तपाठे एकैकनिगडभङ्गे निगडसंख्यया वृत्तभणनम् । स्रयो स्त्रकला जाताः । तालकं भग्नम्, स्वयं

कपाटोद्धाटने निर्गत्य सभायां राज्ञ आशीर्वादं ददुः । राज्ञाऽनेकस्तुतीः कृत्वा सविनयं नत्वा कृत्यादेशेन प्रसीदत्त । स्रिणोक्तम्-अस्माकं कापीच्छा निह । परं तव हिताय वृत्तः-जिनधमं प्रपद्यस्व । राजाऽङ्गीचकार । दान
पात्रीचित्यात्रिधा दानं देयं-जीणोंद्वारे(रं) नव्यविम्बकारणं चैत्यादिधर्ममादिश्य प्रभावनां कृत्वा स्तराः साथयं

गताः । तदाख्यातो 'भक्तामरस्तवः' अद्यापि सर्वोपद्रवहर्ता । अन्यदा कर्मवशात् सञ्जातकुष्ठोऽनशनाय धरणेन्द्रं

25 ससार । प्रत्यक्षीभूयायुःशेषतया धरणेन्द्रोऽष्टादशाक्षरं पार्श्वनाथमञ्चं दत्तवान् । स्रयः सर्वोपद्रवहरं तन्मश्रमाभितं
 'भयहरस्तवं' कृत्वा प्रनर्नवतां प्राप्ताः ।

§ २७) एकदा तन्नगरेशसैन्ये परदेशं प्राप्ते तद्रिपवस्तमल्पबलं ज्ञात्वा सम्भूय भूरिसैन्यैस्तन्नगरमावेष्ट्य तर्स्थुः। पौरजने व्याकुले, भयभीते राज्ञि, गोपुरेष्ठ पिहितेष्ठ राज्ञा बाण-मयूरादिष्ठ पण्डितेषु तदुपसर्गोपशमनायादिष्टेषु पातालप्रवेशार्थमिव भूमिमालोकयत्सु श्रीसरयो धवलगृहसूर्द्धानमारुद्ध 'भयहरं' प्रकटीचकुः। तत्प्रभावात् तेषु अवैरिषु स्तम्भितेषु गुरोराज्ञया तेषां घातमकुर्वन् सर्वस्वं हस्ति-हयाद्यं जग्राह नृपः। ततः स्तरं राजानं नत्त्याऽऽज्ञां प्रपद्य प्रसादं च प्राप्य स्वं स्वं स्थानं ययुः। ततो 'भयहरस्तवः' पट्यमानो भयहर्ता सर्वेषाम्। इत्यं प्रभावशां कृत्वाऽन्तसमयं प्राप्य श्रीगुणाकरस्र्रिं न्यस्य पदेऽनशनमरणेन स्रस्यो दिवं ययुः।

॥ इति श्रीमानतुङ्गसूरिप्रवन्धः ॥



७. माघपण्डितप्रबन्धः (Br.)

§२८) अथ दत्तसनोमांघस्योच्यते । माघस्य जन्मनि पित्रा जातकं कारितम् । आयुर्वर्षाणां चतुरशीतिः, परं प्रान्ते चरणशोफेन मृत्युः । पित्रा ऋद्विप्राग्भारकिलतेन षोडशवर्षादृक्क्वाँ दिनदिनसम्बन्धी लिट्टितो हारको द्रम्माणां मुक्तः । अतिव्ययवानपीयता सुखं निर्वहिष्यते । स प्रौढः सन् पिठतुं प्रवृत्तः । कवित्वं कृत्वा पितुर्दर्शयति । ईदशानि कवित्वानि कुरुषे, पूर्वकवित्वानां शतांशेनापि न प्रभवन्ति । पुत्रेण शिशुपालवधो नाम- किन्नं कृत्वा चुल्हकोपिर च्छन्नं धृतम् । एकदा पितुः पुत्तकं जीर्णप्रायं धृमेन कृत्वा दिश्तिम् । पिता वाचयन् शिरोऽवधूनन् आह-वत्स ! ईदशानि कवित्वानि कियन्ते । तेनोक्तम्—तात ! भव्यानि ? । किम्रच्यते । तिर्हं मया कृतानि । जनकेनोक्तम्—मया छलः कृतोऽत्स्ते इयता कवित्वसीमा जाता । अतःपरं तव कवित्वं न । स

अधीत्य पितर्युपरते विलसितुं प्रवृत्तः । जन्मपत्रिकां दृष्ट्वा सिश्खं हारकं व्ययीकुरुते ।

§ २९) तस्य भोजनृपतिना मालवाधीशेन मैत्री जाता। एकदा श्रीभोजेन मिलितुमाकारितो माघस्तत्र गतः।10 नृपेण सगौरवं धवलगृहे स्थापितः । स्नानं कुर्वता पण्डितेन मुखं कृणितम् । नृपेण भोकुमुपविष्टस्य दिन्यरसवती-समाना रसवती परिवेषिता । स ग्रुखमेव कूणयति । नृपेण चिन्तितम् स्वगृहे किमसौ ग्रुनिक्त । उत्थितः । पृष्टो नृपेण-रसवती की दशी ? । देव ! कदशनेनोदरं पूर्तम् । भव्यशीतरक्षा पार्श्वे हसंतिका च रात्रौ सुप्तः । पण्डितो नृपस्य नातिदूरे । रात्रौ पण्डितः शय्यायां पुनः पुनः पार्थे घातं करोति । नृपेण-किमसौ भ्रनिक्तं, कथं शेतेऽस्य गृहे ?। अवलोकनीयं गत्वा एतत्। प्रातरुत्थिते नृपेण पृष्टम्-सुखेन निद्रा समायाता ?। देव! रासभवद्भारितानां 15 निद्रा क्रुतः । दिनचतुष्कं स्थित्वा पण्डितेन नृपो मुत्कलापितः । राज्ञा श्रीमाले मोजस्वामिप्रासादः कारितः । तस्य पुण्यं पण्डितस्य प्रदाय पण्डितः सम्प्रेषितः । पण्डितेनोक्तम्-देव! कदाचिन्ममोपरि प्रसादं विधायासत्पुरे पाद-मवधारणीयम् । एवमित्यभिधाय सम्प्रेष्य नृपः प्रत्यावृत्तः, खगृहमायातः । इतो द्वितीये शीतर्तौ नृपः प्रौढकटकेन श्रीमालं प्राप्तः। माघेन सम्मुखं गत्वा नृपः खगृहे एव सकटकोऽप्युत्तारितः। नृपस्तु आवासमवलोकितुं प्रवृत्तः। स्थाने स्थाने विचित्रकौतुकानि पैश्यन्, स्थाने स्थाने धृपघटीपरिमलमाजिघन्, सञ्चारभूमिमतीव परिमल्ह्यां 20 दृष्ट्वा पृष्टवान्-किमेष देवतावसरोपवरकः ? । देव ! एष सञ्चारकोऽपवित्रः । नृपो लज्जितः । इतो मजनावसरे पूर्व मर्दनिकैर्मर्दनं दत्तं यथा नृपोऽतिरञ्जितः । स्नानपीठे खर्णमये महाविच्छित्या स्नानं कारितः। तदनु देवदृष्यसमानि नासानिःश्वासहार्याणि वस्नाण्याजग्मुः । महद्भा देवान् नत्वा भोक्तमुपवेशितः । खर्णस्थाले द्वात्रिंशत्कचोलकैर्द्वते मण्डिते श्वीरमयं पक्वान्नं परिवेषितम् । श्वीरतन्दुलमयः क्र्रः। एवं वटकान्यपि तस्यैव । अपराणि नानाव्यञ्जनानि परिवेपितानि । नृपश्चिन्तयित स-य ईदृशीं रसवतीं भुनिक्त तस्य मे रसवती कथं रोचते । भुक्तोत्तरं पश्चमु-25 गन्धिनामताम्बूले जाते वार्चां विद्धतो रात्रिरजिन । सर्वोपरितनभूमौ नृपाय पल्यङ्कः सिजतः । राज्ञोक्तम्-मित्र ! शीतकालं न जानीथ ? । देव ! जानीमः । चन्दनं सजितम् । नृपस्तत्र शय्यामलंचके । तत्र महान् तापश्चन्दन-मर्पितम् । तालवृन्तैर्विज्यमानस्य निद्राऽऽयाता । प्रातः पण्डितेन पृष्टम्-देव! शीतकाल उष्णकालो वा ?। उष्णकाल इति प्रत्युत्तरं ददौ । पण्डितप्रीत्या कियन्ति दिनानि स्थित्वा मुत्कलाप्य नृपः खपुरीं ययौ ।

(४६) न भिक्षा दुर्भिक्षे पति दुरवस्थाः कथमृणं लभन्ते कर्माण क्षितिपरिवृहान् कारयति कः।

अदत्त्वापि ग्रासं ग्रहपतिरसावस्तमयते क यामः किं कुर्मी गृहिणि! गहनो जीवनविधिः ॥ इति निर्वाहमिवमृत्रयेतो माघेन माघकाव्यपुस्तकमर्पयित्वा प्रिया माल्हणादेवी नाम्नी धारायां नृपसमीपे प्रिता—थदमुं ग्रन्थं ग्रहणकेऽङ्गीकृत्य लक्षत्रयं द्रम्माणां ददत । सा तत्र गता नृपेण शुद्धिः पृष्टा । पुस्तकम-पितम् । लक्षत्रयी याचिता । राज्ञा शलाका क्षेपिता । प्रातर्वर्णने पण्डितस्वरूपस्चकं काव्यं निस्सृतम्—

25

(४७) कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मदमुत्कः प्रीतिमांश्चकवाकः। उदयमहिमरिइमर्याति शीतांशुरस्तं हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः॥

नृपेण विमृत्य ही इति अक्षरस्य लक्षत्रयं दत्तम् । ग्रन्थस्तावत् द्रेऽस्तु काव्यं च । पण्डितपत्या नृपकुलादुत्तरन्त्या पण्डितविरुदान्यधीयानानां लक्षत्रय्यपि दत्ता । नृपेण पुनराहूयोक्ता-पुनर्द्रव्यं गृहाणेत्युक्तो- वाच-अधिकं नानायितमतोऽहं न गृह्णे । सा क्रमेण खगृहं प्राप्ता । यथा गता तथा आगता । पण्डितेनोक्तम् पुस्तकं राज्ञा किमिति नात्तम् ? । तया वृत्ते उक्ते पण्डितेनोक्तम् सत्यं आवयोगोंगो विधिना कृतः । अद्य त्वं परीक्षाशुद्धा निवृत्ता । एतावन्ति दिनानि चेतस्येवं विकल्प आसीत् यन्मे गेहिनी ममानुरूपा न ता । अद्य सन्देहो भग्नस्तव दानेन । यन्त्यया गृहदौस्थ्यं न गणितम् ।

(४८) अर्था न सन्ति न च मुश्रिति मां दुराशा दानान्न सङ्कचित दुर्रुलितः करो मे । याच्या च लाघवकरी खवधे च पापं प्राणाः खयं व्रजत किं परिदेवितेन ॥

इतो दर्भस्रस्तरसुप्तः चरणयोः श्वयथुर्जातः । अस्मित्रवसरे कोऽपि विष्ठः श्रुधार्था पण्डितावासे प्रविष्टः । भोजनं याचितम् । पण्डितेनोक्तम्-

(४९) श्चुत्क्षामः पथिको मदीयभुवनं पृच्छन् कुतोऽप्यागतः तिंकं गेहिनि! किञ्चिद्स्ति यदसौ भुङ्के बुभुक्षातुरः। वाचाऽस्तीत्यभिधाय सत्वरपदं प्रोक्तं विनैवाक्षरं स्थूलस्थूलविलोललोचनगलद्वाष्पाम्भसां विन्दुभिः॥

इतोऽर्थी विम्रखीभूय गतः। पण्डित आह-

(५०) ब्रजत ब्रजत प्राणा अर्थिनि व्यर्थतां गते । पश्चादिष हि गन्तव्यं क सार्थः पुनरीहराः ॥
इति कथनादनु प्राणैस्त्यत्यजे । पत्यानु सहगमनमकारि । इतः श्रीभीजराजो वित्तस्य करमीर्भृत्वा
20 त्वरितमाययौ । पृष्टम्-पण्डितः क ? । जनैर्वृत्तमुक्तम् । नृपः प्राह-रे रे इदं श्रीमालं नं, भिल्लमालमिदम् । यत्र
मम मित्रस्य मिय सत्यिष केनाप्युद्धारकेऽषि किमिष नार्षितम् । अतः पुरेष्विष [अप]वित्रमिदम् । शेषकार्याणि
तस्यार्थस्य व्ययेन विधायेति विमृशन् मनसि-

(५१) शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं गजभुजङ्गविहङ्गमबन्धनम् । मतिमतां च समीक्ष्य दरिद्रतां विधिरहो बलवानिति में मतिः॥

क्रमेण खपुरीं गतः।

(५२) उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायाम् । प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वह्निः तदपि न चलतीयं भाविनी कमेरेखा ॥

॥ इति माघपण्डितप्रबन्धः ॥

८. कुलचन्द्रप्रबन्धः (B.)

(५३) एकदा श्रीभोजो वीरचर्यायां भ्रमन् दिगम्बरं मठोपरिस्थं इति वदन्तमशृणोत्— (५३) तिकखा तुरिक्ष न माणिआ भडसिरि खग्ग न भग्गु । एह जम्म नग्गहं गयउ गोरी कंठि न लग्गु ॥



20

नृपेण चिन्तितम् - नेष सामान्यः । प्रातराहूय उक्तः - तव किं नाम ? । देव ! कुलचन्द्रः ।

(५४) देव! दीपोत्सचे रम्ये प्रवृत्ते दन्तिनां मदे। एकच्छत्रं करिष्यामि सगौडं दक्षिणापथम्॥ राज्ञा गृहिवेषं प्राहितः। इतो राजकुमारी तैसिन्ननुरक्ता जाता। सा एकदा वर्षारात्रौ प्राह-

(५५) नव जल भरिआ मग्गडा सजल घडुकह मेहु। इअ वारि जह आविसिइ तउ जाणीसिइ नेहु॥

द्वारस्थेन श्रुतम् । स कटकमादाय गूर्जरत्रोपरि गतः। पत्तनं भग्नम् । नृपस्तु नंष्ट्वा गतः। वलमानस्य स्तम्भनकौचार्यैर्घाटे रुद्धे, घाता जाताः। तेन सङ्कटस्थेन भोजं प्रति पत्रिकामादाय [नरः] प्रहितः। तत्र-

(५६) विस्फारस्फारधन्वा मृतयुरनुपदं पार्श्वयोदीवदाघः

क्ष्वेडानादः पुरस्तात् तपित च तपनो मूर्धि तापर्ज्ञतीवः। अन्तःशल्यं शिरस्सु स्थपुटगिरिनदी दुस्सहा श्चद् तृषार्ति-दुर्दैवादच जातं वजतु हि हरिणः कां दिशं कांदिशीकः॥

राज्ञा दृष्ट्वा 'कां' स्थाने 'किं' कृत्वा प्रहितः । स तु युद्धा मृतः ॥ इति कुलचन्द्रप्रवन्धः ॥

९. षड्दर्शनप्रबन्धः (B. Br.)

§३२) एकदा श्रीभोजराजेन दर्शनानि सम्मील्य उक्तम्- मोक्ष एकः पन्थानः पश्च । एकसम्मती भव । लिक्क्षताः । कः कं मन्यते । कः कं न । इतस्तैर्नृपो विज्ञप्तः-देव ! देवी भारती पहदर्शनानां सम्मता । सा तव 15 प्रत्यक्षाऽस्ति तां पृच्छ । नृपेण उपोषितेन पूजापूर्वं प्रत्यक्षीकृता । देवी उवाच- कथं स्मृता ? । नृपेणोक्तम्- मम तथ्यं कथय, किस्मिन्मार्गे यामि । देवी आह-

(५७) श्रोतव्यः सौगतो धर्मः कर्त्तव्यः पुनराईतः। वैदिको व्यवहर्त्तव्यो ध्यातव्यः परमः शिवः॥ इत्यभिधाय देवी अदृश्याऽभूत् । प्रातर्नृपेण सर्वे सम्भूय सत्कृत्य प्रहिताः॥ इति पहदर्शनप्रवन्धः॥

१०. नीलपटवध-प्रबन्धः (B.)

§३३) श्रीभोजराजवारके नीलपटा दर्शनिन आसन् । ते तु, एका स्त्री एकः पुमान् नीलीं दोटीं प्रावृत्य मध्ये नग्नीभूय विजहतः । एकदा धारायां प्राप्तासत्त्रापूर्वान् दृष्ट्वा सर्वः कोऽपि तेषां समीपे याति । ते त्वित्थं प्ररूपयन्ति—वयमीश्वरस्य तथ्याः सन्तानिन अर्द्धनारीश्वरत्वात् । इतश्च कौतुकाद् भोजपुत्री समागमत् । कर्त्तव्यं पृष्टम् । तैरुक्तम्—

(५८) पिब खाद च चारुलोचने ! यदतीतं वरगात्रि ! तन्न ते । नहि भीरु ! गतं निवर्त्तते समुद्यमात्रमिदं कलेवरम् ॥

तया व्याहतम्-भवन्मतमङ्गीकरिष्ये । नृपं मुत्कलापयितुं गता । ताताहं नीलपटानां धर्ममङ्गीकरिष्ये । नृपेण्र∕आहूताः, पृष्टाश्र− सुखिनः स्थ १ । मुख्येनोक्तम्−

(५९) न नद्यो मद्यवाहिन्यो न च मांसमया नगाः। न च नारीमयं विश्वं कथं नीलपटः सुन्वी॥
नृपेणोक्तम्- यूयं कियन्तः स्थ १। एकोनपश्चाश्चद् युगलानि। नृपेणोक्तम्- सर्वानप्याकारयत, अहं त्वद्भक्तो ३०
भविष्यामि। ते सर्वे मिलिताः। नृपेण पुरुषाः सर्वे मारिताः, स्त्रियश्च निष्कास्य मुक्ताः। अतस्तेषां वीजमपि
नाशितम्॥ इति नीलपटवधप्रवन्धः॥

ndira Gandhi Nationa Centre for the Aris

११. भोज-गाङ्गेययोः प्रबन्धः (B.)

्रूश) एकदा वाणारसीपतिः श्रीगाङ्गेयकुमारो गजसहस्र १ शत ४ एवं १४००, तुरङ्गमलक्ष ३ जीणसालाहीन्, द्वयं उद्घाटं एवं लक्ष ५, मनुष्यलक्ष २१; एवं सामध्या मालवपर्ति भोजं प्रति चचाल गोलातीरे
आवास्य स्थितः। इतो भोजन्गोऽपि तुरङ्गसहस्र ४४, मनुष्यलक्ष ५, गज २००; एवं सामध्या सम्मुखो गोदावरीतिरे आवासान् ददौ। इतो गाङ्गेयस्य पण्डितेन परिमलेन भोजं प्रति 'बकोटित' काच्यं प्रहितम्। नृपः कुपितः।
परं किं कुरुते। इतो भोजेन काष्टधवलोपिर स्थित्वा विलोकितम्। बहु सैन्यं दृष्टा छित्तिपमहामात्यं सन्ध्यर्थमप्रैपीत्। स तत्र नृपसदिस गतः। नृपेणोक्तम्—अरे! तव स्वामी मत्सैन्यं न पश्यित, यदिभमुखः समाययौ?।
देव! सैन्यस्य को गर्वः?। इति वार्त्तायां सत्यां कटके कलकलं नृमोऽश्रोपीत्। पृष्टम्—रे! किमिदम्?। देव!
हस्ती परवशो जातस्तस्य कलकलोऽयम्। नृपसदाकण्यं उत्थाय काष्टपञ्जरे प्रविश्य ग्रजार्गलां ददौ। छित्तिपस्तु
विश्वतेपसृत्य 'कथिमिहे'त्यायाँ वाणहीतले इङ्गालेन लिखित्वा जनमप्रेपीत्। स उपानहं नृपायादर्शयत्। नृपः
सज्जीभूय गाङ्गेयसैन्ये पपात। सर्वमात्तम्। नृपोऽप्यन्तस्थो धृतः। ग्रुवर्णानिगहे क्षिष्ट्वा गजमिथरोप्य धारायामानीतः। धवलगृहेऽपरे सिंहासने निवेशितः। पण्डितपरिमलोऽपि राजवर्ग्यण सहायातः। राज्ञा भोजेनोक्तम्—
पं० उपविश्वत । परमासनं न मोचयति। "इह निवसित मेरुः शेखरो भूधराणां०"। भोजेनोक्तम्—कोटकः (१)।
किं तस्य चरितें(तं)। मं(पं)हितेन "अयं वरामेके०" इति उक्ते "जन्मस्थानं न सल्ल विमलं०" इत्युक्तवता—
विश्वत उक्तः—पारितोपिकं याचस्य। देव! अयं नृपतिर्ग्रुच्यतम्। भोजेन सिंहासने निवेश्य तिलकं कृत्वा
पुनर्वाणारसीराज्ये प्रहितः।। इति भोज-गाङ्गेययोः प्रवन्धः।।

१२. भोजदेव-सुभद्राप्रबन्धः (B.)

§ ३५) इतो गोपगिरीश्वरी नरवर्मदेवस्तत्सुता सुभद्रा । सा भोजराजस्य 'अभिनवार्जुन' इति विरुदं पठ्यमानं श्रुत्वा जनकं प्राह—तात ! मां प्रेपय । भोजो राधावेधं कृत्वा मां परिणयते, विरुदं वा सुश्रति । सा
20 निर्वन्धे जनकमापृच्छ्य तुरगसहस्रैर्द्धाद्यभिः सह चचाल । नृपाग्रे कथापितभ्—यदृहं त्वां वरीतुमागतेति । श्रुत्वा
नृपश्चिन्तातुरो जातः । सा तु गोदावरीतीरमेत्य स्थिता । राधावेधं कुरु विरुदं वा त्यज । एवं श्रुत्वा नृपः
सम्मुखं प्रयाणमकरोत्, अभ्यासमार्व्धवांश्च । सर्वः कोऽपि कौतुकान्वेषी सन्धेर्वार्गामिष को न विधत्ते ।
षण्मासान्ते तथा कन्यया भर्तितः साहसमवलम्बय गोदावरीतीरमायातस्तत्र राधावेधो मण्डितः । तस्याधसौलकडाहिरुत्कलित । नृपस्तस्यास्तीरे स्थानं स्थितः । कवीन्द्रैर्नानावर्ण्णनमारब्धम् । तत्र वृद्धसरस्वतीति नाम्नाऽ25 चार्या नृपसेवकाः सन्ति । "तैर्विद्धा विद्धा शिलेयम्०" इत्युक्तम् । नृपेण राधावेधे कृते कन्यया वरमाला क्षिप्ता ।
नृपेण काव्यस्य दूषणं पृष्टे कोऽपि न वेत्ति । नृप आह—"विद्धा विद्धा" इति मत्वा मया चिन्तितम्—मम् कार्य
• सृतम् । "भवतु कार्मुककीडितेन" अनेन भोजस्य पण्मासान्ते मृत्युः । स्वामिन्निति । प्रसीदेति । अस्पदाचार्याणां
पण्मासमायुः । "धारा ध्वस्ता" इति प्रकटम् । मालवश्चाप्रधानो विनंक्ष्यति । तदनु सा परिणीता । पष्टे मासे
नृपोऽतीसारान्मृतः । सुभद्रया सहगमनं कृतम् ।

30(G.) सङ्ग्रहगतं भोजनृपवृत्तम्।

§ ३६) *.....भोज जातके "पंचाशत्पंच वर्षाणि" इति श्लोके तेन गणको निषिद्धः। इतश्र मुझेन स एव गणकः सन्तानहेतोः पृष्टो भवान् अपुत्र एवेत्यवादीत्। श्रावणसुदि पंचम्यां प्रथमप्रहरे यो भवत्समस्यां प्रयिता

^{*} एतस्य सङ्ग्रहस्यात्रेकं पत्रं त्रुटितं तसिन्नस्य वृत्तस्य कियान् भागो नष्टः।

स एव राजा भविता । इति निर्णीते दिने कस्यापि सौधस्योपिर पतिः कृष्णः पत्नी गौरीति वीक्ष्य राज्ञः समस्या सम्रत्यना-'दुल्लउ सामलउ धण चैपावन्नी०।' केनाप्यपूरिते भोजेन पठता पूरितेति-'ल्ल्ज्ज्ञ कणयारह कसवट्टइ दिन्नी०।' पण्डितेनोक्तम्-मया पूरिता। सा राज्ञो दर्शिता। अर्द्धराज्ययोग्यं तं ज्ञात्वा भोजं विहाय यावत् युवराज्याभिलापश्चिन्तयति, तावज्ञालन्धरेण राज्ञी सुस्नाता प्रोक्ता। ततो निर्धृणश्चम्मा मारणायाप्पितः। भोजेनोक्तम्-''मान्धाता स महीपतिः०।'' इति तुष्टेन पुनर्मोचितः।

- § ३७) अन्यदा श्रीभोजेन श्रीपत्तनाधिपतेः श्रीमीमस्य गाथाहस्ताः पण्डिताः प्रेपिताः । तथा गाथा-"हेलानिइलिय॰ ॥" तत्प्रत्युत्तरेऽज्ञायमाने नृपो विषि(ष)ण्णो जातः । पण्डितैस्ततो विगोपनाय गाथायां संस्कार्य-माणायां सूरिभिरुक्तं-जीवमाना कथं मार्यते । भविता भवतां स्त्रीहत्या । इति निषिद्धे राज्ञा सन्मान्य गुरवः प्रत्युत्तरं पृष्टाः । तथा चोक्तं-"अंधयसुयाण कालो० ॥" इति प्रत्युत्तररुष्टेन भोजेन पत्तनोपरि बाह्यावासा दत्ताः । श्रीमीमेन तत्परिज्ञाय डामरनामा सान्धिविग्रहिकः प्रहितः । राज्ञा मोजेन तं कुरूपं वीक्ष्य हसितम् । उक्तं च-10 ''योष्माकाधिप॰ ॥'' ततो राज्ञा स्नानोत्तीर्णोन गलद्भिः केशैः पृष्टं-मत्त्रिन्! भीमडाको नापितः किं करोति । तेनोक्तं-अश्वपति-गजपति-नरपति-नृपत्रयस्य शिरांसि भद्रितानि । चतुर्थस्य शिरसि साद्रीकृते क्षरमा-चालयन्नितः । रिञ्जितेन कौतुकिना राज्ञा स कौतुकवादी आत्मनः समीपं स्थापितः । नित्यं कौतुकवकृत्वेन राजानं रञ्जयति । अन्यदा राजविडम्बननाटके कारिते भीमे रूपे मार्दंगिके मृदंगं वाद्यमाने राज्ञोक्तं-मन्त्रिन् ! भीमडाकस्य करौ मृदंगपुटे भव्यौ पततः । तेनोक्तं-देव! पुरा भीमेन पार्वतीपुरस्ताण्डवे क्रियमाणेऽभ्यस्तम् । एवं 15 विधावेव भीमस्य करों कठोरों वर्तेते । अन्यदा तैलपदेवरूपे समागते मन्नी प्रोक्तः-मन्त्रिन्! भवदेशीयोऽयं राजा उपलक्ष्यताम्। एवमुक्ते तेनोक्तं-अभिज्ञानं नास्ति। "मत्स्वामी तैलपदेवो यदि०॥" इति प्रोक्ते रुप्टेन राज्ञा पितृच्यवैरीति तदैव सैन्यं तैलपदेवस्थोपरि चालितम् । चलिते राज्ञि मित्रणोक्तं-राजन् ! श्रीमीमः पार्ष्णिघातं विधास्यति । राज्ञोक्तं-यात्वा वारय । वचनेन न स्थास्यतीत्युक्ते ततः अश्वसहस्र ४, जात्यगज ४, सुवर्णालक्ष ९-एतत्सर्वं प्राभृते प्रेपितम् । मन्त्री सार्थे गृहीतः । तस्यैव बुद्ध्या योजन १६ शिक्षितगतिभिर्नवभिः तुरगसहस्तैः 20 पाद्रदेवतां नमस्कुर्वन् तैलपदेवो धृतः ॥
- §३८) एकदा मिश्रहामरस्याग्रे उक्तं-विद्वान् यावान् लोकः श्रीमालवकेऽस्ति, न तादृशोऽपरदेशेषु । ततो हामरेणोक्तं-नृप! यादृशो लोको गोपाल-विश्वयादिको विद्वानिस्त गौर्जरे, न तादृगत्र । नृपो मौनेन स्थितः । हामरेण चिन्तितं-राज्ञा धूर्त्तत्वेन स्थितम् । पुनः कदाचिदेषा वार्त्ता कर्त्ता । अतो भाणितं स्वनृपाग्रे । यदेका विदुषी स्वीपण्डिता देशसीमायां स्थाप्या । एको विद्वान् गोपालरूपो देशसीमायां स्थाप्यः । ततोऽन्यदा भोजे-25 नोक्तं-आनयत । प्रधानरानीतौ तावेव । प्रथमभेटायां राज्ञोक्तं-भण पण्डित! वर्णय किंचन । स आह"भोष्यराय गलि कांठुलउ भण० ॥" प्रशंसितो राज्ञा । सा उक्ता-इह किं । साह-"पृच्छंति० ॥"
- § ३९) अन्यदा निशीथे भोजराज्ञा परिश्रमता कुलचन्द्र नामा क्षपणक एवं पठन् श्रुतः—"तिक्ला तुरिअ न मा०॥" "नव जल भरिआ०॥" ततो राजा निजपुत्रीखरूपं दृष्ट्वा प्रातराकार्य गूर्जरदेशोपरि सेनाधिपत्यं दृज् । तदा तेनोक्तम्—"देव दीपोत्सवे०॥" ततो गूर्जरदेशो विनाशितः समग्रोऽपि । श्रीपत्तनचतुष्पथे 30 कपर्दका उप्ताः । ततस्तखागतस्य राज्ञोक्तम्—रम्यं न कृतम् । अद्यप्रभृति मालवदेशदण्डः श्रीगूर्जरं यास्यति । कपर्दका मालवदेशीयनाणकम् ।

६४०) धारानगर्यां सीता नाम रन्धनी । केनापि दूरदेशान्तरिणा तस्या गृहेऽत्रं कारितम् । तया निशि घृत-कुम्पकव्यत्ययेन कांगुणीतैलकुम्पकात् तैलं परिवेषितम् । स मृतः । तं तथा विलोक्यापवादभीतया तया तदे-

20

वान्नमुपभुक्तम् । तत्त्रभावात्सारस्वतमजिन् । राज्ञो मानपात्री सीता पण्डिता जाता । एकदा राज्ञा तस्याः स्तनयुगं वीक्ष्यापाठि-

(६०) किं वर्ण्यते कुचद्वनद्वमस्याः कमलचक्षुषः । सप्तद्वीपकरग्राही भवान् यत्र करप्रदः ॥
सीतया उत्तराई पठितम् । तथा राज्ञा पुनः पठितं-"सुरताय नमस्तस्मै०॥" अन्यदा तर्या जालान्तरे
वन्द्रकरस्पर्शे इदमपाठि-"अलं कलंकशृंगार०॥"

§४१) अन्यदा राजपाटिकायां गच्छतो राज्ञो भोजस्य सर्वैरिप नमो विहितम्। परमेकेन पुरुषेण हट्टमध्य-स्थितेन राजा न नमस्कृतः। ततो राज्ञा तत्सम्मुखमालोकितम्। तेनांगुलित्रयमूर्ध्वांकृतम्। राज्ञा चिन्तित्म्-कि-मनेनांगुलित्रयेण का सञ्ज्ञा विहिता। द्वितीयदिने तथैव तेनांगुलिद्वयम्, तृतीयदिने एकांगुलिः। आकार्य राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तं-राजन्! दिनत्रयं चूणिरिस्त, किं राज्ञा। इति तुष्टेन तसे वर्षाशनं दत्तम्।

§ ४२) केनापि पण्डितेन श्लोकद्वयमिदमपाठि— "ग्रासादर्द्वमिप ग्रासमर्थिभ्यः ।। १॥" प्यदनस्तमिते सूर्ये ।। २॥"

एतत् इयमपि राज्ञा भोजेन कुण्डलयोः सम्रत्कीर्णम् । इयसापि दाने लक्षइयी दत्ता ।

§४३) श्रीभोजेन सिद्धरससिद्धिहेतोः सुवर्णसप्तकोटीर्भक्षिताः । रित्तकामात्रापि न सिद्धिरजनि । ततो रस-विडम्बननाटकममण्डि । तत्र पात्राण्यागत्य विजल्पन्ति−

(६१) कालिका नट्टा नट्टा कस्स कस्स नागस्स वा वंगस्स वा। नहि नहि धम्मंत फुक्कंत अम्ह कंत सीसस्स कालिम...॥१॥

इति राजा हसति । अत्रान्तरे सिद्धरसयोगी तिन्नशम्य समागतः । प्रदीपिकाधूमवेधेन राज्ञस्ताम्रमण्डिका सुवर्णीकृता । राज्ञा दृष्टं किमेतिदिति ? आन्तेन नाटकनिवारितम् । राज्ञोक्तं—तदा भोक्ष्ये यदा स सिद्धयोगी मिलिज्यति । एवं दिनत्रयेण मिलितः । तेनोक्तं—राजन् ! रसो दैवतम् ।

(६२) अत्थि कहंत किंपि न दीसइ। [नितथ] कहउ त सुँहगुरु रूसइ। जो जाणइ सो कहइ न कीमइ। अजाणं तु वियारइ ईमइ॥

इत्यवगत्य मानितः।

१४४) श्रीभोजेन लोकोपकारकरणाय संहोत्तरशतवैद्यप्रासो विहितः। चतुष्पथचत्वरके जयघण्टा वन्धापिता। इत्युक्तं च-रोगिणा घण्टा वादनीया। यथा वैद्या मिलन्ति, चिकित्सां कुर्वन्ति च। अपरं च रोगिणा वलहङ्केष्ठ भेषजान्नादि प्राह्मम्। एवं कियति काले गते सित एकदा कोऽपि जलोदरी समेतः। घण्टारवादागतेन भिषजाऽसाध्यः कथितः। ततो रोगी राज्ञो मिलितः। राज्ञापि कृपयोक्तं—वैद्या! असुं जीवयत। राजन्! असौ न जीवत्येवासाभिः। इत्युक्ते दीनारपंचशतीं दत्त्वा रोगी प्रस्थापितः। स निदाघे मध्यन्दिने सार्थरहिते मथि वटच्छायायां विश्रामायागमत्। तत्र सप्प एक आगच्छन् तहुर्गन्धेन नष्टः। स च विषि(प)ण्ण आत्ममरणाय पृष्ठे धावितः। ततस्तेन सप्पवान्तगरलिह्मार्कपत्राणि भक्षितानि। तैविरेको लगः। ततः कयाचिन्नायिकया स्वगृहं उगनित्वा निरामयो व्यधायि। पुनर्व्याद्वत्य घण्टारवो विहितः। तन्नादागतैर्भिषग्भितः सज्जं वीक्ष्य प्रोक्तं—त्वया कथं घण्टारवोऽकारि। तेनोक्तं—मम राजैव वेत्ति। तैस्तत्रानीतः सः। राज्ञा पृष्टः—को रोगोऽस्ति?। तेनोक्तं—अहं वैद्यप्रकः स एव जलोदरी। त्वत्प्रसादाजीवितः। किमेतदिति दोषज्ञवैद्यसुख्येनोक्तं—स एवायम्। परमेकोषध-साध्य एव। तदौषधं कर्म्ययोगेनैव मिलितम्, नार्थेन। किमोषधम्?। राजन्! निदाधमध्याहे कृष्णसप्पस्ययंसुक्त-गरलिह्मान्यर्कपत्राण्येव। तदौषधं विना यदि जीवितो भवति तदा मम काष्टानि। इत्युक्ते राज्ञा पृष्टं—किमेहो?। अत्रोक्तमेवमेव। ततो राज्ञा द्वयसापि प्रसादो दत्तः।

- §४५) अन्यदा डाहलदेशीयकर्णमात्रा देमतया सिद्धयोगिन्या प्रहरं यावत् शुभलप्रकृते प्रसवसमये कपा-लासनेन गर्भो धृतः । कर्षो जातः । सा तु मृता । शुभलप्रप्रभावात् षद्त्रिंशद्धिकशतराजचकाधिपत्मे किय-माणे राजा रोदिति । मन्त्रिभिः कारणं पृष्टम्-"मा स्म सीमन्तिनी काचित्०॥"
- § ४६) अन्यदा श्रीकर्णेन श्रीभोजं प्रति कथापितम्-यत् भवतश्चतुरुत्तरशतं प्रासादाः, गीतवद्धप्रवन्धाश्च वर्त्तन्ते।अतस्तुरगद्दन्द्वयुद्ध-विद्यात्यागयुद्धेन मां विजित्य एकं प्रासादं प्रवन्धाधिकम्रुररीकुरु । ततः पंचाशद्धस्त- ज्ञ्रासाद्प्रतिज्ञायां भोजे जिते मित्रिभिराह्यमाने शरीरापाटवे सित घाटमार्ग्गेषु बद्धेषु रुद्धेषु श्रीभीमेन श्रीकर्णस्य शुकचर्णेन कृत्वा लेखः प्रस्थापितः । "अंबय फलं० ॥" इति यौगपद्येन मालवभंगे कृते भागहेतोर्डामरेण श्रीकर्णो बन्दी कृतः ॥ इति विविधा भोजनृपप्रवन्धाः ॥

१३. धाराध्वंसप्रबन्धः (B.)

§ ४७) मालवमण्डले उज्जयिनी पुरी अपरा धारा । तत्र राजा यशोवर्मा । इतश्च पत्तने श्रीजयसिंहदेवः । स 10 मालवं जेतुं प्रयाणमकरोत् । समीपभूमौ गतः प्रतिज्ञामकरोत्-यद् धारां लात्वा भोक्ष्ये । इतो धारायां गन्यृति ५ मध्येऽयोमयाः क्षुरिकाः क्षिप्ताः सन्ति । प्रतोल्यो दत्ताः । कपाटेषु योजितेषु सम्मुखानि नाराचानि । तत्र गज-स्याप्यवकाशो नास्ति । धारायाः प्रत्यासन्नैरि भवितुं न शक्यते । अथ सिद्धराजप्रधानैः कणिकाया धारा कृता । तसा भङ्गे ५०० परमारा युद्धा मृताः। द्वादशवार्षिके विग्रहे सिद्धनाथे खिन्ने वर्व्वरको वेतालः प्राह-देव ! यदि यद्मः पटहः करी किराडूवास्तव्यो जेसलपरमारस्तत्र प्रेष्यते, गजारूढेन तेन धारा गृह्यते अन्यथा न । राज्ञोक्तम्-15 स करी कास्ते ? । कान्त्यां मदनब्रह्मनृपतेरित । जयसिंहदेवस्तु कियता परिकरेण तत्र गतः । वर्षाकालोऽस्ति । पुर्या द्वारे स्थितः। मांइदेवमत्रिणो मिलितः। आदिश्यतां कार्यम्। नृपदर्शनमवलोक्यते। नृपो महानवम्यां विना दर्शनं न ददाति । जयसिंहदेवः स्थितः । इतो गाढे घर्मेऽभिजायमाने नृप उपरितनभूमौ आकाशे प्राप्तः । पुरम-वलोक्य पुराद् बहिर्दशं ददौ । मदनकपटैः कृष्णान् चतुरकान् दृष्टा प्राह-अरे! पूर्वारे किमिदं दृश्यते ?। देव! गूर्जरत्रानुपतिर्देवदर्शनार्थी प्राप्तोऽस्ति । अरे! नृपो न किन्त्वेप कवाडी । य एवंविधे वर्षाकाले भ्राम्य्रति । 20 आकार्यताम् । जयसिंहदेवस्तूपायनमादायाययौ । श्रीमदनब्रक्षेण राज्ञा सत्कृतः । आगमनकारणं पृष्टम् । राज्ञो-क्तम्-यशःपटहः करी विलोक्यते । किमर्थम् ? । देव ! तेन विना द्वादशवार्षिको विग्रहो न भज्यते । राज्ञो-क्तम्-गजानानयत । जनैरुक्तम्-प्रसिद्धानां मध्ये स नास्ति । सिद्धराजः कृष्णवदनो जातः । इत एकेनाघोरणे-नोक्तम्-देव! स यशःपटहः करी । तं समानाय्यत । नृपेणोक्तम्-यद्यम्रना कार्यं सरित तदा गृहाणान्येपि हस्त्यश्चाद्यः । देव ! पूर्ण्णमनेनैव । राजा परिधाप्य करिणं दत्त्वा चोक्तम्-अतः परं विग्रहो न कार्यः । यतः 25 खल्पायुषि जीवलोके राज्यस्य सौरूयं नानुभूयते तत्तस्य को गुणः । नृपस्तु धारायां गत्वा सगौरवं जेसलपरमार आहूतः । तं दृष्टा चारणेनोक्तम्-

(६३) तुह मूंडिए घणेहिं धार न लीजइ कर्णउत्त!। जिम जे हेडे(?)प्रऊंचेहि जोइ न जेसल आवतउ॥

र्स यशःपटहमारुख प्रतोलीं गतः। कपाटयोर्नाराचानि सम्मुखानि तैः करी विध्यते। स पश्चात् स्थितः। जेस-30 लेनं हिकतः। करी कुपितः। कपाटाध ईपत् शुण्डाप्रवेशं प्राप्योद्धृतवान्। प्रतोली अतिबलेन पतिता। धारा गृहीता। नृपतिर्यशोवर्मा धृतः। श्रीजयसिंहदेव उपकारिणो जेसलसौर्द्धदेहिकं कृत्वा वलितः।

§ 8८) यावत्क्रमेण वृद्धनगरमायातस्तत्र ब्राह्मणैः प्रवेशोत्सवे कारिते श्रीयुगादिदेवप्रासादाग्रे नृषे प्राप्ते, द्विजैरुक्तम्-देव! देवं नमस्कुरुत । किमसौ ब्रह्मा १ । देव! असौ युगादिदेवप्रासादः । किमत्रापूर्वम् १ । देव!

असाकं पुरे एप देवो मुख्यः । नृपस्तु मध्ये गत्वा देवं नमस्कृत्य ध्वजां प्रासादोपरि दृष्ट्वा जनानाह—मया मालवे स्त्रमहाकालं विना ध्वजा कापि न दृष्टा । अतः कथमत्र १ द्विजैरुक्तम्—उत्तारके चलत यथोच्यते । ततो नृपतिर्मक्षदेवकुले गत्वोत्तारके गतः । तद्व ब्राह्मणैः श्रीयुगादिदेवभाण्डागारात्कांस्यतालाई गोष्टिकेरानीय नृपाय दिश्तिम् । देव ! असौ स प्रासादो यत्रैवं कांस्यतालान्यासन् । एवं प्रासादाः २१ सकलशा भूगताः सन्ति । एष इद्वाविश्वतितमः । नृपस्तु चमत्कृतः । देवायाधिकं ग्रासं दन्त्वा पत्तनं गतः ।। इति धाराध्वंसप्रबन्धः ।।

१४. सिद्धराजौदार्यप्रबन्धः (B.)

§ ४९) अथैकदा गुप्तिस्थाय यशोवर्मनरेश्वराय सिद्धराजेन पत्तनं दर्शितम् । तेन प्रासादपरम्परां दृष्ट्वा उक्तं च-देवासाकं वैरं सुखेन वलिष्यति । कथम् १ । एषु देवकुलेषु मानाशीतो प्रासोऽस्ति । पाश्चात्यास्तं लोपयिष्यन्ति । अतो देवद्रव्यभक्षणाद्विनक्यन्ति । सहस्रलिङ्गं दृष्ट्वा प्राह-वयं देवद्रव्यभक्षकाः, यूयं शिवस्नातजलपायिनः । अत 10 एवावां तल्यौ ।

> (६४) न मानसे माद्यति मानसं मे पम्पा न सम्पाद्यति प्रमोदम्। अच्छोद्मच्छोदकमप्यसारं सरोवरे राजति सिद्धभर्त्तुः॥

§५०) अथैकदा सिद्धनृपितर्नगरचिरतं ज्ञातुं छन्नं अमित सा । व्यवहारगृहश्रेणौ एकसिन्नावासे बहून् दीपानालोक्य प्रातस्तस्याकारणं प्रहितम् । तेन भयभीतेन कारणं पृष्टम् । आकारकेणोक्तम्-नाहं जाने । स गतः । 15 नृपेण पृष्टम्-कियन्तस्ते गृहे दीपाः १ । तेनोक्तम्-चतुरशीतिः । नृपेण भाण्डागारात्षोडशलक्षान् दत्त्वा ध्वजा कारिता, दीपका विध्यापिताश्च ।

१५. मद्नब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीतिप्रवन्धः (B.)

§५१) कान्तीपुरी सर्वपुरश्रेष्ठा । तत्र चतुरशीतिश्रतुष्पथानि । चतुरशीतिर्जेर्नाः प्रासादाः । तावन्तो माहे-श्वराः । तावन्त्यो वाप्यः । ८४ उद्यानानि । ८४ सरोवराणि । एवं ८४-८४ं स्थानानि । तत्र मदनब्रह्मा राजा । 20 तस्य धवलं गृहम् । योजनप्रमाणः प्राकारस्तत्र धवलगृहं सप्तदशभूमिकम् । तस्य पाश्चात्यप्राकारमध्ये सर्वऋतूपयोगि उद्यानम् । तत्र सप्त[द्र्ञ ?]भूमो गवाक्ष ४ । आदौ विमानविश्रमः पूर्वस्थाम् । उत्तरस्यां कैलाशहासः । दक्षिणस्यां पुष्पाभरणः । पश्चिमायां गन्धर्वसर्वस्वः । एते चत्वारो मुख्या गवाक्षाः । सर्वे स्वर्णमयाः । नानाकौतुकोप-शोभिताः । अपरे ११६ । एवं १२० तहुर्गो । वाप्यश्रतस्रश्रतुर्दिश्च । क्षीरोदवापी १, कमलकेदारा २, हंसविश्राम-वापी २, सुधानिधिः ४ एवं । तदनु पुरमध्ये चन्द्रज्योत्स्ना तटाकिका धवलगृहप्रवेशप्रत्यासन्ना नानारतैर्निबद्धा । 25 तस्याश्रतुर्दिक्षु वाटिकाधारागिरिः सर्वर्तूपयोगिभिर्वृक्षैर्विराजितः । तस्य राज्ञोऽन्तःपुरसहस्र ५ । एवं ३६००० प्रिंड-विलासिन्यः । मुख्यदेव्यश्रतस्रः । बावन १, [चन्दना २,] सुमाया ३, सींघण ४ । बावनदेवीवाहिगि-सुगति १, इंसगित २, सुललित ३, लीलावती ४ मुख्य। चन्दनावाहिगि ४ साऊ १, सुसीला २, दक्षमणी ३, वछमा ४। सुमयावाहिगि ४-कांऊ १, कपूरी २, कामल ३, कस्तूरी ४। अमृतमयी १, अमृतवत्सला २, वचन-वत्सला ३, सहसकला ४-सींघणदेवीवाहिगि । मेरी १, हम्मीरी २, फत् ३, फल्र ४-एता मुख्याः राह्यः 30 प्रसादपात्राणि । आलि १, आलित २, अलिव २, अलवेसिर ४, वील् वामणी कौतुकपात्राः । गज ३३३०, तुरंगम लक्ष ५, पदाति लक्ष २१। सर्वमित्रिश्रेष्ठो मांईदेवः सर्वग्रुद्राधिकारी । सेनापतिः सांईदेवः । बार्ओलगउ माधवदेवः । तथा वर्षमध्ये सर्वावसरः २-एको महानवस्याम्, अपरश्रैत्राष्टस्याम् । एवमिन्द्रसमानो राज्यं पालमृति । सोलही सोल १६ नृत्यं सदा नृपाप्रे कुर्वन्ति ।

६५२) एकदा गूर्जरत्राधिपतिर्जयसिंहदेवी दिग्विजयं विधाय व्यावृत्तः कान्तीपरिसरे प्राप्तः । चिन्तितम्-मम रणश्रद्धा केनापि नापूरि । "पुष्पेषु जाती नगरेषु कान्ती ..." सा तावद्विलोकनीया । परिग्रहोऽप्यतु-त्साहोऽपि नृपमनुययौ । क्रमेण पुरीद्वारभूषावावासान् दत्त्वा स्थितः । मैध्ये कोऽपि न वेति । नृपेण वहिःस्थेन पुरीप्राकारे केनककपिशीर्षाणि देष्टानि । प्रासाददण्डकलशैः सर्वसुवर्णमयी लंकेव भाति । सिद्धराजेन चिन्तितम्-वयमविमृत्रय प्राप्ताः । इतः सेनानीः सन्नद्धीभूय पुराद्घहिर्निर्गत्य फेरकं दत्त्वा मध्ये याति । अमात्येन पुरीरोधः 5 कृतः । सैन्यसामग्री च सर्वा विहिता । इतो मित्रणा लेखद्वारेण नृपो विज्ञप्तः-देव ! किमपि सैन्यं द्वारि केनापि हैतुनाऽगृतमस्ति । नृषेणोपरितनभूमिश्यितेन दृष्टम् । द्वारावलगकस्य प्रति स्वरूपपत्रमर्ष्पितम् । मन्त्रिणा स्वरूप-मालोक्य षोडशतुरङ्गमानपरवस्तु नृपयोग्यमर्पयित्वा माधवदेवद्वारावलगकः प्रहितः। स सिद्धनाथं गतः। नृपेणो-क्तम्-किमिदम्?। मन्त्रिणाऽतिथ्यं भवतां प्रहितम् । प्राघुणका युयं सत्कारार्हाः। तृपेणोक्तम्-वयमातिथ्यार्थिनो न, किन्तु युद्धार्थिनः । स तत् श्रुत्वा मत्रिणे निवेदितवान् । मत्रिणा नृपो विज्ञापितः । राज्ञा पत्रकेण द्वारि 10 कथापितम् । भव्यमेतत् । आगामिके मङ्गलवारे तव श्रद्धां पूरियावः। मित्रणा द्वारि रणक्षेत्रं नृपस जयसिंह-देवस्य वचनात्सजीकृतम् । चतुर्दिक्षु वृक्षादि क्षत्रियैश्छित्रम् । मित्रणा युद्धार्थे सैन्यसामग्री कृता । नृपादेशमेव विलोकमानिस्तष्टिति । नृपस्तु किमपि न कथापयित । इतो निर्णातिदिनोपरि जयसिंहदेवेन जगदेवस्य परमारवंशो-द्भवस्य पट्टबन्धः कृतः । पश्चद्श चान्येऽपि तत्सदशाः सजीकृताः । इतो मङ्गलवारदिने नृषः प्रवृद्धो दन्तशौचं स्नानं शृङ्गारं च विधाय देवतावसरमकरोत् । तत्र प्रेक्षणीयं जातम् । पश्चाद्रसवती निष्पना । भोजनं विधाय 15 ताम्बूलमादाय तुरगान् सजीकृत्य खयं सन्नाहं जगृहे। षोडश नार्यः सन्नाहं ग्राहिताः। तदनु ताभिर्युक्तो युवत्या भृतातपत्रो द्वाभ्यां वीजितवालव्यजनः स्थाने २ प्रेक्षणकान्यवलोकयन् पुर्यन्तरेवाष्टौ दिनानि कौतुकेनैव [निर्गम्य] नवमदिने बहिरायातः । इतो रणभूमौ पटो विधृतोऽन्तरा तावज्ञयसिंहदेवसुभटाः सन्नश्च समाजग्धः। याव-त्पटोऽपाकृतः,, तावन्नारीवेष्टितं नृपं दृष्ट्वा जगदेवाद्याः पश्चाद्ववतुः । नृपेणोक्तम्-किमिति भग्नाः स्य । जगदेवे-नोक्तम्-केन सह युध्यते ? । खयमवलोकयतु देवः । तावज्ञयसिंहदेवः खयं सम्मुखे धावितस्तुरङ्गं मुक्ता पाद-20 चारेण । मदनब्रह्मनृपोऽप्युत्तीर्णः । द्वयोरालिङ्गने जाते द्वयोरिप प्रीतिर्जाता । प्रवेशमहोत्सवे जायमाने सिद्धनाथ-स्त्वनेकानि कौतुकानि विलोकयत्रनेकानि वाद्यानि शृण्वंश्र राज्ञा समं प्रतोत्यामागतः । एवं नविर्दिनैश्रन्द्र-ज्योत्स्नातटाकिकायां प्राप्तौ । तत्र स्नातौ । सुवर्णवेष्टितपादपां धारागिरिवाटिकामवलोकयन्तौ धवलगृहद्वारमा-यातौ । मत्रिणा कारितमङ्गलोत्सवौ धवलगृहं प्राप्तौ । सिद्धनाथस्तु सर्वरमणीयतामालोक्य प्रामीण इव विस्मया-तुरः स्थितः । भोजनाद्या सर्वा सामग्री तथा जाता यथा बाढं चेतिस चमत्कृतः । मासान्ते ग्रुत्कलापयामास 125 राज्ञा हस्त्यश्वादीन्युपढौकितानि । जयसिंहदेवस्तु पात्राष्टकं ययाचे । नृपेणार्पितम् । राजा म्रुत्कलाप्य पत्तनोपरि चिलितः । पात्राष्टकं यावत्पुरप्रतोल्यामागतं सुखासनादि संहत्य.....तावित्रर्गमे उक्तम्-अग्रे पत्तनं क ?। जनैरुक्तम्-'पत्तनं दूरे' इति श्रुत्वा पण्णां हृदयसङ्घट्टो जातः । इतो द्रयस्रोपर्याच्छादनं दत्तम् । द्वयं जीवितम् । तन्नुपेण सह क्रमेण पत्तने प्राप्तम् । माऊनाम एकस्याः, परस्याः पेथू । अद्यापि माऊइराणि पेथूहराणि च पात्राणि श्रुयन्ते । एवं श्रीजयसिंहदेवः कान्तीं गत्वा समायातः ॥ इति मदनत्रह्मनृपतेर्जयसिंहदेवस्य प्रीतिप्रवन्धः ॥

१६. अथ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Br.)

(६५) वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय नमः श्रीदेवसूरये । यत्प्रसादमिवाख्यान्ते सुखप्रश्रेषु साधवः ॥ (६६) नग्नो यत्प्रतिभाघर्मात् कीर्तियोगपटं त्यजन् । हियेवात्याजि भारत्या देवसूरिर्मुदेऽस्तु सः॥

IGNCA RAR

^{*} अत्र पद्यस्य पूरणार्थे मूलाद्शें तत्प्रमाणा पंक्तिः रिक्ता मुक्ताऽस्ति । पु॰ प्र॰ स॰ 4

- (६७) प्रभाधिनाथैर्मुनिभिः कलासृत् मुख्यैरुपेतो गुरुतारकौधैः। अनन्तलीलाकलितः किलास्त गच्छो बृहद्गच्छ इति प्रतीतः॥
- (६८) तत्र चित्रचरितः परितापं हर्तुं मेघ इव भव्यजनानाम् । शिष्यवृद्धिकरसंवरवानप्युज्ज्वलोऽजनि गुरुर्भुनिचन्द्रः ॥
- 5 (६९) दुःषमाजलधौ येन मग्ना सुविहितस्थितिः । हेलयेव समुद्धे धरित्रीवादिपोत्रिणा ॥
 - तिच्छिष्य:- (७०) पडिबोहिअमहिवलओं निन्नासिअकुमतितिमिरखरो। सचक्रपबोहकरो जयउ जए देवसूरिरवी॥
 - (७१) तावचिअ गलगर्जि कुणंति परवाइमृत्तमायंगा । चरणचवेडचमकं न देइ जा देवसूरिहरी॥
- 10 §५३) तस्य चरितारम्भः—*धन्याधारदेशे मङ्डाहडपुरे वीरणागश्रेष्ठी प्राग्वाटज्ञातीयो वसति । तिष्ठया जिन-देवी । साऽन्यदा स्वमे चन्द्रं मुखे विशन्तं ददर्श । अथ गुरूणां श्रीमुनिचन्द्रसरीणामुक्तम् । तैरुक्तम्—चन्द्रवत्सौम्यः सुतो भावी । सा समये शुभदिने सं० ११४३ वर्षे वैशाखशुद्धदशम्यां सुतमस्त । पूर्णचन्द्र इति नाम कृतम् । कदाचिन्मङ्डाहडेऽशिवमुत्पन्नम् । लोको दिशोदिशं गतः । वीरणागोऽपि भृगुकच्छे गतः । पूर्णचन्द्रस्तु अष्टवा-षिकः सन् शुष्कभक्षिकां विकीणाति । गुरवस्तत्रायाताः । स शुष्कभक्षिकां विकेतुं कस्यापि गृहे गतः । तद्गृहे-
- 15 शोऽपि निधानद्रव्यमङ्गाररूपं त्यजन् पूर्णचन्द्रेणोक्तः न्सर्णं किं त्यजिस ? । तेनोक्तम् नम भाग्यादङ्गारा जाताः, त्वं स्वकरे कृत्वा ममार्पय । तेनार्पितम् । धनिकेन कनकं दृष्टम् । धनिकेन शुण्डो भृत्वा स्वर्णस्यार्पितः । तेन पितुरिपितः । पित्रा गुरूणामुक्तम् । स्वरिभिरुक्तम् –एप न सामान्यः, यद्यसाकं ददासि तदा प्रभावको भावी । पित्रोकम् –अहं वृद्धःः तथा एकसतो निर्द्रव्यः । पूज्यानां च वचोऽन्यथा कर्तुं न शक्यते । गुरुभिरुक्तम् –मम तपोधनानां पश्चशत्यस्ति ते सर्वे तव सनवः । स दियतां पृष्ट्वा पुत्रं गुरूणां ददौ । सं० ११५२ वर्षे दिक्षा । प्राञ्च-
- 20 त्वात् समग्रशास्त्रपारङ्गतो जातः । रामचन्द्र इति नाम दत्तम् । स महावादी जातः । पूर्वं धवलकापुरे धन्धो नाम दिजो जितः । काश्मीरदेशीयो द्विजः सत्यपुरे सागरो जितः । नागपुरे गुणंचन्द्रो दिगम्बरो जितः । चित्रकूटे शिवभूतिर्भागवतो जितः । गोपगिरौ गंगाधरो द्विजः, धारायां धरणिश्वरः, पुष्करिण्यां पद्माकरः । इतो विमल-चन्द्र-हरिचन्द्र-पार्श्वचन्द्र-सोमचन्द्र-शान्तिकलश-अशोकचन्द्राद्याः सहायाः सञ्जाताः । गुरुभिः सं० ११६२ वर्षे पदे स्थापितः-देवस्तरि इति नाम जज्ञे । तथा वीरणागश्रेष्टिना जिनदेवीसहितेन तथा सरस्वतीनाम्न्या पुत्र्याऽ25 न्वितेन व्रतमात्तम् । पुत्र्याश्चन्दनवालानाम्ना गुरुभिर्महत्तरापदमदायि ।

§ ५४) अन्यदा धवलकके विहारे गताः । तत्र ऊदाश्रेष्ठिना श्रीसीमन्धरप्रासादोऽकारि । तस्यायमभिप्रायः— यत् सीमन्धरो यं कथयति तेन प्रतिष्ठां कारयामि । उपवासत्रयं जातम् । सङ्घो मिलितः । शासनदेवी स्मृता । कार्ये निवेदिते, देव्या उक्तम्-श्रीसङ्घः कायोत्सर्गं करोतु । तस्य बलात् देवी तत्र गता । श्रीसीमन्धरं नत्वा

^{*} B सङ्ग्रहे एतचरितस्यारम्भः किञ्चिद्धिन्नपाठक्रमेणोपलभ्यते । यथा-

मड्डाइडिम्म नयरे निवसइ सेट्टी अ वीरणागु ति । सिरिपोरवाडवंसे जिणदेवी तस्स भजा य ॥
तयोसानृजः शुभस्वमस्वितो रामचन्द्र नामास्ति । अन्यदाऽवृष्टी सत्यां दुर्भिक्षवशात् भृगुपुरे सुभिक्षं श्रुत्वा श्रेष्ठी तत्र गतः । राम-चन्द्रस्तु नौवित्तवाट्यां वाणिज्याय यदिष तद्प्यादाय याति । एकदा श्रीमुनिचन्द्रसूरयो विहारेणाजग्मुः । वीरणागो वन्दनायायातः । इतो रामचन्द्रेण पोडशवर्षदेशीयेन पौषधागारमागत्योक्तम्–तात ! मया चणकान् दत्त्वा तावत्यो द्राक्षाः समानीताः । गुरुभिर्लक्षणान्यवलोक्य श्रेष्ठी उक्तः-श्रेष्ठित् ! पुत्रो महाभाग्यवान् , त्वद् गृहे सन् तव कुळत्येव द्योतको भावी; परं गृहीतदीक्षः सकळत्यापि जिनशासनस्य द्योतको भविता । ततः श्रेष्ठिन्या च क्षमाश्रमणं दत्तम् । भगवन् ! सपुत्रयोरप्यावयोदीक्षया प्रसादं कुरु ।...(इतोऽग्रे B सङ्घहः खण्डितः)

पप्रच्छ-भगवन् ! धवलकपुरे श्रेष्ठिना ऊदाकेन भवतां प्रासादः कारितः । तस्य प्रतिष्ठां कः करोतु ? । स्वामिना उक्तम्-श्रीदेवाचार्याः कुर्वन्तु । निवृत्य उक्तम् । कायोत्सर्गः पारितः श्रीसङ्घेन । प्रतिष्ठा जाता । ऊदावसहीति नाम जज्ञे ।-इत्याद्यनेकवर्णनानि, तथापि निक्ञित्वत् खण्डितसम्बन्धा लिँख्यन्ते ।

§५५) अथ कर्णावतीसङ्घर्यार्थनया कर्णावतीं गताः। चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र श्रीमदरिष्टनेमिनः प्रासादे व्याख्यानं भवति । इतः कर्णाटनृपगुरुश्रतुरशीतिवादान्-एवं देशे देशे जित्वा मालवमण्डलस्य मध्ये भृत्वा 5 गूर्जरत्रां प्रति चचाल । क्रमेण आसापह्यामाययौ । तस्य वादाः-

(७२) मंभ अह नव बुद्ध भगव अहारस जित्तय, सहव सोल दह भट सत्त गंधव विजित्तय। जित्त दिगंबर सत्त च्यारि खत्तिय दुय जोइय, इक धीवर इकु भिहु भूमिपाडिओं इकु भोईओं। ता कुमुद्वंदि इय जित्त सबि अणहिल्लपुरि जओं आइयओं। वडगच्छतिलइ पहुदेवसूरि कुमुदह मदु उत्तारियओं ॥

वासुपूज्यचैत्ये स्थितः । इतो धावँसतत् श्राद्धोऽमन्दतरमायातः । क्रुसुदेनोक्तम्-किं चिरेण दृष्टः ? । तेनोक्तम्-श्वेताम्बरश्रीदेवाचार्यपौषधागारे समर्थनमजिन । तत्र वेला लगा । कुमुदेनोक्तम्-मयि आगते श्वेताम्बराणां समर्थनमेव युक्तं न त्वारम्भणम् । तेनोक्तम्-मैवं वद ।

(७३) आस्तां सुधा किमधुना मधुना विधेयं, दूरे सुधानिधिरलं नवगोस्तनीभिः। श्रीदेवसूरिसुगुरोर्यदि सूक्तयस्ताः पाकोत्तराः श्रवणयोरतिथीभवन्ति॥

इति श्रुत्वा सकोपः सन् साहारणं नाम भट्टमाहूय प्राहिणोत् । स पौषधागारे क्रुमुद्विरुदान्यवादीत्–सकल-बादिवेताल, वादितरुप्रबलकालानल, वादीन्द्रमानपर्वतदावानल, वादिगजघटापश्चानन, वादिसिंहशाईल, मुक्तिनि-तम्बनीकण्ठकन्दलालंकारहार, श्वेताम्बरदर्शनग्रहसनस्त्रधार, पददर्शनपाठी जयति वादीन्द्रश्रीकुमुदचन्द्र ।

> (७४) हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोऽस्ति सण्टङ्कितैः संसाराचरकोररेऽतिविकरे मुग्धो जनः पात्यते। तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सत्यं कौमुदचन्द्रमङ्गियुगलं रात्रिन्दिवा ध्यायत॥

ततः प्रभोः शिष्येण माणिक्येनोक्तम्-

(७५) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसदाभारं स्पृश्चांहिणा कः कुन्तेन शितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्क्षति। कः सन्नह्यति पन्नगेश्वरशिरोरत्नावतंसिश्रये यः श्वेताम्बरदर्शनस्य कुरुते वन्चस्य निन्दामिमाम् ॥

अन्यदा प्रभोर्भगिनी सरस्रती तनुगमनिकायां गता। क्रुगुदः प्राह-केयं गंडरिका श्वेताम्बरी? क्रुगुदेनोक्तम्-आर्ये ! नृत्यं कुरु । नम्राट ! त्वं मृदङ्गं वादय । ततः सा पौषधागारे गत्वा रोदितुं प्रवृत्ता । गुरुभिर्निमित्तं 30 पृशं तयोक्तम्-

> (७६) हा कस्स पुरोहं पुकरेमि असकन्नया महं पहुणो। नियसासणनिकारे जोऽवयरइ वरं सुगओ ॥

दिगम्बरविडम्बना उक्ता । गुरुभिश्विन्तितम्-



15

10

20

25

15

25

30

(७७) आः कण्ठशोषपरिपोषकलप्रमाणो व्याख्याश्रमो मयि बभूव गुरोर्जनस्य ।
एवंविधान्यपि विडम्बनविड्वराणि यच्छासनस्य हहहा! मसुणः सुणोमि ॥
दुर्वाद्चिक्रगजसंयमनाङ्कशश्रीः श्वेताम्बराभ्युद्यमङ्गलबालदूर्वा ।
श्रीदेवसूरिसुगुरोर्भुकुटिर्ललाटपटे स्थिति व्यतनुत प्रथमावतारम् ॥

तदनु नयसारभट्टमाहूय प्रेषितः । स दिगम्बराग्रे गत्वा जगौ-

(७८) दिगम्बरिशोमणे! गुणपराश्चुको मासा भूर्गुणग्रहफ्लं हि तत् वसति पङ्कजे यद्रसः। ततस्यज मदं कुरु प्रशमसंयतान् खान् गुणान् दमो हि मुनिभूषणं स च भवेत् मदो व्मत्यये॥

(७९) नास्माकं हृदि दर्पसर्पगरलोद्गाराः स्थिति तन्वते न्यत्कारं च न शासनस्य कलयाऽप्यालोकितुं शिक्षिताः। तत्तूर्णं समुपेहि सिद्धन्यतेरग्रे हरिष्यामहे तीक्ष्णेर्युक्तिमहोषधव्यतिकरैस्त्वन्तुण्डकण्डूं वयम्॥

यदि तव वादेच्छा तत् श्रीपत्तने वज । तत्रावयोर्वादः । इत एकदा माणिक्यं दृष्ट्वा दिगम्बर आह-

(८०) श्वेताम्बराः कलितकम्बलयष्टयोऽमी गोपालतामविकलां मुनयो वहन्ति । उच्छुङ्खलं विचरतां भुवि निर्गुणत्वात् युष्मादशामनडुहां परिरक्षणाय ॥

(८१) तथा—नग्नैर्निरुद्धा तरुणीजनस्य यन्मुक्तिरस्नप्रकटं रहस्यम् । तिकं वृथा कर्कशतर्ककेली तवाभिलाषोऽयमनर्थमूलः॥

इतः स शकुनैर्वार्यमाणोऽपि श्रीपत्तनं प्रति चचाल । पूर्वं सम्मुखा श्चित् जज्ञे, विडाली दृष्टा उत्तरिता च, कृष्णसर्पः सावइ जगाम । एवं शकुनैर्वार्यमाणोऽपि पत्तने गतः । नृपद्वारे प(ख)डपानीयं चिक्षेप । देव ! मया सह
वादः कार्यताम् । अहं सिद्धचक्रवर्चीति विरुदं न सहे । विवेकचृहस्पतिर्गूर्जरत्रेति च नरसमुद्रं पत्तनं च-एतानहं
20 न मन्त्रे । विद्वांस आहूयोक्ताः । देव ! न स कोऽप्यित्ति पुरे योऽनेन सह वादं कुरुते । तैस्सर्वेरप्युक्तम्-देव !
देवाचार्यान् विना कस्यापि शक्तिनीस्ति अम्रं जेतुम् । तदनु नृपेणाहूय श्रीसङ्को भणितः-यत्तथा कुरुत यथा
श्रीदेवाचार्याः कर्णावत्याः समायान्ति । श्रीसङ्कोन विज्ञप्तिका प्रहिता, आप्तपुरुषाश्चानेतुम् । तैः खरूपमर्पितम् ।

(८२) तत्र-गुणचन्द्रजयांजनतः प्रवादिनकाकुले भवाम्भोधौ। त्वं वत्स् कर्णधारो जिनशासनयानपात्रस्य ॥

(८३) देवाचार्यवेलात् युक्तः शासनस्य किलाईताम् । प्रभावनासरोजाक्ष्याः पाणिग्रहमहोत्सवः ॥

स्वरूपं विलोक्य ग्रुभदिने ग्रुभशकुनानुक्र्ल्यात्पत्तनोपरि चेलुः।

(८४) नयनविषयं यातश्चाषः श्चतं शिखिशन्दितं विषमहरिणश्रेणी हर्षात् पदक्षिणमागता । तुहिनकिरणक्षेत्रे भानुर्महोदयमाश्चितः प्रकृतिमृदुलो वायुः पृष्ठानुगश्च व्यजृम्भत ॥

क्रमेण पत्तने प्राप्ताः । नृपेण प्रवेशोत्सवः कारितः । कुमुदचन्द्रेण लश्चां दत्त्वा वारही परावर्त्तिता । भाण्डा-गारिककपर्दिनं विना शल्यहस्तं वाहुकनामानं मन्त्रीश्वरं वाहुडदेवं च विना । तदा कुमुदचन्द्रेण नृपसं भातुर्म-

¹ पक्षे बृहस्पतिबलात् (-टिप्पणी)।

यणलदेच्या.अग्रे उक्तम्-अहं जयकेशिनरेश्वरस प्रियस्तवं श्रातुः । इतः करणे स्व-स्वमतस्यापनाय पत्रं ले	ख
यितुं गतौ । इतो गांगिलपण्डितेन श्रीदेवस्रीनुद्दिश्य हास्यं कृतम् ।	
(८५) वेषः कोऽपि तुम्ब्कसन्ततिभवः कक्षान्तरे लम्बित-	
व्छायामाश्रयते गताशुकपद्योर्जीणींर्णकापोद्दलः।	
अन्धानामिव यष्टिका करतले मुण्डं समुहुश्चितं	5
युक्तं केवलमास्यमुद्गतमलं यद्गस्त्रखण्डावृतम् ॥	
. (८६) दन्तानां मलमण्डलीपरिचयस्थूलंभविष्णुस्ततिः	
कृत्वा भैक्षभुजिकियामविरतं शौचं किलाचाम्लतः।	
नीरं साक्षि शरीरंशुद्धिविषये येषामहो कौतुकं	
तेऽपि श्वेतपटाः क्षितीश्वरपुरः काङ्क्षन्ति जल्पोत्सवम् ॥	10
ततः प्रभुराह-(८७) यादोऽङ्गशोणितकषायितचीवराणां सन्मांसभक्षणविचक्षणदक्षिणानाम्।	
विद्वन्निकायजननिन्द्नकोविदानां पावित्र्यमुत्तममहो द्विजसत्तमानाम् ॥	
(८८) एतस्याः कुक्षिकोणे विद्धति वस्तिं कोटयः खर्गधान्ना-	
मेतल्लाङ्ग्ललग्नाः सपदि तनुभृतो वैतरण्यास्तरन्ति ।	
गामित्थं स्तौति विप्रः पदि पदि न वयं कारणं तन्न विद्यो	15
गृह्णानामात्मगेहात् तृणमपि निविडं ताडयन्त्युग्रदण्डैः ॥	~
इत्युक्त्वा पौषधा(?) स्रृपेण गांगिलस्य देशपट्टो दत्तः । तदा क्रुग्रदचन्द्रः प्रतिज्ञामवादीत्	
(८९) इह नुपतिसभायां बाहरू द्वीकृतो मे बद्तु बद्तु वादी विद्यते यस्य शक्तिः।	-
मयि वदति वितण्डावादविद्याधुरीणे जलधिवलयमध्ये नास्ति कश्चिद्विपश्चित्।।	
(९०) बृहस्पतिंस्तिष्ठतु मन्दबुद्धिः पुरन्दरः किं कुरुते वराकः ।	20
माँय स्थिते वादिनि वादिसिंहे नैवाक्षरं वेत्ति महेश्वरोजिप ॥	
श्रीदेवाचार्यैः कुमुदं प्रति-	
(९१) न लाभयामी ललनां न भोज्यं सुगन्धिसर्पिः हुतसुष्णमद्मः।	
कार्यं विवादेन सखे न तत्र खशासनोद्योतकृते च कुर्मः ॥	
स्व-स्वमतख्यापनाय पत्रकमलेखि । कुमुदेनोक्तम्-	25
(९२) केवलिहुओ न भुंजइ चीवरसहियस्स नित्थ निवाणं।	
इत्थीहुआ न सिज्झइ मयमेयं कुमुदचन्दस्स ॥	
हेवाचार्येणोक्तम-	
(९३) केवलिहुओ वि भुंजइ, चीवरसिहयस्स अत्थि निवाण ।	
इत्थीहुआ वि सिज्झइ मयमेयं देवसूरीण ॥	30
राजिस्यामा विवेकबहस्पतित्वमः नपस्य सिद्धचिकत्वमः पत्तनस्य नरसम्रद्भत्वमसहन् विवदते । सं० ११	८२
वर्षे वैकारकार्णिमादिने बादहेतीगहतौ । दिगम्बरः पूर्वे गतः । श्रीदेवस्ररिः समस्रक्रनैः श्रेयेमाणः पश्चाहत	:1
क्रमेण सभायां गताः । कुमुदेनाशीवादी दत्तः, प्रभुभिश्च । तदनु गद्यपश्चशती उपन्यसते, तसाः प्रत्युत्तरं प	अ -
	The Part of the Pa

श्रत्या दीयते । पुनर्गद्यपश्चशती उपन्यस्यते । एवं तत्र पश्चविंशतिदिनानि विवादो जज्ञे । कुमुदो वारत्रयं निग्रह-

Indira Gandhi Nationa Centre for the Arts

10

15

स्थानमायातः। क्रमेण सर्वेर्नुप-राज्ञीप्रमुखैर्मानितम् कुमुदचन्द्रो हारित-इति कृत्वा देशानिष्काञ्चितः। कुमुद-स्थाशोक्यनिकां गतस्य हृदयास्फोटो जातः। राज्ञा तत्सर्वस्वमादाय प्रभूणां प्राभृतीकृतम्।

(९४) च्यारि जोड नींसाण हय हिंसइ पंच पंच्यासी,

इग्यारह सइं सुहड सीस सइं दुन्नि च्छिआसी। '
बलदह सइं चिआरि कम्मकर पंचछहुत्तर,
अत्थ लक्ख पणवीस दम हुइ लक्ख बहुत्तर।
ता चमर छत्त तुहर बिरुद सुखासण वाहण लियओं।
वडगच्छतिलइ पहुदेवसूरि नग्गओं वलि नग्गओं कियओं॥

श्रीगुरुं प्रति नृपः प्राह-भगवित्रदं भवद्भिरेवार्जितं तत् गृह्णीत । स्रिराह-

(९५) भुश्रीमिह वयं भैक्षं जीर्णवासो वसीमिह । दायीमिह महीपीठे कुर्वीमिह धनेन किम् ॥ नृपेण महोत्सवपुरस्सरं पौषधागारे स्रयः प्रेषिताः ।

(९६) श्रीसिद्धपुरे रम्ये सिद्धन्तपो देवस्वरिगुरुवचसा । तुर्यद्वारं चैत्यं कारितवान् तुर्यगत्यर्थम् ॥ [*श्रीवादिदेवस्वरिसदुपदेशवासितचेतसा सिद्धराजजयसिंहदेवेन सं० १८८३ वर्षे पत्तनमध्ये श्रीऋषभप्रासादः

कारितः ८४ अङ्कुलऋषभविम्बयुग् राजविहारनाम्ना ।]

॥ इति देवाचार्यप्रवन्धः ॥

१७. आरासणीयनेमिचैत्यप्रबन्धः (P.)

१५६) अथैकदा आरासणपुरात महं गोगासुतः पासिलो दौर्वल्यात कृपिकामादाय पत्तनमाययौ । तत्र राय-विहारे देवं नत्वा विम्वमपने लग्नः । इतः ठक्करछाडापुत्र्या देवकुलमागतया दृष्टः पृष्टश्र—भ्रातरेवं विम्वप्रमाणं गृह्णासि, किं नूतनमेवंविधं करिष्यसि ?। तेनोक्तम्-भगिनि ! यदि कार्यते तदा प्रतिष्टायामागन्तव्यम् । एवमस्तु । 20 स स्वपुरे गतः । विम्बरचनेऽन्यमुपायमलब्ध्वा, अम्बाविदेवीप्रासादे गत्वा लङ्कितुमारेशे । दश्मिरुपवासैर्देवी प्रत्यक्षीभूयोवाच-वरं वृषु । तेनोक्तम्-देवि ! तथा कुरु यथाऽहं नृपविहारसमं प्रासादं कारयामि । देव्या स्थान-मुक्तम्-खानिर्दिशिता । परं पोडशप्रहरैस्ते मनोरथः सेत्स्यन्ति, तदनु न । इतो लब्धवरः सङ्घेन सह वजन् बुद्ध्या चतुष्पथमध्ये उपविष्टः। इयन्ति दिनानि देवीनिमित्तम्, अतः परं सङ्घोपरि। कथम् १। यदि सर्वः कोऽपि स्वतो जनेन स्वसमुदायेन षोडशप्रहरान सामिध्यं करोति तदा भुझे नान्यथा । सङ्घेन मानितम् । पारणकादनु जनं 25 सम्मील्य खनौ गतः । खननं प्रारब्धम्-प्रहरत्रयं जातं खनताम् । अतस्तस्य गुरवस्तनुगमनिकायां प्रस्थिताः । पासिलेन वन्दिताः। तैरुक्तम्-पूर्णा मनोरथाः ?। तेनोक्तम्-देवगुरुप्रसादात् । देवी रुष्टा मम प्रसादो न किन्त्वे-तेपाम् । सत्वरं निःसरत । खानिः पतिता । दीनारसहस्र ४५ विमली निर्गतः । इष्टिकामयः प्रासादः प्रारब्धः । विम्बं कारितम् । चन्द्रमा सहस्र २ अवशिष्यन्ते । चिन्तितं विम्बग्रुपवेशयामि । इति ध्यात्वा पत्तनं गतः ठक्कर-छाडावासे प्रतोल्यां स्थितः । प्रवेशमलभमानो महता स्वरेण पूत्करोति । ठकुरेण मध्ये मोचितः । नमस्कारे 30 कृते ठक्करेणोक्त:-कुतः समायातः ?। छाडापुत्री बाई हांसी तस्या मीलनाय। ठक्करेण पुत्री आहृता। वत्से 🛴 तव आता । तेन नमस्कृत्योक्तम्-मां न वेत्सि ?, राजविहारे विम्बं मपन् दृष्टः सोऽहम् । मया विम्बं कारितम् , प्रतिष्ठायामागच्छत । ततः श्रीदेवस्रिरिभिः समं श्रेष्ठिपुत्री चिलता, पित्रा प्रेषिता । तत्र प्रतिष्ठा जाता ११९३ । तत्र तया शेषं सम्पूर्णं कृतम् । मण्डपस्तया भगिनीत्वेन कारितः । लक्ष ९ द्रव्यलागिः । स च मेघनादे ।

^{*} एकसिम्बन्यादशें एषा कोष्टकगता पंक्तिः प्राप्यते ।

(९७) गोगाकस्य सुतेन मन्दिरमिदं श्रीनेमिनाथप्रभो स्तुङ्गं पासिलेसञ्ज्ञकेन सुधिया श्रद्धावता मिन्नणा।
 शिष्येः श्रीमुक्तिचन्द्रसूरिसुगुरोर्निर्ग्रन्थच्ंडामणे वीदीन्द्रैः प्रभुदेवसूरिगुरुभिनेंमेः प्रतिष्ठा कृता॥
 (९८) रामनन्दशशिमौलिवत्सरे माधवे च दशमीतिथौ सिते।
 वाक्पतेः सुद्वसे प्रतिष्ठिनोऽरासणे पुरवरे शिवाङ्गभूः॥
 ॥ इति आरासणसत्कनेमिचैत्यप्रवन्धः॥

१८. फलवेर्डितीर्थप्रवन्धः (P. Br.)

६५७) अथैकदा श्रीदेवाचार्याः शाकंभरीं प्रति विजहुः । अन्तराले मेडतकपुरपाट्यां फलवर्डिकाग्रामे मासकल्यं स्थिताः । तत्र पारसनामा श्राद्धस्तेन जालिवनमध्ये श्रीपार्श्वतीर्थं प्रादुःकृतम् । तेनैकदा वनं निरीक्ष्यमाणेन 10 जालिवनमध्ये लेष्ट्रराशिर्दृष्टः । अम्लानशितपत्रिकापुष्पेः पूजितः । लेष्ट्रवो विरलीकृताः । मध्ये विम्बं दृष्टम् । तेन श्रीदेवस्तरिभक्तेन गुरवो विज्ञापिताः । तेः स्तरिभिर्धामदेव-सुमितिप्रभगणी वासान् दन्त्वा प्रहितौ । धामदेव- गणिना वासक्षेपः कृतः । पश्चादेवगृहे निष्पन्ने श्रीजिनचन्द्रस्तर्यः स्वशिष्याः वासान्पियत्वा प्रहिताः । तेश्च ध्वजा-रोपः कृतः । पश्चात्तत्र प्रासादेऽजमेरीयश्रेष्टिवगोः नागपुरीयो जाम्बंदवर्गः समायातः । ते गोष्टिका जाताः । संवत् ११९९* वर्षे फागुणशुदि १० गुरौ विम्बस्थापनम् । संवत् १२०४ वर्षे माहसुदि १३ शुके कलशध्वजारोपः ॥ 15 ॥ इति फलवर्द्धिकातीर्थप्रवन्धः ॥

१९. मन्निसान्त्रप्रबन्धः (B. Br.)

१५८) श्रीपत्तने जयसिंघदेवस्य मन्नी सान्त्नामा सर्वमुद्राधिकृतः श्रीदेवस्रिणां भक्तः। तेन धवलगृहानुकारी आवासः कारितः। गुरवोऽवलोकनायाकारिताः। मन्निणा अग्रेसरेण भृत्वा दिश्तः। गृष्टम्-प्रभो! कीदंगा-वासः!। इतः शिष्यमाणिक्येनोक्तम्-यदि पौषधशाला भवित तदा वण्यते। मन्निणा क्षमाश्रमणं दत्तम्। एषा 20 पौषधशालेव भवतु। तदनु सा मुख्यपौषधशाला जाता। तत्र पट्टशालायाम्रभयोः पार्श्वयोरादर्शाः पुरुषप्रमाणा आसन्। श्रावका धर्मध्यानादनु यथा वक्त्राण्यवलोकन्ते। तथा वांका-निहाणाभिधानयोग्नीमयोद्धीं प्रासादौ कारितौ। एकसात्क्षपनं कृत्वा सुरङ्गया गन्यृतिमितया द्वितीये गम्यते। एकदा मन्त्रिणो राज्ञा सहाऽप्रीतिर्जाता। मन्नी रुस्ताक्षेत्र मति सपरिच्छदोऽचालीत्। राज्ञा ज्ञातमेषो मध्यवेदी। सैन्यं सत्वरमानिष्यति। छन्ना नरा राज्ञा तेन सह प्रेषिताः। तत्र गतोऽसौ किं कुरुते। मन्नी उज्जयिन्यां गतो नृपमन्दिरे, परं नृपस्य नमस्कारं न 25 करोति। पार्श्वस्थेरुक्तम्-मन्त्रिन्! नमस्कारं [कथं] न कुरुवे!। देव! देवं मत्वा श्रीवीतरागो नमस्कृतः, गुरून् भणित्वा सुसाधवः, नृपस्तु जयसिंघदेवः। अन्यस्य कस्य श्रिरो न नाम्यते। राज्ञोक्तम्-मन्तिन्! सुद्रां गृहाण। देवासाकं स्वामी केनापि कारणेन रुष्टोऽस्ति। कल्येऽप्यस्थानाकारिष्यित। तदनु राज्ञा गौरवेण स्थाप्रितः। छन्नपुरुषैः पत्तने गत्वा नृपाय निवेदितम्। नृपेण सत्वरमाकारणं प्रहितम्। मन्नी नृपं सुत्कलाप्य चलितः। मालव-मेवाडसन्यौ आहडमामे महं० सान्त्योग्यं पाश्चात्यप्रहरे मृत्युः। मन्निणा तदैव क्षामणादं कृत्वा 30 पुत्रस्य शिक्षां दन्वाऽनशनं गृहीतम्। पुत्रीवयज्ञ् तथा प्रदत्तम्। तात! किमवशिष्यते १ पृष्टे, वत्से! तपोधना-दर्शानाद्वस्य किमपि। तथा वण्ठस्तपोधनवेषं कारियत्त्वाऽप्रे नीतः। उक्तम्। तद्दीनान्मित्रणा हप्टेन नमस्कृतः दर्शानाद्वस्य किमपि। तथा वण्ठस्तपोधनवेषं कारियत्त्वाऽप्रे नीतः। उक्तम्। तद्दीनान्मित्रणा हप्टेन नमस्कृतः

तन्मुखान्नमस्कारं प्राप दिवं ययौ । स तथैव समुद्रो निवेश्य स्थितश्रलनवेलायामुक्तः-रे वेषं मुश्च, खकर्माणि कुरु । तेनोक्तम्-यत्प्रसादानमन्त्री सान्त् चरणयोर्निपतितस्तं वेषं न मोक्ष्ये । क्रमेण पत्तने नीतो गुरूणां पार्श्वे दीक्षितः । नृपेण पुत्रस्य महं० देवलस्य महन्मानोऽदायि ॥ इति मन्त्रीसान्त्प्रवन्धः ॥

२०. मन्त्रिउद्यनप्रबन्धः (P.)

६९) श्रेष्टीबोहित्थपुत्र अश्वेश्वरः । पुत्रयक्षना[ग]-पुत्रवीरदेव-पुत्रउदयनः । तत्पुत्रो मन्त्रिगुरुर्बाहडदेवः । श्रीकरणम् । लाटाह्वयदेशकरणमपि तस्य अर्पयति स नरेन्द्रो, येन वशेकरणपश्चकमनुष्यः (१) ॥

मरुखल्यां जावालिपुरसमीपे वाघराग्रामे श्रीमालज्ञातीय उदयनो वणिक् । भार्या धवलकक ठ० साम्बपुत्री सुहादेवी । स कूपिकां करोति । अन्यदा घृतकूपं मस्तके कृत्वा धनुरादाय मेघान्धकारयामिनीं विभातप्रायां मत्वा रामशेनोपरि चचाल । इत एकसिन् क्षेत्रे कलकलं श्रुत्वा, धनुरारोप्य, पृष्टवान्-के यूयम् ? । अस क्षेत्रधनिकस्य 10 कमा । उदयनेनोक्तम्-असीव स्युः किं वा अन्यस्थापि ? । भवन्ति, परं स्थानान्तरिताः । मम क सन्ति । तैरु-क्तम्-आञापल्ल्यां कर्णदेवोऽपरः शालापतिस्तिहुणसीहः । स ततः श्रुत्वा पश्चाद् व्यावृत्त्य, महिलाम्रत्थाप्य, सुत-बाहड-चाहडान्वितः आशापर्क्षीं गतः । तत्र चैत्ये सुंडु मुक्तवा देवं नन्तुं मध्ये गतः । तत्र तिहुणसिंहस्य पत्नी चेटीवृता देवं नन्तुमागता । अपूर्वान् दृष्ट्वा वन्दनां चकार । पृष्टं कस्यातिथयः ? उदय०-आदौ देवो दृष्टः, पश्चा-चम् । ततः स्वसार्थे स नीतः । सा घरं (गृहं) मध्ये गता । द्वारपाल उदयनं न मुश्रति । प्रतोल्युपरिस्थेन शाला-15 पतिनोपरि आनायितः । उदयनेन नमस्कारे कृते, पृष्टम्-कुतः प्राघुणकाः ? । मरुखल्या भवन्तं ध्यात्वा वर्तना-यागताः । भन्यं जातम् । भोजनाय सकुटुम्बो [उपवे]शितः । भोजनादनु पृष्टम्-मध्ये स्थास्यथ पृथग्वा ? । तेनो-क्तम्-पृथग् । स्तोकमपि स्थानमर्प्यताम् । तेन गृहद्वारेऽपवरको दर्शितः । तत्र भूमिशुद्धं कृत्वा यावद्वारं ददाति तावित्रधानं निर्गतम् । स विलसति । तञ्चपस सारा जाता । शालापतिराहृतः । याचितं तत् । देव ! मदीये [गृहे] मारुक एक आगतः । तस्य गृहे किश्चिनिस्सृतम् । तदहं न वेद्यि । ततः स नरैर्धृत्वा नीयमानो निरो-20 धार्थं शून्यं हट्टं विवेश । तत्रापि निधानं दृष्टम् । राजकुले गतः । राज्ञा पृष्टम्-रे निधानं दर्शय । तेनोक्तम्-देव ! बुधुक्षितेन भक्षितम् । ततो गुप्तौ क्षेपितः । स यदा शरीरचिन्तायां याति तदा निधानमेव विलोकयति । अन्यदा नृपेणोक्तम्-रे अर्पयसि ? । तेनोक्तम्-कियन्ति दर्शयामि । राज्ञोक्तम्-एतत्किम् ? देव ! यत्र यत्र यामि तत्र तत्र निधानानि । दर्शय । तेन ५-१० दर्शितानि । तं भाग्यवन्तं ज्ञात्वा खमुद्रा दत्ता भूपेन, राणिमा च ।

१६०) एकदा मित्रपत्नी विनष्टा । वाग्भटेनाचिन्ति—मम पिता दुःखितः । कापि कन्यां विलोकयामि । विश्व विष्ठा कोऽपि व्यवहारी तस्य सुता द्यद्वाऽस्ति । सा वाग्भटेन स्वयं तत्र गत्वा याचिता । तेनोक्तम्—कस्यार्थं १ किं तेन १ ममैव देहि । तेन दत्ता । इतो वाग्भटदेवेन राणक उक्तः—तात ! वायडपुरे जीवितस्वामिनं श्रीसुनिस्त्रतमपरं श्रीवीरं नन्तुं चलत । सङ्घं सम्मील्य ततो गतः । तत्र गत्वा, पूजां विधाय, भोजनवारा प्रारब्धा । इतो वाग्भटदेवसङ्केतात् कोऽपि स्थालं न मण्डयति । मित्रणोक्तम्—स्थालानि किं न मण्ड्यन्ते १ । यदि सङ्घवचः प्रमाणीकुरुत तदा सर्वः कोऽपि सुनक्ति । आदिशत । यत्परिणयनं मन्यध्वम् । मित्रणोक्तम्—सप्तित वर्षाणि अवातानि । अतः कोऽवसरः १ अवसरं विना न शोभते । अतो वाग्भटेनोक्तम्—ज्ञातिर्वलीयसी । उदय०—कः कन्यां प्रयच्छिति । सर्वं निष्पन्नम्, भवतां वाक्यमेव विलोक्यते । ततः परिणीतः । तस्याः सुतो रायविद्वार आम्बेडो जातः । उदयनेन सङ्गारो जितः । पश्चान्मेलगपुरे साङ्गणडोडीआकेन सह युद्धं जातम् । घाताः लगाः । तत्राभि-प्रह्वयम्—शत्रञ्जयोद्वारे द्विवेलं भोजनम्, श्रीसुनिसुत्रतप्रासादोद्वारे स्नानम् । अभिग्रहद्वैविध्यं सत्यास्य कालं कृत्वा सुगतौ प्राप्तः ॥ इति मित्रउदयनप्रवन्धः ॥

२१. अथ वसाह आभडप्रवन्धः (B. Br. P.)

६२१) श्रीअणहिल्लपुरे नागराजंश्रेष्ठी कोटीध्वजः। तस्य प्रिया लक्ष्मित्वा श्रेष्ठी आपन्नसंत्त्वायां पत्यां विश्वित्वातो मृतः । तद्वनु नृपपुरुषे ग्रेहसारमपुत्र इति कृत्वा गृहीतम्। श्रेष्ठिनी धवलकके पितृगृहे गता। तत्र तस्या अमारिदोहदो जज्ञे । स पित्रा पूरितः। क्रमेण पुत्रो जातः। तस्याभयकुमार इति नाम दत्तम्। स क्रमेण पश्चवर्षायो जातः। पठनाय क्षिप्तः। अध्ययनं करोति। अथैकदा बालकैर्निस्तात इति कथितः। स मातरं प्रप्रच्छ-मातः! को मे तातः । तया खपिता द्शितः। तेनोक्तम्-एष ते, मम क ? तया खमावे उक्ते, तेनोक्तम्-पत्तने यास्यामि, अत्र न स्थास्यामि। इत्याग्रहमादाय स्थितः। मातामहेन सम्प्रेषितः। पत्तने गतः । तत्र खगृहे स्थितः। क्रमेण व्यवसायः प्रारच्धः। लाङ्कलदेवी भार्या परिणीता । किमपि निधानं पूर्वजसत्कं लेमे। व्यवसायात् पितृतुल्यो जातः श्रिया। सुतत्रयं जातम्। अथ कर्म्मदौर्वल्यात् श्रीर्गन्तं लग्ना। मन्दं मन्दं निर्द्रनत्वमाययौ । पत्नी पुत्रानादाय पितृगृहं गता। आभडोऽप्येकाकी मणिकारहट्टे घुर्घरकान् घर्षति। यवानां माणकं 10 लभते। तेन चृत्तिः। । तं पीष्य खयं पक्त्वाऽशाति। एवं दुरवस्थां गमयति। यतः-

(९९) वार्द्धिमाधवयोस्सौधे प्रीतिप्रेमाङ्कधारिणोः। या न स्थिता किमन्येषां स्थास्यति व्ययकारिणाम्॥

एकदा कुलगुरूणां हेमाचार्याणां पौपधागारे गतः । जनान् परिग्रहप्रमाणं गृह्णतो वीक्ष्य सोऽपि ययाचे ।
गुरुमिर्द्रम्मान् पृष्टः । योग्यतां ज्ञात्वा टिप्पने द्रम्मलक्ष ९ कृताः । एवं शेषवस्तृनि । टिप्पनमिर्पतम् । तेनो-15
क्तम्-कस्यापि पुण्यवत इदम् । ममैवं योग्यता निह । गुरुमिरुक्तम्-भिवण्यति । शेषं धम्में देयम् । क्रमेण द्रम्म-पञ्चकं ग्रन्थों कृतम् । एकदा चतुःपथान्तरे एकामजां दीनार ५ जग्राह । गले आभरणं सार्थे क्रीतम् । तस्य पापाणस्य दलानि वैकटिकात् कारितानि । क्रमेण धनी जातः । कुटुम्बं मिलितम् । तपोधनानां विहरणे घृतघट १ दिनं प्रति । तथा सत्राकारस्त्ववारितः । नित्यं प्रासादेषु पूजा । सदैव साधिमकाणां वात्सल्यं सत्कारः । वर्षं प्रति सकलदर्शनसङ्घार्चा २ । तथा पुत्तकान्यनेकशः लेखितानि । जीर्णोद्धाराथ कारिताः । बहूनि विम्बानि २० कारितानि । एवं सङ्घमुख्यतामासाद्य वर्ष ८४ प्रान्तेऽनशनमादातुकामः पुत्रपञ्चकं खजनानप्याह्य प्रोवाच-हे वत्साः ! धर्मविहकां वाचयत । वाचितायां 'भीमप्रीद्राम ९८ लक्ष ।' इति अङ्कं श्रुत्वा वसाहो विषण्णः । ज्येष्ठसुतेन आसपालेन व्याहृतम्—यूयं तात ! मा विषीदत । यदसाभिः सकलोऽर्थो व्ययीकृतः । अद्याप्यादिश्यताम् । भव-प्रसादेन सर्वमित्त । वसाहः प्राह—रे वत्साः ! जनके मिय गर्भिखते विपन्ने सर्वस्तं नृपेणात्तम् । पुनर्जातेन पुनर्गितं पुनर्गमितम् । महदुःत्वमनुभूतम् । पुनरर्थे जातेऽहं कृपणो जातः । कोष्यपि न पूरिता । पुत्रेरुक्तम्—तात ! २० प्रक्षास्तत्कालमानीय सप्तक्षेत्रयां व्ययिताः । अष्टौ पुनर्थर्मेनव्यये । एवं पुण्यानि कृत्वा स्वर्गमाम् जातः । पुत्राणां मध्ये द्वौ माहेश्वरिणौ त्रयः श्रावकाः सञ्जाताः । पुनर्थर्मेनव्यये । एवं पुण्यानि कृत्वा स्वर्गमाम् जातः । पुत्राणां मध्ये द्वौ माहेश्वरिणौ त्रयः श्रावकाः सञ्जाताः ।

।। इति आभडवसाहप्रबन्धः ॥

^{1 .} B गूर्जरत्रामण्डले श्रीपत्तने श्रीमालज्ञातीयो नागराज । 2 B दिवं ययो । 3 B पंचवर्षदेशीयः । 4 B अत्र मातुःशाल र् 5 P नास्ति । 6 B पाणित्रहणं क्रमेण जातं लाललदेवी नाम कृतम् । 7 B'पूर्वजक्रमागतं च । 8 P नास्त्येतद्वाक्यम् ।
† एतद्न्तर्गतः पाठः P नास्ति । ‡ एतद्न्तर्गतपाठस्थाने B आद्शें एताद्दशः पाठः-'एका अजा विकेतुमायाता । तस्याः कण्ठे पापाणोऽस्ति । स इन्द्रनीलमयो वसाहेनोपलक्ष्य मूल्यं पृष्टम् । पंच दीनारा उक्ताः । तेनापिताः । कण्ठाभरणं गृह्णत् वारितः । स अजामादाय
गोऽस्ति । स इन्द्रनीलमयो वसाहेनोपलक्ष्य मूल्यं पृष्टम् । पंच दीनारा उक्ताः । तेनापिताः । कण्ठाभरणं गृह्णत् वारितः । स अजामादाय
गृहे गतः । पाषाणोऽपि वैकटिकाय दर्शितः । अर्द्धमुक्त्वा विदारितः । लक्ष्यमूल्या मणयः कृताः । अर्द्धमर्द् कृत्वा गृहीताः । कमेण
धनवांस्त्येव जहे ।' 9 B भीमपुरी । 10 B नृपेणेत्वरं गृहीतम् । 11 B ०कृत्वा ८४ वर्षसम्पूर्णेऽनशनं प्राप्य शुभध्यानादिपेदे । स्वर्गमगात् ।

२२. मं० सज्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रवन्धः (P.)

६६२) अथ सिद्धराजे राज्यं शासित श्रीमालज्ञातीयवान्धवाः ३—सार्जण-आर्म्या—धवैलाः । इतः श्रीजयसिंहेन सजनः सुराष्ट्रायां व्यापारे प्रहितः । श्रीरेवते तीर्थं नन्तुं गतः । प्रासादो जाकुड्यमात्येन शैलमयः प्रारव्धः ।
अमात्यो मालवावासी दिवं गतः । १३५ वर्षाण्यन्तरे गतानि । ततः सजनेन कर्मस्थायः प्रारेभे । वर्षत्रयोग्राक्तम्—मया प्रासादः कारितः । पुनर्नृपो द्रम्मान् यदि याचते तदा भवद्भिरङ्गीकार्यः । तैरमन्यत । इतश्च
सिद्धेशः सोमनाथयात्रायामागतः । सर्वे व्यापारिणो मिलनाय आगताः । सजनो नाययो । नृपेण तदनागमने
कारणं पृष्टम् । तैरुक्तम्—देव ! तेन द्रव्यं विनाशितमतः स कथमायाति । ततः सजनस्थाकारणं गतम् । स आयातः ।
नृपेणोक्तम्—रे द्रम्माः क १ देव ! सन्ति । कथं नानीताः । स्वामिन् ! रैवतकं दुर्गं मत्वा तत्र भाण्डागारे
। स्थापिताः । नृपेणोक्तम्—तत्रागम्यते तदा दर्शयसि ? । देव ! दर्शयामि । नृपस्तु तत्र गतः । पृष्टः—काले ? । उपर्यागच्छत । तथा कृतम् । प्रासादे नेमिं नत्वा बहिरायातः । पृष्टम्—केनात्र प्रासादः कारितः ? । सजनेनोक्तम्—
श्रीसिद्धेशेन । मम तु शुद्धि[रिप न] कथं जातः ? । देव ! इदमुद्धाहितम् । राज्ञोक्तं न मन्यते । ममादेशं
विना कथं कारितः । द्रम्मानानय । आनयामि । कथम् ? । देव ! अत्रत्येनभ्यवर्गणाङ्गीकृतमिता ।द्रम्मान् देवो
गृह्वातु, पुण्यं वा । राज्ञा पुण्यमङ्गीकृतम्, परं मनाम्ना प्रासादोऽस्तु । देव ! त्वन्नाम्नेव, मम दासस्य किम् ।

15 नृपेण तुष्टेन पुनर्व्यापारो दत्तः । अवलोकनासिखरमारुद्ध दिशावलोकनं कृतं सिद्धेशेन । चारणेनोक्तम्—

(१००) मइं नाईउं सिद्धेश तउं चडियओ उज्जिलसिहरि। जीता च्यारइ देस अलीउं जोअइ कर्ण्ये ।।

ततः उत्तरितः।

20

(१०१) जाकु अमात्य-सज्जनदण्डेशाचा व्ययीकरन् यत्र । नेमिसुवनोद्धृतिमसौ गिरनारगिरीश्वरो जयति ॥

(१०२) नाखानि खानितदतो घटितो न दङ्कैर्नास्त्रि सूत्रकलया प्रमितो न मानैः। नाचार्यमञ्जकलया कलितप्रतिष्ठो यः स्त्रेन विश्वकृपया प्रभुराविरासीत्॥

२३. महं आंबाकारितगिरिनारपाजप्रवन्धः (P.)

६३) अत्र धवलेन प्रपा कारिता। महं आम्बाकस्य श्रीकुमारदेवेन सुराष्ट्राव्यापारो दत्तः। तेन व्रजता महं 25 बाहडदेवो विज्ञप्तः। तत्र गतोऽहं रैवते पद्यां कारयामि। मित्रणोक्तम्-कार्या। पश्चात्तेन तत्र पद्या कारिता। व्यये भीमप्री[य]द्रम्मलक्ष ६३। इतः कुमारेशो यात्रायामागतः। साङ्कलीआपद्यायां चितः। वलमानो बाहडदेवेन सुखासने समारोप्याध आनीतः। केनेयं पद्या कारिता १, पृष्टं देवेन। तेनावादि मया। कदा १। ततः स्वरूपं प्रोक्तम्। तुष्टः [सन्] आम्बाकस्य व्यापारो दत्तः।। इति पाजप्रवन्धः।।

(P.) सङ्ग्रहे सोनलवाक्यानि ।

30 १६४) ष(ख)ङ्गारे जीर्णदुर्गाधिपतौ उदयनेन हते तित्रया सोनलदेवी जगाद-(१०३) षडहडीयां षंगार धणीविहूणां धूलहर । गया करावणहार जाइसिइं......ो

(१०४) पइं गरूआ गिरनार काहउं मिन मत्सर धरिउं। मारितां पंगार एक सिहर न ढालिउं।।

Centre for the Arts

- (१०५) बीचलिआ बीजी वार सोरठ म आवे प्राहुणउ। अम्मीणउ भंडार लाई तई छुसी लीउ॥
- (१०६) मन तंबोल म मागि कंषि म ऊघाडई मुहिहिं। देउलवाडुइ सागि तउं षंगारिं सउं गेयउं॥
 - (१०७) जेसल मोडि म बाह बलि बलि वरूए भाविअइ। नदी जिम नवा प्रवाह नवघणविणु आवई नहीं॥
- (१०८) का हउं करिसि गमार अणहिलवाडइ रूअडई। सिहरतणां गिरनार स्तांहीं सालई हीअइ॥ 5
- (१०९) बलि गरूआ गिरनार दीहू नीझरणे झरइ। बापुडली ग्जरात पाणीहइ पहुरउ पडइ॥
- (११०) राणा सबे वाणिया जेसल वडुड सेठि। काहउं वणिजडु मांडीउं अम्मीणा गढहेठि॥
- (१११) गया ति गंगह तीरि हंस जिसी बइसता। अड्डीणइ ढंढारि बगला बइसेवउं करई।।
- (११२) अम्ह एतलइ संतोस जं पहुपाय पेलीआं। इक राणिम अन रोसु बेउ पंगारिइं सर्ड गयां॥
- (११३) वही तउं वहवाण वीसारतां न वीसरई। सोनलकेरा प्राण भोगावहिसिउं भोगव्या॥ 10

(G.) सङ्ग्रहे सिद्धराजसम्बन्धिवृत्तम् ।

§६५) श्रीजयसिंहदेवेऽष्टवार्षिके श्रीकणों दिवं गतः । अष्टवार्षिक एव स सांतूमित्रणा गुणश्रेणि नीतः । कटकं कृत्वा धाराभङ्गप्रतिज्ञां चकार । मित्रणा तृतीये दिने प्रतिज्ञापूरणाय मितर्दत्ता । ततः कणिकधारायां भज्यमानायां परमारपंचशती मृता । तदनु विग्रहायालिगेन सह मन्त्रे विधीयमाने चारणेनैकेनापाठि-

(११४) एहे टीलालेहिं धार न लीजइं करण उत्र। जम जेहे प्रउंचेहिं जोइइ जेसलु आवतउ॥ 15

इति श्रुत्वा वन्दीकृतस्य तस्य लेखः प्रहितः। तेनोक्तम्-पितुराज्ञया समेष्यामि। ततः पित्रा समागत्योक्तम्-वत्स! याहि। तदनु ख्र्यं नि नि विधाय गतः। सैन्ये राजा भेटितः। अत्रान्तरे जसपडहहस्ती मत्तो जातः। राज्ञोक्तम्-जेसल! धाराभङ्गं विधिष्टि। तेनोक्तम्-देव! प्रसीद[सकल] नि द्र्याय। स च गजिशक्षावेदी यशःपटहं स्वीचकार। ततः सहस्राश्रुत्रश्रुव्यत्वारिंशन्मिताः तुरङ्गमाः पृष्टे अप्रतो रम्याः। पत्तयश्र-त्वारो लक्षा देहमोश्च नि कृति। प्रतोत्यां गतो हस्ती। प्रहारे दत्ते दन्तभङ्गः समजिन। ततो लत्ताप्रहारेणा- 20 ग्रीला भग्ना। यदा जेसलेन लत्त्या हत्वा त्याजितः। स तदा त्रिखंड [डो (१) वभृव] यशःपटहो जेसलश्र ख्रयं भवौ जातौ। राजा च वन्दीकृतः। पत्तनप्रवेशे जयसिंहदेवेन राज्ञो कम्-निजमोक्षं विना सर्वं याचस्व। करस्थकु-पाणस्य मम भवान् कवचहीन एव गजाधिरूदस्य प्रवेशं देहि। एवमुक्ते [काष्ट १] श्रुरिकां समर्प्य प्रवेशो विहितः।

ई६६) श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरदेवं नमस्कर्तुं चचाल । मन्नी सांतूः श्रीपत्तने मुक्तः । पंचगव्यृतप्रयाणके कृते घरापतौ मयणछदेवी अग्रे स्थिता याति । अत्रान्तरे मालवेशयशोवर्म्मणा श्रीपत्तनं वेष्टितम् । तदिप श्रुत्वा 25 श्रीसिद्धराजश्रीलत एव, न विलतः । गाढं गढरोधं भिणत्वा मन्निणा दण्डो मानितः । यशोवर्म्मणा श्रीसिद्धराजयात्रा-प्रण्यं याचितम् । ततस्तत्करे पुण्यं दत्तम् । गतो मालवेशः । ततो यात्रां कृत्वा समेतः सिद्धेशः । मन्नी भेटनाय गतः । राजा कुद्धः । मन्निणा मुद्राऽर्पिता । अपरो व्यापारी जातः । अस्वास्थ्यं चौरवाहुल्यम् । ततो लोके राज्ञोऽग्रे पूत्कृतम् । तदवगत्य राजा तत्रागत्य मानितो मन्नी । गृहाण मन्नित्वम् । ततो मन्निणोक्तम्-राजन् ! शृषु । केनापि तपस्विना यूथअष्टः कलभो वर्द्धितः । स च महावस्थाम्रपेतो यावताश्रमोपद्रवं कर्तुं लगः, तावता ३० तपस्वी नष्टः । तदा—

(११५) नीवारप्रसवाग्रमुष्टिकवर्लयों वर्द्धितः शैशवे पीतं येन सरोजपत्रपुरके स्नानावशिष्टं पयः। तं दानासवर्मत्तषद्पदकुलव्यालीदग्रह्हस्थलं सानन्दं सभयं च पश्यति गजं दूरे स्थितस्तीपसः॥

एवं जातम् । राज्ञोक्तम्-पुण्यं मम कथं दत्तम्? । तेनोक्तम्-तवैकस्य पुण्यं दत्तम् । त्वं करं धारय यथा तेषां सर्वेषां पुण्यं तव ददामि । राज्ञोक्तम्-मूढ ! तव भणितेन कथं तेषां पुण्यं दत्तं याति । मित्रणोक्तम्-आभीर ! यद्येवं वेत्सि तदा तव पुण्यं मम दत्तं तत्र कथं याति । स तु मया वचनेन छितिः । हिर्षितेन राज्ञा मित्रत्वं पुनर्दत्तम् ।।

§६७) तीर्थयात्रायां पंचगव्यूतमात्रेणैकप्रयाणेनाग्रभागस्थितया श्रीमयणछदेव्या श्रीजयसिंहदेवपार्श्वात् द्वासप्ततिलक्षप्रमाणो बाहुलोडकरो मोचितः । तद्नु श्रीसोमेश्वरिलंगहेतोर्हेमकोटिपूजा विहिता । पूर्णमनोरथा 10 गर्वमावहन्ती । ततो देवेनेति कथितम् —यत्कस्याश्चित्कार्पिटक्याः पिण्याकपुण्यं याचेः । सा तु नार्पयति पुण्यमिति गर्वपरिहारः ॥

- §६८) अथ मयणछदेव्या पापघटे दीयमाने कोऽपि न गृह्णाति । अत्रान्तरे विषण्णां तां कश्चिद्विजनमा जगा-देति-मातर् ! यदि भवत्रयस्य पापघटान् ददासि तदा गृह्णामि । हिर्षितया तया तसे भवत्रयपापघटो दत्तः । अन्ये सर्वेऽपि विस्सिताः पप्रच्छः-त्वया किं कृतम् ?; पापघटस्थैकस्य निर्वाहो नास्ति, त्वया कथं त्रयं गृहीतम् । 15 तेनोक्तम्-अस्या जनमत्रयेऽपि पापमेव नास्ति, तत्कथं धनं न गृह्यते । सर्वेरपि मानितम् ॥
- \$ ६९) अथ कर्णाटदेशे पुलकेशिराजा ग्रीष्मसमये राजपाटिकायां गतः। सच्छायफिलतसहकारतरोरधी विश्वश्राम । अत्रान्तरे वनविह्नरुत्थितः। तेन दृह्ममानेन वृक्षेण सह राजापि खक्षात्रधर्मभ्रंशभीत्या ज्वलितवान् । तस्य सुतो जयकेशिनामा वृपोऽभृत् । तस्य महाविद्वान् कीडाशुकोऽस्ति । तं विना राजा न शुक्के । अन्यदा राज्ञा भोजनावसरे पंजरात्समाकारितः शुकः । तेन मार्जारभयाद्विभेमीत्युक्तम् । राज्ञा सर्वत्र मार्जारं गवेषितः । न 20 दृश्यते । पुनरुक्तम्—समेहीति । तेनोचे—विभेमीति । राज्ञोक्तम्—समेहि यदि त्वां भक्षयित मार्जारः, तदा भवता सह काष्टभक्षणं करोमि । एवसके समागतः । स्थालाधः स्थितेन मार्जारेण मिक्षतः । राज्ञापि स्वत्रतिज्ञा-भङ्गभयात् सह काष्टभक्षणं कृतम् ॥
- § ७०) गयणा-मयणाभ्यामिन्द्रजालविद्या साधिता । ततः पत्तने नृतने सहस्रलिङ्गसरसि गयणो निजविद्यां प्रकाशियतुं मकररूपेण प्रविश्योपद्रवति । बहुभिरुपायैरलब्धे तत्र राज्ञा पटहो वादितः । लघुआत्रा मयणेन 25 धीरां याचित्वा निष्कासितः । प्रसादितौ तौ राज्ञा ॥
 - § 9१) श्रीसिद्धि-बुद्धियोगिनीभ्यां कदलीपत्रासनोपिवष्टाभ्यां श्रीसिद्धराजो जयसिंहः सिद्धराजत्वं पृष्टः। एवं विषि(प)ण्णेन राज्ञा रात्रौ वीरचर्यायां सज्जनसाकरीयाकः पुत्रेण समं योगिनीप्रतिमल्लत्वं वदन् श्रुतः। प्रातराँकार्य सन्मानितः। तेन सप्तदिनान्ते सितां कावलयित्वा(१) क्षुरिकाद्वयं विधाय परमंडलभेटामिषेण राज्ञेऽपितम्। राज्ञा फलद्वयं भक्षयित्वा लोहसुष्टिद्वयं योगिनीद्वय[ाय भक्षण]हेतोरपितम्। ताभ्यां न भक्षितम्।।
- 30 §७२) श्रीजयसिंहदेवस्थान्यदा महं गांगाकेन आम्राणि प्रहितानि कस्थापि विष्रस्य शये। ततः स श्रीचय-सिंहदेवसदो दृष्ट्वा श्रुभितः। तत आह-राजन्! महं आंविल गांगे मोकल्यां छइं। सता उपरी पसावउ। ततो हसितस्सः।।
 - ९७३) एकदा श्रीसिद्धराजे दिग्विजयं द्वादशवार्षिकं विधाय समागते प्रजा मिलनाय गता । राज्ञां कुशलं पृष्टम् । ताभिरूचे-राजन् ! कुशलमित । परं चेतिस न निर्वृत्तिः । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तैरुक्तम्-राजन् ! असाकं

रक्षको भवदीयसुतो विलोक्यते। राज्ञा तद्र्थं शाकुनिकः पृष्टः। तेन कुमारपालस्य राज्यं कथितम्। राज्ञा चितितम्-मम राज्यं अकुलीनस्य भिनता। तदेनं मारियेष्यामि। इति विचिन्त्य घातकान् सम्प्रेष्य त्रिश्चवनपालो मारितः॥ (G.) सङ्ग्रहे हेमचन्द्रसूरिसम्बन्धिवृत्तम्॥

§ 98) श्रीहेमसूरयोऽष्टम्यां चतुर्द्द्रयां श्रीजयसिंहदेवभवनं प्रयाति । पौषधशालायां सदिस स्थूलभद्रचरित्रं नित्यं वाचयन्ति । एकवेलमालिगपुरोहितेन राज्ञोऽग्रे कथितम् —यन् महाराज ! कोऽयमसत्प्रलापः, सर्वरसभोजने पूर्वपरिचितवेदयाभवने च कामनिग्रहः । परं किं कियते भवद्रष्ठभाः । राज्ञोक्तम् —आचार्या इह समेष्यन्ति तदा वक्तव्यम् । परोक्षे नोच्यते । स्रिरिभरागतम् । राज्ञोक्तम् —यूयं किं किं वाचयन्तः स्थ । ततः स्रिरिभः संक्षेपतः साद्यन्तमपि श्रीस्थूलभद्रचरितं कथितम् । आलिगेनोक्तम् —महाराज ! "विश्वामित्रपराञ्चरः ॥" गुरुभिरुक्तम् —थृणु "सिंहो बली०।" ततः आलिगेनोक्तम् —किं क्रियते असाकीनान्येव शास्त्राणि पठित्वा असाकमेव सम्मुखाः संजाताः । गुरुभिरुक्तम् —ऐन्द्रं व्याकरणं किं भवदीयम् श्रिथाद्यापि श्रीमात्कावर्जं सर्वं नवं करोमि । 10 ततः श्रीजयसिंहदेवाभ्यर्थनया व्याकरणं कृतम् ॥

§ ७५) श्रीहेमस्रिपार्थे कोऽपि वादी कपटेन पृच्छनाय समागतः । पृष्टम्-उर्वशीश्वकारः कीदृशो भवति । स्रीणां मनः सन्देहदोलारूढं सम्पन्नम् । परं सचिन्ता अपि पुरत्तकविलोकनं कुर्वतः [आयातः कार्पटिकः ।] तत उपि भूमिस्थेन लेखकं संपाठयता भाण्डागारिकेन कपिर्वनासा दृष्टाः । तेनेति लिखित्वा पित्रका तथा सुक्ता यथा पृच्छको न पश्यति । तद्यथा-उरू शेते उर्वशी । तद्विलोक्येवं स्थिता गुरवः । पुनस्तेन पृष्टम् । गुरुभिः 15 कथितम् । किं पृच्छन्नसि १ । तेनोक्तम्-उर्वशीशकारः । गुरुभिरुक्तम्-तालव्यः । तेनोक्तमहं वादी परं कपटे-

नागतोऽभृत् । नमो विधाय गतः । गुरुभिरुक्तम्-भांडागारिकेन रम्या चाडा विहितास्ति ॥

§ ७६) केनापि मिथ्यादृष्टिना व्याख्यानानन्तरं श्रीसूरयः पृष्टाः । यूयं सर्वानिप रसान् वेत्थ । परं मम सन्देहोऽस्ति । विष्ठारसः कीद्यः स्यात् । गुरुभिरुक्तम् सत्यं पृष्टम् । परं वयं सर्वानिप रसान् ब्रूमहे । परं रसवेद्काः पृथगेव हि । वयमेतद्रसाभिप्रायं कथियष्यामः । परमनास्त्रादितत्वात् भवान्न मानियष्यति । अतो 20

भवान् पूर्वमास्वाद्यतु-इति वचनेन पराजितः ॥

§ 99) श्रीहेमस्रिमाता पाहिणिनाम्नी अनशने स्वीकृते भूमौ मुक्ता । श्रीसंघेन कोटित्रयधर्म्मव्ययो दत्तः । ततो व्ययो (हपों) न भवति । केवलं रोदिति । रोदनकारणे पृष्टे मात्रोक्तम्-मम सदशा घनतरा अपि विपद्यन्ते । नामाऽपि कोऽपि न वेति । परं मम कोटित्रयं धर्म्मव्यये जातं । तदयं मम सुतश्रीहेमस्रिः प्रमाणम् । परं यस्य मम लगति स किमपि न वक्ति । इत्युक्ते श्रीगुरुभिरुक्षत्रयीशास्त्रपुण्यव्ययो दत्तः । ततो निर्वाणमजनि । 25 ततिस्रिपुरुषद्वारि द्विजैविंमानोपद्रवो विहितः । ततो रुपितैर्गुरुभिरुक्तम्-"आपणपहं प्रसु थाइयइ० ॥" इति विचिन्त्य श्रीकुमारपुरो विच्छाया गताः ॥

§ ৩८) एकदा हेमाचार्याः छत्रशिलायां निविष्टास्तेजो ददशुः । विलोकयतां समीपे समागतं तत् । मध्यग-

तपुरुषभेटः । कृष्णचित्रकार्पणं लोभवृद्धिहेतुरिति निस्पृहैर्निषिद्धः ॥

२४. कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रबन्धः (P.)

(११६) आचार्या बहवोऽपि सन्ति सुवने भिक्षोपभोगक्षमा नित्यं पामरदृष्टिताडनविधावत्युग्रजाग्रत्कराः। चौलुक्यक्षितिपालभालदृषदा स्तुत्यः स एकः पुन-र्नित्योत्तेजितपादपङ्कजनखः श्रीहेमचन्द्रो गुरुः॥



30

ndita Gandhi Naliona Centre for the Arts

- १७९) तिहुअणपालपुत्रः कुमारपालः । तस्य द्वे भगिन्यौ-एका प्रेमलदेवी सपादलक्षाधिपतिना आनाकेन नृपेण परिणीताः द्वितीया नामलदेवी राज्ञो महासाधनिकेन प्रतापमहेन परिणीता ।
 - § ८०) अथान्यदा सिद्धेशो निरपत्यश्चिन्तयति-
 - (११७) निर्नामताम्बुधौ मज्जत्राज्यभूवलयोज्जृतौ । पुत्राः क्रीडावराहन्तः सम्पद्यन्ते महात्मनाम् ॥
 - (११८) घटिकाऽप्येकया घट्या कुम्भीपयसि मज्जति । गोत्रं पुनरपुत्रस्य क्षणान्निर्नामताम्भसि ॥

इति विचिन्त्य देवपत्तने श्रीसोमेश्वरयात्रायै चचाल । परं विहङ्गिकां स्कन्धे निधाय तत्र गत्वा सोमेश्वर आराधितः । स प्रत्यक्षीभूय आह-कष्टं कथं कृतं यत्स्कन्धे विहङ्गिकां विधायेहागतः ? । तेनोक्तम्-सुतं देहि । 10 किं तेन ? । राज्यार्थम् । राज्यधरस्ते कुमारपाली भविष्यति-इत्युक्तं सोमेश्वरेण । नृपो निष्टत्यायातस्त्वेवमचिन्त-यत-चेद्धं मारयामि तदा सोमेधरः पुत्रं यच्छति । अतस्तं मारयितुमारेभे । सोऽपि विंशतिवर्षदेशीयः पुरा-च्छन्नो निःससार । सप्तवारं अमन् केदारयात्रामकरोत् । अन्तरान्तरा प्रच्छन्नमभ्येति तपस्वी सन् । राज्ञा मार्य-माणी नष्टः। सज्जनकुलालेन कोष्टीमध्ये क्षेपितः। तस्य चित्रकूटं दत्तम्। पुनरप्येकदा अनादिराउलमठे प्रविष्टः। कदाचिद्धेमस्रिगुरुपौषधागारे प्रविष्टः । तत्र तैरुक्तम्-संवत् ११९९ मागसिरवदि ४ रवौ तव राज्यम् । परं 15 तव प्रत्यासनं कष्टम् । तदा पौषधागारे आगम्यम् । इतश्चानादिराउलतपस्विसप्तशात्या सार्द्धं जेमनाय गतो नृपवे-इमनि । राज्ञा तपस्त्रिनां पार्थे खद्गधराः [स्थापिताः] सन्ति । यस तपस्त्रिनः पादौ प्रक्षालयन् विम्रुच्य उपरि यामि स मारणीयः । तथा कृते तेषां जनानां तद्भाग्यवशाद्धिस्मृतम् । भोजनावसरे एकं हस्तमुदरे न्यस्थापरं मुखे वान्तिमिषेण नष्टः। श्रीहेमस् ० पौषधागारे गतः। दिन ३ उपवरके तालकं दत्त्वा स्थापितः। ततो भाण्डा-गारिककपर्दिनो दत्तः। तेन खगृहे छत्नं स्थापयित्वा पत्रचोलकमध्ये क्षित्वा २० योजनप्रान्ते मोचितः। कान्त्यां 20 गतः । तत्र सरिस तस्करस्य शिरः केनापि निःकृत्य क्षिप्तम् । तदनु तत्प्रात≯ प्रातरिदं बूते-एकेन बुडित । नृपे-णामात्याः पृष्टास्तैः पण्डिताः । तैर्मास एको याचितः । मुख्यपण्डितः खगृहस्त्रं कृत्वा निर्ययौ । अटवीं अमन् एकसिन् वृक्षकोटरे रात्रौ स्थितः । तत्र भृताः सन्ति । लघुभिरुक्तम्-तातासाकं क्षुधा । तातेनोक्तम्-दिनत्रयान-न्तरं यास्यामि । कथम् १ । प्रत्यासन्तपुरे नृषेण पण्डिताः शिरसो वाक्यं पृष्टाः । ते न जानन्ति । नरेन्द्रस्तान् सकुड-म्बान् व्यापाद्यिष्यति । तैः पृष्टम्-तात ! किं कारणम् ? । निर्वन्थे कृते उक्तम्-लोभेन बुडति । तत्पण्डितेन 25 श्रुतम् । गृहमायातः । मासप्रान्ते नृषेणाहृतः । तेन सरस्तीरे गत्वा उक्तम्-यदि लोभेन बुडित तदा पुनर्न वाच्यम् । शिरस्तथैव स्थितम् । नृपेण प्रासादः कारितः । अतो मध्ये शिरः पूज्यते । ततः कुण्डगेश्वरप्रासादे श्रीसिद्धसेनलिखितां गाथां ददर्श-॥ "पुण्णे वाससहस्से०।" एवं तस्य देशान्तरे ३० वर्षाणि जातानि। कदाचिदुजयिन्यां चर्मकारहट्टे सिद्धेशो विनष्टः श्रुतः । ततः कृष्णमुखो जातः । तेनोक्तम्-किं कृष्णास्या यूयम् १ भवतो नृपः किं सगीनः ? । उत्तरः कृतः-नृपमृतौ को न दूयते । ततः पत्तनमागतः । तत्र भगिनीपतिः प्रता-30 पमछः । तेन जागरणिरेका गृहमानीबा । तया पणबन्धः कृतः । अन्याः सर्वाः पितृगृहे प्रेषय । तेन तिशा-कृते, कुमरस्य स्वसा नामलदेवी पितृगृहमदृष्ट्वा समयज्ञा तस्याश्वरणयोः पपात । तयोक्तम्-किमिद्म् ? । देवि ! त्वं [म]म पितृगृहम्, तव दासीसमा स्थास्यामि । तया कथितम्-स्थीयताम् । इतः कुमरिको भगिनीं एत्य प्राह-अहं क्षुधा मिये, मम दशां पश्य । खस्रा उक्तम्-मम भ्राता भवान् । तया वेश्योक्ता-मम भ्रातुर्दालिमुप्टेरादेशो दीयताम । तथाकृते स पाणउठे (?) नित्यं दालिमुष्टिं गृह्णाति । इती नृपे मृते यो यो राज्ये स्थाप्यते स स

प्रधानैरपाऋियते । एवं सिद्धेशस्य पादुके राज्यं कारयतः । एकदा प्रतापमल्लो रात्रौ वैकालिकं कर्तुम्रपविष्टः । सा वेक्या परिवेषयति । नामलदेवी दीपकरा पराखी (?) वर्त्तते । तां दृष्टा प्रतापमछ उवाच-रे ! तव आता का-प्यस्ति । तया वेश्या दृष्टा । उक्तम्-पाणउठे प्रतिदिनं दालिसुष्टिं गृह्णाति । तत्र पृष्टसीरुक्तम्-यद्य नायातः । तेन गवेषयितुं नराः प्रहिताः । ते प्रपादि शोधयितुं नराः प्रवृत्ताः । इतः प्रपायां कुमरिको बोसरिकद्विजेन वार्त्ताः कुर्वन् श्रुतः-रे बोसरिक! अद्य द्युताक्षिप्तेन दालिरापि नानीता। ततोऽस्मिन् सम्मुखे हट्टे गत्वा दीपच्छायायां करं 5 प्रक्षिप्य चणकमुष्टिं समानय । तेनोक्तम्-प्रथिलोऽसि । तव प्रातः पितृराज्यं भविष्यति, मम त्वारक्षकैर्बाह्रविछ-द्यते । इति श्रुत्वा नृपपुरुषेरभाणि स कः ?। कुमरिकेनोक्तम्-को विलोक्यते ?। कुमरिकः । केन हेतुना ?। प्रता-पमछ आकारयति, चलत । इतो बोसरिकेन ज्ञातम्-एष मारणाय नीयते । स जीवग्राहं गतः । कुमारोऽपि खसु-पतिं भणित्वा नमश्रकार । तेनोक्तम्-यदि राज्यं दिश्व तदा मे किम् ? । यद्भणिस तत् । तिर्हे यावजीवं साध-नम् । वर्षं प्रति लक्षत्रयं द्रम्माणाम् । प्रातर्नृपकुले आगम्यम् । क्षुधार्त्तः स्थितः । बोसरि प्रपायां न पश्यति । 10 अचिन्ति-राज्यं सन्देहे, बोसरिरपि गतः । इतः प्रातर्दन्तधावनं कृत्वा नगरान्तः प्रविश्वति । तावत्खङ्गकरवैज्ञा-निकं दुदर्श । तेन खड़ी दत्ती वन्दितः । चिन्तितं मम कार्यं जातमेव । शकुनं भव्यम् । तेन किमपि न याचि-तम्। अग्रे मोचिकेनोपानहौ दत्ते। दोसिकेन बस्नाणि। मालाकारेण पुष्पाणि। ताम्बुलिकेन पत्राणि। ततो राजकुले गतः । प्रतापम्छेन प्रधाना उक्ताः-कुमारः किं न स्थाप्यते १, सोऽपि धनिकोऽस्ति । तैरुक्तम्-स्थापयत । असिबलेन तदा राज्यं जातम् । सं० ११९९ । ततोऽप्यनेकानि कष्टानि अनुभूतानि । एवं कद[र्थ]नेन वर्षत्रयं 15 गतम् । पश्चाद्राज्यं सले जातम् ॥ ॥ इति कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रबन्धः ॥

२५. राणक अंबडप्रबन्धः (P.)

\$८१) अन्यदा कुङ्कणे जालपतनं श्रुत्वा महिरावणाधिपतिं मिल्लिकार्जुनं प्रति द्तं प्राहिणोत्—तथा विधेयं यथा जालं न पतित तव देशे । तेन च वलमानं विज्ञापितम्—यदावयोरेप पणः । कुङ्कणाधिपो गूर्जरेशस्य विगि(१)कायां पत्राणि पूर्यित, तत्करोमि अन्यदिषकं न जाने । अत्र जना मत्स्यमांसरताः प्रायश्चान्नदौर्थ्यात् । श्रीकुमार-20 पालेन कथापितम्—यदनं तथा प्रेपिण्ये यथा पत्त(१)नाथों भवति । तेनोक्तम्—सर्वथा नैतत् । इतः श्रीकुमारपालः कुद्धः सन् प्राह—राजा (ज्ये) कोऽपि वीटकं मिल्लिकार्जनोपिर प्रहीष्यिते । इतः श्रीवाहडदेवश्चात्रा अम्बडेन वीटकं गृहीतम् । प्रौढकटकेन चिलतम् । तेन मागें घाटी रुद्धा । तत्र कटकं हतप्रहतं जातम् । अम्बडो निवृत्तः । कुष्ण-शृङ्कारः कृष्णाश्चः कृष्णगुप्तोदरः पत्तनवाह्ये स्थितः । नृपं नन्तुं न याति । नृपेणोपिरिस्थितेन गुप्तोदरं दृष्टं पृष्टं च—रे किमेतत् १ । तैर्निवेदितम्—स्वामिन् ! अम्बडोत्तारकोऽसौ । इतः स्वर्यास्तेऽम्बडो द्वारिकया प्रवित्त्य नृपं २५ पाश्चात्येन [न]त्वा पृष्टौ स्थितः । अग्रे एहीति नृपोक्ते, देव ! मया स्वस्वामिनः कालिमानीता । अतो रात्रौ समेतः । यद्युक्वलो भवामि, तदा दिने समेष्यामि । इतो नृपो वीटकमादाय उक्तवान—गृक्षीत । कोऽपि न गृह्वाति तदा भट्टेनोक्तम्—यदा रासभः प्रचण्डस्तदा तुरगेन समं कथसुपमीयेत । तथा विणक् नृपप्रसादेऽपि क्षत्रि-यपौरुपान्वितः स्थात् । इत्युक्तेऽम्बडेनागत्य वीटकं गृहीतम् । सभ्येरुक्तम्—अग्रेऽपि कटकं हतप्रहतं कृतम् । शेप-मिप तथा करिष्यति । ततोऽम्बडो समीपमेत्य अश्ववारपञ्चश्चतीं याचितनान् । स तां गृहीत्वोपिर पथेन हेरकं ३० कृत्वा मिल्लिकार्जनं वेडायां स्थितमश्चान् वाहयन्तं प्राह—भो ! शक्तं कुरु । अम्बडस्तमङ्गाङ्गेन युष्चा शिरः पात-यत् । इतथारणेनोक्तम्—

(११९) अंब[ड] हुंतु वाणीउ मछिकार्जुन हूंत राउ । पाडी माथउं वाढीउं उअडिहिं देविणु पाउ ॥



शिरिक्छत्वा वाहीआलीकिसोरसप्तशती, शेषतुरगाश्वभाण्डागारम्, कोष्ठागारम्, सेङ्यकं दन्तिनम्, नव धडी हिरण्यस, चतुरस्रं कलशम्, मृटक ९ मौक्तिकानाम्, माणिकउ पर्छेडउ, शृङ्गारकोडि साडी, सहस्रकिरणता-डङ्क २, पापक्षयो हारः, संयोगसिद्धिः शिप्रा-एवंविधं सर्वमादाय अस्वडः पत्तनं गतः । नृपः सम्मुखमाययौ । मिल्लिकार्जुनिशिरसा नृपपादावपूजयत् । नृपस्तुष्टः, अम्बडस लाडदेशसुद्रां ददौ । हस्ती दत्तः, कैलशस्य(अ) 5 मिल्लकार्जुनजयस्चकः । खगुप्तोदरादयः । इतो हिस्तिनमादायाम्बडः खगृहं गतः । वाग्भटदेवो नमस्कृतः । वत्स ! देवं नमस्कुरु । तथा कृते सति पुनरप्युक्तं बाहडदेवेन मित्रणा-इयन्ति दिनानि राजपुत्रस्त्वमभूः । अधुना व्यापारी जातः। अतः श्रीहेमसरीन् कुलगुरूनमस्कुरु। पौषधागारे गतः। तैस्तु धर्मलाभो न दत्तः। आङ्गीर्वादो-ऽस्तु । गृहे गत्वा प्रोक्तम्-अहं पौषधागारे गतः । तत्र गुरूणां धर्मालाभस्यापि सन्देहः । मित्रणा वाग्भटदेवेन गुरव उक्ताः-यद्भवद्भिर्धर्मलाभो न दत्तः । गुरुभिरुक्तम्-यदि असाभिनोंक्तिसिर्हि किं भृगुकच्छेन गतः । प्रासादं 10 कथं श्रीमुनिसुत्रतस्वामिन उद्धरिष्यति । अनेकानन्यायान् करिष्यति । मन्त्रिणा वाग्भटदेवेनाम्बडस्याग्रे उक्तम् । तेनोक्तम्-मम गुरव उद्धृतेः । प्रासादे हृष्टाः । द्विवेलमुद्धृते भोक्ष्ये, परं भृजं (१) विना युष्माभिः किमपि न वक्त-व्यम् । ततश्रिल्वा भृगुपुरे गतः । प्रवेशे जाते मश्चम्रपविष्टः । इतो देवीपूजिका योगिनीभिरन्विता समेत्यानभ्यु-त्थिता समीपे समीपे समेत्य विवेश । अम्बडेन कूर्पराहता मञ्जकाद्वहिः पपात । मृता । कर्म्मस्थायः प्रारब्धः । वर्षेण सम्पूर्णः। शिलाकोटिघटितः प्रासादो जातः, राणकोद्यनस्य मनोरथश्च। अम्बडेन श्रीपत्तने एका विज्ञप्तिः 15 श्रीकुमारपालदेवस्य १, एका गुरूणां २, एका वाग्भटदेवस्य, ३ एका श्रीसङ्घस्य; एवं ४ प्रहिताः । वाग्भटेन श्रीगुरूणां पुरो विज्ञप्तिर्धक्ता। इदं किम्?। एषा अम्बडस्य विज्ञप्तिः। वर्षमेकं गतस्यासीत्। अद्य का विज्ञप्तिः ? । विलोकयत । प्रतिष्ठोपर्याकारणमागतम् । मन्त्रिन् ! एतत् सत्यम् ? । अहं किं जाने, विज्ञप्तिः कथयति । तर्हि चल्यताम् । नृपो गुरुभिः सह प्राचालीत् । इतोऽर्द्धमार्गे जनः सम्मुखमाययौ । यदम्बडो न शक्रोति । गुरवः सङ्घं विम्रुच्य भृगुपुरे गताः । इतः प्रक्षीणधातुरम्बडो दृष्टः । देवीप्रासादं गत्वा ध्यानेन निविष्टाः । 20 इतो मुख्यपूजिकोदरे उदरवाढिर्जाता। सा कोक्स्यते। परिचारिका एत्य प्रभुमुनुः। असाकं खामिनी मुच्यताम्। तर्हि अम्बडोऽपि मुच्यताम् । स सकलो जग्धः पीतश्च । तर्ह्येषाऽपि म्रियताम् । जीवन्ती किं करोति । एक एव सार्थोऽस्तु । सा अत्यर्थं पीडिता प्रभृनेत्यावदत्-प्रसादं कृत्वा मां मुश्चत । अम्बडमपि मुश्च । तरु(?)वेष्टितं कृत्वा घृतकुम्भ्यां प्रक्षिप्ते यदिति वक्ति, म मारिति मां कर्षति । ततः कृष्ट्वा स्नानं कार्यः । यदि जल्पिष्यते स तदा त्वमपि सजा भविष्यसि । दिनत्रयान्ते अम्बडः सजो जातः । साऽपि च । इतः श्रीसङ्घान्वितो नृपः प्राप्तः । 25 गुरुभिः साकमम्बडः सम्मुखो ययौ । अम्बडेन दत्तकरा गुरवः प्रदक्षिणां यच्छन्ति । प्रासादं तुङ्गमालोक्य गुरुभिरुक्तम्-मया देवं गुरुं विना कोऽपि न स्तुतः। तव कीर्त्तनेन किश्चिद्रक्ष्यामः। आदिशत।

(१२०) किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं किमसौ किलः। कलौ चेद्भवतो जन्म किलरस्तु कृतेन किम्॥

प्रतिष्ठा जाता । आरात्रिकोत्तारणाय नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तम्—त्वमेवोत्तारय । वाग्भटेनाप्यनुमतः । 30 कर्तुमुद्यतः । नृपेण शृङ्खलं कनकमयं स्वकण्ठादुत्तार्याम्बडगले क्षिप्तम् । तेन च याचकानां पठतां गृहसारं दत्तम् । द्वारभट्टस्य तस्मिन् शृङ्खले दत्ते नृपेणोक्तमवतारय । तथा कृतेऽम्बडेन पृष्टम्—देव ! किम्रुत्सुका जाताः । मया ज्ञातं जीवमपि दास्यसि । मम त्वया बहुकार्यमस्ति । सङ्घार्चादिषु जातेषु पुनः सङ्घः पत्तनं प्राप्तः । तत्र चैत्यवलानके ९ घडी सुवर्णस्य चतुरसं कलशं ददौ ।

६८२) अथैकदा नृपः सेवायातं मिल्लकार्जनसुतं प्राह-पापक्षयादिरत्नपश्चकस्यौत्पत्यं वद । देव ! मिल्लिकार्ज-उठ नादेकविंशः पूर्वजो धवलार्जनस्तस्य पश्चदश प्रिया आसन् । एका नरेन्द्रसुता खड्नेन परिणीता । आनीय बन्दीवास्थापि । नृपत्तां वेत्तीव न । शेषा मान्यतमाः । सा तु दैवमेवोपालभते सा । अन्यदा पुरे काचित् परिव्राजिका आगता । सा चेटीभिः राज्ञीसकाशमानीता । तयोक्तम्-किं वेत्सि ? । साऽऽह-

(१२१) दंसेमि तं पि सिसणं वसुहावइन्नं थंभे वि तस्स वि रविस्स रहं नहद्धे। आणेमि सबसुरसिद्धगणं गणाओं तं नित्थ भूमिवलये महू जं न सिद्धं॥

प्रसीद, मम पति वशीकुरु । तया करे सर्षपा जिपत्वा ऽपिताः । यथा तथा नृपस्य [भोजन]मध्ये देयाः । 5 तया शाकं कृत्वा शिप्रां भृत्वा चेट्युक्ता-भोजनावसरोऽस्ति देवस्य परिवेषय । सा शृङ्गारं कर्त्तुं गता । देव्या चिन्तितस्-न ज्ञायते कदाचिदेषा वैरिणा प्रहिता स्यात्तदा मे पतिमारिकायाः का गतिः स्यादिति मत्वा गवाक्षस्याधः समुद्रस्तत्र शित्रां ढालयामास । चेटी उक्ता-शाकं सम्प्रति तिष्ठतु । कथम् ? । तत् करात्पपात । इतस्तेन वशीकृतः समुद्रो नृपरूपं कृत्वा रात्रावायातः । स तु देव्या नृपवदुपचरितो नित्यमेति । इतो देवी सगर्भाऽभृत् । चेटीं प्राहिणोत्-देव ! सीमन्तोन्नयनाय मुहूर्त्तमसत्स्वामिन्या गणापयत । नृप आह-का त्वम् १, 10 का तव स्वामिनी ? । अहं तस्या नामापि न जाने । कस्य सुताणीता । तया यदकृत्यं कृतं तन्मम किमुच्यते । साऽऽगत्य देवीं प्राह-इत्थं निवेदयति । तयोक्तं समये ज्ञास्यते । इतः पुत्रो जातः । स्रतकशुद्धेरनन्तरं बा.....य प्रतोलीमेत्य उपविष्टा । मम शुद्धिं यच्छत । जातायां बालः स्तनं गृहीष्यति । नृपेणोक्तम्-मम साराऽपि न।अधुना खङ्गेन परिणीता श्रुता, परं दृष्ट्वापि न।पुत्रस्य काप्रधानान् प्रैपीत् । एन्मम दृषणं तत्र न मया सोढव्यम् । सा न मन्यते । पट्टराज्ञी प्रहिता । स्त्री स्त्रीभणितेन मन्यते । सा एत्यावादीत्-किमिदमार-15 ब्धम् ?। तयोक्तम्-तव कुले इदं......मम तु न। नृपः खयमेत्य तां प्राह-तव ममाधुना दर्शनम् , पुत्रस्य तु का कथा ? । उत्थीयताम् । देव ! सर्वथापि वार्त्ता दिव्यं विना न वाच्या । प्रधानैर्दिव्यं दत्तम् । राज्ञी सुतबहिर्ययौ । पौरसहितो नृपश्च । तत्र लोहमयी नौस्तस्यां समिधरोप्य, दिन्यकर्ता क्षिप्यते । शुद्धे तरत्यशुद्धे ब्रुडति । सा राज्ञीति कामा श्रावणामकरि.....त्यवद्राव इत्युक्तवा नावमधिरुरोह । सपुत्रापि ब्रुडिता । लोकः कोलाहलं यावत्करोति -तावनावमधिरूढा देवी सशृङ्गारा शृङ्गारकोटिशाटीपरिधाना, सहस्रकिरणताड-20 ङ्काभ्यामलङ्कृतकपोला, प्रापक्षयेण हारेण विराजितवक्षःस्थला, माणिक्यपटेनाच्छादितवाला, संयोगसिद्धिशिषा-करा सर्वेरिप दृष्टा शुद्धताला पपात । नृपेण नगरमध्ये प्रवेशिता । नृपो निशि तद्वेश्मनि इयाय । तयोपचरितः पृष्टवान-अहं सर्वथा न जाने त्वं त सत्येव या सम्रद्रेण शोधिता। इतः सम्रद्रदेवेन, प्रत्यक्षीभृयादितोऽपि खरूपमुक्तम्-नास्थापराधः । नृपेण सुतस्य बालधवल इति अभिधा चक्रे । सा राज्ञी पट्टराज्ञी कृता । एतानि तानि रत्नानि तस्यैव समर्पितानि ॥ इति राणकाम्बडप्रवन्धः ॥

२६. कुमारपालकारितामारिप्रवन्धः (B.P.)

§८३) अथैकदा श्रीकुमारपालदेवेन अमारी प्रारब्धायामाश्विनशुदिपक्ष आयातः । कण्टेश्वरीप्रभृतीनामबोटिकैर्नृपो विज्ञप्तः—देव! सप्तम्यां पञ्चनां सप्त शतानि सप्त महिषाः, अष्टम्यामष्टी शतानि अष्टी महिषाः, नवम्यां नव
शतानि छागानां नव महिषाश्व देव्ये नृपेण देयाः । पूर्वराज्ञामयं क्रमः । नृषः प्रभूणां पार्श्वे गतः । कथिता
बार्ता । कर्णे उक्तं नृषः श्वत्वोत्थितः । भाषितास्ते देयं दास्थामः । वहिकाश्रमाणेन पश्चवो देवीसदने निश्चिप्ताः । ३०
तद्वारे तालकं दत्त्वा नृषः स्वसौधं गतः । प्रातरायातो नृषः । उद्घाटितानि द्वाराणि । मध्ये दृष्टाः पश्चवः रोमन्थायमानाः । राज्ञा अवोटिकां अभिहिताः—यद्यमूभ्यो देवीभ्योऽरोचिष्यन्त तदा प्रसिष्यन्त । 'परं न प्रसाः ।

 $^{1 \} B$ प्रभृतिपूजकै: । $2 \ B$ पूजका: । $3 \ B$ नास्ति । \dagger एतदन्तर्गता पंक्तिः पतिता P आदशैं । प्र॰ प्र॰ स॰ 6

25

तसादमुभ्यो मांसं नेष्टं किन्तु भवतामेवेष्टम् । तसाद्दं जीववधं न करिष्ये । ते विलक्षाः स्थिताः । छागमूल्य-समेन धनेन नैवेद्यानि कारितानि । अथाश्विनशुक्कदशम्यां कृतोपनासः क्ष्मापो निशि चन्द्रशालायां स्थितः । ध्यानेन पश्चपरमेष्टिपदं जपन्नस्ति । बहिद्धाः सन्ति । गता बह्वी निशा । एका दिव्या स्त्री प्रत्यक्षीभूय जगाद-राजनहं तव कुलदेवी कण्टेश्वरी । त्वयाऽसाकं देयं च न दत्तम् । नृपेणोक्तम्-दयालुरहम् , अतःपरं पिपीलिका-5 मिप न हिन्म, का कथा पश्चनाम् । कण्टेश्वरी इति श्रुत्वा कुद्धा नृपं शिरिस त्रिश्रूलेन हत्वा गता । नृपस्तत्क्षणा-त्कुष्टी जातः । विखिना भृत्येन उदयनतनूजं वाग्भटमाकार्य पप्रच्छ-मन्त्रिन् ! देवी पशून् याचते, दीयन्ते न वा । मित्रणा दाक्षिण्यादुक्तम्-देव ! दीयते । मित्रन् ! विणगिस, यदेवं ब्रूपे तर्हि ममातः परं जीवितव्येनालम् । राज्यं प्राप्तम्, धर्म्मो लब्धः संसारतारकः, शत्रवी हताः । त्वरितं काष्ट्रसञ्जतां कुरु । येनेदशं मां र्द्युः जनी धर्मसोड्डाहं विधास्यति । गुरून् गत्वा मुत्कलापय । राज्ञा विसृष्टो गतो गुरूणां पार्श्वे । स्वरूपं निवेदितम् । 10 गुरुभिनीरमानाय्य कलापनीय(B कालापानीय)मर्पितम् । तेन पूर्व देहाभ्यङ्गः कृतः पश्चात्पीतं च । नृपस्त-रक्षणं सुवर्णवर्णो जातो वपुषि । प्रातर्गुरूणां नन्तुं गतः । ततो गुरुभिर्देशना चक्रे । पश्चादमारिविषये विशेषी-द्यमः कृतः ॥ एवममारिविषये क्रमारपालप्रबन्धः ॥

२७. कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रवन्धः (B.)

§८४) एकदा ग्रुहिमरुपदेशो दत्त:-

(१२२) शूराः सन्ति सहस्रशः प्रतिपदं विद्याविदोऽनेकशः सन्ति श्रीपतयो निरस्तधनदास्तेऽपि क्षितौ भूरिदाः। [ज्ञात्वा-]कर्ण्य निरीक्ष्य चान्यमनुजं दुःखार्दितं यन्मन-स्ताद्रप्यं प्रतिपद्यते सपदि ते सत्पूरुषाः पश्चषाः ॥

एकदा प्रश्नुभिर्भरतस्य चिक्रणः साधर्मिकवात्सल्यकथा कथिता । नृपस्तां श्रुत्वा प्रतिग्रामं प्रतिपुरं साध-20 र्मिकवात्सल्यमारेमे । तदृष्ट्वा कविः श्रीपालपुत्रः सिद्धपालोऽपाठीत्-

> (१२३) क्षिह्वा वारिनिधिस्तले मणिगणं रत्नोत्करं रोहणो रेण्वावृत्त्यसुवर्णमात्मनि दृढं बद्धा सुवर्णाचलः। क्ष्मामध्ये च धनं निधाय धनदो विभ्यन् परेभ्यः स्थितः किं स्यात्तैः कृपणैः समोऽयमखिलाऽर्थिभ्यः खमर्थे ददन् ॥ द्रम्मलक्ष १ दानम् । पं० श्रीधरेणोक्तम्-

पूर्व वीरजिनेश्वरे भगवति प्रख्याति धर्म खयं पज्ञावलभयेऽपि मन्त्रिणि न यां कर्त् क्षमः श्रेणिकः। अक्रेरोन क्रमारपालं चपतिस्तां जीवरक्षां व्यधात यस्यासाच वचस्सुधांशुपरमः श्रीहेमचन्द्रो गुरुः ॥

अत्रापि लक्षदानम् । 30 अन्येद्युः कथाप्रसङ्गे प्रभवः प्राहुः-पूर्वं भरतो राजा श्रीमालपुरे श्रीशत्रुञ्जये सोपारकेऽष्टापदे च जीवित-खामिप्रतिमाश्रकार । श्रीसङ्घस्तचक्रोच्छलितरजः पुञ्जध्यामलितदिक् चक्रवालः सङ्घपतिर्भृत्वा ववन्दे । तदाकर्ण्य श्रीकुमारपालनृपतिः खयं कारिते देवालयेऽर्हद्भिम्बमारोप्य ससैन्यः शत्रुञ्जयोजयन्तादियात्राये चचाली सङ्घेन

सह—उदयबसतो वाग्भटश्रतविंशतिमहाप्रासादकारापकः, नागराजश्रेष्ठिभूः श्रीमानाभडः, पद्भाषाचकवर्त्ती प्राग्वाटश्रीपालः, तत्तनयः सिद्धपालः कवीनां दादणां धुर्यः, भाण्डागारिकः कपर्दी, परमारवंश्यः प्रह्लादनपुर-निवेशकारकः प्रह्लादनः, राजेन्द्रदौहित्रः प्रतापमल्लः, नवनवतिलक्षस्रण्णैस्वामी ठकरलाडाकः; तथा श्राब्रिका देवी श्रीभोपैलदे, नृपपुत्री लीख, राणाअंबडमाता, वसाह आभडपुत्री बाई चांपलदे-इत्यादिकोटीश्वरो लोकः । सरयः - श्रीदेवाचार्याः, श्रीअभयदेवस्रिरिशिष्याः श्रीजिनचन्द्रस्रयस्तेषां गुरुवान्धवाः श्रीजिनवछ्रभ- 5 सूरयः, श्रीचैत्रगच्छीयाः श्रीधर्मसूरयः, श्रीवीराचार्याः-इत्यादिसूरिवर्गः । श्रीदेवसूरीणां भगिनी प्रवर्त्तिनी सर-स्रती, श्रीहेमचन्द्रस्ररीणां महत्तरापुष्पचूलाद्याः साध्व्यः । लक्षसंख्या मानवाः । एवंविधेन सङ्घेन सह स्थाने स्थाने प्रभावनां कुर्वन् चैत्यपरिपाटीं च कुर्वन् याचकेभ्य इच्छानुरूपं भोजनं यच्छन् श्रीवर्द्धमानमार्गेण रैवतकाद्रौ गतः । सांकलिआलीपद्यातले श्रीसङ्घः स्थितः । राज्ञोक्तम्-प्रभो ! पादमवधारयत, यथोपरि गम्यते । गुरुमिरु-क्तम्-हे कुमारपालराजन् ! यूर्यं गच्छत, वयं पश्चादेष्यामः । नृपेणोक्तम्-गुरून्विनोपरि कथं यामि ? । गुरु-10 भिरुक्तम्-अत्रेद्दशो जनप्रवादः, यत् यदोत्तमनरद्विकं छत्रशिलाऽधो यास्यति तदाऽनर्थः । अतो यूयं पूर्वं व्रजत । नृपस्तु धौतवासांसि परिधायोपरि गतस्तदनु गुरवः। सर्वं तीर्थकार्यं कृत्वा नृपो वाग्भटदेवेन नृतनपद्यया मित्र-णाऽऽम्रेण कारितयोत्तारितः। तदनु तलहद्दिकायां जीर्णादुर्गे सङ्घवात्सल्यं सङ्घपूजां च कृत्वा देवपत्तने ससङ्घो नृपो गतः । तत्र श्रीचन्द्रप्रभादितीर्थात्रमस्कृत्य वलमानः श्रीशत्रुञ्जयमधिरूढवान् । चैत्यपरिपाट्यां जायमानायां 15 भाण्डारिकः कपर्ही प्राह-

> (१२५) श्रीचौलुक्य! स दक्षिणस्तव करः पूर्व समासूत्रित-प्राणिप्राणविघातपातकसम्बः शुद्धो जिनेन्द्रार्चनात्। वामोऽप्येष तथैव पातकसम्बः शुद्धिं कथं प्राप्नुया-न्न स्पृद्येत करेण चेयतिपतेः श्रीहेमचन्द्रप्रभोः॥

१८५) मेरुमहाध्वजा-महापूजा-अमारिकादिसर्व प्रवर्त्तितम् । मालोद्घट्टनसमये राज्ञि सङ्घे चोपविष्टे मन्नी 20 वाग्भटदेवो द्रम्मलक्ष्वजुष्कमवदत् । केनापि च्छन्नेनाष्टो लक्षाः कृताः । एवं क्रमेण वर्द्धमानेषु कश्चित्त्सपादकोटी-अकार । नरेन्द्रअमत्कृतोऽवादीदुत्थाप्यताम् । स उत्थितः । यावदृत्र्यते मिलनवसनो वणिक् । राज्ञा मन्नी उक्तः - द्रम्मसौस्थ्यं कृत्वा मालां प्रयच्छं । मन्नी तेन सह पादुकान्तिके गत्वा द्रम्मसौस्थ्यं पप्रच्छ । तेन सपादकोटि-मूल्यं माणिक्यं द्रितम् । मन्निणा पृष्टम्-इदं ते कृतः ? । तेनोक्तम्-महुआवास्तव्यो मम पिता हंसो नाम सौरा-ष्ट्रिकः प्राग्वाटः । तत्पुत्रोऽहं जगढः । माता मे धारू । मम पित्रा मरणसमयेऽहं भाषितः न्वत्स ! मया प्रवहण-25 यात्राश्चिरं कृताः, फलिताश्च । मेलितं धनम् । तेन क्रीतं सपादकोटिमूल्यं रत्नमेकेकम् । एवमधुना मम श्रीयुगादि-चरणः शरणम् । अन्यन्तं प्रतिपन्नम् । उक्तं च-एकं श्रीनेमिने, एकं श्रीचन्द्रप्रभाय, द्रयमात्मनोऽन्तर्धनं द्रध्याः । बाह्यधनमपि तव प्रचुरमस्ति । इदानीं यात्राये मया माता सहानीताऽस्ति । कपिहंभवने मुक्ताऽस्ति । तां जरन्तीं मातरं सर्वतीर्थाधिकतया पुराणपुरुपैनिवेदितां मालां परिधापयिष्यामि । श्रुत्वा मन्नी हृष्टः सङ्घं च सम्मुलं नीत्वा महोत्सवेनानीय सङ्घसमक्षं मालापरिधानं कारितम् । तन्माणिक्यं खर्णजाटितं कृत्वा कण्ठामरणे ३० मध्यमणिस्थाने निवेश्य श्रीयुगादिदेवाय दत्तम् । देवं मुत्कलाप्य खयमारात्रिकमाधाय सङ्घः समुत्तीर्य क्रमेण चिलतः । प्राप्तः श्रीपत्तेन । प्रवर्तितं सङ्घवात्सल्यम् । प्रतिलाभिताश्च [साधवः] । अमारिस्तु शाश्चतेव ॥

।। इति श्रीकुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रबन्धः ॥

२८. कुमारपालंपूर्वभवप्रबन्धः (B.)

§८६) एकदा श्रीकुमारपालेन श्रीहेम्रसूरयः पूर्वभवस्त्ररूपं पृष्टाः । ततः सूरयः सिर्द्धपुरे गताः । प्राचीमाधवाग्रे इमशानभूमौ चतुरः श्रावकान् कृतोपवासान् चतुर्दिश्च तपोधनांश्चर्त्वारो विदिश्च स्थाप्य खयं त्रिभ्रवनस्वामिनीं विद्यां स्मृतवन्तः । देव्याह—सरणकारणं वदत । तैस्तु नृपभवः पृष्टः । देव्याह—मेदपाटदेशे चित्रक्टप्रत्यासन्ने 5 ऊपरमालपर्वते परमारवंशीयो जैत्रः पछीपतिरासीत् । सोऽन्यदा धाराया गगनभूलेर्नायकस्य दशसहस्रवलीवर्दमितं सार्थं जगृहे । नायको नंष्ट्रा मालवेशमाह । राज्ञोक्तम्-मया तस्य किमपि कर्तुं न शक्यते । तेनोक्तम्-मया शक्यते । कटकमादायाज्ञातवृत्त्या पह्न्यां गतः । जैत्रो नष्टः । तेन कीटमारिं कृत्वा जयतापत्त्याः सगर्भाया उदरं विदार्थ बालं भूमावास्फोट्य वलित्वा च तं नृपं प्रति खवृत्तमुक्तम् । नृपेणादृष्टन्योऽयमिति तिरस्कृतो जनैर्निन्द्यमानस्ताप-साश्रमे गत्वा ग्रद्धिकृते तपस्वी जातः । अथ जैत्रः स्थानभ्रंशाचोरवृत्त्या जीवन्नेकसिन सार्थे मिलितः । सार्थे 10 स्थिते श्राद्धा देवपूजां विधाय सरसः पालौ व्रजन्तो वीक्ष्य तैः सार्द्धं गतः । ते तपोधनान् नमस्कृत्य धर्मोपदेशं श्रत्वा क्षमाश्रमणपूर्वं तपोधनानादाय गताः । स तथैव स्थितस्तपोधनाः समायाताः । स न उत्तिष्ठति । मयि बुभुक्षिते कथं भोक्ष्यन्ति मुनयः। श्राद्धानाहूय भोजितः। तद्तु गुरुभिरुक्तम् –त्वं चौर्यस्यादत्तस्य नियमं गृहाण। तेनोक्तम्-यद्यदरपूरणं भवति तदा नाहं करोमि । तैः श्राद्धपार्श्वीच्छम्वलं दापितम् । स क्रमेण सार्थाचलितो गुरुभिर्नियमं सारितः । उरंगलपत्तने गतः । तत्र ओंढरनायकाट्टे उपविष्टः । तेनागतेन पृष्टम्-क यास्यसि ? । 25 तेनोक्तम्-यत्रोदरपूर्त्तिर्भविष्यति । नायकेन स्थापितः । शुद्धवृत्त्या सश्चरन् विश्वासपात्रं जातः । एकदा चतुष्पदे विसाधनहेतौ प्रहितः । इतो हट्टान् दीयमानान् दृष्ट्वा पृष्टम् । तैरुक्तम्-सूरयः समायाताः । सम्मुखैर्गम्यते । तेन चिन्तितम्-अहमपि यामि । यदि ते मे गुरवो भवन्ति । इति मत्वा स्रीनुपलक्ष्य नमस्कृतवान् । गुरुभिः कुशलं पृष्टम् । स क्रमेण विसाधनमादाय गतः । नायकेन पृष्टम् । तेन वृत्तमुक्तम् । नायकः सुभद्रकत्वात्तत्र तेन सह गतः। "न कयं दीणुद्धरणं" इत्यादिव्याख्यानान्ते सुबुद्धो धर्ममङ्गीकृतवान्। गुरूनाह-दक्षिणां याचत । 20 तैरुक्तम्-अत्र जिनालयो नास्ति तं कारय । तथाकृते प्रासादप्रतिष्ठा जाता । एकदा पर्वदिने नायको वस्त्राणि निर्मलानि परिधाय जैत्रेण सह प्रासादं गतः । तेन पूजा कृता । जैत्रायोक्तम्-त्वमपि पूजां कुरु । तेन किमपि द्रव्यमासीत्तेन पुष्पाण्यादाय पूजा कृता । पौषधागारे नायकेनोपवासः कृतो जैत्रेणापि । पश्चाद् गृहे गतो धौतवस्त्राणि मुक्तानि । जैत्रो भोजनायोपविष्टः । परिवेष्य यावत् स्थितस्तावत्पारणार्थी मुनिराययौ । कालेनान-शनमादाय खर्ग्यभृत् । जैत्रोऽप्यनशनमादाय त्रिभ्रवनपालदेवसुतो जज्ञे । नायकजीवस्तु जयसिंघदेवो जातः । 25 पूर्वभवपातकादनपत्यो जातः । ततो गुरुभिर्नृपाय निवेदितम् । नृपो हृष्टः ।। इति कुमारपालदेवपूर्वभवप्रबन्धः ।।

२९. द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः (Br.)

§ ८७) एकदा श्रीपत्तने द्वात्रिंशदिहाराणां प्रतिष्ठां महदुत्सवेन प्रारब्धां श्रुत्वा वटपद्रपुरनिवासी वसाह कान्हाकः स्वयं कारितप्रासादविम्बमादाय श्रीपत्तने प्रतिष्ठार्थमाययौ । हेमाचार्याः प्रतिष्ठार्थेऽभ्यर्थिताः । तैर्मानितम् । इत-स्तिसन् दिने जनसम्मदी जातः । रात्रौ घटी मण्डिता । इतो वसाहस्य भोगाद्यपस्कारो विस्मृतः । तेन तमानीतुं ३० गते लग्नघटी असमये वादिता । स आगतः । मध्ये प्रवेशं अलब्ध्वा लग्नघटीं श्रुत्वा विषण्णः । प्रतिष्ठापश्चाजनो विरलो जातः । कान्हाकोऽप्यन्तः प्रविश्य गुरूणां चरणयोर्लगित्वा बाढं रुरोद् । मदीयं विम्बं प्रभो ! स्थितम् । ग्रुरुभिरूर्ञ्वमवलोकितम् । लग्नं तदा वहमानं विलोक्योक्तम्—भो ! त्वं पुण्यवान् , लग्नमधुनास्ति, परिच्छेदं कुरु विम्बप्रतिष्ठायाम् । स न मन्यते । ग्रुरुभिः प्रतिष्ठां विधायोक्तम्—यदि न मन्यसे तथा देवं पृच्छ—एतत्त्रध्यं न

वा । विम्वेनोक्तम्—तथ्यं मो ! तव विम्बं वर्षशतत्रयायुः । एतानि वर्षत्रयायुंषि भविष्यन्ति । इतः कश्चित् व्यवहारी स्तम्भतीर्थं वाणिज्याय गतः । तत्र तेन श्रीदेवाचार्या नमस्कृताः । पृष्टम्—िकमद्य कल्ये नृपः पुण्यकम्म
तनोति ? । तेनोक्तम्—द्वात्रिंशदिहाराणां प्रतिष्ठा जाता । तस्य उत्सवस्य किं वण्यते । लग्नं वेत्सि ? । अमुक्तम्युमानम् । इदं लग्नं हेमाचार्यैर्निरूपितं न वा ? । यदि निरूपितं तदा महत् श्रुण्णं जातम् । स पुनः पत्तनमाययो ।
हेमाचार्यैः पृष्टम्—श्रीदेवस्तरयो नमस्कृताः ? । स्वरूपमुक्तम् । त्वया कारणं किमपि न पृष्टम् ? । मया ज्ञातं यदुक्तिमसहमानाः कथयन्ति । इतः श्रीदेवाचार्याः पत्तनमागताः । श्रीहेमाचार्यात्रमस्करणायाऽऽगच्छतो विलोक्योकृम्—तपोधनाः ! नृपगुरूणामर्थे उपवेशनमानयत । श्रीहेमाचार्या विस्तिताः । यावद्वन्दन्ते तावदुक्तम्—हे
नृपगुरवः ! इहास्यताम् । हेमाचार्यैरुक्तम्—प्रभो ! ममोपिर कथमप्रसादः ? । प्रश्वभिरहं दर्शनविरुद्धे पथि सञ्चरन्
दृष्टः श्रुतो वा ? । कथयत—प्रतिष्ठालग्नं भवद्भित्तित्व न वा ? । निरूपितम् । तत्र कृरकर्त्तरीयोगोऽस्ति । एतस्त्रमं
पूर्वकृतानामपि प्रासादानामनर्थहेतुः । भगवन् ! किं क्रियते ? । गुरुमिरुक्तम्—स्तोकदोणं वहुगुणं कार्यं कार्यं 10
विचश्वणौरिति विचिन्त्य यदमी प्रासादा मूलतोऽप्यपाकृत्य नृतनास्तदा सर्वेऽपि प्रासादाः स्थिराः स्युः । प्रभो !
एतन्न युज्यते । तर्हि भवितव्यतेव वलवती भवतां कोऽपराधः ॥ इति द्वात्रिंशदिहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्।

§८८) श्रीकुमारपालः भावस्थितौ अमन् श्रीसिद्धपुरे गतः। तत्र शकुनान्वेषणे तेन कोऽपि मारवोऽभ्यर्थितः— . किं मे भविता?। अत्रार्थे गतौ वहिः। ततो देव्याह्वाने कृते देवी श्रीम्रुनिसुव्रतचैत्ये आमलसारके खरद्वयं कृत्वा, 15 ततः कलशे त्रयं, ततोऽपि दण्डे खरचतुष्टयं च विधाय स्थिता। ततः स शाकुनिकः प्राह—तव जिनभक्तस्य सतो राज्यप्राह्यादि अधिकाधिकं पदं भवितेति।।

§८९) अन्यदा श्रीकुमारपालस्य कस्यापि कौटुम्बिकस्य गृहे हालिकत्वेन वर्त्तमानस्य सकणशकणांवाभारमुद्ध-हतः शिरस उपरि दुर्गयोपविश्चय स्वरोऽकारि । ततः शाकुनिकः गृष्टः । तेनोक्तम्-तव राज्यं भविष्यति । परं तव सन्ततिर्न भविता । यतो युगन्धरीधान्यं सर्वधान्योत्कृष्टम्, तेन राज्यम् । यतः प्रभोहेंतोर्भारकः, तेन न 20 सन्ततिस्तव ॥

§९०) तपोधनवृत्त्या वर्तमानस्य श्रीकुमारपालस्य राज्यावसरे श्रीप[त्तनो]परि गच्छतः पथि [दुर्गा] पूर्वं वब्बूल-वृक्षे निविश्य स्वरश्रके तद् राफमध्यान्निःसृतफणिः फणोपरि.....सार्थे वहमानः मारुयकः पृष्टः । तेनोक्तम्-दिनत्रयेण तव राज्यं भविष्यति । परं प्रहरत्रयेण विधं विद्यते । तद् सार्थे तृतीये यामे मेघवृष्टौ... ...मध्यान्निःसृते कुमारपाले द्वाद्शजनोपरि विद्युत्पातः समजनि । ततस्तृतीये दिने राज्यं जातम् ॥

§ ९१) अन्यदा श्रीजयसिंहदेवो दिवं गतः । तदनु अष्टादश्चिद्नानि यावत्पादुकया राज्यं कृतम् । ततः श्रीहेमस्विश्वितिदेनोपिर कुमारपालः समागच्छन् निश्चि कडीग्रामपाद्रशासादे स्नुतः । तत्रारक्षकः परिश्रमन् आगतः ।
चौरच्छलेन कुट्टयित्वा प्रावरणकम्बलादि गृहीत्वा स सक्तः । प्रातः सम्रत्थाय पत्तने नड्डलाकान्हडदेवस्य निजभावुकस्य गृहं गतः । ततो भगिन्या दुक्लानि दन्ता राजभवनं प्रेषितः । तत्राग्रे त्रयो राजप्रतिपन्नपुत्रा राज्यं
दन्त्वोत्थापिताः । कुलक्षणैरेभिः । तत एकेनोक्तम्—अहं सर्वं मारियिष्याम् । द्वितीयेनोक्तम्—यत् यृयं भणिष्यथ ३०
तदहं किर्ष्यामि । तृतीयो दुक्लाञ्चले रुलमानैरुपविष्टः । अत्रान्तरे कुमारपालः समागतः । कान्हडेनोक्तम्—भव्यं
कृतं यद्धुना समागतः । राज्ये भवानेव । इत्यं वारितेनापि कृष्णदेवेन राज्यं दत्तम् । ततश्चतुईशराज्यस्थानमहाध्र, ४ राउल, ७२ मंडलीक, ८४ राणा, ३६० सामन्तपरिवारः प्राकारबिहिर्निर्गत्य स्थितः । ततो नित्यं
कथापयन्ति कृष्णदेवस्य ते प्रधानाः—त्वया किं कृतं यदस्य राज्यं दत्तम् १ । तेन कथितमहं न मारियिष्यामि,

यूर्य मारयथ । मया राजा समग्रपरिवारो राजपाटिकोपायेन बाह्ये निःकासितोऽस्ति । ततो राजा दृष्टिकलया विनष्टं वीक्ष्य पश्चाद्रलितः । प्राकारासन् कान्हडदेवं विस्त्रयित्वा ततो निश्चि सप्तश्चतमितगढसंखराजपुत्रहस्ते दीपिका अपीयत्वा राजगोध्रईयाकं सुप्तं विधृत्य एकरात्रिमध्ये समग्रमपि राजचकं वशीकृत्य राज्ये निविष्टः ॥

§ ९२) श्रीकुमारपालेन राज्ये प्राप्ते तत्क्षणं कडीतलारक्षस्थाकारणे सुखासनेन समं लेखः प्रहितः। स च विसग्रियापन्नमनाः समागतो राज्ञा सन्मानितः। ततो विशेषविस्मयोऽजिन । अत्रान्तरे युगपत् स्नानद्रोणी.....तेन
पृष्टिर्द्शिता......सकशाप्रहारां वीक्ष्य विषण्णेन चिन्तितं यदसौ मां मारियण्यिति विषं दच्चा। ततो
भोजनावसरे राज्ञा बहुमानेन निजरसवतीं भोजियत्वा राणकपदं दत्तम्। इत्थं विषि(ष)ण्णः क्षीणतेजा ज्ञातः ।
राजा तु पुनः पुनः चरान् परिषृच्छिति। स चाद्यापि जीविति। स इत्थं चतुःपथानितक्रम्य प्रतोलीद्वारे गतो
मृतः। राज्ञोक्तम्-[आ! बाढं] ढाढिसिकः। सर्वैः पृष्टं-राजन्! किमेतद्वयं न विद्यः। अतो राज्ञापि सर्वो वृत्तान्तो
विनिगदितः। अतो मया मारणार्थमस्य प्रौढिर्दत्ता। यथा मम महत्त्वं स्थात्॥

१९३) एकदा कुमारपालदेवः सप्तदिनानि यावत् बुस्रुक्षितः कस्यापि गोधूमक्षेत्रे कलिङ्गानि गृहीत्वा अरघट्ट-घटिकया वाफयित्वा रात्रौ यावद्भक्षितुं लग्नः, तावद् हालिको दण्डस्रुद्यम्य धावितः। परं क्षेत्रपतिना रक्षितः।

राज्ये प्राप्ते कालिङ्गीयको नाम्ना ग्रामो दत्त आघाटे तसी।।

§९४) अन्यदा श्रीकुमारपालो दिनत्रयं श्लुधितः परिश्रमन् कस्यापि व्यवहारिणो गृहे प्रविश्य निविष्टः।

15 गृहाधिपतेर्लेखकं विद्धतो मध्यरात्रिरजनि। ततस्तेन चिन्तितं—यद्यसौ न श्रुक्तोऽस्ति, तदा भोजियष्यामि। ततः

पृष्टे स व्रह्मभकलत्रगृहे प्रेपितः। तया तस्ते भोजनं न दत्तम्। द्वितीयया हिप्तिया दत्तम्। प्राप्ते राज्ये राज्ञः स्थालं

गृहीत्वा चौरैस्तस्य श्रेष्टिनो हट्टे व्ययितम्। ततो राज्ञा आकारितो व्यवहारी। उपलक्षितः। राज्ञोक्तम्—तव

कलत्रद्वयमास्ते। तेनोक्तम्—एवमेव। राज्ञोक्तम्—आकारय तत् द्वितयम्। यथा तव सकुदुम्बस्य निग्रहं करोमि।

कुदुम्बे समेते पूर्वोपकारीति भणित्वा राज्ञा तस्य प्रसादो दत्तः॥

20 ६९५) पुरा श्रीकुमारपालेन श्वयाहे पिण्डदानसमये उधियमाणे द्वारभट्टेन मयणसाहारेण पितामहपिण्डे प्रोक्तमिति—राजन्! राजपितामहं मिल्लिकार्जुनं पितृणां मेलय तद्नु पिण्डं उद्धर। इति श्रुत्वा राज्ञा पिण्डः पथान्युक्तः।
राज्ञा बीटके दीयमाने सकलेऽपि राजमण्डलेऽधो विलोकयित बाहडवारितेनापि आम्बडेन बीटकं जगृहे। राज्ञा
कटकं राजिगिरं च समर्प्य प्रेपितः। संप्रहारे सकलमिप बलं भग्रम्। तत आम्बडः कृष्णगुरूदरोदरान्तः कृष्णवासाः कस्तूरिकानुलेपनः पत्रपुटभोजी कस्यापि निश्चि दिने निजवदनं न दर्शयित। राज्ञा तद्विज्ञाय स्वयमागत्य
25 सन्मानं दन्वेति प्रोक्तम्—मम मिल्लिकार्जुनविग्रहे त्वमेव सेनापितः। पुनर्दितीये वर्षेऽश्वसहस्र ४४, पत्तिलश्च ३
मितं कटकं दत्तम्। तेन मिल्लिकार्जुनं विग्रच्य नान्यस्य मे प्रहार इति प्रतिज्ञातम्। सत्वरं गत्वावेष्टितः। युद्धे
जायमाने निजौ चरणौ परदन्तिदन्ते दत्त्वा तत्राधिरुद्ध कोङ्कणस्वामी व्यापादितः। कोङ्कणं गृहीतम्। मृटक १८
मौक्तिक। संयोगसिद्धि सिग्रा। सहस्रकिरण ताडंक २। अग्निपसालु पछेवडउ। ग्रङ्कारकोडी साडी। सेडउ पट्टहस्ती। अष्टोत्तरसहस्रमौक्तिकहारः त्रिसरकः। चतुश्चत्वारिग्रदङ्गलप्रमाणं मरकतिलङ्गं नीलकण्ठस्य। एतदानीय
30 राज्ञः पादौ शिरसा सह पूजितौ। अत्रान्तरे द्वारभट्टेनोक्तम्—

"कीडी रक्ख करंतु चडिउ रणि मइगल मारइ०॥"

१९६) श्रीआम्बडोपि रणांगणपतितो जगादिति-देवबुद्ध्या जिनेन्द्र एवास्ति । गुरुः श्रीहेमसूरिरेव । स्वामी श्रीकुमारपाल एव । ततः केनापि कविना इति जगाद-"वरं भट्टैभीव्यं० ॥"

§९७) अन्यदा श्रीकुमारपालेन पृथिवीमनृणां कर्त्तुं गुरवः सुवर्णसिद्धिं पृष्टाः । गुरुभिरुक्तम्-मम.गुरवो
35 जानते, नाहमिति प्रवन्धो ह्रेयः ॥

- §९८) प्रकदा श्रीकुमारपालेनात्मनः श्रीजयसिंहस्यान्तरं पृष्टम् । सभ्येरुक्तम्-श्रीसिद्धराजस्याष्टौनवति गुणाः, दोषद्वयं देहे । भवति अष्टनवति दोषाः, गुणद्वयम् । भवान् विक्रमी, कृतज्ञश्च । श्रीसिद्धराजस्तु मत्सरी, दीर्घरोषी च ॥
- १९९) श्रीसङ्घयात्रायां जायमानायां रैवतिगरौ छत्रशिलाकम्पे जायमाने राज्ञा पृष्टैर्गुरुमिरूचे-द्वात्रिंश-स्रक्षणोपेतं पुरुपद्वयं यदि शिलाधो यास्पति तदा शिला पतिष्यति । अतो नव्यपद्यया देवनमस्करणं विधास्यामः । इत्युक्ते आम्बाकेन नव्या पद्या कारिता ॥
- § १००) अथ महापूजायां महाभोगे विधीयमाने धूपधूमान्तरिते गर्भगृहान्तरे प्रश्वभिः श्रीसोमेश्वरः प्रत्यक्षी-कृतः । देवादेशेन ततः प्रभृति मजाजैनः कुमारपालोऽभृत् ॥
- १९१) अथ श्रीदेवेन्द्रस्रिमिः श्रीसेरीसके तीर्थे निर्मिते कान्तीत आकृष्टिविद्यया महाविम्बानि समानीतानि । मनसीति चिन्ता जाता-श्रीपत्तनं सेरीसकं च एकमेव विधास्मामि । अत्रान्तरे गाजणपतिनृपतेरुपरि 10
 कटकं विधाय श्रीकुमारपालदेवः श्रीप्रभुभिः सह तत्रागतः । श्रीदेवपादान्त्रमस्कृत्य श्रीदेवचन्द्रस्ररयो नमस्कृताः ।
 श्रीस्रयः कथितवन्तः—राजन् ! वर्षासु कथं कटकबन्धः । राज्ञोक्तम्—साम्प्रतं छलं विना गाजणपतिने विनश्यति ।
 स्रिमिरुक्तम्—कथं भवद्वरूणां एतावत्यि शक्तिर्नास्ति । राजा मौनेन स्थितः । ततस्तैरुक्तम्—अत्राद्य कटकं
 स्थापय । अहं गाजणपतिमानेष्यामि । निश्चि स्रिरिमराकृष्टिविद्यया देवतावसरं कुर्वद्विर्गाजणपतिरानीतः । परस्परं
 मैत्री जाता । अक्षरैः पाङ्कलां (१) पत्राणि जातानि ॥
- १९०२) श्रीहेमाचार्येरवसानसमये सगद्भदं राजानं समीक्ष्योक्तम्-मम तव च पण्मासान्तरमेवास्ति । ततः प्रभोरवसानानन्तरं रामचन्द्रेण श्रीसङ्घस्य पुरः पठितमिति-"महि वीढह सचराचरह०॥"
- § १०३) अथ पण्मासान्तरे श्रीकुमारपालेन भूमौ मुक्तेन श्रीवीतरागविम्बद्र्शने उक्तमिति-"सावय-घरंमि०॥" अत्रान्तरे मिल्लकार्जनभांडागारनीतसंयोगसिद्धिसिप्रा जलपानार्थं याचिता। अजयपालदेवोक्तैश्रार-क्षकेर्नार्पिता। तदा चारणेनोक्तम्-"कुयरड कुमरविहार०॥"

३०. अजयपालप्रबन्धः (P.)

\$ १०४) अथाजयपालेन प्रासादेषु पात्यमानेषु, यमकरणं तारणदुर्गोपरि सम्बद्धं प्रातः प्रयास्यतीति श्रुत्वा वसाह-आभडमुख्यः समग्रोऽपि सङ्घः पर्यालोचितवान्-विलोकयत श्रीकुमारपालदेवेन प्रासादाः कारिताः, अनेन दुरात्मना पातिताः । कोऽपि इदं न वेत्स्यति यन्नुपः श्रावकोऽभूत्र वा । तारणदुर्गप्रासादो रक्षितुं शक्यते तदा भव्यम् । सीलणाग कुतिगिया विनाऽन्योपायो नास्ति । तस्य गृहे चलत । ते तत्र गताः । सङ्घर्त्ताम्युत्थितः । 25 करौ संयोज्य उक्तम्-मिय विषये महान् प्रसादः । किं कार्यम् १ । भोस्त्वं वेत्ति पूर्वनृपेण प्रासादाः कारिता अनेन पातिताः । एकस्तारणदुर्गस्यावशेषोऽस्ति, सोऽपि प्रातः पतिष्यति । यदि त्वया रक्ष्यते । अन्यः कोऽप्युपायो नास्ति । तेनोक्तम्-एष भवतां प्रमादः । पूर्वं ज्ञापितोऽभूवं तदैकोऽपि नापतिष्यत् । यज्ञातं तज्ञातम् । त्वयाऽमुं रक्षता सर्वेऽपि रक्षिताः । सङ्घः सत्कृत्य विसृष्टः । स नृपसमीपं गतः । देव ! म्रुत्कलाप्य यामि । भोः क यासि १ । देव वयमुत्पन्नभक्षकाः । सर्वं भक्षितम् । कापि रायने गत्वा त्वनाम्ना द्रविणमादाय पुनरेष्यामः । नृपेणोक्तम्-यदि ३० पत्तनं विहाय यूयमन्यत्र यात तदाऽहं लज्ञे । अवसरं दास्यामि । देव ! अवसरो भवति वा यामि १ तिर्हे सज्जतां कृत्वा सन्ध्योपर्येहि । नृपेण सर्वः कोऽप्याहृतः । प्रारब्धं प्रेक्षणम् । इतः सीलणेन इष्टिकाः समानीय पातिताः मृधिकांरासभानि रङ्गान्तः समाजग्रुः । पानीयं च । किटकस्त्वाकारितः । प्रासादं कुरु । तेन कृतः । मृध्ये

एकस्य देवस्य स्थानं कुरु । तेन कृतम् । ध्वजाऽऽरोपं कृत्वोक्तम्—देव ! गजान्ता लक्ष्मीः, ध्वजान्तो धर्मः । अथाहममुं निर्माय कृतकृत्यो जातः । शयनं विधास्ये इति शुकटीं (मुखे पटीं ?) कृत्वा सप्तः । इतः पुत्रेणागत्य देवकुलिका
पादिता । सीलणः पटीं त्यक्त्वोत्थितः सन् प्राह—रे ! केनेदं पातितम् । भवतो ज्येष्ठपुत्रेण । सीलणेन स चपेटया
हतः । रे ! त्वमस्थापि सद्दशो नः एतस्थापि नृपतेहींनः । अनेन नृपति[ना पित]रि शृते तस्य कीर्चनानि पातितानि,
त्वया तु मम जीवतोऽपि पातितम् । मम मृत्युरपि न प्रेक्षितः । इति श्रुत्वा नृपस्य नेत्रयोनीरं पपात । सीलण !
किं कथयसि ! । देव ! विमृश तथ्यमिद्मतथ्यं वा । गृहस्थः कीर्चनं कारयति यावन्मम कोऽपि भविष्यति तावदस्य सारा भविष्यति । ये पतितास्ते पतिताः, शेषाः सन्तु । एक एवावशेषोऽस्ति यः स तव नाम्ना । यमकर्णुं
व्यावर्त्यताम् । इत्थं कृते प्रासादाश्वत्वार उद्गरिताः ।। इति तारणगढप्रासादरक्षणप्रवन्धः ।।

§ १०५) अथ राज्यानृतीये वर्षे पर्यूषणापर्वणि थारापद्रीये प्रासादे श्रावका मिलिताः । आभडवसाहेनोक्तम्-10 समयं विलोकयत ! । यत्र तपोधनानां सहस्रा आसन् तत्राद्य स कोऽपि न दश्यते यस्य मुखात्प्रत्याख्यानमपि क्रियते । कापि केन [पत्त नमध्ये श्रुतो वा दृष्टो वा । एकेन कर्णे प्रविश्योक्तम् -यद्राजपुत्रवाटके धरणिगः श्रेष्ट्यस्ति । तेन जङ्घाबलपरिक्षीणाः स्वगुरवः स्थापिताः सन्ति च्छन्नम् । तदनु वसाहस्तस्य गृहे गतः । तेनाभ्यत्थितः, पादमवधार्यताम् । अद्य सांवत्सरिकपर्वणि तपोधन क तपोधनाः सन्ति ? । तेन भूमिगृहे नीत्वा गुरवो दर्शिताः । वसाहस्तु चरणयोर्निपत्य रोदितं प्रवृत्तः-भगवन् ! स कोऽपि नास्ति यो.....दुरात्मानं 15 नृपं शिक्षयति । गुरुभिरुक्तम्-शक्तिरस्ति परं सान्निध्यकर्त्ता कोऽपि विलोक्यते । वसाहस्तु तस्यैव श्रेष्टिनः शिक्षां दत्त्वा ययौ । गुरवो जष्ठं प्रवृत्ताः । इतस्तृतीयदिने.....र्जाता । यतो मदीयौ धांगा-वइजलियाख्यौ पदाती स्तः । तयोर्माता सहागदेवी । सा स्वैरिण्यस्ति । सा नृपेणानीयान्धकारे स्थापिताऽस्ति ।.... वइजलिकः पीत्वा समायातः । नृपेण हास्ये प्रारब्धे उक्तम्-रे ! याचस्व स्वैरम् । तेनोक्तम्-देव ! अधुनाऽवसर-योग्यं दीयताम् । नृपेणोक्तम्-उपवरिकायां व्रज । परं वदनं नावलोकनीयम् । स तत्र गतः । इतः पृष्ठे दीपकरः 20 समाययौ । तेनाम्बा दृष्टा, सवित्र्या पुत्रो दृष्टः । परस्परं लिखतौ । वइजलेन धांगाऽग्रे उक्तम्-नृपेणैवंविधं हास्प्रमकारि । तदहं मरिष्ये । तेन साक्षेपमुक्तम्-मारयिष्ये न वदसि, मरिष्ये वदसि । अमुं मारयिष्यावः । इति निश्चित्य स्थितौ । नृपस्तु राजपाट्यां निर्ययौ । वलमानः सन्ध्यायां सुखासनासीनोऽन्धंकारे प्रतोल्यां प्रविश्चन् , वइजलेन कपाटपार्श्वात्रिर्गत्य धांगाकेन सह स्थितेनोभाभ्यां नृपो हतः। कलकले जाते वइजलो नष्टः, धांगाको हतः । राजा तु तत्रैव पपात । जनो दिशो दिशं गतः । इतो लब्धसंज्ञस्तृपितो राजा रिंखन् प्रतोलीप्रत्यासन्ने 25 तन्तुवायगृहे प्रविष्टः । गर्चायां मुखे वाहिते, तन्तुवायेन लक्कटः क्षिप्तः, खानं मत्वा । तेन दीर्णशिरा पपाठ-

> (१२६) धांगा दोसु न वइजला न वि सामंतह भेउ। जं मुणिवर संताविया तह कम्मह फलु एहु॥

इति वदन् पीडया मृत्वा श्वभ्रं ययौ ॥ इत्यजयपालप्रबन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहगतं अजयपालवृत्तम्।

^{30 §}१०६) श्रीअजयपालेन श्रीकपर्दिमत्री अमात्यताहेतोरुपरुद्धः । मत्रिणोक्तम्-मनसा समालोच्य देवादेशं विधास्मामि । इति भणित्वा गृहं प्रति गच्छत ईशानदिशि वृषभखरपश्चकं वामभागेऽजनि । तन्मारुयकस्य मित्रिणा कथितम् । तेनोक्तम्-न भव्यम् । यदयं वृषः शिववाहनम् । अतः परं शिवशासनं विजयि भविता । ततथ न गृहीतं अमात्यत्वम् । राज्ञा धृतः । तत्रस्थरामचन्द्रेणोक्तम्-"जो करिवराण कुम्भे० ॥"

§१०७) श्रीहेमस्रिरिश्यो रामचन्द्र-बाल्चन्द्रो । गुरुभिः सुशिष्यं भणित्वा रामचन्द्रस्य विशेषविद्याः दत्ताः । मानं च दत्तम् । तत्कोपेन बालचन्द्रो निःसृतः । तस्याजयपालेन सह मित्रत्वं जातम् । राज्ये प्राप्तेऽजयपालेन रामचन्द्रस्थोक्तम् –श्रीहेमचन्द्रस्रीणां सकला विद्या मम मित्राय बालचन्द्राय देहि । तेनोक्तम् –गुरूणां विद्याः कुपात्राय न दीयन्ते । राज्ञोक्तम् –तिर्हे अग्नितत्र जिह्वां खण्डियत्वा उपविश्वता तेन दोधक पश्च शती कृता ॥

३१. धर्मस्थैयें सज्जनद्ण्डपतिप्रबन्धः (B.)

§ १०८) अथ दण्डपितसञ्जनप्रवन्धः—श्रीपत्तने प्रथिलमीमदेवो राज्यं करोति स । तेन सहस्रकला वेश्याऽन्तःपुरे श्विप्ता । सा राज्यचिन्तां सकलां करोति । दण्डपितः सज्जनः श्रीमालज्ञातीयो मजाजैनो राज्याधिकारं करोति
सा । स देवपूजां विना न श्रुङ्के, प्रतिक्रमणं विना न शेते । अथैकदा पत्तनोपिर तुरुष्काणां सैन्यमाययो ।
दण्डनायकसज्जनेन वनासनदीतीरे गाडरो नामाऽरयष्ट्रस्तत्र रणक्षेत्रं सजीकृतम् । देवी सहस्रकला खयं सज्जनदण्ड-10
[नाय-]केन सह सैन्यमादाय सम्भुखमागता । अश्वसहस्र २४ मजुष्यसहस्र ३२ सार्धम् । तत्र प्रात्यप्रद्विमित निश्चिकाय । रात्रौ शस्त्रजागरणं कृतम् । वीराणां सन्नाहाः समर्ण्यताः । गजा १८ गुडिताः । अश्वाः सर्वेऽपि सज्जिताः ।
प्रश्वरां प्राहिताः । इतो देव्या सज्जनो दण्डपितः सैनान्येऽभिषिकः । स सन्नाहमादाय यामिन्याः पाश्चात्यप्रहरे
गजमधिरुदः। चतुर्दिश्च सन्नद्वैवौरैर्वृतः । इतो मन्त्रिणा गजस्कन्वे स्थापनाचार्यं निवेश्य प्रतिक्रमणं कृतम् । पार्श्वस्थिश्चिन्तितम्—अस्मार्तिक युद्धं भविष्यति । तेन सामायिकं पारितम् । रणरसोत्सुका वीरा उभयोः पश्चयोमिलिताः । ।
महान् रणः समजित । सज्जनदण्डशेन स्वयमुत्थापनिका कृता । शरीरे घातदशकं लग्नम् । परं म्लेच्लिसेन्यां निर्दारितम् । रणः शोधितः । इतो देवी स्वयमेत्य दुक्ताञ्चलेन सज्जनगात्रं प्रमार्ज्य गुप्तोदरे निनाय । इतः पार्श्वस्थेरक्तम्—देवि ! दण्डनायकस्य काऽप्यपूर्वा वार्ता । पाश्चात्ययामिन्यां 'एकेन्द्रिया [द्वीन्द्रिया]' इत्युक्तम् । प्रातर्थद्वं
तथा कृतं यथा केनापि न कियते । देव्या पृष्टम्—दण्डश ! किमेतत् ? । देवि ! रात्रौ स्वकार्यं कृतम् , प्रातस्तव ।
यत् पिण्डस्त्वदीयस्तेन यत्कृतं तत्तव कार्यम् । मम सायत्तमम । एवं च तुरुष्कान्विजत्य देवी पत्तनं थ्याप्ता। । मन्नी सज्जाङ्गो जातः ।। इति धर्मस्थैरं सज्जनदण्डपित्रवन्धः ।।

३२. मन्त्रियशोवीरप्रवन्धः (P.)

१०९) श्रीजावालिपुरे श्रीसमरसिंहनृपाङ्गजः श्रीउद्यसिंहस्तस्य मन्नी दुसाजस्तत्पुत्रो यशोवीरस्तस्य भार्या सुहागदेवी, सुतः कर्म्मसिंहः। एकदा सण्डेरगच्छोद्भवैः श्रीईश्वरस्तिरिमरुक्तम् हे मन्निन् ! तव पुरे धारागिरिवा-टिकाऽस्ति। तत्र अद्यदिनात् पोड्यमे दिने तव वाटिकामध्ये स्थितस्य द्विप्रहरवेलायां यो द्विजः समभ्येति, व्यत्या तस्मिन् दृष्टमात्रे 'पादमवधार्यताम्, अधुना प्राप्तकालं शीतोदनं कियताम्'। तत्र क्र्रकरम्यो दक्षा कृतः, शाके लिम्बुकं च भोजनीयम्। तद्गु द्रम्मसहस्र (३०००) वासणे प्रक्षिप्य एका त्रिपट्टदुक्त्ला मिट्टिवेया। भव्यसीत्या चिन्तनीयम्। मन्त्री तां सामग्रीं कृत्वा वाटिकायां गतस्तत्र क्रीडितुं प्रवृत्तः। इतो नागडनामा भट्टपुत्रस्तिदिन-लङ्कनावसाने—अद्य यशोवीरं वन्दी करिष्ये वा मे चिन्तितं भोजनं प्रयच्छिति—इति विचिन्त्य मन्त्रिणं वाटिकायां मत्वा विवेश। मन्त्रिणा दृष्टमात्र एव उक्तः—सत्वरमेत्य श्रुज्यताम्। भोजने दिशिते सुस्थीभृतः। ग्रुखं प्रश्लाल्य अभोक्तग्रप्तिवृद्धः।अनन्तरं मन्त्रिणा वस्त्राणि द्रम्माश्च दिश्वताः।तेनोक्तम्—मन्त्रन् ! ममाभिप्रायः त्वया कथं ज्ञातः ?। अद्य मे मनसि इत्यासीत्—यदेवं ददाति वा मारयामि । मन्त्रिणोक्तम्—किमत्र ज्ञानम् ?। नागडेनोक्तम्—मन्त्रिन् ! मया तवोपकारः कथं कर्तु श्रुक्यः। परं तथापि मे दैवः किमपि ददाति, त्वयाऽऽत्मानं ज्ञाप्यम्। एवमाल्याय

पु॰ प्र॰ स॰ 7

गतः। क्रमेण नागडस्य श्रीपत्तने श्रीकरणं जातं राज्ञः श्रीवीसलदेवस्य। पश्चात् राउल-उदयसिंहराजादेशे समायाते मूं(वी?) सलदेवस्य किंकिकमर्ण्य। नागडाग्रे त्रा(झ?) गर्डं च कथयति। राज्ञा रुप्टेन ससैन्यो मन्त्री नागडः प्रहितः। सुन्दरसरोपकण्ठे कटकं स्थितम्। विग्रहः प्रारब्धः। टङ्कशाला पतितुमारब्धा। षण्मासान्ते दण्डेन भव्यं विधाय म.....स्थाने गतः। उदयसिंहस्तु तथैव जल्पति। नागडो नृपाग्रे प्रतिज्ञामाधीय जावालिपुरग्रहणे प्रौढकटकेन विश्वतः। क्रमेण स्वर्णगिरि[दुर्ग] पृष्टौ वाघरा.....कटकमावासितम्। राउलेनोपरि स्थितेन सर्व दृष्ट्याऽवलोक्य, यशोवीरं प्रत्युक्तम् – मित्रन् ! सर्वस्वमपि दत्त्वा नागडं पश्चा.....वर्त्तय। जीवतां सर्व भविष्यति। मन्त्री मध्या- ह्ववेलायां भव्यार्थे चिलतः। इतः प्रतोल्यग्रे खेजडीतरोस्तले गोगामठे एकश्चारणश्चिटतोऽस्ति तेन........मित्रणं प्रति.....

(१२७) [दूसा]...जग्र (?) वीर जड आव्यां दल वाघराई। मोटी हूंती हीर देसह वासेवा तणी॥

10 मित्रणा चिन्तितम् –वलमानोऽस्य कर्णावपाकरिष्ये......गतः। राणकः प्रतीहारेण विज्ञप्तः –देव! मारुकस्य प्रधानः समागतोऽस्ति। मध्ये निवेशयत। ततः प्रणम्य मत्री आसीनः। राणकेनोक्तम् –भो मित्रन्! तव ठकुरः एतावन्ति दिनानि विरूपवक्ता आसीत्। अधुना मय्यागते किं करोति । देव! प्राधूर्णकार्थे सजीभूय स्थितोः ऽस्ति। सत्वरमागच्छत। मित्रन्! अहं नागडः। यदि दुर्गं पृथग् पृथग् भङ्क्त्वा न क्षमामि। मित्रणोक्तम् –सत्वरमागन्तव्यम्। इत्युक्त्वा मत्री निःसृत्य गतः। राणकेनोक्तम् –रे! क एप मत्री । देव! यशोवीरः। तिर्हं सत्वरमागन्तव्यम्। इत्युक्त्वा मत्री निःसृत्य गतः। राणकेनोक्तम् –मित्रन्! माम्रुपलक्षयसि । देव! त्वां को न वेत्ति । राणकस्त्वाह –यस्त्वया अमुकवर्षे वाटिकान्तः क्रक्रम्वं भोजितस्तम् पुलक्षयसि । देव! क्थं नोपलक्षे। मित्रन्! स अहम्। तस्योपगा(का)रस्थेकवेलं भव्यं त्वया लभ्यम्। लोहटिकं विना यामि। इदं तव मानम्, परं स्वस्तामी विरूपाणि वदिश्वार्यः। मत्री परिधापितः। मित्रणोक्तम् –यद्येवं तिर्हं अधुनैव प्रयाणं कुरु। यथा मे स्वामी प्रत्येति। तदेव प्रयाणं कृत्वा कटकं पश्चाद्रतम्। मत्री ईर्प्यां विहरन् चारणे, यावचत्रैवायातः, तावचेनैक तत्रस्थेनोक्तम् –

(१२८) जिम केतू हरि आजु तिम जइ लंकां हुत दुसाजुत्र। नांऊं बूडत राजु राणाही[व] रावण तणउं॥

मन्त्री परिधापनिकां तसै दत्त्वा पुरे प्रविष्टः। राउलेन सम्भूषितः।

(१२९) ओं आगिलउ ज होइ सो जसवीर न जाणीउ। ए बूझइ सह कोइ एकावन बूझही नहीं।।

§ ११०) मित्रणा यशोवीरेण तलहिकायां खर्णगिरेश्वन्दनवसद्यां श्रीवीरिवम्बं कारितं प्रतिष्ठापितं च। तदनु

25 श्रीजयमङ्गलस्रिरिमिरुक्तम्-

(१३०) यत्त्वयोपार्जितं वित्तं यद्योवीर! प्रतिष्ठया । तस्रक्षगुणितां नीतं यद्यो वीरप्रतिष्ठया ॥
तदनु आलङ्कारिकैः श्रीमाणिक्यस्रिरिमः-

(१३१) यशोवीर ! लिखत्याख्यां यावचन्द्रे विधिस्तव । न माति भुवने तावदाद्यमप्यक्षरद्रयम् ॥ §१११) अथ एकदा गूर्जरत्रां भङ्कता तुरुष्का व्यावृत्ताः सुन्दरिसरिजलं पीत्वा सिराणाग्रामे आवासिताः।

30 तत्र राउलेन तैः सह सङ्घामं विधाय भगाः । अइबुको नाम ग्रुख्यो मिल्लको मारितः । तदनु चारणेनौकम्-

(१३२) सुन्दरसिर असुरांह [दलि] जलु पीघउं वयणेहिं। उदयनिरंदिहिं कहिउं तह नारीनयणेहिं॥

तदनु परिभवमसहमानः श्रीजलालदीनसुरत्राणः सं० १३१० वर्षे माघमासस्य पश्चम्यां स्वयमागत्व पर्वतस्य स्वर्णिगरेः शृङ्के आवासान् दत्त्वा स्थितः । प्रत्यहं ढोये (१) जायमाने सुरङ्गाखानकैः खण्डिः पातयितुमारब्धा ।

Centre for the Arts

पतिता कर्करक्रोष्ठके । स्थानान्तरस्थैः पत्तिभिर्धान्यं रन्धमानैः स्थाल्युच्छलात् परिज्ञाता । प्रभोरग्रे निवेदितम् । राउलेन वापडो राजपुत्रो भव्यं कर्त्तुं नियुक्तः । तेन सुरत्राणं नत्वा उक्तम्—देव ! दण्डं कुरु । सुरत्राणेन लक्ष ३६ द्रम्माणां याचिता । वापडेनोक्तम्—वयं द्रम्मान् न जानीमः । पाइ(रू)थैकान् दास्थामः । पार्थस्थेरुक्तम्—देव ! मान्यताम् । एकस्मिन् पारूथकेश्यौ द्रम्मा भवन्ति । सुरत्राणेन मानितम् । तेनोक्तम्—देव ! प्रसीदस्व, करं देहि । करो दत्तः । इतश्च वर्द्धापनिकेनोक्तम्—देव ! सुरङ्गा पातिता । वापडेनोक्तम्—देव ! त्वं महाराजस्तव जिह्वा 5 अन्यथा न स्थात् करश्च [दत्तः] । सुरत्राणेनोक्तम्—तव बुद्धिश्रेष्ठाय मास्थै (१) भेषीत् । दण्डमानय । तदनु राउलेनोक्तम्—सुताः पश्च मे । कं गृहाण १ । सुरत्राणेनोक्तम्—यशोवीरसुतमर्पय । राउलेन मन्त्रिपत्ती अम्यर्थिता । तया स्वसुतस्त्वेकोऽपि समर्पितः । कटकंमुत्थितम् । तदनु देवद्विजादीनां सर्वस्वमात्तम् । दण्डादुद्धरितवित्तेन तेन श्रीस्वर्णिगरौ दुर्गः कारितः । राउलेन यशोवीरपुत्रस्य कर्मसिंहस्य गृहागतस्य रामश्चयनं प्रसादे दत्तम् ॥ इति राउलउदयसीह-मन्नियशोवीरप्रवन्थः ॥

(G.) सङ्ग्रहे यशोवीरस्योह्नेखो यथा-

(१३३) ओ आगिलड जु होइ पइं जसवीर न सिक्खियड। महि मंडलि सहु कोइ बावन्नइ बूझइ बहू॥

चारणदानमदातुर्मित्रिणः पुरश्रारणेन पठितम् । तसै घोटको दत्तः ।

(१३४) संतः समंतादिष तावकीनं यशो यशोवीर! तव स्तुवंति । जाने जगत्सज्जनलज्जमानः प्रविदय कोणे त्वमतः स्थितोऽसि ॥ इति पठिताय भट्टाय मित्रयशोवीरेण कोणाग्रामसोद्वाहितं दत्तम् ॥

३३. विमलवसतिकाप्रबन्धः (B.)

§ ११२) अथ विमलवसतिकाप्रकन्धः—

- (१३५) श्रीविकमादित्यचपाद्व्यतीतेऽष्टाशीतियाते शरदां सहस्रे। श्रीआदिदेवं शिखरेऽर्बुदस्य निवेशितं श्रीविमलेन वन्दे॥
- (१३६) भीमदेवस्य रूपस्य सेवाममन्यमानः स तु व(घ)न्धुराजः । धाराधिपं भोजन्तुपं प्रपेदे स्ववंश्यसेवा हि रूणां विपत्सु ॥
- (१३७) विद्याधिव्याधिसंहर्जी मातेव प्रणताङ्गिषु। श्रीपुञ्जराजनया श्रीमाता साऽस्तु वः श्रिये॥
- (१३८) मेरुणा मनुजदुर्लभेन किं किं हिमैकनिधिना हिमाद्रिणा। साहिना मलयपर्वतेन किं नन्दिवर्द्धनसमो न भूधरः॥
- (१३९) भूभृतां निजगृहेषु तिष्ठतां वाञ्छितं यदचिरात्र सिद्ध्यति । नन्दिवर्द्धनविटङ्कवासिनो हेलयेव शबरीजनस्य तत्॥

§११३) अथ श्रीमातादेव्या अम्बाया दैवयोगान्मैत्री जाता। अम्बा गिरनाराधिष्ठात्री। अन्तरान्तरा प्रीत्या-३० ऽर्बुदे.समभ्येति। श्रीमाता तु तत्र न याति जैनव्यन्तरभयेन। एकदा श्रीमातयोक्तम्-भगिनि! अत्रैव यदि स्थासि तदावयोः प्रीतिर्निरन्तरा स्थात्। अम्बयोक्तम्-जिनभ्रवनं विना स्थानं न। तदत्र नास्ति। श्रीमातयो-

15

20

25

क्तम्-द्रव्ययुतां भूमिमर्पियिष्यामि । तत्र जिनायतर्नं कार्यम् । इह वक्कलचम्पकौ स्तः । तयोस्तले द्रम्मलक्ष २७ सहितं निधानमस्ति । अम्बयाऽचिन्ति—कः प्रासादं कारियण्यति । इतश्चन्द्रावतीं परित्यज्य धंपूपरमारः श्रीमीम-देवेन समं विरोधात् धारापुरीं गतः । पश्चान्नृपेणाश्वसहस्रौद्वीदशिश्चर्यतो विमलदण्डनायकञ्छत्रं दत्त्वा प्रहित-श्चन्द्रावत्याम् ।

(१४०) प्राग्वादवंशाभरणं वभूव रत्नं प्रधानं विमलाभिधानम् । यत्तेजसा दुस्समयान्धकारमग्रोऽपि धर्मः सहसाऽऽविरासीत् ॥

अथ देच्यम्बा प्रासादार्थे प्रत्यक्षीभृय विमलदण्डपतिं जगाद-

(१४१) अथैकदा तं निशि दण्डनायकं समादिदेश प्रयता किलाम्बिका। इहाचले त्वं कुरु सद्म सुन्दरं युगादि भर्त्तुर्निरुपाधिसंश्रयः॥

10 दण्डपितना उक्तम्-भूमिः क ?। देव्याह्-श्रीमातयाऽपितमितः । दण्डपेनोपिर गत्वा स्थानं निरूपितम् । कुङ्कम-गोमय......दिव्यपुष्पदर्शनेन च । पूर्वं धारायां धंधूपरमारपार्थे मनुजमप्रैपीत् । भवतामनुमितभवित तदा जैनं प्रासादं कारयामि । भवतां भव्यं करिष्यामि । पुनरत्रानयिष्यामि । तेन कथापितम्-वयमत्र गोष्ठिकाः । इतो देवी स्थानं दर्शयित्वा रैवतं गता । कर्मस्थायो यावान् दिने भवति तावान् रात्रो पतित् । कर्मस्थायः स्थितः । तत्र प्रासादः श्रुभमुहूर्ते प्रारव्धः । पण्मासान्ते देवी समाययो । प्रासादं स्थितं दृष्टा देवी जगौ-किमिदम् ? । विनेताक्तम्-देवी पादमन्यत्रावधारिता । कथं निष्पद्यते ? । देव्या उक्तम्-इह देवकुल्यां वालीनाहोऽस्ति । तस्य भूरियम् । अतः स पातयित । प्रातरुपवासं कृत्वा पूजोपचारमादाय तं ध्यायन्, वालीनाहाग्रे उपविश् । स प्रकटीभविष्यति । मद्यं मांसं याचयिष्यति । भवता नैवेद्यं माननीयम् । यदि न मन्यते तदा खङ्गं कर्षयित्वा वाच्यम्-याहि नो वा मारयिष्यामि । अहं खङ्गेऽवतरिष्यामि । तथाकृते स आराटिं कृत्वा प्रणष्टः । तत्र देवकुल्यां क्षेत्रपालः स्थापितः । तत्पार्थेऽम्वाया देवकुलिका कारिता । दण्डपतिदेवतावसरे श्रीआदिनाथविम्यमित्तः । अतो 20 युगादिदेवप्रासादः कारितः । चतुर्गच्छोद्भवैश्वतिभिराचार्थः प्रतिष्ठा कृता । आदौ शैलमयं विम्वम् । तद्तु पित्तलमयं भारा १३ तुलामाश्रित्य । पूर्वं ठकुरनीतस्तत्सतो लहरस्तत्सतो मचीनेह(ह)स्तेन दीक्षा गृहीता । विमलः श्रीभीमेन गजं छत्रं च दत्ता नृपतिः कृतः । तत्सुतेन चाहिलेन रङ्गमण्डपः कारितः । एवं प्रासादे निष्पन्ने कनापि चारणेनोक्तम-

(१४२) मंडी मुरको रइ करउ छंडउ मंसह ग्गाह। विमलडि खंडुं कहिअउं नट्टउ वालीनाहु॥

॥ इति विमलवसहीप्रबन्धः ॥

३४. अथ छूणिगवसही-प्रबन्धः (P. Br.)

§११४) धवलकपुरे मत्री आसराजः। सहचरी कुमारदेवी। पुत्र ४-मित्र छिणिग १, मालदे २, वस्तुपाल ३, तेजपालाख्याः ४। परं निर्द्रव्याः। एकदा छिणिगो मन्दो जातः। अन्त्यावस्थायां वस्तुपालेनोक्तम्-वन्धो! किमिप द्रव्यव्ययं याचस्व। तेनोक्तम्-नवकारलक्षाः ३ गुणनीयाः। अपरं किमिप दृश्यते तिर्हं याच्यते। तथापि ३० किञ्चिद्याचस्व। छिणिगेनोक्तम्-अत्र काचिदावाधा न। परमहमर्बुदाद्रौ देवान्नन्तुं गतः। ममेति मनोरथ आसीत्। यदात्र विमलवसद्यां आलकेऽपि विम्वं लघ्यपि करिष्यामि। यदि काऽपि शक्तिर्भवति तदा कार्यम्। अत्र न काऽप्य-वृष्टिश्वनी। इति वदन्ननशनादिवं ययौ। पश्चाद् व्यापारे जातेऽर्बुदे श्रीमाताऽबोटीपार्श्वाद्विमलवसिहकोपरिः मूल्येन भूगृहीता द्रम्मैराच्छाद्य। एवं द्रम्ममूडा ३६ तीरिताः। तैरुक्तम्-अतः परं पूर्णम्। तव द्रव्यसामग्री बह्वी।

त्वं पर्वतमपि गृह्णासि । १२८६ वर्षे शोभनदेवस्त्रधारमाहूय प्रासादं प्रारेभे । १२९२ ध्वजारोपो जातः । तत्र द्रव्यकोटीद्वादश, लक्ष ५३ एवं द्रव्यसंख्या । लुणिगवसहीति नाम कृतम् । श्रीनेमिनाथप्रतिमा स्थापिता ।

(१४३) विमलदण्डपतिर्विमलाचलाधिपजिनालयमारचयतपुरा । इह गिरावसकौ तु स कौतुकी व्यधत्त रैवतदेवतमन्दिरम् ॥

तत्र प्रासादे मित्रणा यशोवीरेण त्रयोदश दोषा उक्ताः। आदौ विलासमण्डपो न युक्तः १, परं स्तम्भेषु 5 विम्वानि २, सिंहमध्ये ३, हरिणगवेक्षण ४, द्वारे गजशालापरं पाश्चात्ये ५, तपोधना आकाशे ६, सोपानानि हस्त्रान्नि ७, सूत्रधारमातुक्छत्रं ८, ग्रुख्यद्वारं पुरवाह्ये ९, तथा घण्टा महत्तरा १०; त्रयं तज्ज्ञलोकाज्ज्ञातव्यम् ॥ ॥ इति लूणिगवसहीप्रवन्धः ॥

३५. अथ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. Ps.)

(१४४) †श्रीमत्प्राग्वादवंदोऽणहिलपुरभुवश्चण्डपस्याङ्गजन्मा जज्ञे चण्डप्रसादः सदनमुरुधियामङ्गभूस्तस्य सोमः। आद्याराजोऽस्य सृनुः किल नवममृतं कालकूटोपभुक्ति-च्छेकश्रीकण्ठकण्ठस्थलविषजमलच्छेदकं यद्यशोऽभूत्॥

§११५) आसराजप्रवन्धाद् वस्तुपाल-तेजःपालोत्पत्तिर्ज्ञेया ।..... अत्र सूचित आसराजप्रवन्धः B सञ्ज्ञ-कसङ्ग्रहस्य खण्डितत्वात् तत्र न लब्धः परं Ba सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे स उपलभ्यते । तत एवात्र समवतार्यते । यथा-]15

§११६) अथ आसराजप्रवन्धो यथा—्रंअणिहस्रपत्तने मलधारिश्रीदेवप्रम (Ps. हेमप्रम) स्रिरव्याख्याने गादीयां १४ शत उपविष्टेषु, तस्मिन् व्याख्याने साधुमदनपालपुत्री (Ps. 'आभूनिन्दनी'; तथा अत्रैवादर्शेऽन्यत्र 'तिहुअणपालपुत्री' इति लिखिबम् ।) कुमारदेवी वालविधवा व्याख्याने उपविष्टासीत्। नियोगी अश्वराजस्तत्रोप-विष्टोऽभृत् । यावद्वाचको वाचयति ∙तावदाचार्यदृष्टिस्तत्र कुमारदेव्यां विश्राम्यति । विदग्धेनाश्वराजेन कोरणं

सङ्कीर्णसोपानमपाच्यगाध्वपृष्ठेऽत्रशाला मुनयश्च घर्मे । स्तम्भेषु विम्बानि च दीर्घपट्टाः सिंहाग्रगैणा रतिमण्डपाश्च ॥ छत्रं च शीर्षे स्थपतेर्जनन्या गजाधिरूढा निजपूर्वजाश्च । स्तम्भा अतुल्या तनुरक्षरश्च ते द्वादशामी कथिताः कलङ्काः ॥ —मन्नियशोवीरेणैतानि दूषणानि श्रीअर्धुद्यासादे कथितानि ।'

† एतत्पद्यं P सङ्ग्रहे नोपलभ्यते ।

‡ एतत्प्रवन्धगतवर्णनं P सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे निम्नगतेन प्रकारेण लिखितं लभ्यते-

'एकदा मलधारिगणाचीशाः श्रीहेमप्रमस्रयो धवलकापुरे चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र व्याख्याने सर्वः कोऽप्येति। तत्र ठक्करतिहुणपालपुत्री कुमारादेवी मात्रा सह व्याख्याने आगता। परं विधवा। अथ गुरूणां व्याख्यानान्तरे तरुण्यां विश्रामो दृष्टेः स्थितः। मन्नी आशराजो देशनान्ते गुरूनाह-भगवन्! चन्द्रमसोऽङ्गारबृष्टिनं स्थात्, परं पूच्यानां दृष्टिः कुमारादेव्यां किमासीत्?। निर्वन्धेन पृष्टा अवदन्[Ps. यदेषा विधवा] अस्याः कुक्षावेकादशरत्नानि सन्ति। पुत्र ४, पुत्री ७; पुत्रद्वयं लोकोत्तरम्-इति श्रुत्वा तिहुणपालस्योलगा प्रारवधा।
तेन आवासलेखकवही दत्ता। ग्रासः कृतः। आसंघे जाते तथा पुत्र्या सह प्रीतिरभूत्। मात्रा ज्ञातवृत्तया वाहिनीमपंत्रित्वा सपुत्रीकः
प्रहितः। स्तम्भतटे गतः। तत्र पुत्रा जाताः। लूणिग-मल्लदेव-वस्तुपाल-तेजपालाः। पुत्र्यः सप्त।
धर्मिविधाने भुवनच्छिद्रपिधाने विभिन्नसन्धाने। सृष्टिकृता नहि सृष्टः प्रतिमञ्जो मल्लदेवस्य॥'

Indira Gandhi Nation Centre for the Arts पृष्टम् । पूज्यैरिति भणितम्-अस्याः कुश्लौ पुत्ररत्नद्वयमितशायि विद्यते, यिजनशासनप्रभावकं [स्यात्]। अन्यदाश्व-राजे साधुमदनपालसमीपे उपविष्टे सित तस्य लेखकं न मिलिति । व्यवहारिणो लेखकं मेलियित्वा समर्पितमश्व-राजेक । ततस्तस्य द्रम्मौ द्वौ दिनं प्रति ग्रीसे कृत्वाऽऽत्मपार्श्वे स्थापितः । पुत्री गृहव्यापारे मुख्या । कदाचिदु-भयोः स्नेहो जातः । मात्रा वृत्तान्तं ज्ञात्वा द्रव्यदशसहस्नाणि समर्प्य प्रेषितौ सोझलकनाम नगरम् (Ps. 'मंड-ठिलीनगर्या गतः।' पुनरस्मिन्नेव सङ्गहेऽन्यत्र 'स्तम्भतीर्थे गतः' एति स्वितं लभ्यते)।

आसराजस्य चत्वारः पुत्राः-मन्त्री ऌ्णिगो १, मछदेवोऽपरः २, वस्तुपालस्तृतीयः ३, चतुर्थस्तेजपालः ४। पुत्र्यः सप्त-साऊ १, भाऊ २, माऊ ३, धनदेवी ४, सोहगा ५, वयजूका (तेजूका Ps.) ६, पबलदेवी ७ 🖵

(१४५) श्रीवस्तुलस्य पत्नी लिलतादेवीति विश्वता जगित । तेजःपालस्य तथाऽनुपमदेवीति सत्कान्ता ॥

10 ल्रिणग-मल्लदेवो अल्पायुषो जातो । ऋमेण आसराजः पुत्राभ्यां सह धवलकमागतः । तत्रावासः कृतः । सुताबुभाविप व्यवसायं क्रुरतः । इति आसराजप्रबन्धः ॥

§ ११७) इतो व्याघपछीयो राणक आनाको भीमेनापमानितो देशसीमिन गतः । परिग्रहेणाकारितो नायाति । राज्यं विनष्टम्, आगत्य किं करोमि । परं पदातिमात्रः सन् ऑलगां करिष्यामि—इति पत्तने समायातः। तत्सुतो लूणपसानामा भस्नकथरोऽस्ति । *तस्य द्वे कान्ते । वीरम-वीरथवलौ सुतौ । इतो लवणप्रसादेन विवासमाता सपुत्रापि त्यक्ता । सा मेहतावास्तव्येन त्रिश्चवनसिंहकौडुम्बिकेन धृता । लवणप्रसादस्तन्मारणाय तस्य गृहे सन्ध्यायां प्रविष्टः । इतः कौडुम्बिकः कान्तया वैकालिकायोपवेशितः । तेनोक्तम्—वीरमः कः ! । तया प्रोक्तम्—कापि रन्तुं गतः । तेनोक्तम्—आकारयत, तं विना नाहं भोक्ष्ये । तया निर्वन्धादुक्तोऽपि न विश्वति । इतो लवणप्रसादेन चिन्ततम्—अनेन मम कान्ता धृता, परं मे पुत्रेण सह वाढं स्नेहवानसौ । अतः कथं हन्यते । इति विचिन्त्य प्रकटो जातः । तेनाभ्यर्थितः कस्त्वम् । स्वभावे उक्ते तयोर्मिथः प्रीतिर्जाता । स लचणप्रसादस्तेन विनित्तः । वस्नादि दन्ता प्रहितः । इतः स क्रमेण भीमदेवेन राणकः कृतः (B. Ps. प्रधानः कृतः राणिमा दत्ता) स राज्यचिन्तां कर्तुं प्रवृत्तः । [B. Ps. नृपस्तु खयं विकलः । अथ-लवणप्रसादेन] राज्यमात्मायत्तं कृतम् । इतो राज्ञि दिवं गते स एवाधिपो जातः । वीरमः स्वसमीपमानीतः । वीरधवलस्य कुमारसुक्तौ धवलकं दत्तम् । तस्य प्रिया जइतलदेवी । [Ps. पुत्रस्नेहेन लवणप्रसादो धवलकपुरे घनं तिष्ठति । पत्तने अमात्याः कर्णवारां कुर्वन्ति ।]

5 ११८) इतो वस्तुपाल-तेजःपाली हट्टं मण्डयतः। तेजःपालस्य राणकेन सह प्रीतिर्जाता। राजकुले वस्नाणि प्रयति। अथ एकदा देवपत्तने ठ० धरणिगस्तेजःपालस्य श्रग्धरोऽनुपमदेवीजनकः। तेन खपुत्री अनुपमदेवी श्रिश्चरकुले प्रहिता। तया गृहमागतया सर्वं वस्तु ज्येष्टप्रभृतिकुदुम्बस्य दर्शितम्। तत्र कपूरस्य सर्वोऽपि शृङ्गारः। वस्तुपालस्तेजःपालमाह-आवां वणिङ्मात्रौ। एष ईश्वराणां स्वामिनां वा योग्यः शृङ्गारः। यदि वधृविचारे आयाति वेतदा राणकपह्यै दीयते । अअनुपमयोक्तम्-स्नीतनुर्भर्तायत्ता, आभरणानां तु का कथा। ततो राणकं निमच्य

^{*} एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे नास्ति । ‡ एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे परित्यक्तम् । 1 B तदा देव्ये जयतळदेव्ये उपायनीक्रियते । अ एतदन्तर्गतपाठस्थाने B आदर्शे एताहशः पाठः प्राप्यते—"अनुपमदेव्योक्तम्-श्लीणां शरीरं भर्तुरायक्तमाभरणानां तु का कथा ।
विशेषतो यच्छध्वम् । वस्तुपाछः प्राह—यद्गाणकं भोजनाय सपत्नीकं निमंत्र्य भोजय । तथा कर्तुं गते वस्तुपाछो हृद्दे गतः । राणकः प्राप्तः ।
भोजितश्च । आभरणे द्शिते देवी प्राह—स्वामिन् ! इदमाभरणं अद्यावत् न दृष्टं न श्रुतम् । तदा गृह्णामि यदि मुद्रां तेजःपाछो गृह्णाति । भवत्वेवं ममापीष्टमिदम् । तेजःपाछेनोक्तम्-वृद्धभातरं पृच्छामि । प्रष्टुं गतोऽहे । भात्रोक्तम्-किं मुद्रया । यदि ददास्येव तदेति वक्तव्यम्यद्दिणां कारयत । यक्तत्र भवति तद्पयित्वा शेषमादाय वयं मोच्याः । एवमस्तु । इत्युक्त्वा मुद्रा समर्पिता । व्यापारो जातः । तद्नु कूर्चाळसरस्वतीस्येवंविधानि विरुद्दाने पद्यमानैर्वाद्वार्णमिक्षकाजालमिव विष्टतः । अनन्तवन्धनं कृतम् । एकदा कुळगुरवः श्रीविजयसेनस्रयो वन्दा-

भोजयित्वा तत्त्वम् । देव्यै दातुं राणो लगः । तयोक्तम्-एतयोः स्वसुद्रा देया । ततो वृद्धभातरं पृष्ट्वा गृहटीपां द्र्शियत्वा सुद्रा गृहीता ।

§११९) तदनु वस्तुपालो [Ps. कूर्चालसरखती-इत्येवंविधानि विरुदानि पठमानैः] ब्राह्मणैर्व्यासः विष्टुः [Ps. अनन्तवन्धनं कृतम् ।] एकदा कुलगुरुश्रीविजयसेनसूरयो वन्दापियतुमागताः । कुमारदेव्या नमस्कृताः । मन्त्री नागतः । मन्त्रिणं वन्दापियतुं गृहे गताः । मन्त्री द्विजाञ्चतो गवाक्षस्थो दृष्टः । तेन नाम्युत्थिताः, ते 5 व्याघुटिताः । मात्रा प्रोक्तम्-मन्त्रिन् । ते अतीव ईदृशी विग्रता यत्कुलगुरवोऽपि आगता न ज्ञाताः । ततो कृत्री धावितः । अभ्यर्थ्य नीताः । तत्र तरुक्तम्-आशराजतन्जस्य गृहं न किन्तु मद्यपगृहम् । किमिति [Ps. B. गुरुभिरुक्तम्-वयं ठकुरचण्डप्रसाद-सोम-आसराज-तन्द्भवस्य कुमारदेवीक्कश्रीसरोजराजहंसस्य श्रीवस्तु-पालस्य गृहं मत्वा समायाताः । परमग्रे मद्यपगृहं दृष्टम् । मन्त्रिणोक्तम्-एकवेलं मध्ये पादाववधारयत । स्वकरे-णासने दृत्ते उपवेशिताः । सप्रश्रयमुक्तम्-प्रभो ! मे गृहे श्रीमद्गुरुभिः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्छृणुत-] 10

(१४६) जीवादिशेति पुनरुक्तमुदीरयन्तः कुर्वन्ति दास्यमपि वण्ठजनोचितं ये। तेष्वेव यद्भुरुधियं गुरवोः विदध्युः सोऽयं विभूतिमदपानभवो विकारः ॥

भगवन्! एवं भवति यदि सारा न क्रियते । शिक्षां यच्छत । [Ps. आदावनन्तमपाक्कर । तस्मिन् दूरीकृते, त्व कुले कोऽपि माहेश्वरो न जातः । अतः श्रावकत्वमङ्गीकुरु] आदावनन्तोऽपाकृतः । ततः श्रावकत्वं जातम् । पूजानिश्चयमकार्षात् ।

(१४७) *सोऽयं कुमारदेवीकुक्षिसरःसरसिजं श्रियः सदनम्। श्रीवस्तुपसचिवोऽजनि तनयस्तस्य जनितनयः॥

(१४८) विभ्रुता-विक्रम-विद्या-विद्ग्धता-वित्तं-वितर्रण-विवेकैः"। यः सप्तभिर्विकारैः कलितोऽपि बभार न विकारम्॥

§१२०) अथ देशस्तोको वीरधवलस व्ययो बहुः। इति मत्वा तेजःपालः पत्तनोपरि गन्तुकामं राणकं 20 निषिध्य स्वयं गतः। तत्र सभायां श्रील्लणप्रसादेन कुशलं पृष्टम्—कुमारः किमिति नागतः?। देव! श्रीवीरधन्वलेन देविगरेरुपरि बीटकं याचितमस्ति। कथम् १-व्ययो बहुः। अतो देविगरेरुपरि कटकार्थी। तं विना व्ययो न सम्पद्यते। राणकेनोक्तम्—यदि तत्र गतः [हतः] स, तिहं व्ययं कः कर्ता १। केन दत्तेन तिष्ठति १—देव! स्तम्भतीर्थेन। व्यापारिणः पृष्टाः—तस्य किमायपदम् १। तेरुक्तम्—द्रम्माणां सहस्र ३०, वाहण (७ शत १) ३२। राणकेनोक्तम्—यदि तेन पुरेण दत्तेन धनी भवति तिहं दत्तम् +। महाप्रसादम्रुक्तवा तेजःपालो धवलक्रमागतः। 25 राज्ञा पृष्टम्—किञ्चिल्लब्धम् १। साम्भतीर्थम्। किं तेन १-मया तव लङ्का दत्ता, परं न खाद्यते न पीयते। सर्व भवष्यति—इत्यक्तवा मञ्चिणं वस्तुपालमध्यवारैः पञ्चाशिद्धः (५०), पत्तिभिः शतद्वयेन (२००) स्तम्भ-

पियतुमायाताः । मं० कुमारदेव्या नमस्कृताः । उक्तम्—मञ्जी नाययौ ? । मिश्रणं वन्दापियतुं गृहे पादमवधारयत । गुरवस्त्वावासं प्राप्ताः । उपिरतनभूमौ गताः । तत्र गवाक्षस्थो मञ्जी द्विजैवेष्टितो दृष्टः । तेनाप्यनभ्युत्थिताः । पश्चाद्वलिताः । अथ मात्रोपर्यागत्य प्राह्—मित्रन् ! भन्यमिद्म् । एवं तेऽञ्जनं यद् गुरूनप्यागतान्नोपलक्षयसि । मित्रणा जनं प्रहित्य स्थापिताः । गवाक्षादुत्तीर्यं गतो नत्वावादीत्—प्रभो ! कथं पदमवधारिताः, व्यावृत्ताश्च । गुरुभिरुक्तम्—वयं ठक्कुर चंडप-चंडप्रसाद-सोम-आशराजतन् अवस्य कुमारदेवीकुक्षिसरोराजहंसस्य श्रीवस्तुपालस्यावासं मत्वा समायाताः । परमग्ने मद्यपगृहं दृष्टम् । मित्रणोक्तम्—एकवेलं मध्ये पादमवधारयत । स्वकरेणासने दत्ते उपवेशिताः । सप्रश्र-यमुक्तम्—मद्गहे श्रीमद्भुक्तिः किमयुक्तं दृष्टम् ? । एतच्छुणुत—"जीवादिशेति० ।"

 $1\ B$ धनिनो । $2\ B$ अपराधः । $3\ B$ आदौ देवपूजानिश्चयमकार्षीत् । $4\ B$ तदनु क्रमेण वतमूलो धर्मश्च । B *आदर्शे एप श्लोको नास्ति । \P एतत्समाग्रं \S १२०) प्रकरणं Ps. आदर्शे परित्यक्तमस्ति । $\|B$ राजसभायां गतेन राणको नमस्कृतः । राणकेन क्रशलप्रभूपूर्वकमुक्तम्-वीरधवलः क्रिमिति नाययौ ? । +B यदि स्तम्भतीर्थेन ऋदिमान् भवति तदा तदस्तु ।

तीर्थं [प्रति] प्राहिणोत् । मन्त्री तत्र गतः । नियोगिभिरुक्तम्-आदौ सईदगृहे गम्यते, तदनु उत्तरके । मन्त्री अनाकर्ण्य स्वोत्तारके गतः । तदनु सईदोऽपि मिलितुमागतः । मन्त्रिणं न[त्वो]पविष्टः । मन्त्रिणा तादक् सम्मम्पणं न कृतं [परं] स्तोकं गौरवं कृतम् । यतः-

(१४९) *नयणिहिं रोसु निवारि वयणिहिं वरिसइ अमिंअ रसु। तिल दोरड संचारि करि कांई जन वीसरइ॥

इतो द्वितीयदिने मित्रणा सईदो व्याहृतः । जलमण्डिपका द्रम्माणां लक्षेस्त्रिभिर्याच्यते । सईदेनोक्तम्-अर्पय-तान्यस मया त्यक्ता । द्वितीयदिने उक्तम् -स्थलमण्डपिका द्रम्माणां लक्षपश्चकेन याच्यते । तेनीक्तम् -दद्ता साऽपि त्यक्ता । अपरेष्वपि व्यापारेषु स्वमनुष्यान् मुमोच । इतः सईदेन स्वमित्रं भृगुपुराधिपतिः सण्डेराजः शङ्कल (B खंडेराजः सांखलउ) आकारितः। स जलमार्गेणाश्वसहस्र २, मनुष्यसहस्र ५ समानीय समुद्रतटे 10 सम्रुत्तीर्णः । इतः सईदेन मन्त्री व्याहृतः । शङ्खः समायातोऽस्ति, किञ्चिद्त्त्वा प्रेष्यते । मन्त्रिणोक्तम्-असाकं द्रव्यं न हि। त्वद्वहेऽस्तिः, त्वं देहि। मदीये युद्धमेव। तर्हि चलत, यथा युध्यते। मित्रणोक्तम्-त्वं खपरिकरेण वज, वयं तु स्वपरिकरेण यास्यामः । मन्त्री अश्ववार ५० मनुष्यशतद्वयेन वहिर्निर्गतः । बलद्वयं वहिर्निर्गतम् । इतो मित्रणा राजपुत्रा व्याहृताः । कः पूर्वमुत्थापनिकां विधास्यति ? । तद्नु चालुक्येन (B चौलुक्यवंशजेन) भ्रवन-पालेन बीटकं याचितम्। मया शङ्को वृतः। केनाप्युक्तम्-मृतस्य किं प्रासादं करिष्यति मन्त्री ?। स किञ्चि-15 त्क्षुब्धः । मन्त्रिणोक्तम्-यदि ते विरूपं भवति, तदा तव मानुपाणि निर्वाहयिष्ये प्रासादं च कारयिष्ये । ततस्ते-नाश्चीत्थापितः-रे! यः शङ्कः स मे पुरो भवतु । तद्नु एकेनाश्ववारेणोक्तम्-अहं शङ्कः । स भक्षेन हत्वा पातितः । अपरेणोक्तम्-सोऽपि पातितः । एवं पण्मारिताः । इतः शङ्खशरीरे गत्वोक्तम्-अहो मया ज्ञातम् । भृगुपुराधिपः शंह्व एक एव । परं समुद्रस्य तीरभावाद्वहवः । अहं हत्वा हत्वा श्रान्तोऽसि । ततः पत्तिभिस्तुरङ्गं हत्वा पातितः । शक्केन चिन्तितम्-मम पण्मारिताः, अस्य त्वेकः। फलं न किमपि विमृश्य निवृत्तः। सईदेनोक्तम्∸यदपि तदपि 20 दत्त्वा प्रहीयते । मित्रणोक्तम्-त्वयाऽऽनीतस्त्वमेव देहि । इत्युक्ते स प्रहितः खस्थानम् । मित्रणा भ्रवनपालस्य ऊर्द्वदेहिकं कृत्वा, भ्रवनपालेश्वरप्रासादस्तिनिमित्तं कारितः। इतो मित्रणा तेजःपालवार्श्वात् अश्वशतद्वयम्, पदातिश्चतपञ्चकम्, सौख्यासनमेकं चानायितम्। मित्रणा पुरान्तर्वार्चा कृता-यद्राणकः श्रीवीरधवल एति। इति सम्मुखो निःसृतः । सईदोऽपि बहुना परिवारेण निःसृतः । आच्छादितं सुखासनम् , परं राणको न दृष्टः । उत्तारके गतो दर्शनं दास्यति । तत्रापि दर्शनं न लब्धम् । ततः सईदेन भीतेन पुनः शङ्कः समाहृतः । यद् युद्ध-25 संजैर्भृत्वा समागम्यम् । अश्व सहस्र २, मनुष्यसहस्र १० दशकेन समाययौ । समुद्रादुत्तीर्य तटे स्थितः । मन्त्री खपरिकरेण बहिनिःसृतः । मित्रणा शङ्खस्य कथापितम् -यत्त्वं बलवानसि, क्षत्रियोऽसि, अहं वणिग्मात्रम् । तत आवयोर्द्धन्द्रयुद्धमस्तु । सोऽत्यर्थं बलवान् [†]हृष्टः सन् काहले मत्रिणा सह प्रहर रे अयाचत् । सैन्ययोस्तटस्थयोर्युद्धं भवति । एवं दिन ३, चतुर्थदिने प्रहरैकसमये मित्रणा पाश्चात्यस्थेन जानुना लत्तादानात् शङ्कः पातितः । तत्कालं शिरक्छेदमकरोत् । ततः शङ्कसैन्यं हतप्रहतं नष्टं लग्नम् । अश्वाद्यादाय मन्त्रिणा मुक्तम् । तसिन् हते सईदो नंष्ट्रा 30 समुद्रमध्ये गतः । मित्रणोक्तम्-त्वां कोऽपि न मारयति । मया शङ्को हतः, त्वं व्यवहारी कथं नष्टः ? तेनोक्तम्-यदि मे जीवेऽभयं ददासि तदाऽऽगच्छामि । मन्त्रिणा तथेति आहूतः। मोजनार्थं गृहे आकारितः। अङ्गमईकैरङ्गानि टालितानि । [‡तेनोक्तम्-मित्रन् ! किमिद्म् ? । मयोक्तम्-न मारियप्यामि जीवन्तं मोक्ष्यामि । ततस्त्वं जीव-न्निस] जीवन्युक्तः खयमेव व्यथया मृतः । इतस्तस्य गृहे मनुष्याणि मुक्तानि । धवलके कथापितम्-यत्सईदो हतस्तस्य सर्वसं राजकुले [नीतम्]। परं महान् व्यवहारी तस्य गृहधूलिर्ममास्तु । मन्त्रिणोऽग्रे केनाप्युक्तम्-

^{*} P आद्शें एतत्पद्यं नास्ति । † एतद्न्तर्गता पंक्तिः P आद्शें पतिता । ‡ एतद्न्तर्गतः पाठः परित्यक्तः P आद्शें ।

20

25

30

यत्सईदस्य बाहनानि एकदा दोलायितुं प्रवृत्तानि । वस्तुवापनि (१) कृता अग्रे घू(धू १)नि भणित्वा रेणुः क्षिप्ता । गृहगतेषु पृष्टम् –िकमायातम् १ । बह्वी लक्ष्मीः । तेनोक्तम् –समुद्रस्य रेणुरिप श्रेष्ठा । वसारिर्भृता । एकदा दीपो रूमञ्जर्यां लग्नस्य तापेन रेणुः स्वर्णीभूता । स वृत्तान्तो मित्रणा श्रुतः । अतो याचिता । राणकेन दत्ता । गृहे टीपिः कृता । द्रव्यं स्वर्णं च दुक्लमौक्तिकादि प्रहितं राणकपार्थे । मन्नी गतः । तत्र कविभिरुक्तम् –

(१५०) मिलिते तदलयुगे तस्मिन् शङ्खे च चूर्णतां याते । श्रीवस्तुपालमन्त्रिन् ! महीमुखे कोऽपि नवरङ्गः ॥

इतोऽनुपमदेच्या चेटी प्रहिता-उत्सरं जातं देवताऽवसरस्य । तया अलब्धप्रत्युत्तरया स्वयमेत्य जगाद-अद्य कोऽयमालोचः ? । यदि कथनयोग्यो भवति तदा कथयत । इतस्तेजःपाले ईर्ष्यापरे मित्रणोक्तम्-वत्स ! मा कुप ! इयमित दक्षाऽस्ति, बुद्धिः पृच्छचते ।

(१५१) असकृनमूर्खमप्यन्यं पृच्छेत् कार्ये समु[द्ग]ते । चपला मनसो वृत्तिर्वृद्धानिप हि मुद्यति ॥

पृष्टम्-असाकं श्रीन्यियेनान्यायेन वा जाता । अस्याः स्थानमवलोकयावः । भूगता क्रियते जनवेशमसु वा सुच्यते । किमिप गृहे नायाति । तया व्याहृतम्-यिद् मे बुद्धिः क्रियते तदाऽक्षया स्थात् । सर्वः कोऽपि प्रकटां च पश्यति कोऽप्यातुं न पारयति । कथम् १ । प्रासादाः कार्यन्ते । उपिर स्वर्णकलशान् दन्ता, प्रशस्तौ द्रव्यं 15 सङ्घते । सर्वः कोऽपि वाचयति, अत्र इयद् द्रव्यं लग्नम्, परं काणवराटकमिप गृहीतुं न पारयति । ज्येष्टेनोक्तम्- इदं वध्वाक्यमेवास्तु । भाग्यक्षये आत्मीयाप्यन्या भवति । तद्नु स्नात्वा देवताऽवसरमाधाय, स्रकोत्तरं पौप- धागारे गतौ । यृहुरवो वक्ष्यन्ति सैवोपश्चितिनः प्रमाणम् । गुरवो नमस्कृताः । तैर्भणितम् ।

(१५२) कोशं विकाशय कुशेशयसंस्तािं प्रीतिं कुरुष्व यदयं दिवसस्तवास्ते । दोषोदये निविडराजकरप्रपातध्वान्ते समेष्यति पुनस्तव कः समीपम्॥

नमस्कृत्योत्थितौ बहिर्निर्गतौ । विमृष्टम्-आवयोरुत्तरकालो न भव्यः । अतो द्रव्यं व्ययितुं लग्नौ । [Ps. स्थाने स्थाने सत्रागार-प्रासाद-पौषधशालां प्रारेभाते । वर्षमध्ये वार ३ संघार्चा । यति १५०० विहरणम् ।

११२२) एकदा मन्त्री सुप्तोत्थितः पाश्चात्ययामिन्यां चिन्तयति-

(१५३) आशाराज इहाजनिष्ट जनको यस्य प्रशस्यावधि-र्य.....जुमारदेव्यथ कृती श्रीम.....जः। तेजःपाल इति प्रधाननिवहेष्वेकश्च मन्नीश्वर-स्तज्ञायानुपमा गुणैरनुपमा प्रत्यक्षलक्ष्मीरभूत्॥

(१५४) तेजःपालोऽनुशास्ति प्रवरतरमितवीरराजस्य राज्यं सामग्रीयं समग्रा खजनपरिजनोत्साहस्प्रम्पत्तिभिश्च। एवं पुण्यैर्दिनं मे पुनरसमयतः खेदमग्नो जनोऽयं तद्भवीदेशमाप्य स्फुरितमितरसावद्धतं कम्मे कर्त्तुम्॥

इति विचिन्त्य यावद्वारशालायामागत्योपविष्टः, ताबद्वारपालेनोक्तम्-मन्त्रिन् ! श्रीपत्तनाद्वुर्वाशीर्वादकरो नरो दर्शनम[भिलपति] । प्रवेशय । स नरः समेत्य प्रणामपूर्वमाशीर्वादं करेणोद्दे ।

> ndira Gandhi Nationa Centre for the Arts

(१५५) मन्त्रीश! गुरवस्तुभ्यं खस्ति विस्तारयन्तु ते । योग्यं त्वामेव विज्ञाय यैरिह प्रेषितोऽसम्यहम् ॥

भित्रणा ससम्भ्रममुत्थानपूर्वकं करावायोज्य पत्रकं जगृहे । शिरिस निवेश्यावाचयत् । तत्र कुशलप्रश्नपूर्वमिद-

माशीर्वादमवाचयत्— अमुष्मिन् यः काले किशलयति कम्माद्धततरं०॥ तथा- (१५६) मुनीनां को हेतुर्जरठकठिनत्वव्यपगमे

भवेद्भूषा येषां खजनपरिहारव्यतिकरः । परं धन्यास्तेषामपि वितनुते केऽपि मृदुतां शितां शीतांशुर्यो जनयति यतंश्चन्द्रदृषद्गम् ॥

10 महामात्य! १२७६ एप संवत्सरोऽतिनीतः (Ps. तीत्रः)। समयवशेन वर्ष २८ श्रीशत्रुञ्जय-गिरनारयोर्वर्तम केनापि न वाहितम्। [Ps. मन्त्रिपदं विना मण्डलीं वारमेकं गतः नापरः।] तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति। श्रीशत्रुञ्जयमाहात्म्यं चैवम्*-

(१५७) अत्रास्ति सस्ति शस्तः क्षितितलतिलको रम्यताजनमभूमि-र्देशः सम्पन्निवेशस्त्रिभुवनमहितः श्रीसुराष्ट्राभिधानः।

यस्योचैः पश्चिमाम्भोनिधिरपहरते लोलकल्लोलपाणिः प्रस्फूर्जत्फालफेनोल्बणलवणसमुत्तारणैर्दछिदोषान् ॥

तत्र तीर्थानि-

15

20

25

(१५८) श्रीशाञ्जलय-रैवताभिधगिरिद्धन्द्वेऽत्र यात्रोत्सवं दानब्रह्मतपःकृपाकृतरतिर्यः सन्मतिः सेवते । तीर्थत्वातिशयेन नारकगतिं तिर्यग्गतिं च ध्रवं

नो किसन्निप जन्मिन स्पृश्चित स प्रध्वस्तदुष्कम्र्यतः॥ (१५९) फणिपति-मघवाद्या यत्र देवाः समेयुर्भरत-सगरमुख्याश्चित्रणः क्षोणिशक्ताः। निम-विनमिमुखास्ते सर्वविद्याधरेशा दशरथस्तत-क्रन्तीनन्दनाद्याश्च भूपाः॥

(१६०) एषु श्रीजयसिंहदेवनृपतिस्तीर्थेषु यात्रां व्यघात् सिद्धः पोद्धरघम्मभूघरित्रारःकोटीररत्नांकुरः। राजर्षिस्तु कुमारपालविपुलापालः कृपालुः कलौ कृत्वा सङ्घमिहोपदेशवचसा श्रीहेमसूरिप्रभोः॥

(१६१) सङ्घो वाग्भटदेवेन तथा चक्रेऽत्र मन्त्रिणा । भविष्यतामतीतानामुपमानं यथाऽभवत् ॥

30 तेषु तीर्थेषु दुष्कालवशात्-

(१६२) स्नायुद्धद्धकरङ्ककुट्टनरता मार्दक्षिकाः स्युर्वेका घूका घर्घरघोरघोषविषमं गायन्ति नीडस्थिताः । सभ्य(द्यः !)व्याघवितीर्णमांसविघसा तृत्यन्ति नित्यं शिवाः फेरूणामिह बन्दिनां कलकलः प्रेक्ष्योत्सवः स्यादिति ॥

15

20

· (१६३) वियउयरपूरणासा जणणी पुत्तं चएइ विलवंतं। मणुयाणि माणुंसेहिं निसायरेहिं व खज्जंति॥

(१६४) । पल्योपमसहस्रैकं ध्यानाहक्षमिग्रहात्। दुष्कम्मे क्षीयते मार्गे सागरोपमसंज्ञके ॥ (१६५) । ज्ञात्रुअये जिने दृष्टे दुर्गतिद्वितयं क्षिपेत्। पल्योपमसहस्रं तु पूजा सात्रविधानतः॥ अत एवंविधानि तीर्थान्यपूजानि यात्राये यतनीयम्।

§१२३) तद्तु मित्रणाऽभाणि-गुरूणामाकारणं प्रेष्यते । आनायिताः । शुभे ग्रहूर्ते देवालयः प्रारब्धः ।

सन्देशेषु कुङ्कमपत्र्यः प्रहिताः ।

(१६६) वाहनौषंधिपाथेयसहायवृषभादिकम् । यद्यस्य नास्ति तत्तस्मै सर्व देयं मया मुदा ॥

[Ps. इति श्रुत्वा महर्द्धयो] लोका यात्रायै मिलिताः । इतः कलिर्गलगर्जितमकरोत्-

(१६७) 'रे रे वातूललोकास्त्यजत निजनिजं सर्वथा धर्मकृत्यं कार्यं चेजीवितव्येरिह कलिसुभटः कुद्ध एवासि यसात्।'

- निलं श्रीसङ्घलोकाः कुरुत नवनवं निर्भया धर्ममेष

प्राप्तोऽहं वस्तुपालः किल्हपहृदये निर्दयं न्यस्य पादम् ॥'
(१६८) 'किमिह किलनरेन्द्रं नैव जानाति सोऽयं यदनुचितिमवोचैर्धर्मकृत्यं तनोति ।'
'अमुमनुपमसत्यं धम्मकम्मैंककृत्यं किलकवलनकालं वेत्ति नो वस्तुपालम् ॥'

(१६९) गुरवः परःशतास्ते परःसहस्रश्च साधवः सुधियः। गृहिणस्तु परोलक्षाः सङ्घे श्रीवस्तुपालस्य ॥

जने मिलिते शुमे लग्ने प्रस्थाने जायमाने.....कश्चिदाह-

(१७०) कान्ते कान्ते शीष्टमागच्छ शीष्टम्. आएसं मे देहि इत्थिम्ह णाह । कीदग्र रम्यं पद्य देवालयं त्वम् ?. धन्नो मंती कारियं जेण एयं ॥

[Ps. इतः सङ्घप्रार्थं पूर्वं देवालयो रथे स्थापितः । उपरि च छत्रत्रयं धृतम् । चामराणां व्यजनमिवध्वाभिः कृतशृङ्गाराभिः प्रारम्थम् । कृतशृङ्गारो धृर्धरमालादिना कौसुम्भवस्त्रेश्व धृतौ वृषमौ । मार्गणजनैः प्रारम्थः कीर्तिकोलाहलः । मिलिता मित्रणामनु अश्ववाराणां सहस्राः । प्रारम्धं स्नीजनेन गीतम् । वादितानि मेर्यादीनि मङ्गलतूर्याणि ।] एवं चलित देवालये दक्षिणदिग्मागे दुर्गा जाता । मित्रणोक्तम्-स्थिरीभवत । 25 तत्रैको मारवः क्षत्रियो मित्रणा पृष्टः—भो एषा किं वक्ति । देव ! इयं नृतनगृहे निष्पद्यमाने द्वारशासोपरि स्थिता मुदिता स्वरं विधत्ते । तत्र सार्द्ध वार घर (Ps. द्वादश घरेण) उपविष्टास्ति । भवतामित्यं १२ ॥. यात्रा भविष्यन्ति [Ps. एषा प्रथमा तासां मध्ये ।] तदनु वहुसूरीणामनुमतं सप्तश्वतानि देवालयानामग्रे चलित । [Ps. कुहाडीया ५००, कुदालीया ५०० मार्गसारणाय । शकट ४०००, सुखासन ७००, श्रीकरी १९००, सूरीणां ३३३, व्रतिनां २२००, क्षपणक ११००, भट्ट ३३००, देवालां ६४, वाहिनी १८०, जैनयाचक ३० ४५०, तुरंगम ४०००, मनुष्य एवं कारइ ७०००० एवं सामग्र्या चचाल ।] परतीर्थिकान् कन्दलं कुर्वाणान् वारयन्ति । एवं श्रीसङ्घः शत्रुख्ययो वर्द्यापनिकानि कृत्वोपर्यारूढः । तत्र—

(१७१) ण्हाणं कुंकुमकदमेहि विहियं कत्थूरिआहिं कयं चंगं अंगविछेवणं विरइआ पुष्केहिं पूआ वरा।

 $[\]ddagger$ एषा गाथा Ps. आदर्शे एव उपलभ्यते । \dagger इदं पद्यद्वयं Ps. आदर्शे नास्ति । 1 Ps. ईदशे दुःकाले तीर्था० ।

10

रंभाविक्भमलालसेहिं लेलनालोएहिं नदं कयं देवेसस्स महाधया सहमया पदंसुएहिं कया॥

वृतत्र देवविज्ञाप्तः-

(१७२) आस्यं कस्य न वीक्षितं क न कृता सेवा न के वा [स्तु]तास्तृष्णापूरपराहतेन विहिता केषां च नाभ्यर्थना।
तत् त्रातर्विमलाद्रिनन्दनवनीकल्पैककल्पद्रम!
त्वामासाच कदा कदर्थनमिदं भूयोऽपि नाहं सहे॥

मुत्कलापनकाव्यम्-

(१७३) श्रीगर्वोष्मभिरुष्मलेषु धनिनामीष्यानलज्वालया जिह्नालेषु मृगीदशामनुशयाद्भगयितेषु द्विषाम् । वक्रेषु ग्लपितामिमां त्रिजगर्तीं निस्तन्द्रचन्द्रोदये देव! श्रीविमलाद्विकेतन! कदा दास्ये त्वदास्ये दशम् ॥

[Ps. एवमारात्रिकं कृत्वा श्रीजिनं मुत्कलाप्य] तले साधर्मिकवात्सल्यं सङ्घपूजादिकं च विधाय रैवतो-परि ततश्रचाल ।

15 § १२४) [Ps. इतः केनापि चरटकेन दुर्गवलात् सङ्घमध्ये चौरिकी कृता । मित्रणा स प्राकारो रुद्धः । उक्तं च-

(१७४) मह वयरियस्स ठाणं विश्रा ति अवराहकारणं एयं । पायारं परिचुन्निय संघं संचारहस्सामि ॥

इत्यभिधाय दुर्गं चूर्णयित्वाग्रे प्रस्थितः ।] कियद्भिः प्रयाणकैर्जीर्णदुर्गं प्राप । जीर्णदुर्गेऽष्टाद्श्रप्रासादेषु चैत्य-परिपाटीं कृत्वा (Ps. जीर्णंदुर्गोपकण्ठे खयं वासिते तेजलपुरे आवासान् दत्त्वा कुमारदेवीसरिस स्नात्वा खयं 20 कारितश्रीपार्श्वनाथचैत्ये महिमां विधाय) यावत्पर्वतोपरि चलितुं सन्नद्वस्तावदेकाकिनो त्रतिनः प्रोक्ताः-अत्र वस्त्रपथतीर्थे पद्याप्रत्यासन्ने मुण्डिके जनं २ प्रति द्रम्माः पश्च २ याचन्ते । तान् भवतां कः प्रदास्पति ? । यथा जानीथ तथा कुरुध्वम् । तैरुक्तम्-मन्त्रिन् ! तवाज्ञा भवति तदा वयं वारयामः । मन्त्रिणा श्रोक्तम्-कुरुत यद्रो-चते । पृष्टिरक्षकोऽहम् । ते सजीभृय पूर्वं चिलताः । भरटकैरुक्तम्-मुण्डकं दत्त्वा वजत । तैरुक्तम्-मुण्डे केशाः सन्ति । तेऽग्रेऽपि दत्ताः । भवतां किं द्वः ? । तैः सह कलहो जातः । कुट्टियत्वा त्रतिभिः पातिताः । मित्र-25 णोऽग्रे रावां कर्तुमागताः । मित्रणा त्रतिनो हिकताः-कथमेवं कृतम्? । मित्रन्! इयतीं भूमिं यावदितिकम्या-गताः । देवनमस्कृतिं विना कथं भुज्यते-इति सश्चिन्त्य चिलताः । एभिर्निषिद्धाः । देवदर्शनोत्कण्ठया कल्येऽपि न भुक्ताः । अत उत्किण्ठिताः । परं बुभुक्षिताः । एतेषां किं दबः । सुन्दरं न कृतम् -यत्प्रथमतोऽप्यमी रुद्धाः । ममाग्रेऽपि वार्ता न कृता। तैरुक्तम्-मित्रन्! देवस्य एष लागः केनाप्यपाकर्तुं न शक्यते । मित्रणा प्रोक्तम्-मम भोजनदानावसरो न पुनर्द्रव्यस्य । भट्टान् द्विजान् सर्वानपि पृथक् पृथक् याचध्वम् । तैरुक्तम्-असाभिः 30 कथं गृह्यते । त्वयैवानुमता यच्छन्ति । मित्रणा व्याहृतम्-सर्वः कोऽपि यच्छतु, नाहं वेद्यि । भट्टाद्या ऊचुः-कोऽसान् ग्रहीष्यति स ऊर्द्धीभवतु । मित्रणा ततो व्याहृतम्-यदि मम भणितं कुरुत, तदा वः कंदलं निर्वाह-यामि । [Ps. एकेन ग्रामेण यदि रितं कुरुत ।] ततस्तेभ्यो जीर्णदुर्गप्रत्यासन्नं ग्रामं वितीर्य पट्टको विदारितः । सर्वः कोऽप्युपरि गत्वा समाधिना देवं वन्दितुं लग्नः । तत्र-

(१७६) गम्भीरगेयभरगज्ञिरवो सुवन्नालंकारतारस्विज्ञुलयावयासो।
दूराउ जन्नययरो सुवि तावहारी संघो घणु व घणदाणमिसेण बुद्धो॥

मुत्कलापनं काव्यम्-

(१७६) स्वामिन्! समुद्रविजयात्मज! विश्वनाथ! न प्रार्थयेऽन्यदिह किन्तु तव प्रसादात्। एते मनोरथमयास्तरवो मदीयास्त्वदर्शनामृतरसैः सफलीभवन्तु॥

तत्र पूजारात्रिकादि कृत्वा मन्त्री सङ्घेन सह देवपत्तनं गतः । तत्र चन्द्रप्रभ-प्रभासादिषु तीर्थेषु महिमां कृत्वा सोमेश्वराभोगं विधाय धवलकं प्राप्तो मन्त्री ।

- (१७७) ं लिखतु लिखतु धाता दुर्लिपिं भालभित्तौ भजतु भजतु सर्वोऽप्युग्रभावं ग्रहो वा। परमयमिह यावद्वस्तुपालः कृपालुर्न भवति खलु कष्टं विष्टपस्यास्य तावत्॥
- (१७८) [†]या श्रीः खयं जिनपतेः पदपद्मसद्मा भालस्थले सपिद सङ्गमिते समेता। श्रीवस्तुपाल! तव भालनिभालनेन सा सेवकेषु सुखसुन्सुखतासुपैति॥
- (१७९) पाणिप्रभापिहितकल्पतस्प्रवालश्चौलुक्यभूपतिसभानलिनीमरालः। दिक्चक्रवालविनिवेशितकीर्त्तिमालः श्रीमानयं विजयतां सुवि वस्तुपालः॥
- (१८०) ंसीरभ्यमालगुणमालतमालका...च्योमान्तरालकृतफालयशोमरालः। जीमृतकालरिपुकीर्त्तिमृणालिनीनां श्रीवस्तुपाल विजयी चिरकालमेधि॥

-एवं कवीनां तत्र वाक्यानि ।

११९) इतो [Ps. सङ्घं सम्भोज्य, वस्नादिना सत्कृत्य च] वसाह आभडतन् जं सा० आसपालं आहूयो-वाच-भोः! त्वं वसाहपुत्रः (P वसाहमुख्यः) सङ्घमुख्यस्तव शत्रुञ्जये किं लग्नम्?। द्रम्म चत्वारिंशत्सहस्नाणि (४००००), रैवतके त्रिंशत्सहस्नाणि (३००००)। देवपत्तने किं?। तेनोक्तम्-तत्रासाकं तीर्थेऽधिकतर्म्?। मित्रणा व्यतिकरः श्रुतः। यद्गुरुणा ब्राह्मणेनोक्तम्-प्रियमेलके स्नानं तदा स्नात्, यदा पूर्वतीर्थव्ययप्रायश्चित्ते 20 लक्षं द्विजेभ्यो दुग्धेन प्रक्षाल्य ददासि। तेन स्वीकृतम्। मित्रणा प्रोक्तम्-शत्रुञ्जय-रैवतकस्य प्रायश्चित्तग्राहके मिय सिति द्विजानां कथं वितीर्णम्?। यदि दण्डियप्यामि तदा जनापवादः। परं त्वमदृष्टव्यमुखः। तव पित्रा एका कोटीः, ८ लक्षाः (Ps. षोडश लक्षाः) धर्माव्यये कृताः। त्वमेवं कुरुषे। त्वमपाङ्केयोऽतःपरं सङ्घवाद्यश्च। इत्यमिधाय विसृष्टो जनः। [Ps. स मित्रचरणयोः पतित्वा लक्षद्वयं तीर्थेषु वितीर्य सङ्घमध्येऽभृत्। विप्राणां नामानि न गृह्णाति। मित्रिणा अन्येऽपि सङ्घलोकाः सम्भृष्य सम्भृष्य प्रिहताः।]

§ १२६) [§एकदा देवपत्तनात्पतितान्वया ईयुः । मित्रणोक्तम्-देवो भव्यरीत्या पूज्यमानोऽस्ति १ । तैरु-क्तम्-न । कथम् १-

(१८१) नादत्ते भितं सितं सचिव! ते कर्पूरपूरं सारन् कौपीनेऽपि च कुप्यति प्रभुरसौ शंसन् दुक्लादिके। दिग्धो दुग्धरसैर्जलेषु विमुखः श्रीवस्तुपाल! त्वया कर्पूरागरुमोदितः पशुपतिनों गुग्गुलं जिघति॥

तेषां सहस्रा दश दत्ताः।

† एतानि पद्मानि Ps. आदशें त्यक्तानि । 🖇 एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदशें एवोपळभ्यम् ।

婚

30

15

20

25

30

§ १२७) एकदा मत्री तेजःपालो भृगुपुरमायातः । तत्र श्रीम्रुनिसुत्रतचैत्याचार्यैः श्रीरासिस्टस्रिमिरुक्तम्-मित्रन्! सन्देशकमेकं शृणुत । आदिश्यताम् । अद्य पाश्चात्ययामिन्यां वृद्धा युवत्येका समेत्य प्राह-

(१८२) तेजःपाल! कृपालुधुर्य! विमलप्राग्वाटवंदीध्वज! श्रीमन्नम्बडकीर्तिरच वदति त्वत्सम्मुखं मन्मुखात्। आजन्माविध वंदायष्टिकलिता भ्रान्ताऽहमेकािकनी वृद्धा सम्प्रति पुण्यपुञ्ज! भवते सौवर्णदण्डस्पृहा॥

इत्युक्ते मित्रणा देवकुले देवकुलिका ७२ सहिते दण्ड-कलशाः सुवर्णमयाश्रकार । तस्मिन्कारिते तैरेव उक्तम्-

(१८३) कं कं देशमहं न गतः कौतुकलोभाविष्टः। त्यागी तेजः पालादपरः कोऽपि न दृष्टः॥

10 §१२८) अथैकदा एकोदिनियोगी गले सरावं बद्धा मित्रणमायातः। पृष्टम् । देव! द्वात्रिंशत्सहस्नाः श्रीपत्तने नृपवेश्मिन देयाः । त्वां संस्मृत्यायातः । मित्रणा सहस्र १० दापिताः। श्रीस्तम्मे भृगौ गत्वा अन्यान् द्वादशसहस्रानानीय चिन्तितम्-याञ्चयान्ये न भविष्यन्ति ।......अग्रेऽपि गृहीत्वा पुनरपि याचन् न लञ्जसे १। तेनोक्तम्-देव!

(१८४) हृदि बीडोदरे वहिः खाभावादुत्थितः शिखी। इति मे दग्धलजस्य देही देहीति का त्रपा॥

मित्रणा श्रुत्वोक्तम्-कियन्तोऽविशिष्यते?। देव! दश सहस्राः; द्वादश मिलिताः। त्वां विना शेषेभ्यः को विमोचयित । मित्रणा दश दापिताः। पुनरुक्तम्-निर्वाहं कथं करिष्यसि?। देव! काष्टरणान्यादाय वर्तिष्ये। मित्रणा सहस्राष्टकं निर्वाहाय वितीर्थ प्रहितः।

§१२९) कोऽपि विप्रो मित्रसभायामागतः । मित्रणा उपवेशित इतस्ततो विलोक्य ऊचे— (१८५) अन्नदानैः पयः पानैर्द्धर्मस्थानैश्च स्तलम् । ' यदासा वस्तुपालेन रुद्धमाकादामण्डलम् ॥

कुत्रोपविश्यते ? । पुनर्वदेति सभ्यैरुक्तं नववारम्रुक्तं खिन्नः । नव सहस्रा दत्ताः § ।]

§१३०) अथैकदा वामनस्थलीवास्तव्येन यशोधरेणोक्तम्-

(१८६) श्रीवस्तुपाल तव भालतले जिनाज्ञा वाणी मुखे हृदि कृपा करपङ्कजे श्रीः। देहे सुतिर्विलसतीति रुपेव कीर्तिः पैतामहं सपदि धाम जगाम नाम॥
सहस्र १० दत्तिः। पं० माधवोक्तिः-

सरस्वतीसङ्गतकान्तमूर्ति.....॥

द्रम्मसहस्र ४० द्तिः।

§ १३१) द्वितीययात्रारम्मे श्रीनरचन्द्राचार्येरुक्तम्-

(१८७) लिहम! प्रेयसि! केयमास्यशितिता वैकुण्ठ कुण्ठोऽसि किं? नो जानासि पितुर्विनाशमसमं सङ्घोत्थितैः पांशुभिः। मा भीर्भीरः! गभीर एव भविताऽम्भोधिश्चिरं नन्दतात् सङ्घेशो लिलतापतिर्जिनपतेः स्नात्राम्बुकुल्यां सजन्॥



गौरी रागवती त्विय त्विय वृषो बद्धादरस्त्वं पुन-.भूत्या त्वं च संमुह्णसद्गुणगणः किंवा बहु ब्रूमहे। श्रीमन्त्रीश्वर! नूनमीश्वरकलायुक्तं च ते युँज्यते बालेन्दुं चिरमुचकै रचयितुं त्वत्तोऽपरः कः क्षमः॥

तद्तु मन्त्रिणा पदोपवेशनं कारितम्।

पातालान्न समुद्धृतो वत बलि० । इदं कङ्कणकाव्यम् ।

- १३२) अथ पादलिप्तपुरे लालितादेवीश्रेयसे सरोऽकारयत्।

*पुण्डरीकनिवहैर्विराजितं पुण्डरीकगिरिराजसिवधौ। वस्तुपालसचिवेन कारितं भाति यत्र ललिताभिधं सरः॥

10

वहनेन विनाशितं पुरा सचिवौ सचरितव्रताविमौ। अचलेश्वरनालिमण्डपं रचयामासतुरेनमर्बुदे ॥

वस्तुपालसचिवेन कारितं हैमदण्डकलदौः [सुद्रोभितम्]। [अर्बुदाद्रि]शिखरे मनोरमं नेमिमन्दिरमिदं विराजते ॥

§ १३३) एकसिन्नवसरे सुराष्ट्रायां सङ्घे व्रजति सति अग्रेसरैरेकािकभिर्वतिभिर्वाटिकासु मार्गसोपद्रवे कृतें 15 . तपोधनिकैरेत्य मित्रणोऽग्रे रावा कृता । मित्रणोत्तारके कृते अनुपमदेव्यग्रे कथापितम्-यद्द्य एकाकिनां विहरणं-न विधेयम् । अपरे सर्वेऽपि विहृत्य गताः ।अनायाते अनुपमदेव्या नगोदरं बन्धोः समर्घविच(ह?)रणं तेषां कारितम् । स्वयमवेलं मोजनार्थग्रुपविष्टा । मित्रणोक्तम्-यो गृहे लघुः स बहिर्वातेन नीयते । असाभिः केनापि हेतुना वारितम् । इत्थं कियन्ति दिनानि निर्वाहं यास्पति । तया तत्कालं स्थालं त्यक्तवोक्तम्-यद्भवतां बालत्वे जातं तत्कि विस्मृतम् ?। किं तत् ?। धवलकके वसतामेकदा अवेलं तपोधनौ मार्गश्रान्तौ भवतां गृहे 20 समेत्य धर्म्मलाभोक्तिपूर्वं स्थितौ । तदा करुणभक्तानिसमायान्ति । नापरं किमपि गृहे । सर्वः कोऽपि भुक्त्वोत्थितः । अतः श्रश्चरेण नेत्रमीलनं कृतम् । श्रश्रृनीचैरवलोक्य स्थिता । युवामघोऽवनौ जातौ । ज्येष्ठपत्नी-सहिता अहं कटिकापाश्चात्ये उपविष्टा । तपोधनौ अलब्धोत्तरौ गतौ । तदा युवाभ्यां यदुक्तं तिकं न सरतः १-धिगसाकं जीवितम् । भृदङ्ग (Ps. मातङ्ग) स्थापि गृहे भुक्तोत्तरं प्राप्यते । वयं तेषामपि निकृष्टाः सः। यद्यवनिर्विवरं दत्ते तदा पाताले विश्वामः । अवेलमायातौ यती इत्थं व्यावृत्य गतौ । स कोऽपि क्षणो भविता 25 यत्र वयमपि किमपि कर्तुं क्षमा भविष्यामः। नूनं तद्भवतां विस्मृतम्। यदद्य ऋद्धिं प्राप्य ईदशं विमृशत्। भवतां ददतामेव श्रेयः । इति श्रुत्वा मन्त्री हृष्टः । इत्युक्तम्-ममाग्रे तपोधनरावा केनापि न कार्या । ततो द्शिनिभिः सर्वैः 'षड् दर्शनमाता' इति उक्तम् । तस्याः कङ्कणकाव्यमिदम्-

(१९२) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा नवा खलु । खहस्तेनैव यदत्तं तदत्तमुपलभ्यते ॥

§ १३४) तया विमलाद्रौ नन्दीश्वरोद्यापने नन्दीश्वरप्रासादः कारितः । तत्रोद्यापनं कृतम् । अत्रैव विमला-30 चलेऽनुपमसरः कारितम् । तस्मिन् भरिते केनापि चारणेनोक्तम्-

(१९३) भाऊ भरहिं काइं सेत्तुंजि सर न काराविडं। जाणिउं ईणइं ठाइ अमाइ अणुपमडी किउं॥

st $P_{
m S.}$ आदुर्शे एवेदं पद्यं प्राप्यते । $\,$ एतत्पद्यद्वयं $P_{
m S.}$ आदुर्शे परित्यक्तम् ।

15

एकवीसवारभणनेनैकविंशतिसहस्रा दापिता मन्त्रिणा ।

§ १३५) एकदा वटकूपपुरेऽलङ्कारिणः श्रीमाणिक्यसूरयः सन्ति । ते मन्त्रिणा आकारिता अपि नागताः । मन्त्रिपा खरूपेण कथापितम्-

> (868) उत्कुत्योत्कुत्य गतिं कुर्वन् गर्वाद् खर्वजडवृद्धिः। वटकूपकूपमध्ये निवसति माणिक्यमण्डूकः ॥

पुनराचार्यैः प्रतिखरूपं प्रहितम्-

गुणालीजन्महेतूनां तन्तूनां हृद्विपाटयन्। वंशार्द्धार्द्धपरिस्फूर्त्या रे पिञ्जन! विज्ञाससे॥

मची किञ्चिद्धपितः स्तम्भतीर्थपौषधागारं छण्टाप्यैकत्र वस्तु द्रे । आचार्यास्तद्तु समायाता मिलिताः 10 मित्रणः । उक्तं च-मित्रन्! सङ्घभारोद्धारधुरीणे त्विय कथमसाकं पौषधागारे उपद्रवः । मित्रणोक्तम्-पूज्या-नामनागमनमेव हेतुर्नान्यत् । पुनः सर्वमर्प्पितम् । संघार्चासमये तैर्व्याहृतम्-

एकं वासः सुरेदौः कृतसुकृतदातैर्जन्मकाले जिनानां दत्तं दीक्षाक्षणे वा ध्वजवसनमधो एकमेवाम्बरं च। सूर्यादीनां ग्रहाणां पुनरपि विधिना दत्तमस्मिन् क्षणेऽसौ सत्पात्रभूरि यच्छन्नधरितसुरपो नन्दताद् वस्तुपालः॥

तद्तु ते पुस्तकादि द्त्वा क्षमित्वा च प्रहिताः।

§ १३६) तथा यत्र यत्र प्रासादं कारयति तत्र तत्र निधिः प्रकटीभवति । एकदा श्रीशत्रु अये शृङ्गोपरि कपर्हि-यक्षप्रासादः प्रारब्धः । पाषाणान् विदार्य मण्डयध्वम् । चिन्तितम्-कथमत्र निधिः प्रकटीभविष्यति । मूलादपि टङ्किकामिर्विदार्थ पाषाणे द्विधाकृते सर्वेरप्यन्तः सप्पे दृष्टः । तदा मन्त्री तत्रासीत् । स्वयमायातस्तदाश्चर्यविलोक-20 नाय । यावत्पश्यति तावदेकावली हारः । करेण गृहीतः । सर्वैरिप दृष्टः । तत्र पपाठ कपिईस्तुतिम्-

(१९७) चिन्तामणिं न गणयामि न कल्पयामि कल्पहुमं मनसि कामगवीं न वीक्ष्ये। ध्यायामि नो निधिमधीनगुणातिरेकमेकं कपर्दिनमहर्निशमेव सेवे॥

तद् ु प्रासादः कारितः।

§ १३७) एकदा मित्रणा चिन्तितम्-यं श्रीशत्रञ्जये कर्म्मस्थाये मुच्यते स देवद्रव्यं विनाशयति । एवं 25 विचिन्त्य पौषधागारे श्रीविजयसेनस्ररिपार्श्वे समेतः । गुरवो वन्दिताः । लघ्वाचार्याः श्रीउद्यप्रभस्रर-योऽपि । ते तु मित्रणा सप्तशतयोजनानामन्तर्यः कोऽपि विद्वान् तमानीय पाठिताः सन्ति । तपोधनानामपि पञ्चविंशतिर्नमञ्चकार । तपोधनमेकं वृद्धं शान्तं नमस्कारपरावर्त्तनपरं दृष्ट्वाऽऽह-भगवन्! देवद्रव्येण रक्षितेनोपेक्षितेन वा श्रेयः ? । यदि रक्षितेन तर्ह्यमुं बृद्धं यति प्रसादीकुरुत । यं शत्रु अये नयामि । अपरे तत्र भक्षकाः । गुरुभिरुक्तम्-न युक्तमेतत् । बलादपि मानिता गुरुवः । तैस्तपोधनाग्रे प्रोक्तम्-यन्मत्री विक तत्का-30 र्यम् । तेनोक्तम्-भगवन् ! दीक्षा मया निस्तारार्थं जगृहे । तत्र द्रव्याशनेन कथं मलिनयामि ! मत्रिणा प्रोक्तम्-एतन्मालिन्यं न किन्तु भूषणम्, चैत्यद्रव्यरक्षणेन । आग्रहं कृत्वा प्रहितः । स खद्र्शनमार्गस्थो देवलेखकं विलो-कयति । एकदा आदेशवर्तिभिः खादकैरुक्तम्-भगवन् ! यूयं तीर्थमठपाः । भवतां पार्श्वे देवनमस्यागताष्टकुरा व्यवहारिणश्चोपविद्यन्ति । एभिर्मिलिनैजींणैंश्चीवरैर्भव्यं न । वस्त्रमध्ये किं दूषणम् १ । मनोहराणि वस[ना]नि परि-

¹ B दीक्षा नमस्कारपरावर्तनार्थे गृहीता । 2 B दर्शनाचारस्तः ।

द्धत । तानि ग्राहितः । तथाकृते पुनरुक्तम्-अनेके जना भवतां सह पर्यालोचं कुर्वन्ति, तत्कथमुद्गीते वदने भव्यम् १ । पश्चात्ताम्बूलं ग्राहितः । उक्तम्-अत्र भवतां भिक्षावेला तथा कर्म्मस्थायान्तरायं स्थात्, रसवतीमा-स्थादयतां किं दूषणम् १ । तल्लोलुपः कृतः । भगवन् १ विलोकयत-पादेन चङ्गमणं भव्यं वा सुखासनेन १ । तमपि कारितः । एकदा सुखासनस्थः पालीताणके जनैः पश्चद्यभिः सह गन्तुं प्रवृत्तः । मन्नी कृतधौतवसनः कृतमु-खकोशः पादचारेण सम्मुखो जातः । मन्निणा पृष्टम्-केऽमी १ । अग्रेसरेरुक्तम्-असौ भवत्प्रहितो मठपः । किम्बिणा सुखासनं स्थापयित्वा वन्दितः । उक्तम्-तले कार्यं कृत्वा वेगेन पादमवधारणीयम् । स लज्जितः । तत्त्रम्ब्यानमादाय स्थितः । उपर्याकारितोऽपि नायाति । उक्तश्च-मयाऽन्यनं जगृहे । इयतां यतीनां मध्यादहं मन्निणा प्रेषितः । ममाप्ययमाचारः । गुरूणां भवतां चाऽऽस्यं कथं दर्शयामि १ । अन्योऽत्र कार्यकर्ता वीक्ष्यः । उपरि गत्वाऽन्यनं परिपाल्य दिवंगतः । मन्नी तुं यात्रां कृत्वा पुरमेत्य गुरूणां सकलं तद्दुत्तमाचल्यौ । [Ps. गुरुभिः प्रोक्तम्-माऽतः परं कोऽपि साधुश्चैत्यद्रव्यचिन्तां करोत् । एषोऽपि ईदृशो जातः ।]

§ १३८) अथ महं० अनुपमदेन्या १२९२ वर्षे पश्चमी-उद्यापनं कृतम् । तत्र समवसरणानि २५, श्रीशत्रु अय-तले वाटिका ३२, रैवते १६, तेजलपुरे पौषधागार-कुमरसरः सहितं देवकुलम् । झीझरीआग्रामे प्रासादः, सरोवरम्, वापी च । लुणिगवसहीग्रासकृते डाक-डमाणीग्रामद्वयं दत्तम् । तपोधनोपकरणानि नाम्ना पात्राणि दोरु-झोली-

डांडाप्र॰ ग्रामाणि । कोऽपि यात्राः १३ वक्ति ।

(अत्र B आद्रों एतद्वर्णनं विशेषविस्तरेण लिखितं लभ्यते; यथा-)

१२२०) {तथा महं० अनुपमदेच्या १२९२ पंचमी-उद्यापनं कृतम्। तत्र २५ समवसरणानि पश्चवर्णानि कारयित्वा श्रीस्रिरिन्यः प्रदत्तानि। एवं २५ महं० क्रुमारदेच्याः पश्चिवित्रति महं० ललतादेच्या। तथा महं० आसराजवसही कारिता मा(पि?)तुः श्रेयसे च। महं० मछदेवश्रेयसे मं० ॡणिगश्रेयसेऽबुदे। तथा सप्तभगिन्यस्तासां श्रेयसे
सप्त प्रासादाः । तासां सखीनां श्रेयसे सप्त देवकुलिकाः कारिताः। श्रीशत्रुख्यतले वाटिका ३२ जगन्नाथपूजाये
कारिताः। रैवते पोडश्च। तथा श्रीतेजलपुरं प्रासाद-पोपधागार-क्रुमरसरःसहितम्। तथा झींझरिआप्रामे प्रासादो २०
वापी सरश्च। अर्चुदे ॡणिगवसद्यां श्रीनेमिपूजाये डाक-डमाणी इति ग्रामद्वयं ददो। तथा तपोधनोपकरण १४ तेषां
नाम्ना दोरउ-झोली-डांडाप्रभृतीनि प्रतिग्रामाण्यस्थापयत्। एवं सर्वकीर्तनानि १२५००० विम्वानि शैल-पित्तलमनाम्ना दोरउ-झोली-डांडाप्रभृतीनि प्रतिग्रामाण्यस्थापयत्। एवं सर्वकीर्तनानि १२५००० विम्वानि शैल-पित्तलमनाम्ना दोरउ-झोली-डांडाप्रभृतीनि प्रतिग्रामाण्यस्थापयत्। एवं सर्वकीर्तनानि १२५००० विम्वानि शैल-पित्तलमनाम्ना १८० कोटि, ९६ लक्ष शत्रुख्यपदे। १२ कोटि, ८० लक्ष गिरिनारपदे। १२ कोटि, ५३ लक्ष अर्वुदपदे।
९८४ पोसाल, ५०० सिहासन दान्त-काष्ठमय, ५०५ समवसरणानि पट्टस्त्रमयानि। तीर्थयात्रा १२; कोऽपि
१३॥: वक्ति। ७०० त्रस्वशाला। ७०० सत्राकार। ७०० तपस्तिनो मठाः। मसीति ८४, गढ ३२, सरोवर २५
६४, वावि ७००। माहेश्वरेषु प्रासादेषु, ३ सहस्र विडोत्तर नृतन जीर्णोद्धार, १३०४ जैन प्रासाद शिखरबद्ध,
२३०० जीर्णोद्धार, २१ आचार्यपद्। सरस्वतीभांडागार ३-भृगुपुरे स्तंभतीर्थे पत्तने च। १८ कोडि द्राम दण्डकलश-पुस्तकपदे। १५०० तपोधन दिनं प्रति विहरणउं। ५०० त्राक्षणभोजनम्। १०० कार्पटिकभोजनम्।
दक्षिणस्यां श्रीपर्वत, पश्चिमायां प्रभास, उत्तरस्यां केदारु, पूर्वसां वाणारसी इति भूमिमध्ये। एवं सर्वाङ्क ३
कोटिशत, २२ कोडि, ८४ लक्ष, ७ सहस्र, ४ शत, १४ लोहिडआ अथवा इका आगला द्राम मीमप्री०।}। । ३०

§१४०) अथ भीमे [राज्ञि] दिवंगते राणकलवणप्रसादः पुत्रयोर्वीरम-वीरधवलयोर्मध्यादेकमपि राज्ये उपवेशियतुं न शशाक । आद्यः पत्तनपरिग्रहस्य प्रियः, द्वितीयस्तु दानी योद्धा । अथैकदा राणकवीरधवलेन ताम्बूलो [वं]ठायार्पितः । तेन विलोक्य तटे [क्षिप्तः] एवं द्वित्रिवेलम् । राज्ञा पृष्टम् –िकमरे ! त्यजिस ? । स्वामिन् ! मध्ये कृमयः कृष्णवर्णाः । राणकेन मित्रणोऽग्रे उक्तम् –यदहमराजापि छ्त्या नृपः कृतः ।

Indira Gandhi Nations Gentre for the Arts

¹ B कथमुद्रानसत्यं (?) वदने भव्यम् । पु॰ प्र• स॰ 9

§१४१) तदनु विश्वमल्ले किश्चिद् यौवनाभिग्रुखे सित धवलककातू सर्वमाएच्छ्यं, मित्रणं पाश्चार्य विग्रुच्य, तेजःपालं सहादाय पत्तने गत्वा राणकं वीरमं च ग्रुत्कलाप्य महता परिकरेण गङ्गां प्रति चचाल । ततो मतोडातीथं दानादि दत्त्वा कुण्ड्यन्तिविवेश । सा द्विजैबोल्यमानापि न बुडित । तेजःपालेनोक्तम्—कापि हृदि आर्त्तःः । राणकेनोक्तम्—राज्यं वीरमस्य भविष्यति वीसिलको कलिष्यति । मम करे जलं क्षिप—वीसलस्य राज्यं मया इत्यम् । मित्रणा तथा हत्ते जलं क्षिप्तम् —एषा चिन्ता न विधेया । तदनु कुण्डी मग्नां । तेजःपालः सुकृत्यं विधाय क्रमेण पत्तनमायातः । इतो राणकत्तेजःपालमागतं श्रुत्वा सशोकः सभायाग्रुपविष्टः । तावता तेजःपालेन विश्वमल्लस्योत्तारके राणकपद्व्यास्तिलकं कृतम् । वादित्रवादनं श्रुत्वा राणकेन पृष्टम्—किमिदं विश्वमल्लस्योत्तारके । इतसेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् —तेजलः ! वादित्रवादने को हेतः ! । देव ! विश्वमल्लः स्थानारके ? । इतसेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् —तेजलः ! वादित्रवादने को हेतः ? । देव ! विश्वमल्लः स्थानिः पट्टे अभिषिक्तः । इतो गोधियकेनोक्तम्—राज्ञाऽभिषिक्तो भवति त्वया वा ?, मया न कथं । त्वं तु 10 पट्टस्य पदातिरसि । अद्य स्थलामिसुतो राणकः कृतोऽस्ति । कल्ये राजानं करिष्यामि । एवं गोधिय-तेजपालौ विवदानो राणकेन निषद्धौ । वार्ताः पट्टा सुतस्थौर्द्वदेहिकं कृतम् ।

श्रीवीरधवले दिवंगते मित्रणा वस्तुपालेनोक्तम्-

(१९८) आयान्ति यान्ति च परे ऋतवः क्रमेण जातं तदेतदतुयुग्ममगत्वरं तु । वीरेण वीरधवलेन विना जनानां वर्षा विलोचनयुगे हृदये निदाघः ॥

अत्र मोजदीनमातुः सम्बन्धः।

[एष सम्बन्धः ${f P}$ सञ्ज्ञके आदर्शे लिखितो नास्ति; परं ${f B}$ सञ्ज्ञके आदर्शे उपलभ्यते । तत एवात्रावतार्यते । यथा-]

§१४२) {इतश्र सुरत्राणमाजेदीनमाता कादिकश्च हजयात्रां कर्तुं पत्तनमायातो । मित्रणा प्रवेशोत्सवपूर्वकं प्राघुणकं विधाय सम्प्रेषणपूर्वकं स्थाने स्थाने, मित्रिवचसा गौरवमनुभवन्तो हजयात्रां कृत्वा प्रत्यावृत्तो । प्रवेशपूर्वकं भोजितो । मात्रोक्तम्—त्वं मत्सुतः सुरत्राणादप्यधिकः । किमिष याचस्व । मातः! नाषपुरप्रत्यासन्ने मकडाणा 20 ग्रामे पापाणस्य स्वनिरस्ति । तस्याः प्रस्तरत्रयं स्वमातः सकाशाद्याचे । तयोक्तम्—तथा करोमि, यथा मे सुनुः समर्पिष्यित । तथा उपायने तेजी ५०० प्रहितानि सार्द्धम् । इतः सुरत्राणः जनन्याः सम्मुखमाययो । गुरुरुक्तः सुखेन यात्रा कृता? । वस्तुपालप्रसादेन । हिंदुकं किं प्रशंसयिति । तेनोक्तम्—तस्य भक्तिः सा या एकया जिह्वया वक्तं न पार्यते । इदमुपायनम् । तदवलोक्याह—स किं याचते? । प्रस्तरत्रयम् । एवं त्वं कथयन् हरामं जनयिति । विक्तं करोमि?—तस्य सा भक्तिर्ययाऽहं वलादिष कथाप्ये । सुरत्राणेन फलहीत्रयमिर्पतम् । मार्गे 25 रहकलानि भज्यन्ते । मित्रिणा कथापितम्—यद् रहकलेषु उभयोरिष पक्षयोर्खण्डधारा घृतस्य देया । एवं महोत्सवे जायमाने फलहिकाः श्रीशत्रञ्जये प्राप्ताः । मत्री संघं संमील्य यात्रार्थमुपिर गतः । तत्र संघस्याञ्जलिपूर्वं विज्ञप्तिकां चक्रे—संघस्त्ववधारयतु । एप मे मनोरथः कदापि सिद्धं मा प्रयातु । यतः पूर्वतीर्थस्थानर्थं जाते एतद्विम्वमुपविश्वति । एतद्युगान्तेऽपि मा भूयात् । परं न ज्ञायते । कदाचित्कालयोगेनानर्थः स्थात्तद्दं विम्वं श्रीसंघेन प्रसादं विधाय स्थापनीयम् । संघस्याङ्के क्षिप्तमित्ति । एवमुक्त्वा एकां युगादिदेवस्य फलहिकाम्, एकां अर्थादुर्शकस्य, एकां कपर्देः—एवमभिधाय भूमिगृहे व्यधात् ।}

¹ B मुत्कलाप्य। 2 B मागतोडा। 3 एतद्वाक्यस्थाने B 'कृतं एतत्।' 4 B बुडिता। 5 B शोकवान्। 6 B नृपसम्भयायातः। 7 B पृष्टम्। 8 B तेजःपाल। 9 P भविष्यति। 10 P 'कथं' अग्रे 'त्वया' शब्दोऽधिकः। 11 B वार्ता पृष्टा। 12 B विद्धे।

§ १४३) एवं पुण्यानि राजकार्याणि कुर्वतोरेकदा राणक ल्णप्रसादेन तेजल उक्तः—मित्रन्! को राजा कार्यः १ । वीरधवलः खर्ग्यामी जातः । तर्पुत्रः विशुः । यदि तव विचारे एति तदा वीरमस्य राज्यं दीयते । मित्रणा उक्तम् —स्वामिन् ! मया खस्वामिस्नोर्वासलस्याङ्गीकृतमस्ति । राणकः प्राह—यद्यप्येवं तथापि मद्राक्त्यं मन्यस्व । मोत्रणा मानिते, रात्रौ वीरमः समेत्य राणकं लच्या प्रहृत्य, प्राह—भो डोकर श अद्यापि राज्याशां न सुश्रासि १, किं द्वितीयमपि त्रियमाणं अपेक्षसे १ । एवसुक्त्वा गतः । राणकेन चिन्तितम्—अनेन कीलिकामङ्गो न प्रतीक्षितः । स कोऽप्यस्ति यः प्रातःप्रहरमध्ये वीसलमानयति । नागडेन भद्दपुत्रेणोक्तम्—अहं धवलके रात्रिपाश्चान्त्यप्रहरे यास्यामि । विदनु करभीमारुद्ध समेष्यिति । स लेखं दक्त्वा प्रहितः । वीसलं सुप्तसुत्थाप्य प्राह—यदि त्वं राजा तदा मे किं १ । श्रीकरणम् । तिं चल । करभीमारुद्धायात् । प्रातः राणकः सकलपरिग्रहं सम्मील्य सहस्रलङ्गोपकण्ठे उत्तारकं वत्त्वा स्थितः । वीसलेन राणकस्तत्रैत्य नमस्कृतः ।

ततो राणकेन तिलकं कृत्वा त्र्यनादपूर्व धवलगृहे नीतः, सिंहासने उपवेशितश्र। वीरमः निंह कि शयाव-10 द्वक्ति तावित्रस्वानित्ववपूर्वकं श्रीवीसलदेवाज्ञा श्रुता। अश्वसहस्त्रेद्वादिशिमः समं प्रथम् भूत्वा स्थितः। इतस्तेजः-पालबुद्ध्या राज्ञाऽचिन्ति— वृद्धस्य वीरमोपि मोहोऽस्ति, मा कदाचिदेतिद्विघटयतु— इति विमृश्य वृहके विषं क्षित्वा सन्ध्यायां राणकपार्श्वे गन्तुं प्रवृत्तः। राणकेन तु चिन्तितमस्ति — मया विरूपं कृतम्। अद्यापि राज्यं प्रात्वीरमस्य दास्ये। उक्तम्—द्वारे कोऽपि विश्वन् रक्ष्यः । इतो राजा द्वारस्थै निष्ध्यमानोऽपि मध्ये प्रविश्य राणकं प्राह—तात! अमृतिमदं सत्वरं पिवत । वत्स! तव विचारे आयातम् १। आयातं त्र्यानितम्। राणकेन उक्तम् न्त्या राज्य-15 निर्वाहो भावी — एवसुकत्वा पीतम्। तत्कालं दिवंगतः। तेजःपालस्य "राजस्थापनाचार्यः" इति विरुदं जातम्।

\$१४४) इतो मित्रबुद्ध्या श्रीवीसलदेवेन तृतीये दिने वीरमो भाणितः—यन्मे वीरमस्तातसमः। अतो यदि विक्तः तदा राज्यं मुश्रामि, सेवां करोमिः । तदनु प्रधानैर्महाधरैश्रोक्तं वीरमं प्रति—देव! राजा मान्यः । यस्त्वेवं विक्तः । वीरमः प्राह—यदि मे नगरपश्चकं नृपो ददाति—एकं प्रह्लादनपुरं, द्वितीयं वर्द्धमानपुरं, चतुर्थं धवलकं, मञ्चमं पेटलाउद्रपुरं। एतानि पञ्च पुराणिः, तथा वर्षं प्रति द्रम्म लक्ष ३। एवं 20 यदि नृपो मन्यते तदा प्रणामं करोमि । नृपेण मानितम् । मित्रणा तत्कालं कत्वगरपरिसरे पञ्च प्रामाणि तन्त्रामा वासितानि । वीरमो मिलितः । नृपं प्रणम्य वीरमो वाटके स्थितः। वीसलदेवस्य राज्यं निष्कण्टकं जातम् । नागडस्य श्रीकरणं जातम् । मित्रणो व्यापारो निवृत्तः । नृपेण "वृद्धामात्या" इति दत्तमानाः सेवां कुर्वाणाः सन्ति ।

(१९९) सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्गसिंहेनापि मनीषिणा। विस्त्रेऽपि कृता तेषां वस्तुपालेन मन्त्रिणा॥*
एकदा वीरमेन नगरपञ्चकं याचितम्। राज्ञा ग्रामपञ्चकं दर्शितम्। तेनोक्तम्-नगराणि याचे। राज्ञोक्तम्-25
एषु दत्तेषु किमवशिष्यते?। तर्हि न स्थासे। त्रज्ञ। स सपरिच्छदो मालवं प्रति त्रजन्, राज्ञा जावालिप्ररीयस्य

चाचिगदेवस्य पार्श्वात् सइंवाडीघार्टसमीपे मारितः।

§१४५) इतश्र-अर्बुद्चैत्ये गजशालां वीक्ष्य यशोवीरेण मन्त्रिणा पृष्टम्³¹-भवतां पूर्वजः कः श्रीकरणः?। पृष्टम्-कथम्?। श्रीकरणं विना गजशाला सत्या न भवति³²। तदनु तेजःपालेन गजः समानायितः। तं

^{1.} P 'राणक' नास्ति । 2 B तेज:पालो व्याहतः । 3 राज्यं कस्य दीयते । 4 B सुतस्तु । 5 B समेति । 6 B नास्तीदं वाक्यम् । 7 B मम वाक्याद् वीरमस्यास्तु । 8 B डोङ्कर । 9 B क्रियन्तं । 10 B 'रात्रि' नास्ति । ‡ एतद्-त्र्गातपंक्तिस्थाने B आदर्शे "तद्नु करभीमधिरह्य चिलतः ।" इत्येव पाठो विद्यते । 11 B चतुरकं । 12 B बीसलः समायातः । राणकं नामस्कृत्य यावदास्ते तावद् । 13 B विधाय । 14 B ० पुरस्सरं । 15 विधत्ते । 16 B सह । 17 B 'अस्ति' नास्ति । 18 B रक्षणीयः । 19 B कुरुत । 20 B समायातं । 21 B आयातेनानीतं । 22 B व्याहृतं । 23 B भविष्यति । 24 B कथयति । 25 नास्तीदं पदं B । 26 B मानयोग्यः । 27 B अभिद्धाति । 28 B अपरं । 29 B नगराणां परि । 30 B नास्तीदं वाक्यं । * P आदर्शे एष स्क्रोको नास्ति । 31 B उक्तं । 32 B गजशाला न घटते ।

नृपस्थोपायने कृत्वा, एककोटि १६ लक्ष, वर्ष यावत् चंडावके कृत्वा गृहीतम् । व्ययस्ताद्दगेव । केनापि कविना नृपं प्रति प्रोक्तम्—

(२००) एतावतैव वींसल! पर्य प्राग्वाट-लाठ्यो भेंदम्। एक इभानुपनिन्ये प्रथमश्चरमस्तु खरमेकम्॥

5 तेजःपालेन स इस्ती ढौकने कृतः । लाटेन समराकेन वेसरश्रेकः । द्रम्म लक्ष ३६ त्रुटौ, द्वितीयवर्षे श्रीकरणं मुक्तम् ।

(२०१) बौद्धैबौँद्धो वैष्णवैर्विष्णुभक्तः, श्रैवैः शैवो योगिभियोंगरङ्गः। जैनैस्तावज्ञैन एवेति कृत्वा सत्त्वाधारः स्तूयते वस्तुपालः॥

§१४६) सं० १२९८ वर्षे मन्त्री नृपं मुत्कलाप्य चिलतः । नागडस्तु राणकसार्थे मण्डलीं गतः। तत्र 10 तपोधनसाराविषये शिक्षां दत्त्वा अङ्केवालीआग्रामे०......प्रासादः। सरः। सत्रशालात्रयं च कारितम्। (В सङ्ग्हे अत्र एतदेव वर्णनं किञ्चिद्विस्तारेण लिखितं लभ्यते। यथा-)

{संवत् १२९८ वर्षे जातकेनायुपोऽन्तं परिज्ञाय नृपं मुत्कलापयामास—देव! क्षम्यताम्, यत्स्वामिन ऊणं खूणं वा कृतः । राजा—हे मित्रन् ! कथमेतत् ! देवसेवाये यास्यामि । मित्रन् ! त्वं मदीय[तात]वीरधवलसमोऽतस्त्वां कथं प्रेपये । कदाचिदेयद्रम्माणां शङ्का भवतिः तदा न कार्यम् । मदीयं शरीरं तवायत्तम्, द्रव्यः किम्, राष्ट्रम्माणां पत्रं विदारियण्यामि । परं मा व्रज । मत्री प्राह—देव ! द्रम्माणां किम् !, द्रम्मा बाह्याः । देहं तु तव पिण्डैः पोषितम् । परमवसाने प्रत्यासन्ते देव ! तीर्थसेवा युक्ता । अश्रुपातपूर्वं राज्ञा बीटकं दत्तम् । मित्रजनान् क्षमियत्वा श्रीवस्तुपालो महता परिच्छदेन सह श्रीशत्रुञ्जयोपि चचाल । इतो राणकनागडो मित्रिप्रयाणं श्रुत्वा सम्प्रेपियतुं चचाल । मंडल्यां गतेन मित्रणामिहितम्—राणक! राजकार्याणि सीदिन्ति । यूयं प्रसादं कृत्वा वलत । तेनोक्तम्—तव गृहे बहुरस्मि । तवोपजीवनेन इयतीं ऋद्विम् । करणीयं किमप्यादिश् । मित्रणोक्तम्—

20 (२०२) न कृतं सुकृतं किञ्चित्सतां संस्मरणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥
राणकः प्राह-परं किञ्चन मनसि दुष्यति, ममाग्रे किं नोच्यते?। देव! मिय गते सित एते व्रतिनो दुःखिनो
भविष्यन्ति । मित्रिन्! इत्थं कथमुच्यते?। यद्भवतां पार्श्वात् सुखिनः करिष्यामि । परिमयं चिन्ता न विषेया ।
इति राणको मुत्कलाप्य वलितः । मत्री अंकेवालिआग्रामे गतः । गुरवस्तत्रोक्ताः-भगवन्! मेऽनशनं प्रयच्छत ।
तत्र तेजःपालानुमत्या गुरुभिरनशनं प्रदत्तम् । मत्री क्षमित-क्षामणापूर्वं पञ्च परमेष्टिनः सरन् स्वर्गं गतः । संस्का25 रादनु तेजःपालेनास्थीनि श्रीशत्रञ्जये प्रहितानि । तत्र स्वर्गारोहणप्रासादः कारितः । अंकेवालिआग्रामे प्रासादः
कारितः । सरोवरं च सत्रशाला च । तत्र धर्मस्थानत्रयं कारितम् । तेजःपालो यात्रां विधाय पत्तने समायातः ।)

§१४७) व्यापारे वर्ष १८ तद्तु बइठा ऊठि । तथा १२०८ वर्षे महैं० तेजःपालेन स्वर्गमनाय राजा [Ps. वीसलदेवः] मुत्कलापितः । तदा द्रम्मा लक्ष २७ देया आसन् । राज्ञा मुक्ताः । [तथा राज्ञा द्रम्मा लक्षत्रयं धर्मव्ययाय वितीर्य*] तेजःपालः प्रहितः । श्रीसङ्घं क्षमियत्वा श्रीशङ्खेश्वरोपिर चिलतः । चन्द्रोमाणा30 ग्रामे गतः । 'जातकमवलोकितम्-यचन्द्रोमाणाग्रामे पाश्वात्यप्रहरे व्ययः । मन्त्री अनशनमादाय दिवमृगमत् ।
तत्र कीर्त्तनत्रयम् ।

§१४८) ईअथ मित्रिणि दिवं गते श्रीवर्द्धमानसूरयो वैराग्यादाम्बिलवर्द्धमानं तपः कर्त्तुं प्रारेभिरे । श्रीशङ्केश्वर-पार्श्वनाथाभिग्रहं च जगृहुः । यत्तपिस सम्पूर्णे देवं नमस्कृत्य पारणकं करिष्यामः । सम्पूर्णे जाते देवं नन्तुं

¹ B द्रम्मान् विमुच्य । * Ps आदर्शे एवैतहाक्यं लभ्यते । † एतत्पंक्तिस्थाने P 'पाश्चात्यदिने दिवंगतः' इत्येव संक्षिप्तः पाठः । ‡ B आदर्शे एतत्यकरणं प्राप्यते ।

प्रस्थिताः । मार्गे श्रान्तास्तृषिता एकस्य तरोस्तले देवं नर्मस्कृत्यानशनाद्विनष्टाः । शङ्केश्वरेऽधिष्ठायको जातः । ज्ञानेन मित्रणो गतिमन्वेष्टं प्रवृत्तः । अजानानो महाविदेहे श्रीसीमन्धरं नमस्कृत्य पप्रच्छ-भगवन् ! वस्तुपाल-जीवः क गतः । खामी आह-अत्रैव पुष्कलावतीविजये पुण्डरीकिण्यां कुरुचन्द्रो नाम नृपो जातः । स तृतीयम्परे सेत्स्यति । अनुपमदेवीजीवः श्रेष्टिनः सुता अत्रैव विजये जाता । साष्टवार्षिकाऽस्माभिर्दीक्षिता, देशोनां पूर्वकोटिं तपस्तात्वा सेत्स्यति । इति तेन च्यन्तरेणात्र भरते वस्तुपालानुपमदेच्योर्गतिः प्रकटीकृता ।

॥ इति वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः ॥

(एतत्प्रवन्धप्रान्ते P सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे निम्नगतं विशेषवर्णनं लिखितं लभ्यते-)

११४९) अत्राग्रेतनः प्रवन्धः कथनीयः । वीरधवलेन वामनस्थल्यां जयतलदेविभातरौ साङ्गण-चाम्रण्डराजौ मारितौ । युद्धे जाते १४ शततुरङ्ग स० ५ जंजी (?)

(२०३) जीतउं छहि जणेहिं सांभिल समहरि वाजीइ। बिहुं भुजि वीरतणेहिं चिहुं पगि ऊपरवटतणे॥-इति चारणोक्तिः।

§ १५०) गोधाधिपो घूघलमण्डलीकस्तेजःपालेन बद्धः धवलकपुरसभायामानीतः । तदा सोमेश्वरोक्तिः-

(२०४) मार्गे कईमदुस्तरे जलभृते गर्ताशतैराकुले खिन्ने शाकिटके भरेतिविषमे दूरे गते रोधिस । शब्देनैतदहं ब्रवीमि महता कृत्वोच्छितां तर्जनी-मीदक्षे गहने विहाय धवलं वोढुं भरं कः क्षमः॥

§१५१) एकदा मन्नी स्तम्भने आगतः । तत्राचार्येरुक्तम्

(२०५) अस्मिन्नसारसंसारे सारं सारङ्गलोचना।

मन्नी रुष्टः। श्रङ्गारिण एते। अष्टमे दिने—

यत्क्रक्षिप्रभवा एते वस्तुपालभवाददाः॥

द्शसहस्रदीनारा दत्ताः । न गृहीताः । भृगुपुरे लेप्यप्रतिमास्थाने अन्या कारिता तद्रव्येण ।

§१५२) एकदा मित्रिभिः पलितं दृष्टा चिन्तितम्-

(२०६) अधीता न कला काचित् न च किश्चित्तपः कृतम्। दत्तं न किश्चित्पात्रेभ्यो गतं च मधुरं वयः॥

(२०७) आयुर्योवनिवत्तेषु स्मृतिशेषेषु या मितः। सैव चेजायते पूर्वं न दूरे परमं पदम्॥

§१५३) सङ्घपारम्भे नरचन्द्रस्ररिभिरुक्तम्-

(२०८) चौलुक्यः परमाईतो चपदातस्वामी जिनेन्द्राज्ञया निर्श्रन्थाय जनाय दानमनघं न प्राप जानन्नपि। सम्प्राप्तस्त्रिद्वं स्वचारुचरितैः सत्पान्नदानेच्छया त्वद्रपोऽवततार गूर्जरभुवि श्रीवस्तुपालो ध्रुवम्॥

मन्त्री यात्रायां वृषमं प्रति पपाठ-"आस्यं कस्य न वीक्षितं ।।"

(२०९) यहाये यूतकारस्य यत् प्रियायां वियोगिनः । यद्राधावेधिनो लक्ष्ये तद्ध्यानं मेऽस्तु ते मते॥ रैवते नेमिं प्रति-

(२१०) कल्पट्टमस्तरुरसौ तरवस्तथाऽन्ये चिन्तामणिर्मणिरसौ मणयस्तथाऽन्ये। धिग जातिमेव ददशे वत यत्र नेमिः श्रीरैवते स दिवसो दिवसास्तथाऽन्ये॥ 30

25

20

Indira Gandhi National Centre for the Arts

15

25

§ १५४) एकदा मोजनी(दी)नसैन्यं ढिछीतश्रिलिस्। प्रयाणक ४ जातानि । राणकस्य सुद्धिर्जाताः। वस्तुपालो वीटकं गृहीत्वाऽश्रलक्ष १ युतोऽर्बुदिगिरौ गत्वा हतवान् । भग्नम् । राणकेन परिधापितः । उक्तम्-"त्वमेव के सुणवान् ।।"

पूनडसा नागपुरीयो मित्रसङ्घे मिलितः । तत्र-"अद्य मे फलवती पितुराञ्चारु" । श्रीयुगादिफलही, कपिह-5 पुण्डरीक-चक्रेश्वरी-तेजपुरविम्वपार्श्वमूर्त्ति-फलही ५ खानित आनीताः ।......हिल्लीत आगतस्य मित्रणो

हेमलक्ष १० राणकेन दत्ताः । तेन तत्क्षणमेव ब्राह्मणेभ्यो दत्ताः । तदा काव्यानि-

(२११) निरीक्ष्य मन्त्रिन्! द्विजराजमेकं पद्मानि सङ्कोचमहो भजन्ति । समागतेऽपि द्विजराजलक्षे सदा विकासी तव पाणिपद्मः॥

(२१२) उचाटने विद्विषतां रमाणामाकर्षणे खामिहृदश्च वर्धे। एकोऽपि मन्नीश्वरवस्तुपालः सिद्धस्तव स्फूर्तिमियर्त्ति तन्नः॥

नानाकेनाप्युक्तं नागरेण-

(२१३) एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां जिल्पतं लज्जानम्रशिराः स्थिरातलमिदं यद्वीक्षसे वेद्यि तत्। वाग्देवीवदनारविन्दतिलकः! श्रीवस्तुपाल ध्रुवं! पातालाद्वलिमुद्दिधीर्षुरसकृत्मार्गं भवान्मार्गति॥ अत्रापि षोडशसहस्रदत्तिः।

§ १५५) एकदा अनुपमा अर्नुद्चैत्ये आगता स्त्रधारान् कर्म्मस्थायमन्दादरानाह-

(२१४) भूपभूपछ्ठवप्रान्तिनिरालम्बिवलिम्बिनीम् । स्थेयसीं वत मन्यन्ते सेवकाः स्वाम्पि श्रियम् ॥ तया पृ०-शीघं निष्पद्यते स उपायः कः । तैः स० निवेदितम्-प्रासः द्विम(ग्)णी कियताम् । कृतः । 20 पश्चमित्रपन्नः ।

(२१५) इतोऽव्धिः परितो मृत्युरितो व्याधिरितो जरा। जन्तवो हन्त पीड्यन्ते चतुर्भिरपि सन्ततम्॥

§१५६) यशोवीरः प्रथमसङ्गमे श्रीअर्बुदे श्रीवस्तुपालं प्रति प्राह-

(२१६) श्रीमत्कर्णपरम्परागतभवत्कल्याणकीर्त्तिश्चतेः प्रीतानां भवदीयदर्ज्ञनविधौ नास्माकमुत्कं मनः। श्चत्वा प्रत्ययिनी सदा ऋज्ञतया खालोकविस्त्रम्भणी दाक्षिणयैकविधानकेवलमियं दृष्टिः समुत्कण्ठते॥

§ १५७) मन्नी राजानं मुत्कलाप्य अङ्केवालीआग्रा० गतः सपरिजनः।

(२१७) गुरुर्भिषक् युगादीकाः प्रणिधानं रसायनम् । सर्वभूतद्यापथ्यं सन्तु मे भवरुग्भिदे ॥ (२१८) लब्धाः श्रियः सुखं स्षृष्टं मुखं दृष्टं तन्रुह्हाम् । पूजितं दर्शनं जैनं न मृत्योर्भयमस्ति मे ॥

तत्रानशने मित्रिचिन्ता—
(२१९) सुकृतं न कृतं किश्चित् सतां संस्मरणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥
(२२०) यन्मयोपार्जितं वित्तं जिनशासनसेवया । जिनशासनसेवैव तेन मेऽस्तु भवे भवे ॥

इति वदन् मन्त्री वस्तुपा० दिवं ययौ । ततस्तेजःपाले दिवंगते लोकोक्तिः-

(२२१) किं कुम्मीः किमुपालभेमहि किमु ध्यायाम किं वा स्तुमः	
कस्याग्रे खमुखं खदुःखमिखलं सन्दर्शयामोऽधुना।	
शुष्कः कल्पतरुर्यबङ्गणगतश्चिन्तामणिश्चाजरत्	
क्षीणा कामगवी च कामकलशो भग्नो हहा दैवतः॥	
सं०] १३०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।	5
M M M M	
 (B सञ्ज्ञके आदर्शे पुनरेतत्पवन्धान्ते निम्नगतानि वस्तुपालसम्बन्धिकाव्यानि प्राप्यन्ते−) 	
(२२२) सेजवालकसहस्रचतुष्कं साधिकं पश्चरातैश्च।	
पश्चकं च शतपश्चकमिश्रं स्पन्दनाभवरपिछि खिकानाम् ॥ १ ॥	
(२२३) ज्ञातानि चाष्टादशवाहिनीनां सुखासनानां प्रमितिस्तथैव।	
तपोधनानां द्विशतीसहस्रे शतं सहस्रं च दिगम्बराणाम् ॥ २॥	10
(२२४) त्रिंदाद्विमिश्रा त्रिदाती चराणां रत्नासनानां वृषद्गोभितानाम्।	
शतानि च त्रीणि तु मागधानां चतुःसहस्राश्च तुरंगमाणाम् ॥ ३॥	1287
(२२५) अष्टी महाङ्गाश्च चतुःशतानि लक्षास्तथा सप्तति मानवानाम्।	
श्रीवस्तुपालस्य कृताऽऽद्ययात्रासंख्येयमानन्दकरी जनानाम् ॥ ४ ॥	Jan 1997
(२२६) स्वस्ति श्रीब्रह्मलोकात्कविजनजननी भारती ब्रह्मपुत्री	15
धान्यां श्रीवस्तुपालं कुदालयति यथा कार्यमेतन्निवेद्यम्।	
योऽभृत्कलपद्धकलपः सकलसुमनसां नाधुना सोऽपि भोज-	
स्तसात्सीदन्त एते जगित सुकृतिना रक्षणीयास्त्वयैव ॥ ५ ॥	
(२२७) स्वस्ति श्रीभूमिवासाद्विपिनपरिसरात्क्षीरनीराधिनाथः	•
पृथ्व्यां श्रीवंस्तुपालं क्षितिधवसचिवं बोधयत्यादरेण।	20
अस्या आस्माकपुत्र्याः कुपुरुषजनितः कोऽपि चापत्यदोषो	
निःदोषः दोषलोकम्प्रणगुणभवता मूलतो मार्जनीयः॥ ६॥	
(२२८) मुखमुद्रया सहाऽन्ये द्धित करे स्चिवमन्त्रिणो मुद्राम्।	
श्रीवस्तुपाल! भवतो वदान्य! तद्दितयमुन्मुद्रम् ॥ ७ ॥	
(२२९) कीर्त्तिः कन्दिलतेन्दुकान्तिविभवा धत्ते प्रतापः पुनः	25

मौढिं कामपि तिरमरिसमह्सां बुद्धिर्बधाराधिनी। प्रत्युजीवयतीह दानमसमं कर्णादिभूमीसुज-स्तितिश्चित्र तवास्ति यन्न जगतः श्रीवस्तुपाल! प्रियम्॥ ८॥ महं० यशोवीरेण-

लक्ष्मीं नन्दयता रतिं कलयता विश्वं वशीकुर्वता (२३०) त्रयक्षं तोषयता मुनीनमुदयता चित्ते सतां जाग्रता। सङ्घेऽसङ्ख्यशरावलीं विकिरता रूपश्रियं पुष्णता नैकट्यं मकरध्वजस्य विहितो येनेह दर्पव्ययः ॥ ९॥

30

(२३१) हंसैर्लब्धप्रशंसैस्तरिलतकमलप्रत्तरङ्गेस्तरङ्गे-नीरैरन्तर्गभीरैर्बकचढुलकुलग्रास[लीनै]श्च मीनैः। -पालीरूढदुमालीतलसुखशायितस्त्रीप्रणीतैश्च गीतै-भीति प्रकीडदातिस्तव सचिव! चलचक्रवाकस्तटाकः॥ १०॥

5 अत्र पं० सोमेश्वरेण पोडशयमकव्यये पोडशसहस्रा द्रम्माणां प्राप्ताः । [पुनः] पं० सोमेश्वरेण-

(२३२) दिग्वासाश्चन्द्रमौलिर्विहरति रविरयं वाहवैषम्यकष्टं राहोः सातङ्कमिन्दुर्विचरति गरुडान्नागवर्गो विभेति । रत्नानां धाम सिन्धुस्त्रिदशगिरिपतौ स्वर्णमचापि यसा-तिंक दत्तं रिक्षतं वा किम्र किम्रत जगत्यर्जितं येन गर्वः ॥ ११ ॥

10(२३३) कलिकवलनजाग्रत्पाणिखेलत्कृपाणः चुतिलहरिनिपीतप्रत्यनीकप्रतापः । जयति समरसत्त्वारम्भनिर्दम्भकेलिपमुद्तिजयलक्ष्मीकामुको वस्तुपालः ॥ १२॥

(२३४) यदि विदितचरित्रैरस्ति साम्यस्तुतिस्ते कृतयुगकृतिभिस्तैरस्तु तद्वस्तुपालः । चतुरचतुरुदन्वद्वन्धुरायां घरायां त्विमव पुनरिदानीं कोविदः कोऽविदग्धः ॥ १३ ॥

(२३५) मुञ्ज-भोजमुखाम्भोजवियोगविधुरं मनः।श्रीवस्तुपालवक्त्रेन्दौ विनोदयति भारती॥१४॥

25 (२३६) त्वं जानीहि मयास्ति चेतसि धृतः सर्वोपकारव्रती किं नामा सविता न शीतिकरणो न खर्गवृक्षो नहि । पर्जन्यो नहि चन्दनो नहि नतु श्रीवस्तुपालस्त्वया ज्ञातं सम्प्रति शैलपुत्रिशिवयोरित्युक्तयः पान्तु वः ॥ १५ ॥

> (२३७) गाम्भीयं जलधिर्बलिर्वितरणे पूषा प्रतापे सारः सौन्दयं पुरुषव्रते रघुपतिर्वाचस्पतिर्वाद्यये। लोकेऽसिन्नुपमानता[मु]पगताः सर्वे पुनः सम्प्रति प्राप्तास्तेऽप्युपमेयतां तद्धिके श्रीवस्तुपाले सति॥ १६॥

(२३८) श्रीवस्तुपालः श्रियमेष केषां हृदि स्थितो हार इवातनोति। विश्राणयन्त्यक्षिगतापरागकणा इवार्त्तं तु नियोगिनोऽन्ये॥ १७॥

(२३९) दीपः स्फूर्जिति सज्जकजलमलः खेहं मुहुः संहर-न्निन्दुर्मण्डलवृत्तखण्डनपरः प्रद्वेषि मित्रोदयम् । सूरः कूरतरः परस्य सहते तेजो न तेजखिन-स्तत्केन प्रतिमं द्र(ब्र?)वीमहि महः श्रीवस्तुपालाभिधम् ॥ १८॥

(२४०) आयाताः कित नैव यान्ति कित नो यास्यन्ति नो वा कित स्थानस्थाननिवासिनो भवपथे पान्धीभवन्तो जनाः। अस्मिन्वस्मयनीयबुद्धिजलधिर्विध्वस्य दस्यून्करे कुर्वन्युण्यनिधिर्धिनोति वसुधां श्रीवस्तुपालः परम्॥ १९॥

蟒

20

25

15

- (२४१) समुद्रत्वं श्वाघेम्हि महिमधाम्रोऽस्य बहुधा • यतो भीष्मग्रीष्मोपमविषमकालेऽप्यज्ञिन यः। क्षणेन श्लीणायामितरजनदानोदकतनौ दयावेलाहेला द्विगुणितगुणत्यागलहरिः॥ २०॥
- (२४२) यः सप्ताननसप्तिसोदरयज्ञाः सप्ताव्धिगमभीरिमा सप्तार्चिःपरितप्तकाञ्चनरुचिः सप्तर्षिसर्गावधिः । सप्तद्वीपधरानरालिमुकुट[ः]पुण्याय सप्त व्यधात् यात्राः सप्तजगचमत्कृतकृती सप्त क्षिपन्दुर्गतीः ॥ २१ ॥

(२४३) किमस्तु वस्तुपालस्य मन्त्रीन्दोः साम्यमिन्दुना । यदत्ते व[सु]धामेष सुधामेवापरः पुनः॥

(२४४) नाभीपङ्कजमङ्कजनमविधिना वृद्धेन रुद्धं हरे-स्तापव्यापदमापदुष्णमहस्रो लीलासरोजं पुनः। किञ्चैतज्ञलजं जलप्रकृतिकं तेन श्रिया शिश्रिये यत्पाणिनीह चेदमुष्य पुरतस्तस्यौ न दौस्थ्यं कथम्॥ २२॥

(२४५) मुक्त्वापि पुण्डरीकाक्षं श्रीरिमं शिश्रिये किल । देहार्धनव(?)बन्धेन विरूपाक्षः प्रियां भिया ॥ २३ ॥

(२४६) अन्वयेन विनयेन विद्या विक्रमेण सुकृतक्रमेण च। कापि कोऽपि न पुमानुपैति में वस्तुपालसदशो दशोः पथि॥ २४॥ ॥ इति वस्तुपालसम्बन्धिकाच्यानि॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वस्तुपाल-तेजःपालसम्बन्धिवृत्तम्।

§१५८) अथ व्यापारे प्राप्ते महं० श्रीतेजःपालः श्रीस्तम्भतीर्थव्यापाराय प्रहितः। तत्र नोडासईदस्यामिलितं 20 वीक्ष्य तस्य कोऽपि न भेटयति। अमात्योऽपि तद्विज्ञाय तं भेटयामास। अन्यदा तेन एकांते चिद्वडकवाचन-च्छलेन तस्य शिर्वछेदितम्। तस्य भांडागारोऽपि धृतः। सर्वमपि टीपियत्वा गृहीतम्। उपविरकात्रये मृत्तिकां वीक्ष्य सा स्वयं गृहीता । सईद्भागिनेयेन राज्ञो मिलित्वा सर्वं कथितम्। राजा म० तेजःपालस्य कुपितः। मित्रणोऽग्रेऽकथयत्-भवता रम्यं न कृतम्। अकथित्वा त्वया कथं मारितः। तेनोक्तम्-राजन्! आज्ञोछंघन-कारकमन्यमपि न सहामि। राज्ञोक्तम्-तिई उलिपतिविषये दिव्यं देहि, घटसप्माकर्षय। इति प्रतिपन्ने घटसपी-25 कर्षणसमये महं० श्रीतेजःपालेन सर्वसमक्षमित्युक्तम्-यन्मया सर्वमपि सईदस्य सत्कं राज्ञे दत्तम्। यदि कदापि सईदस्य धृलिर्मम गृहे तिष्ठति तदोत्स्पृत्वल(१)मिति भिणत्वा सईदमागिनेयस्य पर्यक्के घटात्सर्प आकृष्य क्षिप्तः। स च भृतः। सा च भृतिस्वयित्रव्यत्वित्रत्वोटिप्रमाणा गृहे स्थिता।

§१५९) एकदा कटकस्थेन राणकेन मन्नीशो लेखकं याचितः। मन्निणोक्तम्-अत्र नास्ति। राज्ञोक्तम्-कल्ये समानेतन्यमेव। एवं स्थिते मन्त्रिणा तुरगारुढो देपाकः प्रेषितः। तेन पुरान्तश्रतुष्पथे गच्छता भक्त्या श्रीवीत-30 रागो नमस्कृतः। पश्राक्षेत्रकं गृहादानीय दत्तं स्थामिनोऽग्रे। अत्रान्तरे तत्रैव पुरे कश्रिद्विजो न्यापारी वर्तते। तस्य पुत्रयुगं विनष्टम्। तृतीयोऽङ्गजो ग्रथिलो जातः। पश्राद्वर्त्तायां पण्मासं यावत् क्षिप्तः। ततो न्यन्तरेणो-कम्-न्यापारिन्! कथं निजपुत्रसारां न कुरुषे। तेनोक्तम्-किं करोमि १। मम देपाकपार्श्वात् पुण्यं दापय। ततो

पु॰ प्र॰ स॰ 10

25

देपाकस राजादेशः प्रहितः । ततो मित्रिश्रीवस्तुपालस महदुपरोधेन देपाकः सदने समागतोऽपि भयेन व्यन्त-रपार्श्वे नाभ्युपैति । नृपरोधेनानीतः । व्यन्तरेण सन्मानितः । इत्युक्तं च-यत् त्वयाः तुरगाधिरूढेन श्रीवीतरागो निमस्कृतः, तत्पुण्यं मे देहि । तेनोक्तम्-कथमस्य लग्नोऽसि । व्यन्तरेणोक्तम्-अनेन.....ना मया वारितेनापि मम बलीवईयुगं प्रश्चतयेव गृहीतम् । तद्विरहेणाहं मृतः । ततो मयास्य पुत्रयुगं मारितम् । अस्य पातकं कथं 5 गृह्णामि, अतो मोक्ष्यामि । ततस्तेन पुण्यं दत्तम् ।

§ १६०) श्रीभृगुपुरात् खंडेरायसांखुलाकः श्रीसंभतीर्थे श्रीवस्तुपालोपरि कटकं गृहीत्वा समागतः। तदा निर्णीतदिने संग्रामे जायमाने भूणपालेन विंशतिः शंखपत्तयः शंखं भणित्वात्मारिताः। तदा मन्त्रिणोक्तम् –रे! शंखमातुः शंखाः कियन्तो जाता विद्यन्ते । तदाकर्ण्य शंखाः खयम्रुत्थितः। सोऽपि श्रीमन्त्रि-भूणपालाभ्यां शंखमातुः शंखाः कियन्तो जाता विद्यन्ते । तदाकर्ण्य शंखाः खयम्रुत्थितः। सोऽपि श्रीमन्त्रि-भूणपालाभ्यां

पातितः । तदा श्रीसोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४७) श्रीवस्तुपाल ! प्रतिपक्षकाल ! त्वया प्रपेदे पुरुषोत्तमत्वम् । तीरेऽपि वार्द्धेरकृतेऽपि मात्स्ये दूरं पराजीयत येन शंखः ॥

§ १६१) अन्यदा पं० सोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४८) बाणे गीर्वाणगोष्ठीं भजित मघवति ब्रह्मभूयं प्रपन्ने
च्यासे विद्यानिवासे कलयित च कलां कैशवीं कालिदासे।
माघे मोघां मघोनः सफलयित दृशं चाद्य वाग्देवतायाः
सोऽयं धात्रा धरित्र्यां निवसनसद्नं प्रस्तुतो वस्तुपालः॥
काव्यस्तेतस्य दृशसदृश्णा मित्रणा दृत्ताः।

तेनैव एकदा सभायां मित्रकाव्यमिदमपाठि-

(२४९) पाणिप्रभापिहितकल्पतस्प्रवालश्चौलिक्यभूपतिसभानिलनीमरालः। दिग्चक्रवालविनिवेदिात.....शीमानयं विजयतां भुवि वस्तुपालः॥

इति श्रुत्वा मित्रणि अधोविलोकयति तेन पुनरिदं प्रोक्तम्-

(२५०) एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां जल्पितं लज्जानम्रशिरा घरातलमिदं यद्वीक्ष्यसे वेद्यि तत्। वाग्देवीवदनारविंदतिलक! श्रीवस्तुपाल! ध्रुवं पातालाद्वलिमुद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं भवान् मार्गति॥

[एतच्छुत्वा] द्रव्यसहस्राणि चतुश्रत्वारिंशत्संख्यानि मन्त्री ददौ।

§ १६२) एकदा श्रीशत्रञ्जयतलहिकायां श्रीसङ्घपूजायां जायमानायां [वस्रपोटली-] बंधनं कस्यापि पंडित-स्यापितं मित्रणा । ततस्तेनोक्तम्-तद्वीक्ष्य वस्तं मित्रीशाभिमुखं "किचित्तृलं किचित्सृत्रं०" इति भणिते सहसा दश दत्ताः।

30 §१६३) एकदा केनापि खलेन बहुदानं दीयमानं विलोक्य राणश्रीवीरधवलस विज्ञप्तम्-स्वामिन्! तव भाण्डागारो यथेच्छं व्ययमानोऽस्ति । तद्वचनाद्विलोकनार्थं तत्रागतः । तद्दिने ब्राह्मणश्रमणवनीपकदेशांतरिणां विशेषतो दानं दीयमानं दृष्ट्वा मनसि दृमितो राणकः । राणकेनोक्तम्-मन्त्रिन्! ईदृशेन व्ययेन कथं पूजियब्यति । मित्रणोक्तम्-यावान् आदेशो भवति, तावान् विधीयते । राज्ञोक्तम्-इयन्ति दिनानि कथं ममादेशो न कृतः ?।

यावता पुण्येन राजकुले कार्य ताविद्वधीयते । राज्ञोक्तम्-तव व्ययेन मम किं पुण्यम् ? । मित्रणोक्तम्-राजन् ! केवलमहं भाण्डागारिक इवासि, सकलद्रव्यव्ययफलं तवैव । इत्युक्ते राणको जगाद-मित्रन् ! यद्येवं तदा द्विगुणं दानं देयम् ।

- § १६४) श्रीवस्तुपालः प्रथमयात्रायां पिशुनप्रवेशभयानमित्रतेजःपालं तत्र विम्रुच्य प्रस्थितः । ततो मित्रितेजःपालस्य महाविपादः संजातः—यदहं श्रीशत्रुञ्जययात्रायां न चालितो मित्रिणा । तदनु राणकेन तदवलोक्य क्ष्मादाग्रहेण प्रेपितः । ततस्तेजःपालेन महं० देपाक आत्मस्थाने स्थापितः । ततस्तेजःपालं समेतं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—त्वया न कृतं रम्यम् । यतः अभुरात्मीयो न भवति । तावता द्विजवामनेनेति राज्ञोऽग्रे निवेदितम्—राजन् ! मित्री यात्राये न गतः, किं तु निधाननिक्षेपाय ग्रातः । यदि राजादेशो भवति, तदा द्रव्यमानयामि । राज्ञोक्तम्—मध्याहे सारयेथाः । यथा कटकमर्ण्यामि । तावता तद्विज्ञाय महं० देपाकेन मित्रणः संदियकः प्रहितः । स्नात्रावसरे संदियकम्रतस्त्रकं समागच्छन्तं वीक्ष्य मित्रणा तेजःपालस्थोक्तम्—इदं तव चरितमायाति । संदियकेन सर्व-10 मिप निवेदितम् । मित्रणा संघसाग्रे प्रसादः समेत इति विज्ञप्तम् । निश्चि आत्रहयेन मन्नं विधाय निधाननिक्षेपाय मानवा अरण्ये प्रहिताः । तत्र तेषां खनतां नवं निधानमुन्मीलितं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—नैवात्मनां राजभयम् । तावता द्वितीयसंदियकेनाभ्येत्य स्वरूपं कथितमिति—वामनोऽन्यायकारी राज्ञा विध्वतः । पुनः प्रसादो भवतां प्रहितः । ततः क्रशलेन यात्रा विहिता ।
- §१६५) अनुपमया गुरवो नंदीश्वरतपःकरणोद्यापनं पृष्टाः। गुरुभिरुक्तम्-वत्से! भवत्या न प्रष्टव्यम्। तयो-15 क्तम्-कथम्?। भवती पृच्छका, अहं कथकः। यदि न विधीयते तदा किम्। पुनरुक्तम्-भगवन्! कथ्यताम्। गुरुभिरुक्तम्-वत्से! जघन्यं वावनी ढोक्यते, मध्यमं वावन-वावनी, उत्तमं नंदीश्वरप्रासादः। ५२ आचार्यपद-५२ सिंहासन-५२ पाट एवं सर्वं विधीयते। देव्या प्रतिज्ञा विहिता-द्वितीयवेलायां तदा मोक्ष्ये, यदा प्रासादं कारियध्यामि। गुरुभिरपि ततोऽभिग्रहो गृहीतः-वयमाचाम्लान् तदा मोक्ष्यामः, यदा भवदभिग्रहः सेत्स्यति। भोजनवेलायां देव्या मित्रणो भाजने ज्ञालिभक्तं प्राञ्चकजलं च ग्रुक्तम्। मित्रणा कारणं पृष्टम्। तयोक्तम्-20 भवतामिभग्रहोऽस्ति-यत् गुरुद्त्तशेषं भोक्तव्यम्। गुरवः पृष्टाः सर्वं जगदुः। ततो वामदेवस्य स्त्रधारस्य पटं दर्शियत्वा प्रासादः कारितः।
- § १६६) एकदा तीर्थयात्रायां श्रीशत्रुखये सङ्घपतिना अवारितं सत्रागारा विहिताः। ततः सङ्घवात्सस्ये विधी-यमाने घृतं त्रुटितम् । सङ्घपतिचित्ते विषादो जात इति यद्विरंगो भविष्यति । स्रिभिः श्रीयशोभद्राख्यैर्ज्ञातम् । आकृष्टिविद्यया श्रीपत्तनात् कस्यापि गृहात् घृतमानीतम् । वात्सस्यं पूर्णमजिन । ततो गुर्वनुज्ञया तेन तावन्तो 25 द्रम्मास्तस्यापिताः। तेनोक्तममी कीदशा द्रम्माः ?। तेन समग्रोऽपि वृत्तान्तो निवेदितः। तेनोक्तम् –यदि ममाज्यं श्रीशत्रुख्जयस्योपिर साधिमकवात्सस्ये व्ययितं तदाहं न ग्रहीष्ये। ततस्तेन घृतवसतिका श्रीपत्तने निष्पन्ना।
- § १६७) एकदा धवलकके कलशप्रतिष्ठायां मिलितेषु बहुषु स्रिषु द्वौ वक्तारौ पिप्पलाचार्यौ मिलितौ । तत्र ताभ्यामनुपमदेव्ये उपदेश इति दत्तः । यतः—पात्रदानमल्पं विनोददानं बहुतरम् । अनुपमदेव्योक्तम्-नैवम् । वचः स्मृत्वा स्थितौ । ततस्ताभ्यां रात्रौ वेषपरावर्तेन मित्रमन्दिरे गत्वा मित्रदेवीपुरतो महासतीचन्दनाचरितं 30 गातुमारब्धम् । चतुर्विशतिसहस्रद्रम्मा लब्धाः । प्रातरनुपमदेव्यै दर्शितं सर्वम् । सत्यं मानितम् ।
- § १२८) अन्यदा तीर्थयात्रायां गच्छन्तो देशान्तरादागताः श्रीसङ्घा निमन्त्रिताः श्रीवस्तुपालेन । तदा मन्त्री चरणप्रक्षालनं कुर्वाणः सेवकैर्निपिद्धः । तदा मन्त्रिणोक्तम्—"अद्य मे फलवती०" ॥

\$१६९) अन्यदा निश्च पद्दशालास्थितश्रीविजयसेनस्रीन्नमस्कृत्य मन्नी अपवरकस्थितश्रीउद्दयप्रभस्रीणां वन्दनाय गतः। तत्रेते न विद्यन्ते। एवं दिनत्रयं समेत्य विलोकितम्। चतुर्थदिने विनयपूर्वं दृद्धगुरवः पृष्टाः। तिलक्तम् – मन्त्रिन्! अद्य कल्ये नगरेऽत्र चाचरीयाक एको महाविद्वानुमागतोऽस्ति। तस्य वचनविशेषश्रवणाय नित्यं स्रयो वेषपरावर्तेन यान्ति। तदिज्ञाय मन्त्रिवस्तुपालस्तत्र गतः। स्रयः प्रच्छन्ना वीक्षिताः। प्रातः मन्त्रिणा अवकारितस्य चाचरीयाकस्य सहस्रद्वयी न्यासे कृता। इत्युक्तं च-यत् त्वया पौषधशालाद्वारे चचरे चचरो मण्डनीयः। एवं पण्मासं मण्डितः। ततः सत्कृत्य प्रहितः।

§१७०) मन्त्रिणा श्रीउदयप्रभसूरयः पृष्टाः-कथं चतुर्विंशतिजिनेन्द्रध्यानदेव एक एव भवति । तत् कथं चतुर्विंशतिमध्ये को ध्येयः १ । गुरुभिरुक्तम्-महानयं सन्देहः । श्रीसरस्ततीं विना सन्देहिनर्णयो न भविष्यति । गुरुभिर्निति देव्याराधनं विहितम् । श्रीभारत्या उच्छीर्षके श्लोकोऽयं समर्पितः-

10(२५१) अहं सारामि तादात्म्यात्तं रूख्या परमेश्वरम्। स्थितं वाग्ब्रह्मणः पारे परं ब्रह्मोति यं विदुः॥
मित्रणोक्तम्-अत्रापि सन्देहः। परब्रह्मोति वाक्यं सर्वाण्यपि दर्शनानि निजनिजदेवस्य कथयन्ति। गुरुभिः
पुनः सरस्रत्याराधनं विहितम्। देव्या पुनर्निशि कथितम्-

(२५२) सुवर्ण......ग्रीवामण्डनेऽन्त्यमणिद्वये । प्रभोर्यस्याङ्कितं नाम स्तुमहे परमेश्वरम् ॥ अर्हमिति सिद्धम् ।

15 § १७१) श्रीभृगुकच्छे श्रीमुनिसुत्रतनाथाविष्ठायकाः श्रीबालहंसस्ररयो विद्वांसः। तेषां मठे घोटकसप्त्राती-राज्यम्। एकदा मन्त्री सङ्घं विधाय तत्रायातः। सर्वः स्नात्रपूजादिविधिर्विहितः। श्रीस्ररयो नमस्कृताः। स्रिरिमः समस्तश्रीसङ्क्षसमक्षमाञ्जीर्वादो दत्तः।

(२५३) असिन्नसारसंसारे सारं सारंगलोचनाः।

-इति वारसप्तकं पठितम्, व्याख्यातं च । ततो मन्त्रिणा चिन्तितम्-यत् स्रयोऽतिविषयिणः । तदनु गुरु-

यत्कुक्षिप्रभवा मन्ये वस्तुपाल! भवादृशाः॥

ततो मन्त्रिणा हर्षितेन ग्रामद्वादशकं श्रीदेवपादानां दत्तम्।

§ १७२) एकदा वङ्याग्रामे श्रीमाणिक्यसरीणां श्रीवस्तुपालेनाकारणं प्रहितम् । परं नागताः । तदनु मंत्रिणा मह(०त्य?)वदातवती विज्ञप्तिका निमंत्रणार्थं प्रहिता । तत्रेदं काव्यम्─

(२५४) इदं ज्योतिर्जालं जटलितविहायः स्थलमलं । सखे मा माणिक्य प्रथय परितः सर्वहरितः । अयं गुंजापुंजाभरणसुभगंभावुकवपुः पुलिंद्राणा(०दाना?)मिंद्रस्तव नहि परीक्षाक्षममितः॥

तथापि सरयो नायाताः । तदा द्वित्रीयविज्ञप्तिकायां श्लोकोऽयं प्रहितः । तद्यथा "जडसंगमे प्रहर्षां(?) द्विजिह्व 30 जनवस्त्रमोऽति तुच्छपदः । वटक्षप० ।" अनेन श्लोकेन सरयो रुष्टाः । तत आज्ञीर्वादे विशेषावदाते श्लोकोऽयं प्रहितः-

> (२५५) वंशाद्धीर्द्धपरिस्फून्यों रे पिंजन! विज्ञंभसे। गुणालीजन्महेतूनां तूलानां हद्विपाटयन्॥



अनेन मर्मणा मंत्रिमनिस महान् विषादोऽजिन। तद्नु तत्रत्यमंत्रिणापार्श्वान्तविष्धिश्वला-कापुरुषचरितमंडारो रात्रो चौरवृत्त्या निःकाशितः। प्रातः स्रयो विषादिताः। चित्तनिर्वृत्त्यर्थं वाहरा विहिता। ततो मंत्रिणा दिनेषु सप्तसु गतेषु कस्यापि पथिकस्य हस्ते उपलेखपत्रे श्रीस्रीणां विज्ञप्तिका प्रहितेति—यदत्र क्य-भवतां भवतां श्रीस्रीणां पुस्तकभांडागारो विलितोऽस्ति। यदि कार्यं भवति तदाऽऽगंतव्यम्। श्रीस्र्रयस्तिद्वज्ञाय प्रस्थिताः। मंत्रिणा महाप्रवेशोत्सवो विहितः तद्नु मध्याहे श्रीसंघपूजायां श्रीस्रिरिभः काव्यमिदं प्रोक्तम्—

- (२५६) देव! स्वर्नाथ! कष्टं क इह ननु भवान्नन्दनोद्यानपालः स्वेद्स्तत्कोऽद्य केनाप्यहह हृत इतः काननात्कल्पवृक्षः। हुं मा वादीः किमेतित्कमिप करुणया मानवानां मयैव प्रीत्या दिष्टोऽयमुर्व्यास्तिलकयित तलं वस्तुपालच्छलेन॥
- (२५७) वैरोचने रचितवत्यमरेशमैत्रीमेकत्र नाकनगरं च गते द्वितीये। दीनाननं भुवनमूर्द्धमध्यापद्यदाश्वासितं पुनरुदारकरेण येन॥

ततः श्रीम्ररयो मंत्रिणा विज्ञप्ताः । किमेतद्धुनागमनकारणम्? । गुरुभिरुक्तम्-वयं सरस्वतीपुत्रकाः, भवांश्र सरस्वतीकंठाभरणमिति । यत्र सा तत्र वयम् । इति हर्षितः ।

§ १७३) श्रीवस्तुपालसभायां हरिहर-मदननामानौ पंडितौ महाकवीश्वरौ परस्परं निरंतरं विजय(विवद्य ?)मानौ स्तः।तौ द्वाविष परस्परं मत्सरं कुर्वतौ न तिष्ठतः। ततो मंत्रिणा दौवारिकस्योक्तम्-यत् त्वया एकस्मिन् पंडितेऽन्तः- 15 स्थिते द्वितीयपंडितप्रवेशो न देयः। एकदा हरिहरे सदसि विद्याविनोदं वितन्वति मदनोऽपि समेतः। तेनोक्तम्-

·(२५८) हरिहर! परिहर गर्व कविराजगजांकुकाो मदनः। द्वितीयेनोक्तम्-

मद्न ! विमुद्रय वदनं हरिहरचरितं सारातीतम्॥

ततो मंत्रिणा प्रोक्तम्-यः पणे काव्यशतं प्रथमं विधास्यति, स महाकविः । एवं सित मदनेन नालिकेरवर्णाने 20 काव्यशतं त्वरितं विहितम्। अथ हरिहरेण काव्यषष्टिः । ततो मंत्रिणोक्तम्-हरिहर! त्वया हारितम् । तेनोक्तम्-

(२५९) रे रे ग्रामकुविंद कंदलयता वस्त्राण्यमूनि त्वया गोणीविभ्रमभाजनानि बहुदाः खात्मा किमायास्यते । अप्येकं रुचिरं चिरादभिनवं वासस्तदास्त्र्यतां यन्नोज्झन्ति कुचस्यलात् क्षणमपि क्षोणीभृतां वल्लभाः॥

ततो मन्त्रिणा हर्षितेन द्वाविप मानितौ ।

§१७४) एकदा व्यापारे व्यतीते नागडमंत्रिणि व्याप्रियमाणे श्रीमीसलदेवस्य मातुलो मूलराजः प्रातः श्रीवस्तुपालगुरुपोषधशालाप्रत्यासन्ने पथि व्रजन् लघुक्षुल्लकत्यक्तपुंजकेन खरंटितः । तद्नु मंत्रिणा श्लुलकपरा-भवत्वात्तस्य करः छेदापितः । वंबारवो जातः । ततो रुष्टेन राज्ञा वस्तुपालवधाय सैनिकाः प्रेपिताः । मंत्रीशोऽपि राज्ञानमागत्येति जगाद-किं मया कृतम् १। राज्ञोक्तम्-प्रत्यक्षमिदम् । मंत्रिणोक्तम्-अहं तवायशः सोढुं नालम् । ३० दर्शनपराभवोद्भवमयशो अपरराजमंडले याति । इति वचः श्रुत्वा विचार्य च राजापि हर्षितः । प्रसादं ददौ ।

10

25

§१७५) अंत्ययात्रायां महं वस्तुपालस्य आकेवालीयसरसःपाल्यां आकली समेता। तत्र स्थितो मंत्री। भूमौ मुक्तः। श्रीसंघे तत्रागते उत्सवे विधीयमाने च मंत्रिणोऽश्रुपातः समैजनि। कारणं पृष्टः। तदा मंत्रिणोक्तम् न ने संसारविषये चिंता वर्तते, परम्-

सुकृतं न कृतं किंचित्०॥१॥

(२६०) नृपव्यापारपापेभ्यः सुकृतं स्वीकृतं न यैः।तान् धृलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मूहतरान्नरान्॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वीरधवलवृत्तम्।

§ १७६) अथ श्रीवीरधवलवारके नांदउद्रीपालितः, अहारहीउ बहुउ हरदेवः बहुयाचाचरीयाकस्य शिष्यः । अन्यदा आशापल्ल्यां समेतः । ततो दिवससप्तके जाते तत्परिवार इति कथयित—शंवलं नास्ति किंचित् । चाचरं श्विपत । स भणित—स्थिरीभवत । अहं नित्यं नगरमनुष्यमनोऽभिन्नायं विलोकयन्नस्मि । इतश्च महाराष्ट्रीयो गोविंद10 चाचरीयाकः समाययो । यस्पाष्टादशपुराणानि अष्टो व्याकरणानि चउपईवंधेन सुखपाठेनागच्छंति । तेन चचरः श्विप्तः । पारूथाद्रम्माश्रतुर्विंशतिसहस्रसंख्यका मिलितास्तस्य । ततो हरदेवचाचरीयाको विशेषतः परिच्छदेन प्रोत्साहितो लवदोसिकहट्टे सायसपविष्टः । ततस्तेन सहजतो वार्चा कुर्वाणेन सीतारामप्रवंधः कथितुमारेभे । प्रथमं दश द्वादश जना मिलिताः । कमेण बहवः । मध्यरात्रौ सुखासनाधिरूदा अमात्याद्याः शृष्वंतः संति । इतश्रोत्थितः यथा श्रोदणां विघातो न भवेत्तथा भणन् बहिः साश्रमतीनदीतीरं गतः । ततो गानं विसृष्टम् ।

15 ततः शीतभीता लोका इति वदंति—यन्त्रं तथा कुरुष्व यथा सुखेन नगरे गम्यते । ततस्तेन पुनरुत्तररामचिरित्र-गानमारुष्टम् । तदनु सर्वोऽपि जनः परमरसमग्रश्चतुष्पथे समानीतः । ततो लोकन सुद्रिका-पट्टक्रलादि-दानेन द्वामलक्षत्रयी दत्ता ।

(G.) सङ्ग्रहगतं वीसलदेववृत्तम् ।

§ १७७) श्रीजिनदत्तस्रिशिष्येण पं॰ अमरनाम्ना कोऽपि देशांतरी निरामयो विहितः । तेन श्रीसारखतमंत्रो 20दत्तः । तत्प्रभावान्महाकविरभृत् । ततः पं॰ सोमेश्वरदेवसानिष्यात् प्रथमं गद्यभारतम्, तद्तु च्छेकभारतं च चकार । ततः सोमेश्वरदेवेन श्रीवीसलदेव इति विज्ञप्तः-राजन्! कविः कर्ता एव, परं राजा ग्रंथं वर्त्तापयति । इत्युक्ते ग्रंथविलोकनहेतोः पूजा विहिता । शलाकया श्लोको विलोकितः । तद्यथा-

द्धिमथनविलोल्लोलहग्वेणिदंभा०॥१॥

ततो वेणीकृपाण इति विरुदं जातम्। ग्रंथो विदितो जातः। श्रीबालभारते समग्रेऽपि निष्पन्ने निश्च व्यासेन 25 चोरितं पुरत्तकम्। प्रातयावद्विलोकयित तावता पुरत्तकं नास्ति। महाविषादोऽजिन। तावता व्यासेनोक्तम्-कथं विषादं कुरुपे?। त्वया मम सपादलक्षग्रंथस्य चौर्यवृत्तिविंहिता। अन्यत् मम नामापि न गृह्णासि। तव ग्रंथः कथं वित्तिष्यते?। एवमुक्त्वा पुरत्तकमिंतम्। त्विद्वचारे यत्समायाति तद्विधेयम्। ततः प्रातश्रतुश्चत्वारिंशत्सर्गाधुरि एकैकं नवं काव्यं चकार। अन्यदा श्रीबालभारते जगद्विदिते जाते वायडज्ञातीयमञ्जाजनवाणउटीपद्यनाम्ना पं० अमरस्थेति गदितम्-पंडित! तव चेत् सरस्वत्यिप प्रसन्ना जाता। तिर्हे कथं मिथ्यात्वं स्वीकृतम्?। कथमा-30 त्मीये चरित्राण्यपि न विद्यते?-इति प्रतिबुद्धेन पंडितेन त्रिषष्टिशलाकापुरुषचित्तं पद्मानंद्र*नामा ग्रंथः कृतः।

^{*} एतच्छव्दोपरि पृष्ठस्याधोभागे एवंरूपा टिप्पणी लिखिता लभ्यते-"तत्रारम्भः-मद्रोमिंध्यापथभ्रान्ता स्नाति श्रान्तिमलच्छिदे । चतुर्विशतितीर्थेशचरित्रामृतसागरे ॥"

§१७८) श्रीवीसलदेवसाग्रेऽवसरे जायमाने रागानभिज्ञस्य राज्ञो रागसंकेताः कृताः संति श्रीनागलदेव्या । श्रीरागस्य शरीरं, वसंतस्य कुसुमं, भैरवस्य भेरीरवः, पंचमसांगुलिपंचकं, मेघरागस्याकाशः, नद्दनारायणस्य चकं, कानडा कर्णः, धनासी धान्यं, नाटसारि पासकः, सोरठी पश्चिमा, गूर्जरी सिंहासनं, देवशाखायां द्वारशाखा-दर्शनम्-एवम् । एकदा कोऽपि बद्दकारः समागतो देवशाखायामवलगां करोति । राजा रागं न वेति । राज्ञी तु वारं वारं द्वारशाखां दर्शयति । एवं बद्दकारेणोक्तम्-राज्ञि । भवती चेत् द्वारशाखां विदारयति, ततोऽपि राजा । न वेति । इत्युक्ते राजा हसितः ।

§१७९) एकदा श्रीवीसलदेवेन नागलदेव्यग्रे न्यगादि—यन्मां रागपद्धतिं शिक्षय। एवमुक्ते दिनपंचसप्तका-नंतरं यवनिकांतरितया देव्या बहुदासिकाभिः प्रत्येकं तदेव कार्यं निजगदे। राज्ञोक्तम्—देवि! किमेतत् सर्वा अपि दासिकास्तदेव कार्यं निगदंति?। देव्योक्तम्—देव! काः कियंत्योऽभूवन्?। राज्ञा सर्वा अपि नामग्राहं कथिताः। देव्यूचे—राजन्! रागपद्धतिरेवमेव ज्ञायते। ततो देव्या वीणामादाय राजा रागान् सर्वानपि शिक्षितः।

\$१८०) अन्यदा मध्यरात्रौ नागलदेवी राज्ञश्वरणसंवाहनं कुर्वाणा श्रांता। ततस्तयोक्तं वृद्धमिहलीवउलीपुरःयत् त्वं चरणसंवाहनं कुरु । अहं श्रांतासि । ततो मयणसाहारेणोक्तम्-यत् त्वं आत्मानं पखाउजीपुत्रीत्वं न
वित्स । पखाउजसत्कं भोजनं कुसणाती निर्विण्णा न । अधुना खिन्ना । ततो रुपितया (रुष्टया?) तया मयणसाहारस्य नासाच्छेदः कारितः । ततो देविगरो गतः । राज्ञा सिंहणदेवेन पृष्टः । तेनेत्युक्तम्-अत्र स आगच्छति ।
साहारस्य नासा न स्यात् । इति श्रुतेन नृतना नासा कुतोऽप्यानीय तत्क्षणमारोपिता । लगा । अन्यदा पुनः 15
यस्य नासा न स्यात् । राज्ञा पृष्टः स वक्ति-अन्यस्य समीपे नासा याति । परं सिंहणदेवसमीपे गतापि समागच्छिति । इति हृष्टेन प्रसादो दत्तः ।

§१८१) श्रीवीसलदेवस्य द्वारमट्टेन नीराजनावतरणसमये प्रचुराकारणैरागताया नागलदेव्याः कथितमिति—कथं आत्मानं न जानासि?। इयतीं वेलां विलंबसे। इति कथिते कुपिता[ऽत्यर्थ] तद्वचनेन। मारणे गाढाग्रहां मत्वा राज्ञा न मारितः, किं तु मयणसाहारस्य नेत्राकर्षणं कृतम्। तेनापमानेन स मालवपतिनरवर्म्मसमीपं 20 गतः। तेनावर्जितेन ग्रासग्ञासनादि समप्पितम्। एकवेलं राज्ञा कथितम्—मदन! वीसलेन राज्ञा तव नेत्रे कथं गतः। तेनावर्जितेन ग्रासग्ञासनादि समप्पितम्। एकवेलं राज्ञा कथितम्—मदन! वीसलेन राज्ञा तव नेत्रे कथं किषिते?। गाढाग्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण! गूर्जरधराधिपतिरस्यत्यामी विवेकव्रहस्पतिः। यथा किषिते?। गाढाग्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण! गूर्जरधराधिपतिरस्यत्यामी विवेकव्रहस्पतिः। यथा रणभग्रस्य नृपाधमस्य मुख्यमसाकीनानि पात्राणि द्वारमङ्कादीनि न पद्यति। अत एवं विहितम्। स नरवर्म्मराज्ञा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति। श्रुत्वेव स्थितः। [ज्ञातं] चरपरंपरया श्रीवीसलदेवेन। मयणसाहारः राजा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति। श्रुत्वेव स्थितः। [ज्ञातं] चरपरंपरया श्रीवीसलदेवेन। मयणसाहारः समाकारितः। अतीव मानं दत्तम्। एकदा पृष्टम्—कथमीद्यवाक्येन नरवर्मराज्ञो विषादो न जातः १। २० तेनोक्तम्—स उभयवंशविश्रद्धः, न भवादशः। यतः—भवान् (भवत्?) पितृपक्षे ल्लासीदः स पदातिमात्रः। मातृपक्षे महिषीभक्षका जेठेया इति। राज्ञा किमपि न कथितम्।

§१८२) एकदा श्रीवीसलदेवस्य दक्षिणे चक्षुपि अंजनीरोगो जातः। तद्यथा दिनत्रयस्य मध्ये बहुभिरुपचारैरपि नोपन्नमित । ततोऽरिसिंहराजवैद्यस्याकारणं प्रहितम् । तेन समेतेन गद्रितं इति—अहो प्रधाना! विहिते भेषजे राज्ञो घटिकाचतुष्ट्यं यावन्महती व्यथा भविष्यति । तदाहं मार्यमाणो रक्षणीयो भवद्भिः । तैरुक्तम्—भवतु । अश्वाचे भेषजं दत्तं वैद्येन । ततो विशेषेण वेदना जाता । ततो राज्ञोक्तम्—अम्रु मारयत । परं स रक्षितः । इत्युक्ते भेषजं दत्तं वैद्येन । ततो विशेषेण वेदना जाता । ततो राज्ञोक्तम्—अम्रु मारयत । परं स रक्षितः । अथ-घटिकाचतुष्कादनंतरं निरामयेन राज्ञा वैद्यस्यामंत्रणं प्रेषितम् । प्रधानैरुक्तम्—स मारितः । राजातीव अथ-घटिकाचतुष्कादनंतरं निरामयेन राज्ञा वैद्यस्यामंत्रणं प्रेषितम् । प्रधानैरुक्तम्—स मारितः । व्यथा दुःखितोऽभृत् । तदनु समानीतो वैद्यः । तत्पुरो राज्ञोक्तम्—मम भेषजं कथयः, अन्यथा मारिवष्ये । व्यथा

सर्वसाधारणा । त्वं तु कुत्रापि यास्यसि । अतोऽहं सर्वविदितं औषधं विधास्ये । तेन पीळ्कुलीयकः कथितः । ततो राज्ञा सन्मानितः । बहुद्रव्यं दत्तम् । औषधं सर्वत्र विदितं कृतम् ।

३१८३) अन्यदा आञ्चापल्यां राजीमतीछिपिकया गुरुपार्श्वे आगमोक्ततपांसि द्वात्रिंशन्मितानि कृतानि । तत आंविलवर्द्धमानतपोऽभिग्रहे गुरुभिरुक्तम्—यत्तपिस क्रोधो न विधीयते । क्रोधेन तपःक्षयो भवति । इति क्रोधसाभिग्रहो गृहीतः । एवं राजश्रीवीसलदेवस्य सदिस महं० सात्कस्य न्यासस्य च होडा जाता । यन्मनुष्यः सक्रोधो भवत्येव । मंत्रिणोक्तम्—अहमक्रोधिनं दर्शयिष्यामि । ततो वंठपार्थात्तरगखुरै रंगभांडभंगे कृते तस्याः, तया तु तुरगचरणानां शीतलजलेन क्षालनं विहितम् । राज्ञा तदवगत्य तस्याः पंचांगप्रसादः, सर्वांगाभर-णानि दत्तानि । ततस्तया तेन द्रन्थेण प्रासादः कारितः ।

१८४) मंत्रिणि श्री[वस्तुपाले] दिवंगते पं० सोमेश्वरदेवेन व्यासविद्यासमर्थिता(०र्थना?) त्यक्ता । ततः 10 श्रीवीसलदेवेन महानप्युपरोधो विहितः । विशेषग्रासलाभोऽपि दर्शितः । परं [तेनोक्तम्-मंत्रीश्री]वस्तुपालस्याग्रे व्यासविद्यां विधाय नान्यस्य पुरो विद्धामि । ततो राज्ञा गणपतिनामा व्यासः कृतः ।

§ १८५) पुरा मुद्रलवंदीकृतवसाहजगड़ श्रीवीसलदेवेन दुर्गादागत्य निशि.....(अत्रार्द्धप्राया पंक्ति-

र्नष्टा)..... द्रव्यमादाय नष्टः । भद्रेश्वरे व्यवहारी जातः ।

- \$१८६) अथ भद्रेश्वरे वसाहजगङ्गमा वसित । अन्यदा राजकीयप्रवहणे वाजिपंचकराशिविंहितः । आग15 च्छमानं यानं तटे एव भग्रम् । राजा समुद्रोपकंठे विलोकनाय गतः । तत्र समेतेन मनुष्येणैकेन प्रवहणमध्यस्वरूपं समग्रमपीति कथितम् । याने १४४ घोटका आसन् । तेषां मध्यात् प्रधानाश्चपंचकं वसाहजगङ्गकस्य ।
 तेषां मध्ये करडाकनामा सर्वोत्तमस्तुरगो विद्यते । ततो वसाहेनोक्तम्-मदीया अश्वाः समेष्यंत्येव । राज्ञोक्तम्कथमस्माकं तुरगा यास्यंति, कथं तवोद्गरिष्यंति । वसाहेनोक्तम्-तवापि ममापि च भाग्यं सद्यं नेति वार्षा
 कुर्वतोर्द्वयोः समुद्रान्तश्चतुर्भिस्तुरगैः सह करडाकः प्रकटीबभूव । समागतश्च सकलोऽपि लोकश्चमत्कृतः ।
- 20 ६१८७) अन्यदा सं० १३१५ वर्षे दुर्भिक्षकाले श्रीवीसलेन चणकत्रुटौ भद्रेश्वरच्यापारिणो नागडस्य लेखः प्रहितः । जगङ्कोऽत्र धृत्वा समानेतच्यः । तेन तस्य लेखं दर्शयित्वा श्रीपत्तने तेन सह गतः नागडः । सर्वाण्यपि रंककुटुंबानि तत्रागतानि । तेषां दानं दातुमारब्धम् । ततः स्थालैः ३६०००० तटा कृता । विशुद्धवेषाणां विणक्पुत्राणां मध्ये तं सामान्यवेषस्यं वीक्ष्य राजा नोपलक्षयति । ततो मंत्रिणा दर्शितः । राज्ञोक्तम् कथ-मीद्दश्च एव वेषः । तेनोक्तम् -राजन् !
 - (२६१) तन्वंति डंबरभरैर्मिहमा न मन्ये श्वाच्यो जनस्तु गुणगौरवसंपदैव। शोभाविभूषणगणैरितरांगुलीनां ज्येष्टत्वमेव रुचिरं खलु मध्यमायाः॥

इति अष्टादशसंडैः सिंगिणिविंदेशराज्ञा प्रहिता तस्यापिता । उक्तं च-राजन्! किमर्थमहमाकारितः?। राज्ञोक्तम्-चणकहेतोः । तेनोक्तम्-मयानंतगुणं लाभं विचार्य कणकोष्ठागाराः सर्वेऽपि रंकहेतोर्दत्ताः। राज्ञोक्तम्-तिर्हि मया वडरंकेन भाव्यम् । एवं हिपतेन मृदकशत १८ चणकसमर्प्यणं विहितम् ।

अट्ट य मूडसहसा वीसलदेवस्स सोल हम्मीरा । एकवीसा सुलताणा पयदिश्वा जगहु दुकाले ॥ नवकरवाली मणिअडा तिहिं अग्गला चियारि । दानसाल जगडूतणी कित्ती कलिहि मझारि ॥ निर्यातदानदाता हरिकांताहृदयहारशृंगारः । दुर्भिक्षसंनिपाते त्रिजगडू जगडू चिरं जीयात् ॥



[†] अत्र पृष्ठस्योपरितनभागे एतादशी टिप्पणी-

३६. विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रबन्धः (B.)

§ १८८) एकदा पाटली पुरे नन्दो नृपस्तस्य भानुमती देवी। एकदा नृपस्त्वाखेटकं गतः। तत्र भोजनवेला जाहरू। नृपो देवीदर्शनं विना न भुनक्ति । इतो वररुचिना देवीभारतीप्रसादादेवीरूपं कृतम् । गुह्यदेशे विनदुः पपात । एकवेलमपाकृतः । पुनस्तथैव । तेन चिन्तितमत्रास्ते । राजा देवीं निर्वर्ण्य हृष्टो भुक्तश्च । विन्दुं दृष्ट्वा कुपितो नूनमसावन्तः पुरे विनष्टः । राजा रक्षकेण च्छनं वररुचिर्मारितः । आरक्षकेण भूमिगृहे स्थापितस्तस्य पुत्रान् 5 पाठयति । इतो नृपस्य तनयो राजपाव्यां गतोऽश्वापहृतो वनं ययौ । अश्वस्तु मुक्तमात्रो मृतः । कुमारोऽपि फला-स्वादं कृत्वा वासार्थं वृक्षं प्राप्तः । तेत्र उपरि रिंछोऽस्ति । इतो नरगन्धाद् व्याघः समायातः । कुमारः प्राणभया बृक्षमारूढः । रिंछेनोक्तम्-एहि एहि त्वं ममातिथिः । व्याघ्रस्त वृक्षमूले स्थितः । रिंछेनोक्तम्-व्याघ्यस मम वैरमित । त्वया तु न भेतव्यम् । कुमारत्तस्य समीपं गतः । रिंछेनोक्तम्-स्वस्थीभ्य निद्रां कुरु । स रिंछांके शिरो दत्त्वा सुप्तः । व्याघ्रेणोक्तम्-भो! रिंछामुं नरं यद्यर्पयसि तदाऽऽवयोः प्रीतिः स्थात् । आवां स्वजनावेकत्र 10 वनवासिनौ । तेनोक्तम्-नाहं विश्वस्थाः । अम्रं युगान्तेऽपि नार्प्यामि । इतः कुमारो जागरितः । रिंछेनोक्तम्-त्वं जागृहि, शयनमहं करोमि। परमसौ मां याचयिष्यति। असौ कपटवानिसत। त्वया तु मलिनता न कार्या। एवम्रुक्तवा खकेशान् शाखायां बद्धा सुप्तः । इतो व्याघ्रेणोक्तम्-भो राजपुत्राम्रं ममार्प्य । यथा त्वां जीवन्तं मुश्चामि । अन्यथा वनात्कथं यास्यसि । असौ मलिनोऽस्ति प्रातस्त्वां हत्वा खाद्यिष्यति । कुमारेण रिंछस्तद्वचसा क्षिप्तः । स केशैर्वद्धैः स्थितः, न पतितः । तेन कुमार उक्तः-रे किमिदम् श्रिथुना किम्? । स चरणयोर्निप-15 त्याह-अहं भुद्धः । तेनोक्तम्-त्वं वचनाद्धष्टः । अतस्ते तत् यातु । तेन सदैन्यमुक्तः-अनुग्रहं देहि । तेनोक्तम्-'विसेमिरा' एवं जल्पसि । यदि कोऽप्यमुं व्याख्यानयिष्यति तदा ते वचः पडुतरं स्थात् । इतः प्रभाते तुरगपदैः सैन्यमायातम् । व्याघ्रस्तु वनं गतः । रिंछोऽपि गतः । कुमारः पुरमाययौ । परं 'विसेमिरा' एतदेव वक्ति । मात्रिकैर्जरूप्यमानोऽपि तदेव वक्ति । पण्डितेन आरक्षकः पृष्टः-नृपसभायां का वार्ता ? । खरूपं श्रुत्वोक्तम्-मां तत्र नयसि तदा सर्जं करोमि । तेनोक्तम्-चल ।...कथमाकारणं विना गम्यते ?। आरक्षकेण नृपः पृष्टः-देव !20 मम गृहे युवत्येकाऽऽयातास्ति सा सञ्जीकरिष्यति । नृपेणाहूता । पण्डितः स्त्रीवेषो नृपसमां गतः । यवनिकान्त-रितः स्थितः । क्रमारो जल्पितस्तेन-

> (२६२) विश्वासप्रतिपन्नानां वश्चने का विदग्धता। अङ्कमारुद्य सुप्तस्य हन्तुः किं नाम पौरुषम्॥ इत्युक्ते आद्याक्षरो मुक्तः।

(२६३) सेतुं गत्वा समुद्रस्य महानद्याश्च सङ्गमे । ब्रह्महा मुच्यते पापान्मित्रद्रोही न मुच्यते ॥ इति द्वितीयाक्षरः ।

(२६४) मित्रद्रोही कृतव्रश्च यो वै विश्वासघातकः । तावत्ते नरकं यान्ति यावचेन्द्राश्चतुर्दश ॥ [इति तृतीयाक्षरः ।]

(२६५) राजँस्त्वं राजपुत्रस्य यदि कल्याणमिच्छसि । देहि दानं द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः ॥ [इति चतुर्थाक्षरः ।]

婚

25

30

- (२६६) नगरे वसिस हे बालेऽटब्यां नैव, यास्यसि। सिंहब्याधमनुष्याणां कथं जानासि भाषितम्?॥
- (२६७) देव! द्विजपसादेन जिह्नाग्रे मम'भारती। तेनाहं नन्द! जानामि भानुमतीतिलकं यथा॥
- 5 नृपेणोपलक्ष्य पण्डितो मानितः । आरक्षकस्य प्रसादो दत्तः ।

।। इति विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रबन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे नन्दनृपोह्रेखः।

§ १८९) पाटलीपुरे नंदनामा नृपोऽजिन । महाकृपणः कस्यापि किमपि न दत्ते । ततः सर्वेषां द्वेष्योऽजिन । अत्रांन्तरे कालदोषेण स मृतः । तदनु परकायप्रवेशिविद्यासिद्धित्रेन राज्ञः शवे स्वात्मा निवेशितः । ततः शवं 10 समुत्थितम् । सकलराजलोकस्य महानंदोऽजिन । सर्वेषां राज्ञा प्रसादो दत्तः । मंत्रिणः सर्वेऽपि तदौदार्यं विलोक्य पुरे द्विजदेहसंस्कारं कारितवंतः । स एव राजा कृतः ।

३७. वलभीभङ्गप्रबन्धः (P.)

- ९१९०) मरुमंडले पछीग्रामे काक्-पाताकौ आतरौ। तयोर्लघुर्धनवान । ज्यायांस्त तद्वहे वृत्त्या वर्तते। एकदा प्राष्ट्रकाले लघुक्तिः-केदारास्ते स्फुटिताः। स्वकर्म निन्दन् कुदालस्कन्धो यावद्याति तावत्कर्मकराः सेतून् 15 बन्धयन्ति । के युयम् ? । तैः प्रोचे-भवज्रातुः कर्मकराः । मदीयाः क्र सन्ति ?। वलभ्याम् । गतस्तत्र सः, गोपुरस-मीपे आभीराणां संनिधौ तार्णगृहे स्थितः । अत्यंतं कुशतया तै रंक इति नाम कृतम् । इतः कोऽपि कार्पटिको कल्प-प्रमाणेन रैवतशैलादलावुना सिद्धरसकूपात तुंविका भृता । तामादाय कावडिमध्ये गुप्तीकृता मध्ये मार्गस्य याति । तुंबकमध्याद्शरीरिणी 'काकूइ तूंबडी' इति वाणीमाकर्ण्य जातविसयभीर्वलभ्यां तस्य .च्छबिनो वणिजः सम्रनि समागतः । तत्र स रंक इति ज्ञात्वा पूर्वनामभीतः सरसमलाचु तत्र स्थापयांचके । स्वयं सोमेश्वरयात्रायां गतः । 20 गलद्भिनदुनाऽधस्तापिका खर्णमयी । सिद्धरसं मत्वा सर्वं कृष्ट्वा गृहज्वालनं कृतम् । सर्वजनस्य समक्षं रोदित । खच्छब प्रकटीकरणम् । लोकैः पर्यवसापितस्तथैव प्रज्विलतं गृहं सुक्त्वाऽन्ये गोपुरे गृहं कृतम् । तत्र मोगाः संति । तस्मिन् साहसादुवास स निर्भयः । क्षेत्रे रात्रौ वसति । पत्नीं प्रति गृहे वक्ति पतामि ३ । प्रातः कथितम् । सा क्षेत्रे खयं गृहे । पुनः शब्दे पतेति त्रोक्तः । स्वर्णपौरुषसिद्धिप्रदः । सन्त्रैक-अगण्यपुण्यप्रभावात् स्वर्णपुरुष-सिद्धिः । तत्र प्राज्याज्यकयः । अन्यदा घृतभांडमक्षीणं प्रेक्ष्य सुस्थके चित्रकवल्ली दृष्टा । स्त्रियाः कैतवेन 25 गृहीता । कार्पण्यनिधिः । अथ स्त्रसुताया रत्नस्वचितकांचनकंकतिकायां राज्ञा स्त्रसुताकृते प्रसममपहृतायां तिहरोधो जातः। "काके शौचं०॥" सोऽपि म्लेच्छान् वलभीभंगाय। यहुच्छास्वर्णदानम्। तद्नुपकृत एकञ्छत्र-धरो निशि राज्ञि सुप्तजाग्रदवस्थे पूर्वसंकेतितनरसमालापः । असिन् स्वामिनो नास्ति विचारलेशोऽपि, न परमपि पुच्छति । रंकवणिजा प्रेरितः सूर्यपुत्रं शिलादित्यं प्रति याति । प्रातः प्रयाणविलम्बं दृष्टा तस्य स्वर्णदानम् । पुनर्द्वितीयदिने पुनः "सिंहस्यैकपदं० ॥ कः स्थास्यति मे स्वामिनः० ।" प्रयाणम् ।
- 30 § १९१) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता बालविधवाऽर्कसंसुखावलोके सौरं मंत्रं जपति । तेनैव अक्ता । गर्भः । लज्जमानेन पित्रा वलभ्यां प्रस्थापिता । पुत्रजन्म । सोऽष्टाब्दः । लेखशालापराभृतो पितृनामानवगम्य मर्तुकामो-ऽर्केण करे कर्करोऽर्पितः । सापराधे शिलाऽन्यथा तवैव सा इत्युक्तः । ततः शिलादित्यः । तत्पुरनृपेण परीक्षाये

तथाकृते मृते राज्ञि स एव राजा । अर्कद्ताश्वारूढो नमश्चर इवेच्छाविहारी । जैनः । शत्रुखयोद्धारकः । कदा-चित् सौगतैस्तमधिष्ठितम् । तद्धागिनेयो मर्छनामा श्रुष्ठः वेषपरावर्त्तेन बौद्धपार्श्व । खे भारत्योक्तम् –के मिष्टाः १ । ब्रह्माः । षण्मासान्ते –केन सह १ । घृतगुडान्याम् । इत्युक्ते तुष्टा भारती । जिताः सौगता निष्कासिताः । शिला-दित्येनाचार्यपदं कारितम् । श्रीमछ्वादिद्धरिः ।

§ १९२) इतो वलभ्याः श्रीचन्द्रप्रभविम्बं सांबाक्षेत्रपालादि अधिष्ठातुर्वलेन व्योम्नि शिवपत्तने गतम् । अश्विनीप्- 5 र्णिमास्यां रथाधिरूढा श्रीवीरप्रतिमा श्रीमालपुरे । ततः पूर्देवतया श्रीवर्द्वमानस्ररीणां वहिर्भृमौ रोदनेन ज्ञापनम् ।

(२६८) का त्वं सुंदरि जल्प देविसदृशे किं कारणं रोदिषि
भंगं श्रीवलभीपुरस्य भगवन् पश्याम्ययं प्रत्ययः।
भिक्षायां रुधिरं भविष्यति पयो लब्धं भवत्साधुभिः
स्थातव्यं मुनिभिस्तदेव रुधिरं यस्मिन् पयो जायते॥

पुरीसमागताः श्रावकाणां पुरः प्रोच्याशिवं चिलताः । तैश्र समं शकटसहस्र १८ चिलताः । मोढेरपुरे रुधिरं पतद्भहे पयो जातम् । पुरीपरिसरे म्लेच्छाः । रंकेण पंचशब्दवादकान् बहुस्तर्णेन विभेद्य तस्य तुरगस्यारोहण-काले एव क्रियमाणे पंचशब्दसांराविणे तार्श्यवदुड्डीय स दिवम्रत्पतितः । किंकर्तव्यतामृदः शिलादित्यस्तैर्निजन्ने । "भवंत्युपा० ॥" "तावचंद्र० ॥"

(२६९) पणसइरी वासाइं तिन्निसयाइं अइक्कमेऊणं। विक्रमकालाउ तओ वलहीभंगो समुप्पन्नो॥

॥ इति वलभीभङ्गप्रबंधः॥

(G.) सङ्ग्रहे वलभीभङ्गवृत्तम्।

§ १९३) अथ पातसाहिकटके चिलते यवनव्यंतर एको वलभ्यामुपागतः। क्रुत्रापि प्रवेशं न लभते। िकयद्भिदिनैः किपिशीर्षमेकं रिक्तं वीक्ष्य स्थितः। ततस्तत्र कश्चिद्दरिद्री द्विजो नित्यमिष्ठहोत्रहेतोः किपलगोष्ट्रतमादातुं स्वां भार्या 20 प्रहिणोति। तया विषण्णतया तद्भ्यंतरावेशेन स्वरम्त्रमानीयार्पितम्। तेन होमो दत्तः। प्रातर्यावता विलोकयित तावता सुवर्णं दृष्टम्। नित्यमेवं विधत्ते। ब्राह्मण्या तु निजसत्त्या अग्रे कथितम्। एवं परंपरया पुरे सर्वत्र सर्म्मूत्र]होमोऽजनि। तेन पुरं निर्देवतं जातम्। यवनव्यंतराः प्रसृताः सर्वत्र। ततो यवनकटकमागतम्।

§ १९४) वलभ्यां श्रीदेवचन्द्रसरयो रात्रौ सुप्ताः कांचन देवतां प्रत्यक्षां द्वादशवर्षरूपां पश्यंति सा। पृष्टं च-"का त्वं सुंदरि० ॥" तत्स्वरूपं परिज्ञाय गुरुभिः श्रीसंघस्य राज्ञश्च निवेदितम् । ततः कियानपि श्रीसंघो निःसृतः । 25

§ १९५) अथ राज्ञोक्तम्-भगवन्! निजव्यंतरैः शुद्धिः कार्या। ततः स्रिमिनिजव्यंतरद्वयं प्रहितम्। तत् द्वयं वलमानं यवनव्यंतरेर्धृतं, कृद्धितं च। दिनत्रयं स्थापितं च। तावता गुरूणां उसेरिर्जाता। दिनत्रयं यावत् कटके चिलते सक्तम्। ततस्ताभ्यां समग्रमपि स्वरूपं श्रीप्ज्यानां निवेदितम्। गुरवो गताः। राजा स्थितः। अधिनी-पूण्णिमादिने रथयात्रायां श्रीमालपुरे श्रीमहावीरः, कासद्रहे श्रीयुगादिदेवः, हारीजे श्रीपार्श्वनाथः, श्रीशत्रुंजये बलमीनाथश्राययौ। तद्नु रंकेण सर्वेऽपि यवना रणे क्षिप्ता मारिताः।

15

dira Gandhi Nationa Centre for the Arts

३८. श्रीमाताप्रबन्धः (B.P.)

§ १९६) पूर्वस्यां लखणावतीपुरी। राज्ञा लखणसेनः। तस्यान्वये राजा रत्नपुद्धः। तस्य राजपाव्यां व्रजतः काचित् स्त्रीं सगर्भा अक्षतपात्रकरा सम्मुखा जाता। नृपेणाक्षतपात्रनालिकेरोपरि दुर्गा निविष्टा दृष्टा। नृपेण शाकुनिकः पृष्टः। तेनोक्तम्—अस्याः सुतोऽत्र नृपो भावी। राज्ञा आरक्षक आदिष्टः—यदेनां प्रछन्नं पुराद्विहिनींत्वा गर्चायां शिष्टा। सा तलारेण नृपादेशाद्विहिनींता। तयोक्तम्—क मां नयसि १। तेनोक्तम्—मारियण्यामि। तया भयभीतयोक्तम्—अहं बिहर्भूमौ यास्यामि। सा गता। भयाद्वर्भः पपात। सा चीवरेणावेष्ट्याययौ। तैर्मारिता सा। स बालो एकया हरिण्या दृष्टः। कृपया स्तन्यं पायितः। सा प्रतिदिनं तं पालवित। छुव्धकेन एकेन वालं स्तन्यं पाययन्ती मृगी दृष्टा। नृपाय निवेदितं बालखरूपम्। राज्ञा तल्लारः पृष्टः। तेनोक्तम्—सा मृत्युवेलायां बहि-भूमौ गता। नृपेण बालस्ततः समानीय पुरपरिसरे मुक्तः। यथा धेनोश्वरणपातेन मरति। इतस्तस्य बालस्य 10 क्षुधितस्य वाक्यमुत्पन्नम्।

(२७०) यो मे गर्भस्थितस्यापि वृत्तिं कल्पितवान् पयः। रोषवृत्तिविधानाय स किं सुप्तोऽथवा मृतः॥

काचिद्धेनुर्नवप्रस्ता तत्रागत्य पाययति । नृपेण चिन्तितं न म्रियते । स धवलगृहे आनीतः । श्रीपुञ्जेति नाम कृतम् । कालेन नृपतिना राज्यं दत्तम् । श्रीपुञ्जस्य राज्यं पालयतः क्रमेण पुत्री जाता । तस्याः शरीरं 15 दिव्यम्, मुखं वानर्याः । क्रमेण प्रौढा जाता । कोऽपि न याचते । तस्याः खेदपराया जातिसरणमुत्पेदे । पाश्चात्य-मवी दृष्टः । तया नगरमध्ये शब्दः पातितः । यः कोऽपि मरुखल्याः समायातः सोऽभ्येतु । एकः पुरोऽभृत् । कुमार्या पृष्टः-अर्बुदं वेत्सि ? । सर्वं वेबि । तत्र कामिकतीर्थाग्रे कुण्डमस्ति, तस्य तटे वंशजाल्यस्ति । तत्र जाल्यां वानरीशिरो लग्नमित । इतो मत्सकाशाद्रव्यमादाय तत्र गत्वा तच्छिरो जलान्तः क्षिप्त्वा समागच्छ । स तत्र गत्वा यावजले क्षिपति तच्छिरस्तावदेव कुमार्याः श्रीमाताया मुखं दर्शनीयं जातम् । नृपेण पृष्टा-वत्से ! किमि-20 दम् ? । तयोक्तम् देव! मरुखल्यामष्टादश[शती]देशमध्ये नन्दिवर्द्धनो नाम पर्वतस्तत्र कामिकतीर्थमस्ति । तस्य तीरे वंशजाली। तत्राहं पूर्वभवे वानरीरूपाऽधिरूढा। फालच्युता वंशकीलेन विद्धा मृता। मम शरीरं गलित्वोदके पतितम् । तत्प्रभावाद्हं तव पुत्री जाता । शिरस्तत्र स्थितम् । अतो मे ईदृशं मुखम् । अधुना जनः प्रेषितः । तेन शिरसि जले क्षिप्ते वदनं स्वभावे जातम् । इतस्तसिन्नरे समायाते परिणयनपराश्चुखी जाता । अतिनिर्व-न्थेन पितरावाप्टच्छच, बहुपरिकरेण अर्बुदाद्रावाययौ । तत्र तपः कर्त्तुं प्रारेभे । इतस्तत्र रसीअउ तपस्वी तपः 25 करोति । स तां दृष्ट्वा क्षुव्धः । पाणिग्रहणार्थं ययाचे । तयोक्तम्-यदि सूर्योदयाद् अर्वाक् द्वादश पाजा अत्र पर्वते करोषि, तदा त्वां परिणये । तेन तपः शक्त्या शीघं चकार । इति कियत्यपि रात्रिशेषे श्रीमातया तपःप्रभावा-त्कुकुटः खरः कृतः । स तं श्रुत्वा विभातमिति कृत्वा क्षुब्धः । हृदयस्फोटान्मृतो व्यन्तरो जातः । साऽपि सपश्चात्तापा वैश्वदेवे प्रवेशं कृत्वा देवी श्रीमाता जाता।

॥ इति तपसि श्रीमाताप्रबन्धः॥

30(G.) सङ्ग्रहगतं श्रीमातावृत्तम् ।

§ १९७) पुरा रत्नपुरे रत्नशेखरो राजाऽऽसीत्।तेन दिग्विजयव्यावृत्तेन प्रवेशमहोत्सव.....तीति
पृष्टः । ताभिः संतानाभावानेति कथितम् । ततः संतानहेतोर्नवांतःपुरचिकी राजा शाकुनिकेन बहिर्निष्कांतः ।
ततः शाकुनिकेनापन्नसत्त्वां कामपि कामिनीं काष्टभारवाहिनीमुद्रीक्ष्यास्याः सुतस्तव राज्ये भविता एवं जगाद ।

25

30

ततो विषिण्ण(०षण्ण)मनसा राज्ञा सा गर्त्तायां श्लेषिता। तया प्रसूय बालो सुक्तः। नवप्रसूता हरिणी तं निज-स्तन्येन जीवयति। अथ टंकशालायां हरिण्यंकिता द्रम्माः पतंति। राजा तथा विज्ञायानीय च गोपुरद्वारि सायं सुक्तः। तत्रक्षो बालः संडेन रक्षितः। ततो राज्ञा समानीय स बालो लीलितः श्रीपुंजराजा वभूव।

श्रीपुंजराज्ञः पुत्री श्रीमाता मर्कटम्रुखी जाता । तस्या जातिसरणं जातिमित-पुरा अर्बुदाचले मर्कटी फालां ददाना शाख्या विद्धा । कुंडोपिर गलित्वा देहं पिततम् । शिरो शाखायां विलग्नमेव स्थितम् । ततो देहं मानवाकारं कुंडपतनप्रभावादजिन । ततस्तत्रागत्य शिरोऽपि तया तत्र क्षिप्तं कुंडे । ततोऽर्बुदे तपसंतीं तां तत्र रसीयाकनामा योगी ददर्श। प्रार्थितं तेनेति—यन्मम पत्नी भव । तयोक्तम्—द्वादशपद्या विधेहि एकरात्रि मध्ये । तेन तथाकृते श्रीमात्रा कृत्रिमकुर्कुटा वासिताः । कृत्रिमश्चनश्चरणयोर्विलग्नाः । ततो हृदयस्फोटनेन स स्वयं विनष्टः ।

३९. जगद्देवप्रबन्धः (G.)

§ १९८) मुद्रलपातसाहिसमीपात्समागतो जगदेवः श्रीसिद्धराजभूपतिना नवलक्षकंकणं परिधापितः । अत्रांतरे 10 केनापि कविना काव्यमिदं न्यगादि-

(२७१) उन्मीलन्मणिरिइमजालजिटलश्चायं रणे कङ्कणं विश्वाणस्तव वैरिवीरकदनकीडाकठोरः करः। हित्वा संयति जीवितानि रिपवो ये खर्ग्ममार्गं गता-स्तानाकष्टुमिवाविवेश सहसा चण्डसुतेर्मण्डलम्॥

इति पठिते तसै तत्कङ्कणं दत्तम्।

एकदा सभायां अधो विलोक्यमानस्य चिंताप्रपन्नस्य कस्यापि कवेः पार्श्वे जगदेवेन पृष्टम्-कवे! महती चिन्ता!। तेनोक्तम्-विमर्शनाऽस्ति । शृणु !

(२७२) द्रिद्रान् सृजतो धातुः कृतार्थान् कुर्व्वतस्तव। जगद्देव! न जानीमः कः श्रमेण विरंस्यति॥ इति पठिते जगद्देवेन सुवर्णलक्षो दृत्तः।

जगद्देवेन समागतस्य कस्यापि कवेः पार्श्वे नविशेषं देशस्त्ररूपं पृष्टे तेनोक्तम्-देव ! चित्रमस्ति । असत्सार्थे पान्थसैकस्य पार्श्वे सरसः सम्रुत्थितेन चक्रवाकेनैकेनेति पृष्टम्-

(२७३) चकः पप्रच्छ पान्थं कथय जनपदः कोऽपि संपत्स्यते में वस्तुं नो,यत्र रात्रिर्भवति स च विचिंत्येति तं प्रत्युवाच । नीते मेरौ समाप्तिं कनकवितरणैः श्रीजगद्देवनाम्ना सूर्येऽनन्तर्हिते स्थात्कतिपयदिवसैर्वासराद्वेतसृष्टिः ॥

इत्युक्ते जगदेवेन सुवर्णसहस्रा दश दत्ताः।

कर्सिन्निप पण्डिते समागते श्रीजगद्देवन वारं वारं पृष्टे सित जीवेति वारं वारं जल्पित पंडितः, नान्यत् । तेनोक्तम्-कथमेतत् जीवेति वचः ?। कविनोक्तम्-"त्विय जीवित जीवंति ।।"

(२७४) स्वस्ति क्षत्रियदेवाय जगदेवाय भूभुजे । यद्यशःपुंडरीकान्तर्गगनं भ्रमरायते ॥

ndira Gandhi Nationa Centre for the Arts

४०. पृथ्वीराजप्रबन्धः (B.P.)

§ १९९) यथा-शाकंभरीपूर्यां चाहमानान्वये श्रीसोमेश्वरो नृपलस्य तन्जः पृथ्वीराजः, तद्वाता यशोराजः। तस्य शल्यहलः श्रीमालज्ञातीयः प्रतापसिंहः, मन्नी कइंबासः। तयोरुभयोः परस्परं विरोधः। स राजा पृथ्वीराजो योगिनीपुरे राज्यं करोति। तस्य धवलगृहद्वारे न्यायघण्टाऽस्ति। च महावलवान्, धर्जुभृतां धुरीणो नृपः। यशोराजस्तु 5 आशीनगरे कुमारभुक्तावित्तं । तस्य वाराणस्याधिपतिना श्रीजयचन्देन सह वैरम्। एकदा गर्जनकात् तुरुकाः धिपतिः पृथ्वीराजेन सह वैरं वहन् योगिनीपुरोपिर चचाल। पृथ्वीराजस्यामात्यो दाहिमाज्ञातीयः कइंबासनामा मन्नीक्वरोऽस्ति । तस्यानुमत्या नृपस्तुरङ्गमलश्रद्वयमादाय, गजानां पश्चश्चत्या सम्मुखश्चलितः। तुरुकसैन्येन सह युद्धं जातम्। भग्नं शाकसैन्यम् । सुरत्राणो जीवन् गृहीतः। स्वर्णानग्रदे श्विर्वा योगिनीपुरे समानीय मातुर्वचसा मुक्तः। एवं वार ७ बद्धा बद्धा मुक्तः, करद्वश्च कृतः। प्रतापसिंहः करमुद्गाहियतुं याति गर्जनके। एकदा 10 मशीतिं विलोकितुं गतस्तत्र स्वर्णटङ्ककलश्चं दुवेंसादीनां दद्दो। मित्रिणा नृपायाभिद्धे—देव! गर्जनकद्रव्येण निर्वाहः स्थात्। स तु इत्थं विद्रवति। राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तम्—देवस्य तदा प्रहवेषम्यं मत्वा मया धर्म्मव्ययः कृतः। ज्योतिर्विदः पृष्टाः। तैस्तु कष्टमुक्तम्। इतः शल्यहस्तो नृपस्य कर्णे विलग्नः—यदेष मन्नी वारं २ तुरुष्कानान्यति। नृपो रुष्टः। तहचसा मित्रणं हन्तुं बुद्धिमकरोत्। इतः रात्रौ सर्वावसरादुत्थिते मित्रणि प्रतोलीद्वाराच्छित्ते राज्ञा दीपिकाभिज्ञानेन वाणं मुक्तम्। तन्मित्रणः कक्षान्तरे भूत्वा दीपघरस्य करे लग्नम्। दीपिका विश्वते राज्ञा दीपिकाभिज्ञानेन वाणं मुक्तम्। तन्मित्रणः कक्षान्तरे भूत्वा दीपघरस्य करे लग्नम्। दीपिका विश्वते विश्वते वाष्टास्त्रम्। दोपिका विश्वते वाष्टास्तरम्। दे मन्निणः वारकेन वाणमुक्तम्। रे! मन्नी जीवति विद्वते कुक्तस्य। इतः पाश्चात्यामिन्यां चन्दवलिदिको द्वारभद्वो नृपं प्राह—

(२७५) इक्कु बाणु पहुवीसु जु पइं कइंबासह मुक्कओं,
उर भिंतरि खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्कउ।
बीअं करि संधीउं भंमइ सुमेसरनंदण!
एहु सु गडि दाहिमओं खणइ खुदइ सइंभरिवणु।
फुड छंडि न जाइ इहु लुब्भिड बारइ पलकड खल गुलह,
नं जाणउं चंदबलदिउ किं न वि छुद्दइ इह फलह॥

(२७६) अगहु म गहि दाहिमओं रिपुरायखयंकर,
कुडु मंत्रु मम ठवओं एहु जं बूय मिलि जग्गर ।
सह नामा सिक्खवर्ड जह सिक्खिविट बुज्झहं,
जंपइ चंदबलिहु मज्झ परमक्खर सुज्झह ।
पहु पहुविराय सहंभरिधणी सयंभरि सटणह संभरिसि,
कहंबास विआस विसट्टविणु मिट्छबंधिबद्धओं मिरिसि॥

नृपेण भेदभयात् अन्धार्यां क्षेपितः । आद्यौ प्रहरिकसमये मं (?) सर्वावसरे मन्नी समायातः । विस्नितितः । 30 मट्टो निष्कासितः । तेनोक्तम्—देव ! पुमर्भवतः कल्याणमतः परं न करोमि । सिद्धसारस्वतोऽहं । तव म्लेच्छैर्बद्ध-स्वाचिरान्मरणं भविष्यति । स निर्गत्य वाराणस्यां गतः । राज्ञा श्रीजयचन्देनोक्तम्-मया त्वमाहूतः परं नायातः । देव ! तवापि मृत्युरासन्नोऽतोऽत्रापि न स्थास्ये ।

¹ B श्रीगोखवालज्ञाः । †-† एतद्न्तर्गता पंक्तिः B आदर्शे नोपलभ्यते । 2 B नास्ति पद्मिद्म् ।

§२००) इतः कइंबासे विस्त्रिते नृतनो मन्त्री जातः। नृपः प्रतापसिंहस्य भ्रातृन्यमतिविलिनं मत्वा कारायां चिक्षेप। मित्रिणि विस्तितेऽपि न त्यजति। स सुस्त्राणाय मिलितः। तेन कटकं शकानामहूतम्। आयातं श्रुत्वा पृथ्वीराजः सम्मुखो निःसृतः । तुरङ्गलक्ष ३, गज सहस्र १०, मनुष्य लक्ष १५; एवं.....आशीमतिक्रम्याप्रे कटकं गतम्। इतः सुरत्राणस्य मित्रणो वार्ता जाता। तेन कथा-पितम्-प्रस्तावे आकारियण्यामि । अथ पृथ्वीराजः प्रसप्तः दिनानि १० परं कोऽपि न जागरयति । यो 5 जागरयति तं मारयति । इतः प्रधानेन सुरत्राण आकारितः । राजा न जागर्ति । मन्दं मन्दं केऽपि सामन्ता युध्वा मृताः । केऽपि अणष्टाः । अश्वसहस्रविशयमाने [भगिन्या] नृपो जागरितः । खङ्गमाकुष्य धावतः भगिन्योक्तम्-स्वं जनं मार्यसि । कटकं सर्वं तव निद्राणस्य मारितम् । नृपस्त्वाह-अहमन्त्रि-......तिसन् विनष्टे नृपः शाकंभीरीं मनिस कृत्य नाटारम्भाश्वे आरुख प्रणष्टः । आत्रा सह पृष्टि-धावितैस्तुरकैर्न गृह्यते । इत आशी.....देशे पर्वतिकाद्वयस्य मध्ये मट्टोऽस्ति । तव (तत्रश) नृपं प्रेष्य जस-10 राजः स्थितः । तेन किञ्चित्कटकं खलहितम् । स तत्र मारितः । सुरत्राणसाहबदीनेन स मंत्री...... पुच्छरहितः सर्पवत्कृतः । स्थाने गतः केन गृहीतुं शक्यः ? । तेनोक्तम्-छन्देन । वाद्यान् वादयतः, यथा तुरगो नृत्यति । तथा कृते तुरगो नर्त्तितुं प्रवृत्तो न चलति । नृपस्य कण्ठे शृङ्गिण्यः पेतुः । राजा गृहीतः सुरत्राणे [न]। स्वर्णनिगडे प्रक्षिप्य योगिनीपुरे समानीतो भाषितश्र-राजन् ! यदि जीवन्तं मुश्रामि ततः किं कुरुषे ? । नृपतिः प्राह-मया त्वं सप्तवारान् मुक्तस्त्वं मामेकवेलमपि न मुश्रमि?। इतो नृपोत्तारकसम्मुखं सुरत्राणः सभायामुपवि-15 शति । नृपः खिद्यते । स प्रधानः समभ्येति-देव ! किं क्रियते, दैवादिदं जातम् । नृपेणोक्तम्-यदि मे शृङ्गिणीं बाणांश्चार्पयसि, तदाऽम्रं मारयामि । तेनोक्तम्-तथा करिष्ये । पुनर्गत्वा सुरत्राणाय निवेदितम्-यदत्र त्वया नोपविश्वनीयम् । सुरत्राणेन तत्रायःपुत्तलकः स्वस्थाने निवेशितः । राज्ञः शृङ्गिणी समर्पिता । राज्ञा वाणं सुक्तम् । अयः पुत्तलको द्विधा कृतः। नृपेण शृङ्गिणी त्यक्ता। न मे कार्यं सरितमन्यः कोऽपि मारितः। तद्तु सुरत्राणेन गर्तायां प्रक्षिप्य लोष्टेईतः । सुरत्राणेनोक्तम्-अस्य रुघिरे भूमौ पतिते शिवं स्यात् । तथैव मारितः । संवत् 20 १२४६ वर्षे दिवं ययौ । योगिनीपुरं परावृत्त्य सुरत्राणस्तत्र स्थितः ।

॥ इति पृथ्वीराजप्रबन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे पृथ्वीराजविषयकवृत्तम् ।

§२०१) श्रीयोगिनीपुरे श्रीप्रथिमराज्ञ उपरि अष्टादशिमर्रुश्वेरथानां पातसाहिरागतः। तदा एकादशीपारणं विधाय निद्राग्रथिलो राजा प्रमुप्तोऽस्ति। तदा महाविग्रहे जायमाने प्राक्तारे खंडिः पतिता। राजानं कोऽपि भीत्या 25 न जागरयति । कुङ्गिकयां गुष्टमोटनेन जागरितः। तावता तां मारित्वा पुनः सुप्तः। द्वितीयदिने वीरचतुष्टयेन जागरितः। स्वरूपं ज्ञात्वा यावता स्वयं प्राकारवातायने निविष्टस्तावताऽरिभिविशेषविग्रहो मंडितः। अत्या-कुलेन राज्ञा तारादेवी स्मृता । प्रत्यक्षीभृता । तया निश्चि श्रीपातसाहिसमीपे मुक्तः सः। यावता तन्मारणाय प्रहारं मुंचिति, तावता चतुर्भुजो दृष्टः, मुक्तः। द्वितीयवेलायां जटाधारी दृष्टः, मुक्तः। तृतीयवेलायां त्रह्मा दृष्टः। देव्या भणितोऽपि न मारयति । वस्त-प्रहरणादि गृहीत्वा समागतः। प्रातस्तत्सर्वं पातसाहेर्दश्चितम् । इति 30 कथापितं च—यथा वस्त्राण्यानीतानि तथा मारियच्ये । पातसाहिना सर्वाणि वस्त्राणि याचितानि । राज्ञोक्तम्—प्रयाणसप्तके प्रेपिष्ये । तथा विहिते कटकं तथैव चिलतम् । राजा जीवग्राहं गृहीतः। वंदीकृतस्य तस्यान्यदा भोजनं स्वानेनात्तम् । तदवलोक्य विषण्णः। आः किमेतत् । मदीया रसवती संदिसप्तश्चत्या समागतवती । सांप्रतिमयमवस्था । ततो मृतो युद्धेन ।

४१. जयचन्दप्रबन्धः (P.)

\$२०२) कान्यकुळादेशे वाराणसी पुरी नवयोजनिक्सीणी द्वाद्ययोजनायामा । तत्र श्रीविजयचन्द्रांगजो राष्ट्रक्र्टीयो जैत्रचन्द्रो राज्यं करोति। तस्य कर्प्रदेवी परमप्रीतिपात्रम् । अथ नगरवास्तव्य[स्य] कसापि शालापतेः पुत्री सहागदेवी पुरीप्रत्यासक्ते प्रामे परिणीताऽस्ति । सा एकदा भर्त्रा अपमानिता रुष्टा पितृगृहं प्रति चचाल । मार्गे यान्त्या गोमयोपिर फणी कृतफणस्तव्छीपें सक्जरीटस्तं दृष्ट्वा चिन्तितवती—यदि कोऽपि दक्षो मिलति तदा पृच्छामि । इतः पुराद्विद्याधरो नामा द्विजस्त्युग्रमे भिक्षार्थं त्रजन्मार्गे मिलितः । तया पृष्टं शकुनं वेत्सि ! तेन श्रीमत्युक्ते, तयाऽभिहितम् अस्य किं फलम् ! तेनोक्तम् -इदमतीव सुन्दरम् । इतः सप्तमे दिने त्वं नृपतेः सर्वे-धरी भविष्यति । परं मम किम् ! तयोक्तम् -यदि मे त्वयोक्तम्, तदा ते श्रीकरणम् । तेनोक्तम् -ममाभिज्ञानं नाम च श्रणु -अहं द्विजपाटके उत्तराश्रिते देवधरद्विजभागिनेयो विद्याधरो नाम । सा 'एवं' प्रतिश्रुत्य गता पितृगृहम् । सप्तमे दिने राजपाट्यां नृपेण त्रजता गृहद्वारे वनदेवीव दृष्टा । सानुरागो धवलगृहं गत्वा शालाप-तिमाह्य पुत्रीं ययाच । तेन दत्ता, धवलगृहं नीता । तया नृपो द्विजाय प्रतिपन्नं निवेदितः । राज्ञा विद्याधरा आहृताः । शतसप्तकं मिलितम् । देवी सौभाग्यदेवी प्राह-स विद्याधरो वामनेत्रे काणोऽस्ति । तेपामिप शतत्रय-मायातम् । उत्तरसां द्विजपाटके देवधरस्य भागिनेयः ममानीयताम् । अश्ववारः प्रहिताः । स सजीभूय स्थितोऽस्ति । अश्ववारव्याहतम् -मो विद्याधर! राजा आकारयति । तस्य मातुलपह्योक्तम् -रे क स , क राजकुलं; । कथं श्रीकरणं लभ्यसे ! । तेनोक्तम् -यद्विविष्यति तद्वष्टव्यम् । स राजकुले गतः । सर्वमुद्राधिकारी कृतश्च । स महात्यागी नित्यं बाक्षणानामप्टादशसहस्रमग्रासने मोजयति ।

§ २०३) अथैकदा राजा जैत्रचन्द्रः कथान्तरे इत्यशृणोत्-यद्धङ्गालदेशे लखणावतीपुरी तत्र लखणसेनो राजा। तस्य दुर्गो दुर्गाद्योऽस्ति। तदनु नृपः प्रतिज्ञामकरोत्-यत् गतमात्र एव दुर्ग गृह्णामि वा यावन्तो दिनास्तत्र लगन्ते ता०..........कुमारमित्रवाक्यम्-

20(२०७) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यार्दितः पुरः । मूर्त्या यामर्त्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥

नृपेण लखणसेनमाहूय सगौरवं परिधाय दण्डं मुक्तवा खराज्ये प्राहिणोत् । श्रीजैत्रचन्द्रोऽपि पश्चाद्रलितः स्वनगरीमायातः । इति लखम(ण)सेनपराजयप्रवन्धः ।

तद्तु चन्द्वलिद्भट्टेन श्रीजैत्रचन्द्रं प्रत्युक्तम्-

(२७८) त्रिण्हि लक्ष तुषार सबल पाषरीअइं जसु ह्य, चऊदसइं मयमत्त दंति गज्जंति महामय।

वीस लक्ख पायक सफर फारक धणुद्धर,
ल्ह्सडु अरु बलुयान संख कु जाणइ तांह पर।
छत्तीस लक्ष नराहिवइ विहिविनडिओं हो किम भयउ,
जइचंद न जाणउ जल्हुकइ गयउ कि मूउ कि धरि गयउ॥
पतनागतं वर्षद्वयेनोक्तम् । तेनैव पूर्वमुक्तम्-

(२७९) जइतचंदु चक्कवइ देव तुह दुसह पयाणउ, धरणि धसवि उद्धसइ पडइ रायह भंगाणओं । 婚

30

25

सेसु मणिहिं संकियउ मुक्कु हयखरि सिरि खंडिओं, तुइओ सो हरधवलु धूलि जसु चिय तणि मंडिओं। उच्छलीउ रेणु जसगिग गय सुकवि व(ज)ल्हु सचउं चवइ, वग्ग इंदु विंदु भुयजुअलि सहस नयण किण परि मिलइ॥

§ २०४) इतश्र वाराणस्यां प्रतोलीद्वारे चतसृषु वंशानां भारिका पश्च शतानि प्रापक्षिष्यन्ते (प्रक्षिप्यन्ते?) सन्ध्यायां 5 यदि चूर्णं न क्षिप्यते तदा कूपकाः पतन्ति । एक.....पत्तनोपरि कटकमादाय प्रस्थितः । तत्पुरं भंतवा भाण्डागारमपारं वस्तुजातं चादाय प्रत्यावृत्तः । मार्गे जलवृष्टिर्जाता । इन्धनानि न प्राप्यन्ते । सूपका...... विना रसवतीं कथं कुर्मः ? । मित्रणोक्तम् -भाण्डागारे किमप्यस्ति ? । चन्दनं पट्टदुक्लागरकाष्टानि च बहूनि सन्ति । तानि च प्रज्वालयत । एवं रसवर्ती कृत्वालोकयितुं (१) त्रजन् वैद्यः शीतकालं भणित्वा अश्वानां चिन्तितं ममैप मनोरथो दुष्टः । एवं जाते नृपो रुष्टः । तत्कालमुत्तारके समागत्य सर्वस्विटिप्पां कृत्वा नृपाय जनं प्राहिणोत् । तेन नृपं नत्वाइदं पत्रकमर्पितम् । वीटकं च वनवासार्थे याचितमस्ति । पत्रकमप्रैपीत् ? । देव ! मम मनसा नीचाभिलाषस्चकेन कथितम् । राज्ञा मानं दत्तम् ।

§ २०५) अथैकदा सुहागदेव्या नृपो व्याहृतः-देव! राज्यं कस्य दास्यथ ? । नृपेणोक्तम्-कर्पूरदेव्यात्मजस्य । 15. मम पुत्रस्य कथं न ? । त्वं सङ्ग्रहणी, अतस्ते पुत्रोऽयोग्यः । सा त्वर्द्धराज्यस्वामिनी । धनेन परिपूर्णा । तया तदैव मनिस विधाय गर्जनके खपुरुषान् प्रहित्य सुरत्राणः सहाबदीन आनीतः। योऽन्तरा पृथ्वीराजं विगृह्य योगिनीपुरे स्थितः । तया कथापितम्-मया आहूतः समागच्छेथाः ।

इतः पृथ्वीराजे दिवं गतौ श्रीजैत्रचन्द्रेण वर्द्घापनकान्यारब्धानि । गृहे गृहे घृतेनोदम्बरक्षालनमारब्धम् । तूर्यरवः प्रववृते । मन्त्री राजकुले न याति । केनाप्युक्तम्-देव ! पृथ्वीराजमरणं मन्त्रिणो विचारे नायातम् । 20 एवं चतुर्थदिने मत्री राजकुलं प्राप्तः । राज्ञोक्तम्-मित्रन् ! चिराद् दृष्टोऽसि । देव ! राजकार्यव्यग्रतया नायातं मया। देव! केयं खडखडा?। राज्ञोक्तम्-किं न वेत्सि पृथ्वीराजमरणम्?। एवं विधे वैरिणि मृते वर्द्धापनकानि किं न विधीयन्ते । मित्रणोक्तम्-तिसिन् हते विषादं कर्तुं युज्यते हर्षो वा ? । राज्ञोक्तम्-कथम् ? । देव ! प्रतोली भवति, तस्यामयोमयानि कपाटानि, अर्गला च अयोमया। यदा सा भज्यते, कपाटौ च पृथग्भवतः, तदा दुर्गस्य किं स्यात् ?। तथा देवृ! स पृथ्वीराजस्तव अर्गलासम आसीत्। तस्मिन् विनष्टे गृहस्त्रत्रं कर्त्तुं 25 युक्तं वा वर्द्धापनकम् ?। तिष्ठतु वर्द्धापनकम् । देव ! यदद्य पृथ्वीराजस्य तत्कल्ये आत्मनो ज्ञेयम् । मित्रणा मेलापकः प्रारब्धः। तया सुरत्राणस्य कथापितम्-यद्त्रैव स्थेयं परत्र न गन्तव्यम्। देव्या नृपो विज्ञप्तः-देव! मेलापकः किं कुरुते ? । तुरुष्कः प्रत्यासन्नखस्वभूमौ विद्यते तव नामापि न गृह्णाति । कोश्रव्ययं मन्त्री वृथैव कुरुते । .राज्ञा मन्त्री उक्तः-सर्वः कोऽपि विसीदति मेलापकं विसर्जय । मन्त्रिणोक्तम्-अस्तु । अनेन कार्यमस्ति । पुनरेकदा तया नृपो व्याहृतः । मित्रणोक्तम्-देव ! वर्षद्वयं अहं व्ययं करिष्ये । नृपेणोक्तम्-सोऽपि 30 मदीयम् । मित्रणा सामन्तान् प्रेष्य नृपो व्याहृतः-देव! वीटकस्य प्रसादं कुरु यथा तपोवने यामि । नृपेण देव्या वचसा विसृष्टः। वर्षद्वयाद्नु तया सुरत्राणः समाकारितः। स भारं विम्रुच्य जरीदकेन धावितः(१)। नृपस्य कटकेन सह युद्धे जाते सुरत्राणो भग्नः प्रणष्टः । इतः सुरत्राणपत्या पति चिन्तातुरं विलोक्य उक्तम्-देवासे श्यामता कथम् १ । सुरत्राणेनोक्तम्-युवत्या वार्त्तया समागताः परं पश्चाद्गमनं दुर्घटम् । देव ! मम खमं जातं यत् अह-पु॰ प्र॰ स॰ 12

म्मद्गुत्रमहमदं यदि सेनान्यं करोषि तदा ते जयः स्वात् । तदा ते आकारिताः । तेषां पश्चशती मिलिता । देव्योक्तम्—स वामनेत्रे काणोऽस्ति । स आकारितः दलपतिश्च कृतः । इतः शेषमपि कटकमानीतम् । इतः सहाग-देव्योक्तम्—देव ! राज्यं कस्य १ । कर्प्रदेव्यास्तनयस्य । यदि मत्सनोईदाति भवान् तदाऽद्यापि परचकं चलि । राज्ञोक्तम्—त्वयाऽऽनीतम् १ । तया प्रोक्तम्—अन्येन केन १ । तदा स्वीचरितं नीतिं च स्मृत्वा—ज्येष्ठपुत्रमभिष्व्य, वितामदृष्ट्वयमुखाऽऽसीरित्युक्तवा दृष्ट्वा (१ ज्येष्ठा)याः सुतं राज्ये निवेश्य, पितमारिकायास्तस्याः सुतं वृद्धि (०द्धं १) सहादाय नृपो युद्धाय निस्ससार । महित संयुगे जायमाने नृपेणोक्तम्—रे गिलितकंसस्य ६४ जोटकानि निःश्वानानां किं स्फुटितानि १ । [कथं]न श्रृयन्ते । देव ! वाद्यमानानि सन्ति परं शृङ्किणीगुणैरुपलप्सा- (१ रुद्धा)नि । नृपस्तत् श्रुत्वा उदरे शिक्षकां श्विष्टा पुत्रं चाग्ने करिण्यिधरोप्य यम्रुनायां करिणमक्षेप्सीत् । स पश्चत्वमाप । ज्येष्ठपुत्रोऽपि निःसृत्य युद्धे विनष्टः । संवत् १२४८ वर्षे चैत्र श्चिद १० दिने वाराणसीमा- विदाय सुरत्राणः प्रवेशं कर्त्तुं प्रवृत्तः । कर्पूरदेवी यमगृहं प्रविष्टा । द्वितीया सुहागदेवी लघुपुत्रमादाय प्रतोल्यां स्थिता। सुरत्राणेनोक्तम्—केयम् १ । देव ! यया त्वमिहानीतः । सुरत्राणेन वदने निष्टीवनं कृत्वा एकस्य धगडाय, या पत्युनी जाता सा मे भविष्यिति इति वदता, प्रदत्ता । पुत्रस्तु तुरुष्वः कृतः ।

॥ इति श्रीजैत्रचन्द्रनृपतेः प्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे जयचन्द्रनृपवृत्तम्।

15 ६२०६) अन्यदा कोपकालागिरुद्र १, अवंध्यकोपप्रसाद २, रायद्रह्वोलादि विरुद्दानि श्रीपरमर्दिनः श्रुत्वा श्रीजयचन्दोऽसहमानस्तदुपरि ससैन्यश्रचाल । तदेशभंगं कुर्वाणः कल्याणकटकनाम्नीं राजधानीमाजगाम स क्रमेण । परं कोऽपि विज्ञप्तिकां कर्तुं न शक्रोति यत्कटकमागतम् । परं ख्यं परमर्दिराजा परसैन्यं दृष्टा दुग्गां-तः....। ततो राजा सैन्येन रुद्धः । वर्षमेकं जातम् । पश्चात्परमिद्देना राज्ञा मल्लदेवमहामात्येन सह मंत्रं विधाय तत उमापतिधरं मंत्रिराजमाकार्य इत्युक्तम्-यत् मंत्रिविद्याधरसमीपं गत्वा तस्य किंचित्कथित्वा त्वं 20 सैन्यमुत्थापय । ततः स 'आदेशः प्रमाण'मित्युक्त्वा सायं प्रतीहारमुक्तः सन् मंत्रिविद्याधरसमीपमगमत् । उमा-पतिधरमंत्रिणा एकं सुभाषितं पत्रे विलिख्य मंत्रिराज्ञो विद्याधरस्याप्रे मुक्तम् । तदिदम्-

(२८०) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यातुरः पुरः । मृत्त्या यामित्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥
एतदर्थमवधार्य निशीथे एव पल्यंकिश्यितो राजा समुद्धत्य क्रोशपंचके मुक्तः । प्रातः राजा दुर्गां न
पश्यित । ततः पृष्टम् । मंत्रिणा विद्याधरेणोचे सर्वं स्वरूपम् । राजा कुद्धः । ततो विद्याधरः प्राह-राजन् ! कथं
25 ममोपिर कोपं कुरुषे । कणवृत्तिः कापि न गताऽस्ति । ततो राजाह-अतोऽहं कुद्धः, यतस्त्वया मम लीला
विनाशिता । अनेन सुभाषितेन मम राज्यमपि कथं नार्पितम् । एतद्भणने विरुदानि मुक्तानि । मानं राज्यं च सर्वं
मुक्तम् । इति भणित्वा जयचन्द्रः स्वस्थानमगमत् ।

. ४२. वराहमिहिरवृत्तम् (G.)

§ २०७) पुरा वराहमिहिरो विद्यार्थी ज्योतिःशास्त्रं पठन् उपाध्यायगोरक्षणां करोति। तत्र नित्यं लग्नं मण्डयित्वा 30 पठिताभ्यासं करोति । एकदा सिंहलग्नं मण्डितम् । प्रमादाद्विसर्जनं विस्मृतम् । गृहगतेन तेन भोजनसमये स्मृतम् । तत्र गतः । शिलोपरि निविष्टः सिंहो दृष्टः । निर्भयेन सता सिंहोदराधो लग्नं विसर्जितम् । सूर्यस्तुष्टः । वण्मासं विमानस्थितेन नक्षत्रग्रहतारागणं विलोक्य समागतेन 'वाराहीसंहिता'प्रमुखज्योतिःशास्त्राणि निर्ममे ।

अथ वराहिमिहिरस्य पुत्रो जातः । ततः पित्रा जातके चतुरशीतिवर्षाणि आयुर्वित्तंतम् । तदनु जिनदीक्षा-दीक्षितश्रीभद्रवाहुपार्थे वर्द्धापनिकाकृते मनुष्यः प्रहितः । तद्वचः श्रुत्वा स्रिरिमरुक्तम्—जातस्य सप्तदिनानि आयु-रित्त । सप्तदिनान्तेऽस्य मार्जारिकया मरणं भविष्यति । तेन सर्वत्र मार्जारिका रक्षिता । निर्णातवेलायां अर्ग-लिकामार्जारिकया मरणमजिने । ततो विषण्णेन तेन पुस्तकैः सह काष्ट्रभक्षणं प्रारब्धं यावता तावता तत्रागतेन श्रीभद्रवाहुना कथितम्—कथं काष्ट्रसाधनं कुरुषे ?। शास्त्राणि न वितथानि । परं या दोरिका भवताऽभिज्ञाने विहि-ताऽभृत सा कुन्जिकया महाकष्टेन प्राप्ता। तदा वेलान्यतिक्रमोऽजित । तया तु सप्तदिनान्येवायुस्ततो मानितम् ॥

४३. नागार्जुनप्रबन्धः (Br.)

§ २०८) ढंकपर्वते श्रीशत्रुक्षयशिखरैकदेशे राजपुत्ररणसिंहस्य भोपलानाम्नीं सुतां जातानुरागो वासुिकर्नागराजः सिषेवे । पुत्रो जातः । नागार्जन इति नाम कृतम् । स च वासुिकना सुतस्नेहात् सर्वासामौपधानां पत्राणि फलानि भोजितः । तत्त्रभावेन सर्वसिद्धिभरलङ्कृतः सिद्धपुरुष इति ख्यातः । पृथिवीं विचरन् पृथिवीस्थान-10 पत्तने सातवाहननृपस्य कलागुरुर्जातः । स च विद्याध्ययनार्थं पादिलप्तकपुरे पादिलप्ताचार्यं विद्यार्थां सेवते । स गुरुः पादतललेपबलेन तपोधनेषु विहरितुं गतेषु श्रीशत्रुक्षयादिषु देवान्नत्वा स्थानमायाति । आगतानां नागार्जनश्ररणक्षालनं कृत्वा स्वाद-वर्ण-गन्धादिभिः सप्तोत्तरं शतमौपधानाममीलयत् । तेनोपदेशं विनाऽपि जलेन चरणलेपे कृते कुर्कुटोत्पातमुत्पत्य पतितो त्रणजर्जरिताङ्गो गुरुभिः पृष्टः-किमेतत्?। पूज्यपाद-प्रसादः । कथम्?। यथास्थिते उक्ते गुरवस्तस्य कौशल्येन रिक्षताः । गुरुभिरुक्तम्-गुरून् विना कलाः कथं 15 फलदाः स्युः । प्रसादमाधातु गुरवः । भवतो मिथ्यात्ववासितस्य कलां न दिश्च । श्रावकत्वमङ्गीकुरु । तेन तथा कृते, तन्दुलजलेन लेपं कृत्वा गगने स्थैरं त्रजति स ।

§ २०९) एकदा खैरं विचरता गुरुमुखात् श्रुतम्—यत् रसिसिद्धं विना दानेच्छा न पूर्वते । तद् तु रसं परिकर्मयितुं प्रवृत्तः । ख़ेदन-मर्दन-जारण-मारणानि चके । परं खैरं न बन्नाति । गुरवः पृष्टासैरुक्तम्—दृष्ट-निर्दलनसमर्थश्रीपार्थनाथस्य दृष्टो साध्यमानः सर्वलक्षणोपलक्षितया महासत्या मृद्यमानो रसः स्थिरीभृय 20 कोटिवेधी भवति । तत् श्रुत्वा स श्रीपार्थनाथप्रतिमामन्वेष्टमारेमे । इत्थ नागार्ज्जनेन स्विता वासुिकध्यातः । प्रकटीभृतः । पृष्टं च—श्रीपार्थस्य काश्चिहिच्यां प्रतिमां कथय । तेनोक्तम्—पुरा द्वारावत्यां श्रीसमुद्रविजयेन श्रीनेमिनाथमुखात् श्रीपार्थप्रतिमा प्रासादे स्थापित्वा पूजिता । पूर्वाहानन्तरं समुद्रेण ष्ठाविता । प्रतिमा तथैव समुद्रमध्ये स्थिता । कालेन कान्तीपुरीवासिनो धनपतिनामकस्य सांयात्रिकस्य यानपात्रं देवतातिशयात् स्थलितम् । अत्र जिनविम्बं तिष्टतीति दिव्यवाचा निश्चित्य, तत्र नाविकान् निश्चित्य आमतन्तुभिः सप्तिर्भवद्धो-25 द्वता प्रतिमा । स्वपुरे नीत्वा प्रासादे स्थापिता । चिन्तातीतो लाभो जातः । स नित्यं नित्यं पूजां करोति । ततः सर्वातिशयसम्पन्नं तिद्धम्वं ज्ञात्वा नागार्जुनो रसिस्द्वे सेडीनदीतटेऽपहत्यानीतवान् । तस्य पुरतः श्रीशातवाहनस्य नृपस्य चन्द्रलेखां देवीं महासतीं व्यन्तरीसान्निध्यादानीय प्रतिनिशं रसमर्दनं कारयति । एवं तत्र भूपो भूयो गतागतेन देव्या बांधव इति प्रतिपनः । तया तेषामौष्यानां मर्दने कारणं पृष्टम्—कोटिवेधी रसोऽसी । अन्यदा देव्या खपुत्रयोरुक्तम्—यत्सेडीनदीतटे नागार्जुनस्य रसिसिद्धिभविष्यति । तौ रसलुव्धौ ३० नागार्जुनान्तिकमागतौ । कपटेन रसं जिष्ठश्च छन्नं अमन्तौ यसा रन्धनीगृहे नागार्जुनो भुनिक्त तामालपतः । त्वं नागार्जुनरसवर्ती लवणबहुलां कुर्याः । यदा तां क्षारां विक्त तदा कथनीयम् । प्रमासान्ते क्षारेत्युक्तया



[†] जैनानां मते देवानां मनुजेन सह सम्बन्धो न युज्यते-टिप्पनी ।

तयोक्तम् । ताभ्यां रससिद्धिनिश्चिता । तस्य वधोपायं पृच्छन्तौ अमतः । केनाप्युक्तम् – अस्य दर्भाङ्करान् मृत्युः । नागार्जनेन द्वौ कुतपौ भृतौ ढंकपर्वतस्य गुहायां श्विप्तौ । पृष्ठचराभ्यां ताभ्यां ज्ञातौः वलमानो दर्भाङ्करेण जन्ने मृतः । कुतपौ देवतया हतौ ।

(२८१) अजाते चित्रलिखिते मृते च मधुसूदन!। क्षत्रेषु त्रिषु विश्वासश्चतुर्थी नोपलभ्यते॥

देवतया कुपितया, द्वाविप पश्चात्तापपरी-आवास्यां किमकारि यः खटिकासिद्धः कलावान् स हतः; तं हत्वाऽऽवास्यां किं साधितमिति-चिन्तयन्तौ मारितौ ।

॥ इति नागार्जनप्रबन्धः ॥

88. श्रीपाद्लिप्तसूरिप्रबन्धः (B.)

(२८२) जयन्ति पाद्षिप्तस्य प्रभोश्चरणरेणवः। श्रियः संवनने वर्यचूर्णतः प्रणताङ्गिनाम्॥

§२१०) तत्र कोशला नाम नगरी । विजयब्रह्मा भूपः । तत्र प्रसिद्धः प्रफुष्ठः श्रेष्ठी । रूपेणाप्रतिमा [प्रतिमाणा नाम] भार्या परं वन्ध्या । अनेकौषधदेवपूजोपयाचितैरपि नापत्यमाप । अन्यदा विखिन्ना श्रीपार्श्वनाथचैत्ये
वैरोद्यादेवीं कर्पूरागुरुभिः सम्पूज्योपवासाष्टाहिकां चके । ततो देवी प्रकटीभूय पुत्रवरं ददी, इत्याख्यातवती च15 पुरा निमविद्याधरान्वये श्रीकालिकाचार्यसन्ताने विद्याधरगच्छे श्रुतसम्मुद्रपारगश्रीआचार्यनागहित्तगुरूणामनेकलिधवतां पुत्रेच्छया पादप्रक्षालनजलं पिव । ततः प्रातरुपाश्रये गत्वा तपोधनहत्तस्थितं पादोदकं पीतम् ।
प्रभुनिमस्म्नतः । धर्मलाभपूर्विमित्यादिदेश-यतो दशहस्तान्तरे पयःपानेन तव पुत्रो दशयोजनान्तरे यम्रनापरतीरेऽनेकप्रभावनिधानं वर्द्धिष्यते । तथान्ये तव पुत्रा नव भविष्यन्ति । तयाऽभाणि-प्रथमपुत्रो भवतां दत्तः ।
गुरुभिर्भणितम्-संघम्रख्यो भविता । जातः पुत्रः । प्रभूणामपितः । अष्टवार्षिको नीत्वा श्रुभलमे प्रतन्ति प्रतन्ताय । वर्षमध्ये श्रुतपारगो जातः । अन्येद्यरारनालं गुर्वादेशेनानीयेर्यापथिकीं
प्रतिकम्य गुर्वग्रे गाथां पठितवान्-

(२८३) अंबं तंबच्छीए अपुष्फिअं पुष्फदंतपंतीए। नवसालिकंजीयं नववहूइ कुडुएण में दिन्नं॥

इति श्रुत्वा गुरुभिः प्राकृतशब्देन पिल्नो इति-शृङ्गाराग्निना प्रदीप्त इत्युक्तः । ततोऽसौ दशमे वर्षे पदस्था25 पनायां मथुरागमने सङ्घोपकारं [कृ]त्वाऽऽकाशगमनिसद्धौ कितिचिद्दिनानि स्थित्वा पाटलीपुत्रपत्तने गतः । तत्र
मुरंडो राजा । तस्य केनापि गुप्तमुखदंडकार्पणे प्रभुणा श्रीपादलिप्तेन उष्णोदकेन मदनं स्फेटयित्वा बुद्धोन्मोचने
तथा गंगेटीसमा(?)गुरुणां समीपे मूलपर्यन्तपरिज्ञापनाय प्रेषणे नद्यां तारियत्वा मूले बुडिते बुद्धा मूलं परीक्षा ।
श्रीमदाचार्येस्तन्तुप्रथिततुम्बकोन्मोचने प्रहिते केनापि नोनमुक्तम् । ततो मुरंडनृपतिः समीपमागत्योन्मोचिते
प्रभूणां गौरवं चके । अन्यदा राज्ञः शिरोवेदनायां श्रीगुरुभिराकारितैः शिरोवेदनाविनाशार्थमात्मीयजानुस्त30 जन्या प्रनः पुनः स्पृष्टा-

(२८४) जह जह पएसिणिं जाणुअंमि पालित्तउ भमाडेइ। तह तह से सिरवयणा पणस्सए मुरंडरायस्स ॥



अन्ये मंत्ररूपामिमां गाथां जपन्ति, ततः शिरोवेदना याति । प्रभावतो राजा नित्यं भाक्तं करोति । एकदो-पाश्रयागतेन राज्ञा पृष्टम्-एते तपोधना भवतां भणितं दानमानादि विना कुर्वन्ति ? । इति पृष्टे गंगा कुतो वहति ? । तपोधनेन गंगायां गत्वा दण्डकं नारियत्वा-पूर्वाभिम्रुखी वहति-इति गुरोरग्रे कथितम् ।

(२८५) निवंपुच्छिएण भणिओ गुरुणा गंगा कओमुही वहइ। संपाइअन्वं सीसो जह तह सन्वत्थ कायन्वं॥

इत्थं नृपो गुरुभिः समं तिष्ठन् दिनानि गच्छन्ति न ज्ञातवान् । अन्यदा लाटदेशे ओंकाराख्यनगरे प्रभवो वालैः समं कीडन्ति । देशान्तराइन्दितुमायातश्रावकाणामुत्तरं कृत्वा सिंहासनोपवेशे पुनरायातश्रावकोपलक्षणे वालः कीडतीति सत्यभाषणे वालगुरीर्वचसा जहर्षः । अन्यदा गुरवो मार्गे गच्छत्स शकटेषु तपोधनेषु विहर्तुं गतेषु कीडनसमेतवादिनो विप्रतार्य पटीं प्राष्ट्रत्य सिंहासने सुप्ताः । वादिभिरागत्य पुनर्विभातकथकताम्रचुडस्रः (खरः) कृतः । प्रश्चमिर्विडालखरे कृते वादिनो मानहीना जाताः । पश्चात्तैरुक्तं मध्ये कः १ गुरुभिरुक्तम्-देवः । तेरु-10 कम्-को देवः १ । गुरुभिरुक्तम्-अहम् । तेरुक्तम्-को देवः १ । गुरुभिरुक्तम्-का दवः । गुरुभिरुक्तम्-विद्या । गुरुभिरुक्तम्-विद्या । तेरुक्तम्-कः श्वा । गुरुभिरुक्तम्-त्वम् । तेरुक्तम्-कस्त्वम् । गुरुभिरुक्तम्-देवः । इति पुनराष्ट्रत्या निर्जिताः । तथापि गाथामेकां पप्रच्छः-

(२८६) पालित्तय कहसु फुडं सयलं मिहमंडलं भमंतेणं। दिहो सुआँ व कत्थिव चंदणरससीअलो अग्गी॥

सूरयोऽविलम्बेनोत्तरं दुः-

(२८७) अयसाभिओगमणदूमिअस्स पुरिसस्स सुद्धहिअयस्स । होइ बहुं तस्स फुडं चंदणरससीअलोअग्गी ॥

इति वादिजयः कृतः।

\$२११) अन्यदा श्रीशचुअये तीर्थयात्रां कृत्वा कृष्णभूपरिक्षतं मानपे(से)टपुरं श्रीपादिलप्तगुरवः प्राप्ताः । तद्व शचुअये रैवतके संमेतेऽष्टापदे च तीर्थयात्रां चिक्तिर्पवः सुराष्ट्रादेशमायाताः । तत्र टंकानामपुरीं विहरन्तः समेतास्त्र नागार्जनो योगी भावी गुरुशिष्यः । तद्वृत्तं चेदम्—संप्रामराजपुत्रः, प्रिया सुत्रता, शेषाहि-20 समस्चितपुत्रस्य नागार्जननामकरणम् । स वर्षत्रयदेश्यः क्रीडन्—सिंहाभकं विदार्य तन्मांसं खादन् पितृवारितः । यत्थ्व कुरुले नस्त्री न भक्ष्यते । तदायातसिद्ध पुरुषेणाष्ट्यातम्—मा विपीद, तव पुत्रो रसिस्द्रो भावी । तद्व कलाविद्धिः कुर्वन् संगीतं रसिस्द्रो जातः । सृरिं तत्रायातं ज्ञात्वा पर्वतभूमौ स्थितः । खशिष्येण पादलेपेच्छुः तृणरत्वपात्रे सिद्धरसं टौकितवान् । गुरुणा स्थित्वा भित्तावास्माल्य शतस्यके कृते शिष्यं विच्छायमुख्यमावर्च्य भोजनं दापयित्वा व्यावर्तमानस्य काचपात्रे निरोधं कृत्वा प्राभृतं प्रेपितम् । उद्धाव्य विलोकिते क्षारगन्धेन निरोधं 25 ज्ञात्वा कुम्पको भगः । दैवयोगाद्विह्यंगोगे सा सम्त्रा मृत् सुवर्णं जाता । नागार्जनेन ज्ञातम् । तस्य प्रभोर्मलम् त्रादिसंगेन पाषाणाद्योऽपि सुवर्णोभवन्ति । अहमेतावन्ति दिनानि यावदनेकौषधोपक्रमं सुधा कृतवान् । अस्य प्रभावे का कथा । ततोऽसौ विनयनम्रो मदं त्यक्त्वा प्रभुपादसेवाचरणक्षालनादिकां देहग्रश्रुणां करोति । श्रीस्रयः साधुषु विहर्तुं गतेष्वाकाशयानेन पूर्वोक्तपंचतीर्थेषु यात्रां कृत्वा नित्यमायान्ति । ततो नागार्जनः पादलेपौपधानि जिज्ञासुश्वराद्वोदंशाद्वोतं गति स्थादेनौपधानि ज्ञात्वा पादलेपे गुरु विनापि सिद्धः । तेनो-क्तम्-भगवन् । गुरु विना कुतः सिद्धः । गुरुणोक्तम्-अहं तव बुद्धा तुष्टो विद्यां ददामि । यदि मे जिनशासन-भाक्तं गुरुदक्षिणां ददासि । यतः ।

(२८८) दीहरफणिंदनाले महिहरकेसरिदसामुहदलिले । ऑपिअइ कालभमरो जणमयरंदं पुहइपउमे ॥

ततो विश्वहितं जिनधर्ममाद्रियस्व । तेनोक्तम्-पूज्यादेशः प्रमाणम् । ततो गुरुणोक्तम्-आरनारुमिश्रतन्दुरु-नैकेनौपधानि पिष्ट्वा पादलेपे खगमनसिद्धिः । ततस्तेन कृतज्ञतया विमलाद्रिसमीपे महासमृद्धं श्रीवीरप्रतिमाधि-5 ष्टितं गुरुम् तियुतचेत्यान्वितं श्रीपादलिप्ताभिधं पुरं चक्रे । तत्र श्रीवीराग्रे श्रीगुरुभिः श्रीवीरस्तवश्वके । 'गाहाजु-अलेणे'त्यादि । अत्र सुवर्ण्णसिद्धिराकाशयानं च गुप्तमित्त । तथा गुरोः श्रीनेमिचरितं श्रुत्वा कौतुकाद्रैवतकाद्रे-रधः स्वर्णसिद्ध्याकाशयानवलेन सर्वं दशार्णमण्डपादि नागार्जनश्वके । अद्यापि लोकेस्तत्सर्वमप्यालोक्यते ।

§ २१२) अन्यदा प्रतिष्ठानपुरे श्रीशातवाहनराज्ये चत्वारः शास्त्रसंक्षेपकृतो महाकवयः समेताः । राज्ञः पुरस्तैः श्लोकस्यैकैकः पादः पठितः । तथाहि−

> (२८९) जीणें भोजनमात्रेयः, कपिलः प्राणिनां दया। बृहस्पतिरविश्वासः, पंचालः स्त्रीषु माईवम्॥

एवं तदुक्ते राज्ञा महादाने दत्ते भोगवती वाराङ्गना न स्तौति । केवलं पादलिप्तानेव स्तौति । तं मुक्त्वाऽऽकाश्वामी विद्यासिद्धो महाकविः सर्वगुणनिधिरन्यो न हि । इति ज्ञाते राज्ञः सन्धिविग्रहकः शंकरो नाम मत्सरी
असहमानोऽवादीत् । ततो मानखेटपुरात् कृष्णभूपतिं मुत्कलाप्य शातवाहनेन श्रीपादिलप्ता आनीताः । नगर15 द्वारे बृहस्पतिर्विद्वान् परीक्षार्थं रौप्यकचोलके घृतं विलीनं प्रहितवान् । प्रभुभिर्द्धारिणीविद्यया तन्मध्ये सूत्रप्रोतां
सूचीं प्रक्षिप्य प्रहिता । इति जये भूपः प्रवेशं महोत्सवेन कारितवान् । उपाश्रये स्थिताः । नित्यं भूपश्ररणोपासिं
कुरुते । तत्र नव्या 'तरङ्गमाला कथा' कृता, व्याख्याता च । पाश्चालकविः मत्सरेण न स्तौति । मद्रन्थाद्
उद्धृत्यानेन कृता । अन्यदा कपटमृत्युना प्रभूणां तद्गृहद्वारे शिविकागमने पाश्चालेन शोकाद् उक्तम्—

(२९०) आकरः सर्वशास्त्राणां रत्नानामिव सागरः। गुणैर्न परितुष्यामो यस्य मत्सरिणो वयम्॥

तथा-

(२९१) सीसं कहव न फुटं जमस्स पालित्तयं हरंतस्स । जस्स मुहनिज्झराओं तरंगलोला नई वृढा ॥

पाश्चाल! तव वचनाद् अहं मृतोऽपि जीवित इति गुरोरुत्थाने महीश्रुजा निष्कास्यमानो मित्रं भणित्वा 25 पाश्चालो गुरुभिर्दानमानाभ्यामावर्जितः। ततो गुरवो निर्वाणकलिकाम्, सामाचारीम्, प्रश्नप्रकाशज्योतिःशास्त्रं च कृत्वा आयुःक्षयं परिज्ञाय नागार्जनेन समं श्रीशत्रुद्धयं गताः। तत्र नाभेयं नत्वा द्वात्रिशहिनान्यनशनं कृत्वा देहं मुक्तवा द्वितीयकल्पे इन्द्रसामानिकः सुरो जातः।

।। इति श्रीपादलिप्तगुरूणां प्रवन्धः।।

(G.) सङ्ग्रहे पादलिप्तस्रिरवृत्तम् ।

30 ६२१३) एकदा श्रीपादिलप्तस्रयो यात्रायां गगने गच्छन्तः पुरुषाकारच्छायया दृष्टाः । ततो नागार्जुनेन वन्दन-हेतोः प्रार्थिताः । तरुक्तम्-यात्रां विधाय वलंतः समेष्यामः । तथाविहिते कूटबुद्धा जलेन स्वागतिमपाचरण-प्रक्षालनं कृतम् । तद्वर्णगंधरसास्वादतः सप्तोत्तरशतमौपधीनां परिज्ञातम् । वतस्ताः सर्वा अपि संमील्य चरण- हेपोऽकारि । तदनु स दर्नुरवदुत्पुत्य पतितः । एवं गुरुभिर्दृष्टः । गुरुभिरुक्तम् – किमेतत् ? । तेन निजकूटं प्रका-शितम् । गुरुभिः सुशिष्यं विज्ञाय तन्दुरुजरुन होपः कथितः । ततो गगनगामिनी विद्याऽजनि ।

एकदा वर्षासु पौषधशालाद्वारि जले क्रीडमानं शिष्यप्रायं पृष्टाः कैरिप वादिभिः-श्रीपालित्तय स्रित्रा वसतौ संति?-इति पृष्टाः स्रयः तानन्यमार्ग्ण वाहियत्वा स्वयं सिंहासने कपटिनद्रया सुप्ताः। तैः समागत्य कुर्कुटस्वरो विहितः। श्रीस्रिमिम्मार्जारस्वरोऽकारि। वचनेन मिक्षताः। ततः पृष्टमिति। तद्यथा-'पालित्तय कहसु फुडं०॥' ततो गुरुभिरुक्तम्-'अयसाभिओगसंतावियस्स०॥' एतया नमस्यया पराजिताः। नमो विधाय गताः।

४५. श्रीअभयदेवसूरिप्रबन्धः (B. Br.)

§ २१४) श्रीबुद्धिसागरद्धरिमिः श्रीजिनेश्वरद्धरिमिश्च वसतिनिवासे कृतेऽन्यदा श्रीजिनेश्वरद्धरयो विहारेण धारापुरीं गताः। तत्र श्रेष्ठी महीधरः, भार्या धनदेवी, तत्पुत्रोऽभयकुमारनामा। अन्यदा श्रेष्ठी गुरुवन्दनाय गतः। 10 संसारमसारमाकण्यं वैराग्यवानभयः पितरमापृच्छ्य दीक्षाग्रहणे ग्रहणासेवनारूपशिक्षाद्वययुतः समग्रसिद्धान्त-पारगामी महािकयो जातः। गुरुभिराचार्यपदस्थापने श्रीअभयदेवद्धरिविंहरन् पल्यपुरे श्रीवर्द्धमानद्धरिषु दिवं गतेष्वभयदेवद्धरीणां तत्र स्थितानां महादुर्भिक्षे सिद्धान्तासद्धृत्तयोऽपि त्रुटिताः। यदवस्थितं तदिष दुःखवोध-त्वात् खिलं जातम्। शासनदेवी रात्रौ प्रश्चं जगौ—यदङ्गद्वयं ग्रुकत्वा नवाङ्गानां दृत्तिं कुरु। द्धरिराह—श्रीसुधर्मन्त्वामिकृतसिद्धान्तिववरणे मन्दमितित्वादुत्द्धत्रप्ररूपणादनन्तसंसारित्वम्। परं त्वामनुखङ्खचां करिष्यामि। देव्यो-15 कम्—यत्र सन्देहस्तत्राहं सर्चव्या। यथा श्रीसीमन्धरस्वामिपार्थाद् सन्देहभङ्गं कुर्वे। प्रश्चिभर्प्रवपूर्णताविं यावदाचाम्लाभिग्रहोऽग्राहि। सम्पूर्णेषु ग्रन्थेषु शासनदेव्या पुस्तकलेखनाय रत्नखचिता स्वर्णमयी ऊतरी समवसरणे ग्रुक्ता। सर्वत्र दिश्वता कोपि मूल्यं न कुरुते। तथा राजमहाराजशी[भी]मेन द्रम्मलक्षत्रयदाने पुस्तकानि लेखियत्वा समग्रदेशाचार्याणां दत्तानि।

§ २१५) अथ श्रीअभयदेवसूरयो धवलकके आगताः । आचाम्लतपसा रात्रिजागरणेन च प्रभूणां रक्तविकारो 20 जातः । तदा जनो वदति—यदुत्स्त्रप्ररूपणया शासनदेव्या रुष्टया देहं विनाशितम् । गुरुभिः शोकेनाऽनश-नार्थं रात्रौ धरणेन्द्रः स्मृतः । तेन सर्परूपेण देहलिहने गुरुभिर्ज्ञातम्—कालेन दष्टः । धरणेन्द्रेण स्वमे आदिष्टम्— यन्मयाऽयं तव रोगो ग्रस्तः । एकं जिनोद्धारं कृत्वा प्रभावनां कुरु । श्रीकान्तीपुरीयधनेन वणिजा समुद्रान्तरा यानपात्रस्तम्भे व्यन्तरोपदेशेन धनेन मूर्त्तित्रयमाकृष्टम् । एका चारूपप्रामे । द्वितीया श्रीपत्तने अविलीतले श्रीनेमिनः । तृतीया स्तंभनग्रामे सेडिकानदीतटे तरुजाल्यन्तरा भूमिमध्ये न्यस्ताऽस्ति तां प्रकाशय । अत्र 25 महातीर्थं भविष्यति ।

(२९२) पुरा नागार्जुनो योगी रससिद्धो घियां निधिः। रसमस्तम्भयद्भृम्यन्तःस्थविम्बप्रभावतः॥

ततः सम्भनकारुयो ग्रामस्तेन न्यसः। तदेषाऽपि तव कीर्त्तिः स्यात्-शाश्वती पुण्यभूषणा। अन्यादृष्टा दृद्धा सुरी मार्गं कथयिष्यति । श्वेतश्वारूपः पुरः क्षेत्रपालोऽपि प्रातः संघस्य पुर आयातः। वाहनसहस्रेकयुताः ३० सरयो दृद्धा-श्वेतश्वानदार्शितमार्गाः सेडीतीरमायाताः। दृद्धा-श्वानौ तिरोहितौ। तत्र गोपालाः पृष्टाः –यत किर्माप पूज्यमस्तीह १। तेषामेकेनोक्तम् –अत्र जाल्यां किमप्यस्ति। यतोऽत्र ग्रामे महिणल्लपट्टिलकस्य गौर्नित्यं चतुर्भिस्तनैः श्वीरं श्वरति। गृहे न दृद्धते। तत्र तैः श्वीरं दृष्ट्वोपवित्रय श्रीमदाचार्यैः 'जयतिहुअण ' इत्यादिवृत्तं न

20

25

द्वात्रिंशता स्तवे कृते श्रीपार्श्व प्रकटीभूते, समग्र [सङ्घ] सिहतैर्वन्दिते, देहरोगो गतः । तत्र स्नात्रपूजाद्यं कृत्वा प्रासादार्थं द्रव्यं मीलियत्वा मिहपपुरात् श्रीमल्लवादिशिष्य आम्रेश्वराभिधो नियुक्तः । कर्मान्तरं कारयामास । शुभे मुहूतें श्रीअभयदेवसरयो विम्वं स्थापयामासः । धरणेन्द्रादेशात् स्तोत्रमध्याद्वृत्तद्वयं मन्त्रगर्भितं निक्ष्काशितम् । तस्मिन् प्रत्यक्षीभवने, त्रिंशद्वृत्ता स्तुतिर्जाता । सा पत्र्यमाना क्षुद्रोपद्रविवनाशिनी । ततः प्रभृत्यदस्तीर्थं मनोवाञ्छितपूरणं जातम् । रोगशोकादिदुःखदावघनाघनः । अद्यापि कल्याणके प्रथमकलशो धवलककीयस्य सङ्घस्य । विम्वासनस्य पश्चाद्धागेऽश्वरपंक्तिरतिह्यात् श्रूयते । पूर्वं कथेषा प्रथिता जने ।

(२९३) नमेस्तीर्थकृतस्तीर्थं वर्षे द्विकचतुष्टये । (२२२२) आषाढश्रावको गौडोऽकारयत् प्रतिमात्रयम् ॥

(२९४) श्रीमानभयदेवोऽपि शासनस्य प्रभावकः। पत्तने श्रीकर्णराज्ये धरणोपास्तिशोभितः॥

(२९५) विधाय योगनीरोधं धिकृतापरवासनः। परलोकमलंचके धर्मध्यानैकधीनिधिः॥

॥ श्रीअभयदेवस्रियवन्धः ॥

४६. वाग्भटवैद्यवृत्तम् (G.)

35 ६२१६) पुरा मालवके वाग्मटनामायुर्वेदवेदी प्रथमं क्रपथ्येन निजदेहे रोगानुत्पाद्यति, औषधेन पुनिन्वारयति । एवमेकदा जलोदरस्रत्पादितम्, तदौषधं विहितम् । क्रुडंवकस्येति उक्तं च-यन्मम चतुःप्रहरं यावत् जलं याचितमपि न देयम् । दैवयोगेन क्रुडंवस्य तद्वचो विस्मृतौ गतम् । प्रहरचतुष्टयानन्तरं जलोदरे क्षीणेऽपि जलं न पायितः । पिपासापीडितो मृतश्र । अतः-

(२९६) कचिदुष्णं कचिच्छीतं कचित् कथितशीतलम्। कचिद् भेषजसंयुक्तं कचिद्वारि न वारितम्॥

§२१७) राज्ञः श्रीभोजस्य सिंहद्वारि वाग्भटवैद्यपरीक्षार्थमिश्वनीकुमारौ पक्षिरूपं विधाय नित्यं नित्यं वारत्रयं 'कोऽभुक्' इति रवं विधाय गच्छतः । राज्ञा तदनवगत्य सर्वेऽपि विद्वांसः पृष्टाः । कोऽपि किमपि न कथयति । तदा वाग्भटेनोक्तम्-

(२९७) अञ्चाकभोजी घृतमत्ति योऽन्धसा ' पयोरसान् शीलति नातिपोऽम्भसाम्। असुक् विरुट् वातकृतां विदाहिनां मलप्रमुक् जीर्ण्णसुगल्पशीररुक्॥

ततोऽश्विनीकुमाराभ्यां निजरूपमाविर्भूय वाग्भटोऽतिप्रशंसितः।

§ २१८) अथ वृद्धवाग्भटजामात्रा लघुवाग्भटेन कृष्णच्छायाप्रवेशदर्शनेन राज्ञः क्षयरोगोत्पत्तिर्निवेदिता । 30 राज्ञोक्तम्-ततो मम वर्षत्रयमेवायुरस्ति । तेनोक्तम्-नैवं राजन्!

(२९८) यावदुच्छुसति प्राणी तावत् कुर्यात् प्रतिक्रियाम् । कदाचिद्दैवयोगेन दृष्टारिष्टोऽपि जीवति ॥

LEGI dira Gandhi Nation रसं विधाय देवं निरामयं विधासामि । रसे जाते रसं गृहीत्वा राजसद्सि समागतः । तत्रागतेन रसक्षपको भग्नः । राज्ञोक्तम्-आः क्रिमेतद्विहितं भवता ? । तेनोक्तम्-राजन् ! किमौषधेन कार्यम् ? । देवो निरामयो जातः । रसगन्धद्र्यनेन च कृष्णच्छायामिमात् क्षयरोगो निःसृत्य गर्तः ।

एकदा श्रीनृपस्य शिरिस शिरोत्तिरतीय जाता। ततो वाग्भटेनोक्तम्—राजन्! शिरिस दर्दुरी जाताऽस्ति। तत-स्तेन शस्त्रकर्मणा तालु उत्तारितम्। दर्दुरी दृश्यते परं न निःसरित। धर्तुं न शक्यते। तद्गु जलभृतस्थालं ⁵ धृतम्। तत्रापि नायाति। ततो जामात्रा लघुवाग्भटेन तद्वलोक्य निजरुधिरभृतस्थालं द्शितम्। तद्गन्धेन सा तत्रागता। राजा निरामयो जातः। ततः पृष्टेन लघुवाग्भटेनोक्तमिति—यदियं रक्तजा, रक्तं विना जले नायाति। ततः पृष्टेन लघुवाग्भटेनोक्तमिति—यदियं रक्तजा, रक्तं विना जले नायाति। ततः पृष्टेन लघुवाग्भटेनोक्तमिति—यदियं रक्तजा, रक्तं विना जले नायाति।

४७. रैवततीर्थप्रबन्धः (P.)

§२१९) अथ श्रीनेमे रैवतकाचलस्थस्योत्पत्तिर्यथा-भारते क्षेत्रेऽतीतचतुर्विशतिकायां तृतीयतीर्थङ्करसागर-10 समये उज्जयिन्यां नरवाहनो नृपः । अन्यदा तस्मिन् पुरे सागरजिनः समवसृतः । स नन्तुं ययौ । व्याख्याया-मनु केवलिपर्षदं वीक्ष्य पृष्टम्-प्रभोऽहं केवली कदा?। खामिनाऽऽदिष्टम्-आगामिचतुर्विशतिकायां श्रीनेमिजिन-तीर्थे निर्वाणं ज्ञानं च भविष्यति । इति ज्ञात्वा ततस्तस्मिन् भवे श्रीसागरतीर्थेश्वपार्थे दीक्षां गृहीत्वा, तपः कृत्वा, पश्चमदेवलोके दशसागरोपमायुरिन्द्रो जातः । तेन तत्र स्थितेनावधिज्ञानेन पूर्वभवं ज्ञात्वा वज्रमयीं मृत्तिकामानीय श्रीअरिष्टनेमिपूजानिमित्तं विम्बं कारितम् । खर्गे दशसागरोपमं यावत्पूजितम् । आत्मनश्रायुःप्रान्तमविधना 15 विज्ञाय श्रीनेमेदीक्षा-ज्ञान-निर्वाणकल्याणकत्रयस्थानं विलोक्य श्रीरैवतकगह्वरे खर्गानेमिप्रतिमां गृहीत्वा समेतः । तत्र गह्वरमध्ये चैत्ये गर्भगृहत्रयं कृत्वा रत्न-मणि-स्वर्ण-मयविम्बत्रयं कृत्वा तत्र [स्थापितं]...... काञ्चनवलानकं कृतम् । तत्र वज्रमृत्तिकामयविम्बं स्थापितम् । ततः स इन्द्रः स्वर्गाच्युत्वा वहु संसारं आन्त्वा श्रीनेमितीर्थसमये महापछिदेंशे क्षिति[पु]रनगरे.....शीनेमिसत्र समवसृतः । पुण्यसारो वन्दितुं समागतः । श्रीनेमिना उपदेशो दत्तः । श्रीनेमिपार्श्वे धर्मावाप्तिः । पृष्टाः खामिनः पूर्वभववृत्तान्तः 20 रैवतके गत्वाऽऽत्मकृतं नेमिविम्बं पूजयित्वा नमस्कृत्य खनगरे समागत्य, सुतं राज्ये निवेश्य, नेमिपार्श्वे दीक्षां गृहीत्वा, तपसा कर्मक्षयं कृत्वा र्जितम् । मोक्षं गतः । श्रीनेमे रैवतकाचले कल्याणत्रिकं सम-जिन । पुण्यवद्भिस्तत्र लेप्यमयं विम्बं चैत्यं च कारितम् । लोके च पूज्यमानं जातं......कसीरदेशात् कल्प-प्रमाणेन रैवतकगिरौ श्रीनेमिं नमस्कर्तुं समागतः। तत्र विम्बं स्नात्रजलेन गलितं दृष्ट्वा मासद्वयक्षपणं कृतं.....खर्णमयं विम्बं समानीय खापितम् । यतः-

> (२९९) नववाससएहिं नवुत्तरेहिं रयणेण रेवयगिरिम्मि । संठविअं मणिबिंबं कंचणभवणाओ नेऊण ॥

तथा वामनावतारे वामनेन रैवते श्रीनेम्यग्रे वित्वन्धनसामर्थ्यार्थं तपः कृतम्।

४८. देव्यम्बाप्रबन्धः (B. Br.)

§२२०) सुराष्ट्रामण्डले कोडीनारपुरे सोमभट्टो द्विजः । स श्रावकस्य देवशर्मद्विजस्य पुत्रीमम्बिकानाम्नीं 30 परिणीतवान् । पुत्रद्वयमित्त । इत एकदा तस्य गृहे किञ्चित्पर्वास्ति । तत्र पाके निष्पन्ने तपोधनौ विहर्तुमायातौ । श्रश्रु गृहे नास्ति । अम्बया महाभक्तया प्रतिलाभितौ । प्रातिवेश्मिकया श्वश्र्वग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽप् जिते । प्रातिवेश्मिकया श्वश्र्वग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽप् जिते । प्रातिवेश्मिकया श्वश्र्वग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽप् जिते ।

द्विजेष्वश्चकेषु श्र्द्राणामचं दत्तम् । एषा वध्ः न सामान्या । तयाऽऽराटिः कृता । सोमभट्टे समायम्ते उक्तम् । तेन तातादिना ताडियत्वा निष्कासिता । सा सुतद्वयमादाय, एकं कर्ट्यां कृत्वा परमङ्गल्यां, निःसृता । श्वश्वा पुत्रः पृष्ठे सानुतापया प्रहितः—त्वरितं गत्वा सैमानय । इतः शिश्चः सुतस्तिषतो नीरमयाचत । तया श्रीनेमिचरणौ स्मृत्वा मही पादेन दारिता । दीर्घिका प्रादुर्वभूव । सुतो नीरं पायितः । वृद्धेनोरक्तम्—अहं क्षुधितः । तत्राष्ट्रः प्रकटीवभूव । तत्र सहकारिक्षम् गृहीत्वा पुत्रायार्णयत् । इतः पाश्चात्ये प्रियमायान्तं दृष्टा भीता श्रीनेमिपादौ स्मृत्वा कूपे पुत्रैः सह झम्पां ददौ । सोऽपि स्नी-श्रूणघातिनं स्वं मन्यमानः पृष्ठौ झम्पां ददौ । अम्बा रैवतके श्रीनेमिचैत्येऽिष्ठात्री जाता । सोमस्तस्या वाहने सिंहो जातः ।

॥ इति देव्यम्बाप्रबन्धः ॥

४९. उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रबन्धः (P.)

§ २२१) सुराष्ट्रायां गोमण्डलन[ग]रे सप्तश्चतयोधैः सह सप्तपुत्रावृतस्त्रयोदशक्षतश्चकटयुतस्त्रयोदशकोटीस्वामी धारानामा श्रावकः सङ्घं कृत्वा तीर्थ[न]मस्यै गतः । विमलाद्रौ युगादिं नत्वा रैवततलहिङ्कायां स्थितः। तीर्थं दिग्वस्तेः पूर्वमिष्ठितमस्ति । तैरपि पश्चाशद्वर्षभोगात् पश्चाद्वौद्धान् वादे जित्वा आत्मायत्तं कृतम् । दिगम्बराणां द्वादशवर्षाणि जातानि । श्वेताम्बरीयधाराकेनोक्तं चतुरशीतिमण्डलाचार्याणां समीपे-यदहं देवं नन्तुं समेतः । तैरुक्तम्-दिगम्बरीभृयागच्छ । तेनाचिन्ति-प्राणान्तेऽपि खगुरुलोपं न कुर्वे । अन्यदुज्जयन्तनतिं 15 विना गृहे न यामि । चिन्तार्चो जातः । पुत्रैरूचे-किं कारणम्? । हे पुत्रास्तीर्थं नन्तुं न लम्यते । पुत्रैरुक्तम्-दिग्वस्नाधिष्ठिते तीर्थेऽपि किं कार्यम् ?। तातेन कथितम्-पूर्वमात्मीयमेव, इदानीमेभिरिधष्ठितम्। एवं तर्हि बला-दिप यास्यामः, चिन्ता न कार्या। तत्पुत्रैर्मण्डलाचार्याणां कथापितम् -यद्वयं बलादिप तीर्थं वन्दिष्यामहे। तैर्निजभक्तसंगारस ज्ञापितम् । तेन किञ्चित्सैन्यं प्रहितम् । तैः पुत्रैस्तस्य सैन्येन साकं युद्धं प्रारब्धम् । सप्त पुत्राः सप्तशतयोधसहिता मारिताः। सङ्घपतिर्धाराको न सुङ्के । तृतीयोपवासेऽम्बिकयाऽभाणि-वत्स ! कन्यकुळा-20 देशे गोपालपुरे आमो राजा। स पूर्वभवे भृण्डपर्वते तपस्वी तपस्ताःवा नृपोऽभृत्। तस्य पार्श्वे बप्पभिद्वसूरयः सन्ति । तैरेते जीयन्ते नान्येन । एतेषां मन्त्रा व्यन्तराश्च सबलाः । इति ज्ञात्वा तत्र गच्छ । धाराकः सङ्घं मुक्तवाऽष्टश्रावकैः सह तत्र गतः । श्रीसूरयस्तदा आमराजस्य सभायाश्राग्रे रसेन व्याख्यां कुर्वाणाः सन्ति । धारा-केन नत्वा सङ्घाज्ञा तेषां दत्ता । राज्ञा साक्षेपमैषिष्ट । आचार्येस्तत्पार्श्वतो वृत्तान्तः पृष्टः । तेन समूलं वृत्तान्त-मुक्तम् । राज्ञा स्वभावश्रवणरैवतप्रभावाकर्णनहर्षपूरवशादिभग्रहो गृहीतः-श्रीनेमिनतिं विना न भोक्ष्ये । तद्भा-25 र्यया कमलादेव्या कथितम्-सोमेश्वरनमस्करणं विना न भोक्ष्ये। ततः सूर्वेऽपि चलिताः। लक्ष १ पोठियां, उष्ट्रसहस्र २०, हस्ति ७००, घोटक लक्ष १, पदाति लक्ष ३, श्रावकसहस्र २०। राजा त्रिंशत्तमे दिने स्तम्भ-तीर्थे आगतः । रात्रावम्बिकयाऽभाणि-राजन ! श्रीनेमिस्तव सत्त्वेनात्रैष्यति । प्रभाते पारणं कार्यम् । यत्र च गृहली पुष्पप्रकरश्रोपरि त्वया तत्र खनितव्यं हस्तेन नेमिः प्रग(क)टीभविष्यति । प्रभाते तदेव जातम् । नेमिं नतः । राजपत्याऽभाणि-स्वामिन्! पारणं कियताम् । त्वां विना कथं करोमि । तत् क्षणात्सोमेश्वरलिङ्गः प्रादु-30 रभृत । तिहने नदीस्थाने सोमनाथेन न्छिरा (१) नीतो अभिज्ञानाय । तत्रेभ्यानां देवकुलद्वयकृते द्रव्यमर्पितम् । एतसिन्पुरे प्रासादद्वयं कारयितव्यम् । यथां वलमानाः पश्यामः । ततः प्रयाणकं जातम् । सङ्घसमीपे मानुषं प्रहितम् । स्रिमिर्मण्डलाचार्यपार्थे-यदि युध्यते तदा बहुजीवसंहारो भवतिः अतो वादे जय-पराजयौ ज्ञेयम् । सभ्याः कृताः । मासं यावद्वादो जातः । श्रीनृपेण धाराकेन च प्रभृणामग्रे विज्ञप्तम्-बहवो दिना जाताः । प्रभुणाऽ-भाणि-अद्य निर्वाहियप्यामि । एकत्रिंशे दिने प्रभुणा भणितं मण्डलाचार्याग्रे-यदद्य मण्डले कुमारी उपवेश्या । कुमारी यस तीर्थं दत्ते तस्य तीर्थं जातम् । तैर्भणितम्-एंतत्प्रमांणम् । प्रथमं दिग्वस्त्रेर्मण्डले मण्डिता कुमारी । पात्रं नापूरि तैः । ततः श्रीवप्पभद्वसूरयो वसतौ ध्याने उपविष्टाः । सङ्घेशो वासान् दत्त्वा प्रहितः । तेन कन्या-श्रीर्षे वासाः क्षिप्ताः । ततः पात्रेणाभाणि-

- (३००) इकोवि नमुकारो जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । संसारसागराओ तारेइ नरं व नारिं वा ॥
- (३०१) उज्जितसेलसिहरे दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स । तं धम्मचक्कविद्वं अरिट्टनेमिं नमंसामि ॥

इति गाथाद्वयं तस्या ग्रुखात्सर्वेरिष श्रुतम् । तिहनादात्मीयं तीर्थं सञ्जातम् । ॥ इति उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः ॥

५०. वज्रस्वामिकारितशत्रु अयोद्धारप्रवन्धः (P.)

10

(३०२) डूगरबालिण वलिणि वलि कित्तीसु अन्भडभंज। अत्तागमणु न जाणिउं तुह पनरह मुह पंच॥

20

यत्तेषु द्रव्यमेष्यित तत्तीर्थार्थे। अत्वा वाहणवस्तृत्युत्तार्य गुरूणां [पार्थे] गतः। प्रभो! योग्यता जाता। उद्धाराय यत्त्व्यम्। गुरुभिर्विमृष्टम्-आदौ विम्बं पोतके (?) कियते। तन्नागपुरप्रत्यासन्नमकडाणाग्रामे मम्माणी-नामखाणौ विम्बं निष्प से मूले द्रामलक्ष एकं व्ययति। तन्नाश्वानवीरिक्रयेण (?) क्रीत्वा विम्बन्मानीयताम्। जाविडस्तु द्रव्यमादाय तत्र गतः। विम्बं क्रीत्वा आनिनाय। कपर्देरनुभावाद्धिम्बं यावतीं भूमिं दिने च[टिति] तावतीं रात्रौ पश्चाद्याति। गुरुभिरुक्तम्-श्रेष्टिन्! उपवासं कृत्वा धौतवसनानि परिधायकस्य 25 चक्रस्य तले त्वया स्थेयम्, अपरस्य श्रेष्टिन्या। प्रीतौ दम्पती तथा स्थितौ। तयो.......िथतं स्रूपेण। प्रातरुत्थायोपरि नीतम्। इतः श्रीवजस्तामी श्रीमरुदेव्याधिष्टायकं ध्यानवलाद्भोगवलाच स्वायत्तं चके। क्रमेण शेषा अपि स्वायत्तीकृताः। ते तु कपर्दिनमन्वेषयन्ति। स तं यातं वा। एवं पण्मासप्रान्ते कपर्दी क्रीडायां गतः। श्रेपव्यन्तरैः स्थानं श्चन्यं मुक्तम्। इतो लेप्यविम्बं मण्डपे समानीतं शैलमयं मध्ये स्थापितम्।

§ २२३) तत्र न्तनकपर्दी स्थापितः । स पूर्व टीम्बाणाग्रामे-कोऽपि मधुमत्यां कथयति-कोलिक आसीत् । 30 तस्य द्वे भार्ये-एका हा[िडः] अपरा कुहािडः । स चीवरं प्रत्यहं वणयति । उभयतस्ताभ्यां प्रान्ताया.....करे मद्यसुम्भल्यौ वर्त्तेते । यदा यस्याः समीपे स याति सा तदा तं पाययति । इतश्च सुत्रताचार्यास्तनुगमनिकायां गताः । तैर्द्या विमृष्टम् । एष अविरतः । अस्यायुः कियत् । घटीद्वयं विमृष्टय आहू्य उक्तः-भोस्त्वया अनिच्छता

ग्रन्थिवन्धनं कार्यं तत्र गतेनोन्मोचनं कार्यम् । नमो अरिहंताणं इति कथनीयं ग्रुखे । इत्युद्त्वा स्रुत्यो गताः । इतः शकुनिकागृहीतसर्पग्रखाद्गरलं तन्मद्ये पपात । तेनाज्ञातेन पीतम् । स मृतः, अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तराणां मध्येऽवतीर्णः । इतः कलकलं कुर्वाणाः सर्वेऽपि राजभवनं ययुः । यदस्माकं कोलिको निरपराधो त्रतिभिर्मारितः । तेन अनार्येण स्रुत्यो धृत्वा वधाय आदिष्टाः । स कोलिकस्तु नमस्कारप्रभावान्मृत्वा व्यन्तरो जातः । प्राग्भवं निरूप्य गुरूणां परिभवं दृष्ट्वा ग्रामोपरि शिलां चकार । राजप्रमुखः सर्वो जन आर्त्यो जातः । इतो व्यन्तरे-णोक्तं मारियण्यामि । कथम्? । मम गुरून् शीघं ग्रश्चत यथा न मारयामि । एते ममोपकारिणः । एतेषां प्रसा-दान्मया देवत्वं प्राप्तम् । ततः सर्वेर्गुरवः क्षामिता नृपप्रभृतिभिः । इति च लोकसमक्षं जगौ—

(३०३) मजासी मंसरओ इक्षेण वि चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओं सुसाहुवाओं सुरी जाओ॥

10 व्यन्तरस्तु नमस्कृत्य गतः । स यक्षः कपर्दीनाम दत्त्वा श्रीवज्रस्वामिभिस्तीर्थे स्थापितः । इतः पूर्वकपर्दी आयातः । विम्वपराष्ट्रतं दृष्ट्वा आराडिं विधाय निस्मृतः । तदा पर्वतस्तु द्विधा जञ्जे । सदाफला वनस्पत्यिप तदा ज्वलिता । अतः कपर्दिना गुरव उक्ताः—प्रभो ! ममापराधं क्षान्त्वा इहैव मां स्थापयत । गुरुभिरुक्तम्—त्वमन्दिः । तव मिथ्यात्वं गच्छतो वारा न लगति । त्वयाऽत्र न कार्यम् । अहमन्यत्र गत उद्वेगकारी भविष्यामि । गुरुभिरुक्तम्—त्वं याहि । ततः स देवपत्तने गतः । तत्र तैव्यन्तरैरपरद्वारे क्षेपितः । तत्र कपर्दिवारिका । ज्ञाता । इतः प्रतिष्ठा जाता । तथा महाध्वजवेलायां श्रेष्टी सपत्नीक उपिर गत्वा निर्ततुं प्रवृत्तः । ततः पूर्वकप्तिवारिका दिनाऽपहत्य क्षीरोदार्णवे क्षिप्तः । लोके इति ख्यातिर्जाता—भौतिकेनापि पिण्डेन स्वर्गं गतः । एवं द्रम्मलक्ष १९ व्ययेन श्रीयुगादिदेवविम्बं प्रतिष्ठाप्य स्थापितम् ।

॥ इति श्रीशत्रुञ्जयोद्धारप्रबन्धः॥

५१. कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः (Br.)

20 § २२४) मधुमत्यां नगर्यां कपर्दिनामा कोलिकः । आडि-कुहाडिनाम्नयौ कलत्रे अभक्ष्यापेयसक्तः । तत्प्रस्तावे योगन्धराचार्यास्समाजग्रुः । अन्यदा तंगणिकायां गच्छद्भिः पूज्येर्भार्यावचनैस्ताड्यमानः कोलिको दृष्टः । आचार्येन् भणितम्—अहो कोलिक ! आगम्यतामस्पत्समीपे । तेन चिन्तितम्—िकमिप याचिष्यन्ति वस्नादिकम् । आचार्येण श्रुतेन विलोकितम्—िकयदायुरस्य । ततः पश्यन्ति घटिकाद्वयं यावत् । अहो कोलिक ! प्रत्याख्यानस्य प्रथमं पदं नमो अरिहंताणं इति त्वया भणनीयम् । मद्यं पिवताऽभक्ष्यं भक्षयता ग्रन्थिश्छोटनीयः । नमो अरिहं25 ताणमिति भणित्वा भक्षणपानानन्तरं तथेव ग्रन्थिवन्धनीय इति प्रतिश्रुते, स्वरिषु गतेषु शक्कुनिकागृहीतसर्पग्र-स्वाद्वरलं मांसर्वंडमध्ये पपात । तद्भक्षणादसौ मृतः । अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तरमध्ये प्रवलो व्यन्तरो जातः । अवधिना दृष्टम्—गंठिसहितपसः प्रभावादहं देवो जातः । इतश्च तद्भार्याभ्यां राजकुले गत्वेति कथितम्—महाराज! पास्विष्डिभिरावयोर्भर्त्तां मारितः । किमिप कथितं तत्र जानीमः । मिथ्यादृष्टीनां च वचनात् राज्ञा गुप्तौ कृताः स्रयः । तेन व्यन्तरेणात्मशरीरमधिष्ठाय राज्ञोऽग्रे भणितम्—यन्महाराज! क्षाम्यन्तां आचार्याः । अन्यथा अत्रहारि शिलां पातयिष्यामि । राज्ञा पादयोर्विलग्य स्रयः क्षामिताः । शिला संहता । लोकविदिता गाथा भणित—

(३०४) मंसासी मजरओ इक्केणं चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओ सुसाहुवाओ सुरो जाओ॥



इति प्रभूणामग्रे नाटकं रचितम् । पश्चाद् ईदृशं चोक्तम्-भगवन् ! मया किं कर्तव्यम् ? । प्रभुणोक्तम्-भो ! त्वया पाश्चात्यभवे बहूनि पातकानि कृतानि, तेषां शुद्धिहेतोः श्रीशत्रञ्जयमहातीर्थे सङ्घसाहाय्यकारी भव । तस्य कपर्दिनामा यक्षः सज्जातः । अग्रीयकपर्दिना सह तस्य वर्ष १२ विग्रहः सञ्जातः । कोऽपि न पराजीयते ।

इतश्र मधुमत्यां नगर्या प्राग्वाटज्ञातीयश्रेष्ठी जाविडः, भार्या सीतादेवी, प्रवहण १८ प्रियत्वा समुद्रमध्ये प्रवहणसहितचित्रवल्ली (?) मध्येऽपतत् । क्रमेण वर्ष १८ सञ्जातानि । एकयाऽपि रीत्या निस्सरीतुं न शक्यते । 5 बहूनां देवानां आराधना कृता । पुनः कस्थापि साहाय्यं न जातम् । तदा चिन्तितम्-एकदा व्याख्यानमध्ये श्वेताम्बराचार्येरिति भणितम् । यृतः-'कान्तार०' इत्यादि । नृतनकपर्दिना रात्रौ स्वमं प्रदत्तम्-यदहो जावड ! यस्मिन् पक्षेऽभ्रं दृश्यते तस्मिन्पक्षे प्रवहणानि चालनीयानि । अग्रे पुनः ऋयाणकं वापितं जावडेन । प्रवहणानि लघुत्वेन न सश्चरन्ति । कसिश्चिद्वीपे समागत्य छगणकर्करैर्भृत्वा पश्चमिदने समुद्रं निस्तीर्य मधुमत्यां नगर्यां समा-गतो जावडः । छगणानि सुवर्णीभूतानि, कर्करा रत्नानि सञ्जातानि । तदनन्तरं सङ्घं कृत्वा श्रीशत्रञ्जये श्रीऋप-10 भदेवनमस्करणाय गतो जावडः। यावत् स्नात्रं करोति तावद् अग्रीयलेप्यमयविम्वस्य नासिका गलिता। महाविषादो जातः । एतस्मिन् प्रस्तावे दशपूर्वधरेण श्रीवज्रखामिनाऽऽदिष्टो जावडः-अद्य रात्रौ कपर्दियक्षस्य भोगं कृत्वा कायोत्सर्गे स्थीयताम् । तत्करणानन्तरं रात्रौ कपर्दिना भणितम्-यदहो जावड! मम्माणाकरे मम्माणनगरे बाह्ये पूर्वदिशि या राइणिर्विद्यते तस्या अधः फलहिका मम्माणापापाणमयं विद्यते, तां कार-यित्वा इहानय । तस्या घटापने मूल्ये चानयने लक्ष ९ व्यये जाताः । पर्वतोपरि यावनमात्रं दिनेऽध्यारोहयते 15 तावन्मात्रं रात्रौ वलति । श्रीवजस्वाम्यादेशात् रथकलचकस्याध एकत्र स्वयमन्यत्र श्रेष्टिनी स्थिता । तद्भाग्या-देवतासाहाय्याच न निवृत्तो रथकलः । उपरिगतं विम्बम् । वज्रस्वामिगणधरेण प्रतिष्ठितम् । अग्रेतनं विम्बम्रुत्था-प्यते नोत्तिष्ठति । पण्मासाविध भोगकरणेन श्रीवज्रस्वामिध्यानेन सर्वान् व्यन्तरान् आत्मायत्तीकृत्य पण्मासान्ते काप्याचे (!) क्रपर्दिनि क्रीडार्थं गते, नूतनकपर्दिवचनेनाद्यविम्बग्रुत्थाप्य नूतने स्थापिते, तद्धिष्ठायके नूतने कप-दिंनि कृते, आद्य आराटिं मुक्तवान् । तद्नुभावात्पर्वतो द्विधा जातः । ध्वजारोपणप्रसावे जावडो भार्यासिहतः 20 **प्रासादोपरि नृत्यन् आद्यकपर्दिनोत्पाट्य वैता**ट्यपर्वते उत्तरश्रेण्यां नीतः । एवं विम्बस्थापनम् ।

(३०५) श्रीविक्रमादिखनुपस्य कालादष्टोत्तरे वर्षशते व्यतीते । शत्रुश्चये शैलशिलामयस्य कारापिता जावडिना प्रतिष्ठा ॥

॥ इति श्रीकपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः ॥

५२. लाखणराउलप्रवन्धः (B. P.)

§२२५) शाकम्भरीपुर्यां चाहमांनो लक्ष्मणः। स वर्त्तनाय भार्यामादाय एकमन्त्यजं च सहायं कृत्वा देशान्तरं चिल्रातः। मार्गवशासङ्कुलपुरे सरःपरिसरे देवकुले दिनं विश्रान्तः। इतः सन्ध्यायां द्विजैरागत्योक्तम्—हे पान्थ! पुरस्य मध्ये समागच्छ। अत्र मेदानां प्रतिभयेन रात्रौ कोऽपि वहिनं तिष्ठति। लाखणेनोक्तम्—वयं पथिका मार्गस्थाः। प्रतोल्यः सूर्योदये उद्घाट्यन्ते। अतोऽत्रैव स्थासामः। द्विजैरुक्तम्—अप्रमत्तेः स्थेयम्। तेषु गतेषु लाखणः सह सहायेनं सञ्जीभूय स्थितः। इतो रात्रौ मेदधाटी प्रसृता। लाखणेन सह महायेन युद्धं कृतम्। जन २० पतिताः। ३० ताबुभाविष घातार्त्तौ पतितौ। प्रातर्द्विजैरेत्य पत्नी पृष्टा—कस्ते भर्ताः कः सखाः। तया दर्शिताबुत्पाय्य नीतौ। पालितौ। रुद्धघातेन तेन द्विजा सुत्कलापिताः। तैरुक्तम्—क यास्यसि १। तेनोक्तम्—यत्र निर्वाहो भविष्यति। वयमत्रैव करिष्यामस्त्वयाऽसाकं पुरे मेदोपद्रवो रक्ष्यः। स स्थितः। द्विजैस्तु ग्रासः कृतः। तेन जनाः ५ अन्ये

25

¹ B ससखायः। 2 B मेदानामुपद्वा रक्षणीयः।

स्थापिताः । प्रतोलीं दातुं न यच्छिति । मेदानां स्थानेषु गत्वा तेषु घाट्यां निर्गतेषु पाश्चात्ये उपद्रकं करोति । तैः कथापितम्—यद्वयं नङ्कलीमायां नैष्यामः । त्वया नो ग्रामेषु नागम्यम् । क्रमेण जनाः १२० स्थापिताः पार्श्वे । समीपग्रामेषु वला विहिताः । मेदानां कथापितम्—मम करदेषु ग्रामेषु नोपद्रवः कार्यः । एकदा घाटीमाद्राय मेदपाटे गतः । तत्र घाटी भग्ना । लाखणो घातजर्जरः कृतः पतितः । इतस्ते यावदुच्छृसितुं जनाः प्रवृत्तास्तावदसणि देव्या गोत्रजया शकुन्तिकारुषं कृत्वोपिर निपत्य रिक्षतः । रात्रौ उत्थाय मन्दं मन्दं खपुरं गतः । एकदा देव्या व्याहृतम्—त्वां महान्तं विधास्ये चिन्ता न कार्या । प्रातमीलवेशमुकेरको वातप्रेरितो मुत्कलः समेष्यति । त्वया कुण्ड्यः कुङ्कमजलैर्भृत्वा प्रतोल्युपर्युपविश्य स्थेयम् । अग्रे गच्छतां हयानां छटा देयाः । येषां ता लिग्व्यन्ति तेषां वर्णपरावर्त्ता भविष्यति । मध्ये प्रवेशं च विधास्यन्ति । प्रातस्त्रथैव कृतम् । बहवोऽश्वाः प्रविष्टाः पुरान्तः । तथा महान्तमेकमश्वं दृष्टा स्थानपालेन गले लिग्वित्ते । लाखणेनोक्तम्—मध्ये समेत्य पश्यते । तैरश्वसाधनं निरैक्षि द्रौ हयौ लव्यौ । तावादाय गताः । येषां छटा लगास्तेऽश्वाः शेषाः स्थिताः । एवमश्वसहस्रश्वरो जाताः । महदाधिपत्यं जातम् ।

\$ २२६) एकदा खर्गुँहोपर्युपविष्टेन काचिद्विप्रवधः कान्ती दृष्टा। पश्चाद्विजानाहूय प्रोक्तम्-अहं भवतां पुरं त्यक्षामि । तरुक्तम्-कथम् १, तवेह गतस्य किं विनष्टम् १। यदि मे भूमिमर्ण्यत बाह्ये गृहार्थे वासाय वा तदा १ विष्ठामि । द्विजैः पुरस्य बाह्ये वासाय भूरिपंता । तत्र धवलगृहमार्व्धम् । काष्ट्रदले निष्पद्यमाने, भित्तयः पृथुला जाताः । पृष्टास्तु हस्याः । सत्रकारैरिचिन्ति-किम्रुत्तरं करिष्यामः । वेश्या एका पृष्टा-वयं केनोपायेन निस्तरिष्यामः । तयोक्तम्-न भेतव्यम् । सा वर्द्वापनार्थं स्थालमादायाक्षत्रभृत्वा राजकुलं गता । पृष्टा राज्ञा-किमिद्म्यः । देव! लाखणगृहं वर्द्वितम् । कथम् १ । पश्यत, भित्तयः पृथुलाः पृष्टा न्यूनाः । स तदेव शकुनं मत्वा तां सत्कृत्य प्राहिणोत् । तत्र राजकुलद्वारे गोत्रदेवीप्रासादो महान् कारितः । तथाऽष्टादश जैनाः प्रासादा २० महान्तो निष्पनाः, प्राकारश्च । एवं क्रमेण नङ्कराज्यं जातम् ।

\$२२७) एकदा कस्यापि श्रेष्ठिनः पुत्री कुमारिका दृष्टा। सा पाणिग्रहार्थे याचिता। तया पिता व्याहृतः—मम श्रावकत्वं प्रयाति, पुत्राश्चामिषमक्षिणः स्युः। अतो यदिति मन्यते—यन्मे पुत्रा मातृशाले वर्द्धनीयाः। इति मानिते सा परिणीता। सुते जाते मातृशाले प्रेष्यते । तत्र सर्वे पुत्रास्तस्या विद्विताः । राउलेनोक्तम्—तव पुत्राणां किं ग्रासं दृदामि । भाण्डागारे सुश्च, तथा विणाजां च पङ्कि दृष्पय। राउलेन तथा कृतम् । विणाजिः सह विवाहादि25 सम्बन्धा जाताः । ते भाण्डागारिका जाताः। तस्य सुता आसल-राउलप्रभृतयः ३२ (द्वात्रिंशत्) जाताः।
ते वलापर्वतस्य तीरे पृथक् २ स्थापिता दुर्गेषु तदा। तस्यान्वये राउलकेह्ण-केतृनामा शास्ताद्वये राज्यद्वयं जातम्। नङ्कले सुवर्णिगरौ च। लाखणपूर्वजाः—वासुद्ववः नरदेव वीकम वहःभराज दुर्लभराजः चान्दण गोऊः अजयरा वीघरा सिंघरा। लाखण-बलिराज सोही माहिन्द अणहिल जीन्दराज आसराज आह्नण कीत् समरसीह उदयसीह चाचिगदेव सामतसीह काहृडदेव—इत्यादि।

।। इति लाखणराउलप्रबन्धः ॥

¹ B कुरुते। 2 B त्वसाकं। 3 B विश्वातः। 4 B जर्जरितः। 5 B असिणि। 6 B तुरगाणां। 7 B भवतु भवतु इत्युक्तं। 8 B वहारया समागतया। 9 B अवलोकयत। 10 B विलोकितं। 11 B एवं सहस्र १२ अक्षानां जाताः। 12 B वेश्मो । 13 B ब्राह्मणी। 14 B यातस्य। 15 B वासार्थे। 16 B सूत्रधारैः। 17 P 'गृहं' नास्ति। 18 B सुत्रसुत्पद्येत पितृगृहे प्रेषयित। 19 B ते तत्र वार्द्धिताः। 20 B ततो राउलेन पंक्तिर्शिता। 21 B वर्णिगृभिः सह पाणिप्रहः पुत्राणां कारितः। * एतद्नतर्गता पंक्तिः B प्रतौ न लभ्यते। 22 B वासदेव। 23 B नास्ति। 24 B गाउ।

५३. वित्रकूटोत्पत्तिप्रबंन्धः (P.)

§ २२८) कान्यकुन्जे काश्यां शम्भलीशो नृपो राज्यं करोति । इतः शिवपुरे कतिचिद्धामाधीशिश्रत्राङ्गदो नृपः । एकदा तस्र सभायां कोऽपि योगी समेतः। स नित्यमेति राजानं न वक्ति । पण्मासान्ते नृपेण सेवाकारणं पृष्टः स आह-देव! निर्जनं कुरु। तथा कृतम्। राजन्! मम गुरुणा विद्या दत्ताऽस्ति। तस्याः पूर्वसेवा जाता, उत्तरसेवा तिष्ठति । सा तु त्वां द्वात्रिंश छक्षणं विना न भवति । राज्ञा मानितम् । देव्यष्टमीदिनेऽसिहस्तेन त्वया कूटाद्रा-5 वागम्यम् । ओमित्युक्ते स गतः । देव्या पटान्तरितया तच्छुतम् । तया अमात्याग्रे उक्तम् । मत्रिणोक्तम्-यदा नृपो याति तदा मम कथ्यम् । नृपः सन्ध्यायां शिरोत्तिमिषेण तां विसुज्य, यदा चलितस्तदा देव्या मन्त्री ज्ञापितः । स पश्चाचचाल । नृपोऽत्राग्रे गतो योगिनमैक्षिष्ट । मन्त्र्यपि च्छन्नं स्थितः । योगी नृपमित्रकुण्डपार्श्व विमुच्य स्नानाय गतः । मन्त्री प्रकटीभूय नृपमाह-देव! अयं कपटी । त्वां हत्वा खर्णपुरुषं कर्ता । अतो गम्यते । नृपः प्राह-वाग् मे मा यातु । मन्त्री आह-यदाऽसौ कथयति फेरकान् देहि तदा त्वया कथ्यम्-अहं न वेजि, 10 भवानग्रे भवतु । इत्युक्त्वा मन्त्री वृक्षान्तरितोऽभृतु । योगी समेतः । तेन ध्यानमारब्धम् । अग्निकुण्डमुदीपितम् । नुपं प्राह-फेरकान् देहि। त्वमपि मम दर्शय नाहं वेबि। स उत्थाय तथा कर्त्तुं लग्नः। उभावपि त्वरितं धावतः। योगी वैश्वानराभिमुखं नृपमप्रेरयत् । तावन्मित्रणा राज्ञा च सोऽन्तः क्षेपितः । स खर्णनरोऽभृत् । उभावपि तं लात्वा गृहमागतौ । तत्प्रभावाद्वित्तं जातम् । स पश्चात् पुरस्थानमवलोकयन् पर्वतमधिरूढः । तत्रे यावान् दुर्गो दिने निष्पद्यते तावानिशायां पतित । पूजया तत्रत्यो व्यन्तरस्तुष्टः । तेनोक्तम्-अहं पुरस्य भारं सोढुं न क्षमः । 15 अतः स्थानान्तरे कुरु । तत्र जलाद्यं पूरियप्यामि । पश्चाहुर्गः पर्वतोपरि अन्यत्र प्रारब्धः । चित्रकूटेति नाम , कृतम् । वासे जायमाने उपरि लोका न मान्ति । पश्चात्रृपेणोक्तम्-कोटीध्वजा मध्ये वसन्तु, लक्षेश्वरा बहिः । एवं कोटीध्वजानां गृहसहस्रम् । एवं पुरे निष्पन्ने काशीश्वरेण शम्भलीशेन दुर्गो वेष्टितः । स स्वर्णपुरुषं याचते । विग्रहे वर्ष १२ जाते राज्ञा घासं शिरसि दत्त्वा खनराः प्रहिताः, मध्यतनं खरूपमादातुम् । यावते थासयुता मन्त्रिगृहाधस्तात् सन्ति तावद्गवाक्षस्थितया मन्त्रिपुत्र्या पिता उक्तः-तात! पर्वताधस्तादेते वाणिज्यकारका 20 . एतान् दिनान् किं स्थापिताः?। शुल्कमादाय किं न प्रेष्यन्ते?। तेन सित्वोक्तम्-एतत्परचक्रं मत्वा, मया त्वं दुर्गस्यैव मध्ये दत्ता। तव पुत्रोऽपि जातः। परमेतन्न याति। तां वार्तां श्रुत्वा तैर्नृपात्रे उक्तम्। स निराशीभूय गन्तुं प्रवृत्तः। खदलं प्रेषयत् । स दुर्गमवलोकयन् यदा गन्तुं लग्नः, तावता गवाक्षस्थितया बाकरीवेश्यया सक्तमुक्तम्-

(३०६) गण्डूपदा किमधिरोहति मेरुग्रङ्गं किं वारवेरज(?)गिरौ निरुणिद्ध मार्गम्। शक्येषु वस्तुषु वुधाः अममारभन्ते दुर्गग्रहग्रहिलतां त्यज शम्भलीश!॥

नृपः प्राह-तथा कुरु यथा दुर्ग गृह्णामि । तया प्रोक्तम्-कटकं सन्नद्धं कुरु । अयमत्रत्यो मध्याहे प्रतोलीत्रय-मुद्धाट्य दानं दत्ते । यदाहं स्नात्वा केशविवरणं करोमि तदा ढौकनीयम् । सङ्केते मिलिते दुर्गो भेलितः । चित्राङ्ग-दस्तु स्वर्णपुरुषं कण्ठे बङ्का वाप्यन्तः पपात । नृपेण सा खिनतुमारब्धा । तत आदेशो जातः-विरम वा कटकं हिनिष्यामि । स नृपश्चित्राङ्गदपुत्रं राज्येऽधिरोप्य स्वपुरीं गतः । ततोऽभिपट्यते-'चित्रकूटिमदं भद्रे०' इति । ॥ इति चित्रकृटोत्पत्तिप्रवन्धः ॥

५४. श्रीहरिभद्रसूरिप्रबन्धः (B.)

§२२९) चित्रक्टे हरिभद्रो द्विजश्रतुर्दश्विद्यापारीणो महावादी । तस्य इयं प्रतिज्ञा यस्याहं भणितं न परि-च्छिनश्चि तस्य शिष्यो भवामि । तत्र श्रीबृहद्गच्छे श्रीजिनभद्रसूरयः कृतचतुर्मासकाः सन्ति । तेषां प्रवर्तनी याकिनी साध्व्यु[पा]श्रयेऽस्ति।एकदा प्रतिक्रमणानन्तरं काऽपि साध्वी आवश्यकं गुणयति । तया गाथा उक्ता-

20

25

(३०७) चिक्कदुगं २, हरिपणगं ५ं, पणगं चक्कीण ७, केसवो ६, चक्की ८। केसव ७, चक्की ९, केसव ८, दुचिक्क ११, केसी अ १२, चक्की अ १२॥

इयं गाथा हरिभद्रेण गुण्यमाना श्रुता । अजानँस्तत्र प्रविष्टः । त्रवर्त्तन्या उक्तम्-कः प्रविश्वत्यप्त ? । तेनो-क्तम्-अतिचिगचिगापितम् । प्रवर्त्तन्या उक्तम्-नृतनं लिप्तं चिगचिगायते । प्रसादं कृत्वा अस्या अर्थं कथयत । ग्रिद्धं श्रवणेच्छा तदा गुरूणां पार्थादवगन्तव्या । स गतः । प्रातर्गुरूणां पौषधागारे गतः । उक्तम्-इमां गाथां व्याख्यानयत । गुरुभिरुक्तम्-किं प्रतिज्ञायाः ? । तेनोक्तम्-सा तथैव । तिर्हं एपा सिद्धान्तगाथा पूर्वापरसम्बन्धं परीप्स्यते; स च दीक्षां विना तपश्चरणं च विना न भवति । तिर्हं मे दीक्षां दीयताम् । तदा ब्रह्मलोकः सम्भूय उक्तवान्-वयं दातुं न दबः । हरिभद्रेणोक्तम्-कथं न दत्थ ! ।

- (३०८) पक्षपातं परिलज्य मध्यस्थीभूयमेव च । विचार्य युक्तियुक्तं यद् ग्राह्यं त्याज्यमयुक्तिमत्॥
- (३०९) पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु । युक्तिमद्भचनं यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः ॥
- (३१०) दुर्योधनस्वकुलनाशकरो बभूव विष्णुईरस्त्रिपुरदाहकरः किलासीत्। क्रोंचो गुहोऽपि दृढशक्तिहरं चकार वीरस्तु केवलजगद्धितसर्वकारी॥
- 15 (३११) खार्थारम्भप्रणतिशारसां पक्षपातात् सुराणां द्यातमानं करजकुलिशैर्दानवेन्द्रं निहन्तुम्। सि...तिश्चिभुवनगुरुः सोऽपि नारायणोऽस्मिन् रागद्वेषप्र.....कस्य न स्यात्पशुत्वम्॥
 - (३१२) विष्णुः समुचतगदायुतरौद्रपाणिः दाम्भुर्लुलन्नरितरोऽस्थिकपालमाली । अलन्तदाान्तचरितातिदायस्तु वीरः कं पूजयाम उपद्यान्तमद्यान्तरूपम् ॥

(३१३) मातृमोदकवद् बाला ये गृह्णन्यविचारितम्। ते पश्चात्परितप्यन्ते सुवर्णग्राहको यथा॥

(३१४) नेत्रैर्निरीक्ष्य विषकण्टककीटसप्पीन् सम्यग् यथा व्रजति तान् परिहृत्य सर्वान् । कुज्ञानकुश्चतिकुमार्गकुदृष्टिदोषान् ज्ञात्वा विचारयत पर.....वादः ॥ भो! मया सम्यग् यत्तद्विमृष्टम् ।

(३१५) न बीतरागादपरोऽस्ति देवो न ब्रह्मचर्यादपरं [चिरत्रम्]। नाभीतिदानात्परमस्ति दानं चारित्रिणो नापरमस्ति पात्रम्॥

इति द्विजान् सम्बोध्य दीक्षां जगृहे । कृतयोगोद्वहनः सिद्धान्तसारमधीतश्र गुरुणा पदे स्थापितः । श्रीहित्ति । सिद्धान्तरहस्यभूतानि [प्रकरणानि] । चिन्ति तम्—क एतान् लेखियण्यति ? । विणक् दरिद्री एको दृष्टः । तस्य व्याहृतम्—मत्कृतान् ग्रन्थान् लेखय । गुर्वाज्ञा प्रमाणमित्युक्ते, गुरुभिरुपदिष्टम्—अद्य मण्डपिकायां ये मधूच्छिष्टमयाः स्तम्भाः समायान्ति तानादाय गृहे अभिष्य पश्चादागन्तव्यम् । तथाकृते स हिरण्यकम्बाभिर्धनवान् जातः । तेन रूप्यपत्रेषु स्वर्णाक्षरैस्तानि लेखित्तानि । गुरुभिश्चित्रकृटोपरि प्रासादे औषधानि सम्मील्य स्तम्भः कृतः । तत्र प्रक्षिप्य ग्रुक्तानि । स स्तम्भो न पानीयेन गलति, न च्छिद्यते, नाग्निना दह्यते ।

§ २३०) • एक[दा] स्ररीणां भागिनेयौ वृतं जगृहतुः । स्रेरिभिः प्रमाणान्यध्यापितौ । ताभ्यां बौद्धानां प्रमा-णानि दुरववीधानि श्रुतानि. । गुरव उक्ताः-भगवन् ! भवतामादेशेन वौद्धदेशे गत्वा तेषां प्रमाणान्यधीत्य जैनाभिप्रायेण कृत्वा यास्यावः । गुरुभिवर्प्ररितावपि निर्वन्धं कृत्वा चेलुतः । बौद्धदेशे गतौ । तत्राव्यक्तवेषौ विद्यामठे पठितुं प्रवृत्तौ । खस्थाने समेतौ ग्रन्थपरावर्तने प्रवृत्तौ । बौद्धाधिष्टात्र्या तारादेव्या वायुयोगात् पत्रमु-इाप्य लेखशालायां क्षिप्तम् । 'नमो जिनाय' इति दृष्टा छात्रैरुपाध्यायस्य दर्शितम् । तेनोक्तम्-कोऽपि जैनश्छन- 5 मधीते । ततोऽत्र वाटिकाद्वारि जिनप्रतिमां मण्डयध्वम् । सर्वेऽप्युपरि चरणं दत्त्वा त्रजतः । जैनस्तु न यास्यति, तदा ज्ञास्यते । सर्वेऽपि चरणं दत्त्वा निःशङ्कं गताः । उभाभ्यां विमृष्टम्-वयं ज्ञाता असाकमेतत्परीक्षार्थं कृतम् । ततो बुद्धेन कर्णात् खटिकामादाय बम्भसूत्रं कृतम् । उपरि चरणं दत्त्वा गतौ । निजाश्रयात् शास्त्राण्यादाय निर्गतौ । बौद्धाचार्येर्नृपं प्रत्युक्तम्-यत् देव ! शासनसर्वस्वमादाय द्वौ श्वेताम्बरौ नष्टौ । नृपस्तु अनुपदं जातः । इतो हंसेनोक्तम्-वत्स! अहं रहितस्त्वं कस्थापि शरणे प्रविशेथाः । हंसस्तु युद्धा मृतः । परमहंसः कसिन्नपि पुरे 10 प्रविश्य शरणे गतः । पृष्ठिलमं कटकमायातम् । बहिस्तनेन याचितः-भोः ! त्वमपि बौद्धभक्तः । तदम्रं धर्मविद्धे-षिणमर्पय । तेनोक्तम्-शरणागतं नार्पये । यादशस्तादशो वाऽस्तु । परमहंसेनोक्तम्-मम बौद्धाचार्येर्वादोऽस्तु । यद्यहं पराजीयते तदा मार्यः । बौद्धैर्जितो मारितः । इतस्तस्य रुधिरालिप्ता रजोहतिः कयाचिदेव्या शकुनिकारू-पया चित्रक्टे पौषधागारे परित्यक्ता । गुरुभिरुपलक्षिता । निषद्यादर्शनात् ज्ञातमरणाः शिष्याणां रौद्रध्यानं गताः । बौद्धानामुपरि प्रकुपिताः । इत उपाश्रयात्पाश्चात्ये तैलकटाहिर्मण्डिता । तत्र मन्त्रवलेन आकाशमार्गेण बौद्धा 15 एत्य कटाह्यां पतन्ति पतङ्गवत्। एवं सप्तशतानि। ततो गुरुभिर्ज्ञातवृत्तान्तैः श्रावक एकः शिक्षां दत्त्वा प्रहितः। स मध्ये प्रवेष्टुं न लभते । तेनोक्तम्-गुरूणां श्रीजिनभद्रस्रीणां पार्श्वादहमागतोऽसि । मध्ये मोचितः । तेनो-क्तम्-प्रभो ! अहमालोचनार्थी गुरूणां सकाशे गतः । मया प्रायिश्वतं याचितम् । गुरुभिरहं भवतां पार्श्वे प्रहितः । प्रसादं विधाय मम प्रायिश्वतं दीयताम् । प्रभो ! मया पश्चेन्द्रियजीवस्य विराधना कृता। साऽत्यर्थं द्यते । गुरुभि-रुक्तम्-सुबहु प्रायश्चित्तमेष्यति । तर्हि भवतां किं भविष्यति यदि मम इयत् । ततो ज्ञातम्-मम गुरुभिर्वृत्तमवग-20 तम् । तदा हि अवाञ्जुखीजाताः। आवकेणोक्तम्-गुरुभिः कथापितम्, कथं समरादित्यचरितं नावगतम्? । तेन एकसिन् भवे पिष्टमयः कुर्कुटो हतः, एकविंशतिवारान् पिष्टकुर्क्केटसङ्कान्तेन व्यन्तरेण वैरं कृतम् । तत् समृत्वा श्रीहरिभद्राचार्या वधान्निवृत्ताः । पुनः सङ्घं मील्य प्रायश्चित्तं कृतवन्तः । तद्तु 'समरादित्यचरितं' वैराग्यामृत-मयं चकुः । कालेनानशनं कृत्वा दिवं गताः । इति प्रतीतम् ।

(३१६) महत्तराया याकिन्या धर्मपुत्रेण धीमता । आचार्यहरिभद्रेणाष्ट्रकवृत्तिरियं कृता ॥ ।। इति श्रीहरिभद्रसरीणां प्रवन्थलेशः ॥

५५. सिद्धर्षिप्रवन्धः (B. Br.)

§ २२१) अथ सिद्धर्षः [प्रवन्ध] उच्यते-श्रीमालपुरे दत्त-श्रुमंकरौ श्रातरौ महद्धिंकौ श्रीमालज्ञातीयौ । इतश्र श्रुमंकरस्य सुतः सीधाकः । दत्तस्य सनुर्माघः । स सीधाको वाल्यतोऽमि द्युत्व्यसनी पित्रा कृष्णाक्षरितः । एकदा रममाणेन हारितम् । पितुर्गृहाचौर्यं विधाय दत्तम् । अन्यदा रममाणेनोक्तम्-द्रम्म ५०० यावत् कीड-३० यध्वम् । द्रम्मान् ददामि, शिरो वा ददामि । तैरुपवेशितो द्युतकारैः, तेन हारितम् । द्रम्मा याचिताः । रात्रौ श्रीवीरप्रासादे धरणकं दत्त्वा सुप्तेषु द्युतकारेषु सिद्धः प्रासादिभित्तेर्श्चम्पां ददौ । पौषधागारमध्ये पतितः । गुरु-भिव्यक्तिः—कस्त्वम् १ । तेन स्वनाम उक्तम् । ग्रहणयोग्यं किमस्ति १ । तेनोक्तम्—तथ्यम्, परं मम दीक्षां यच्छत् । पुरु प्रवासन्ति । तेनोक्तम्—तथ्यम्, परं मम दीक्षां यच्छत् ।

20

द्युतकाराः प्रातः शिरो ग्रहीष्यन्ति । अतो दींक्षा स्तोंककालमप्यस्तु । गुरुभिर्नक्षत्राण्यवलोक्य प्रशावकं मत्वा दीक्षितः । प्रातः श्राद्धासं दृष्टा गुरून्तुः—प्रभोऽद्य कल्ये परिवारः किं स्तोकोऽस्ति, यदस्य घटानुकारिमाणिक्यस्य दीक्षा दत्ता ? । भवतु यादशस्तादेशो वा । इत उपवेशने स्वाध्यायपुत्तिकां दृष्टा 'उपदेशमाला, मादिमध्यावसानां विलोक्य पाठं ददौ । गुरुभिश्चिन्तितमहोप्रज्ञाऽस्य । इतो द्युतकाराः समायाताः । भो ! बिहरेहि । किं गाताः विलोक्य पाठं ददौ । गुरुभिश्चिन्तितमहोप्रज्ञाऽस्य । इतो द्युतकाराः समायाताः । भो ! बिहरेहि । किं गाताः । प्रावकेरुक्तम्—किं देयम् ? । पश्चशती द्रम्माणाम् । वयं दास्यामः । कस्यापि कारणे दीनोऽसौ प्रच्यते । पुनरस्ताकं पार्श्वे समेष्यति । श्रावकेरुक्तम्—यास्यति ततो यातु । द्युतकारेरुक्तम्—तिर्हे अस्ताभिर्धक्तः । ते गताः । स सिद्धान्तमधीतवान् , प्रमाणग्रन्थाश्च । सिद्धेनोक्तम्—भगवन् ! बौद्धा महावादिनः श्र्यन्ते । तत्र गत्वा तान्निर्जित्य समेष्यामि । गुरुभिरुक्तम्—जैनानामेष धर्मो न यत् कस्यापि सम्मुखं गम्यते । य उपविष्टानां सम्भयेति सोऽभ्येतु । सनिर्वन्धात् वजन् स्वरिभिरुक्तः—यदि तत्र गतः परावर्त्यसे तैस्तदा वयं मुत्कलापनीयाः । विद्वं किमादिष्टम् ? । बौद्धानां देशे गतः । तेषां स्वरूपं दृष्टम् ।

(३१७) मृद्धी शय्या प्रातरूत्थाय पेया मध्ये भुक्तं पानकं चापराह्ने । द्राक्षाखण्डं शर्करां चार्धरात्रौ मोक्षश्चान्ते शाक्यसिंहेन दृष्टः ॥

एवंविधानाशीर्वादांश्च शुश्राव-

(३१८) ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं पदयानङ्गदारानुरञ्जनमिमं त्रातापि नो रक्षसि । मिथ्या कारुणिकोऽसि निर्धृणतरस्त्वत्तः कुतोऽन्यः पुमान् सेर्प्यं मारवधूभिरित्यभिहितो बुद्धो जिनः पातु वः ॥

(३१९) आत्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति सततं कर्मास्ति कर्त्ता विना गन्ता नास्ति शिवाय चास्ति गमनं बुद्धोऽस्ति बद्धो न च। इत्येवं गहनेऽपि यस्य न मुनेर्व्याहन्यते शासनं खद्योतैरिव भास्करस्य किरणा बुद्धो जिनः पातु वः॥

तथा 'शुष्कां शष्कुलीं भक्षयतो भगवतो बौद्धस पश्चज्ञानानि समुत्पन्नानि' इत्यादि श्रुत्वा बौद्धाचार्यं जगी—
यदहं जैनः, परं त्वहर्शनमादिरिष्यामि । तैर्हृष्टैर्नृपाय निवेदितः—यदसौ जैनः स्वदीक्षां ग्रहीष्यति । नृपेण गौरवं
कृतम् । दुक्कलानि परिधापितः, अलंकतश्चाभरणेः । प्रात्तल्यं बौद्धदीक्षायाः । रात्रौ तेन गुरूणां वचः स्मृतम् ।
25 प्रातः पणवन्धं तेषां निवेद्य चिलतः । श्रीमाले श्रीजिनसिंहस्ररीणां पार्श्वे प्राप्तः । आचार्य ! मृत्कलाप्यसेः मया
तेषां शासनं तत्त्वभूतमवगतम् । गुरुभिरुक्तम्—किश्चिदसानपि ज्ञापय । तेनोक्तम् । गुरुभिः प्रत्युत्तरे दत्ते आह—
भगवन् ! नैतद्वचोऽहं ज्ञापितः । अनेन वचसा तान् निर्जित्य समेष्यामि । गुरुभिः पूर्ववद्धं कृत्वा प्रेषितः । तत्र
तैः परावर्तितः । पुनर्गुरुसमीपे आयातः । तैस्तु बोधितः । एवं सप्तवेला एहिरे-याहिरांचके । अष्टमवेलायां
बौद्धेरुक्तिमिहैव तिष्ठ तत्र वा । तेनोक्तम्—चतुरो वादिनो मया सह प्रेषयत । तानादाय श्रीमाले पौषधागारे
30 आयातः । उक्तं द्वारखोन—आचार्य ! मुत्कलाप्यसे । तैरुक्तम्—मध्ये आगच्छ । मध्ये आयातः । नितं विनाप्युपविष्टः । गुरवो 'ललितविस्तरा'वृत्तेः पुस्तकमुपवेशने विमुच्य स्वयं तनुगमनिकायां चिलताः । तेन सोल्लुण्ठमिन्
हितम्—एभिर्वीद्वाचार्यराक्रान्तानां तनुगमनिका मुल्या एव । स्र्रयो गताः । स पुस्तिकां वाचितितुं प्रवृत्तः ।
'सिवमयल'इत्यालापवृत्तिमनुचिन्त्य बौद्धैः सह वादं कृत्वा गुरुष्वनागच्छत्सु तानिरुक्तरीचके । गुरुष्वापतेषु,
अभ्यत्थानं कृतम् । गुरवो विज्ञप्ताः—एकोऽहमामं आत्मपश्चमो भृत्वा समागमम् । उक्तं तेन—

(३२०) नमोऽस्तु हरिभद्राय तस्मै,श्रीप्रभसूरये। मद्धै निर्मिता येन वृत्तिर्ललितविस्तरा॥ तैः सह प्रववाज। पश्चादुपदेशमालावृत्तिः कृता। पश्चात्स्र्रिपदमनुपाल्य समाधिना दिवं गतः॥

"।। इति सिद्धर्षिप्रबन्धः ॥

५६. शान्तिस्तवप्रबन्धः (P.)

§ २३२) कोरण्टके वीरचैत्ये देवचन्द्रनामोपाध्यायः । तत्र श्रीसर्वदेवाचार्या वाराणस्याः सिद्धिक्षेत्रे गन्तं मनसः 5 समायाताः । तत्र कियदिनाः स्थिताः । उपाध्यायः पदेऽस्थापि । देवसूरिरिति नाम कृतम् । स्वयं यात्रायां गताः । तत्पट्टे प्रद्योतनसूरयः । ते च विहरन्तो नङ्कले गताः । तत्र श्रेष्टी जिनदत्तः, प्रिया धारिणी, सुतो मानदेवः स्रीणामुपाश्रये गतः । धर्मे श्रुत्वा प्रव्रज्यां जग्राह । सर्वसिद्धान्ततत्त्वज्ञो जातः । स्रीश्वरैः पदे स्थापितः । जया-विजयाख्यो देव्यो नमतः । अथ तक्षशिलायां पश्चशतीतीर्थपवित्रितायां महान् रोगो जातः । न कोऽपि कस्यापि वेश्मनि याति । पुरीं शून्यप्रायां वीक्ष्य सङ्घेनाचिन्ति-सर्वेऽप्यिष्ठायका नष्टाः । इति चिन्तिते शासन-10 देव्या उपदिष्टम्-सर्वे व्यन्तरास्तुरुष्कव्यन्तरेरुपद्वताः । वर्षत्रयानन्तरं तुरुष्कभङ्गो भावी । इति ज्ञात्वा यदुचितं तत्कार्यम् । पुना रोगशान्त्यै उपायोऽस्ति । नङ्कलनगरे श्रीमानदेवसूरीणां चरणोदकेन सिश्चत खमानुपाणिः यथा डामरं नश्यति । एवम्रुक्त्वा तिरोद्धे । तैः सर्वैः सम्भूय वीरदेवनामा श्रावको नड्हले प्रहितः । स तत्र गतः । . नैषेधकीं कृत्वा मध्ये गतः। सूरयो ध्यानपरा दृष्टाः। जया-विजयादेव्यौ नमस्कर्त्तुमागते, उपवरककोणे उपविष्टे। यदा स मध्ये उपवरकं गतस्तदा [दे]च्यौ दृष्ट्वा चमत्कृतः । अहो राजर्षयोऽमी । एतेषां पादोदकात्कथं शान्तिर्भ- 15 विष्यति । मयि दृष्टे ध्यानमारब्धम् । सूरिणा ध्यानं मुक्तम् । ततः सावज्ञं वन्दिताः । देव्यौ तचित्तं ज्ञात्वाऽदृष्ट-बन्धनैस्तं वबन्धृतुः । स प्रभुणा मोचितः । आगमनकारणे सूरिभिः पृष्टे, श्रावकवीरदेवेनोक्तम्-तक्षशिलासङ्घेनो-पद्रवरक्षार्थं प्रभुपादमूले प्रेषितः। मम वि[क]ल्पो जातः। जयादेव्या उक्तम्-यत्र भवादशाश्छिद्रान्वेषिणः श्रावकास्तत्र गुरवो नागमिष्यन्ति । सरिभिरुक्तम्-वयमत्रस्थाः शान्ति करिष्यामः । श्रीशान्तिनाथ-पार्श्वनाम-मन्त्रगर्भे श्री'शान्तिस्तव'मर्पयित्वा प्रहितः । स तस्यां गतः । तस्मिन् पठ्यमाने शान्तिर्जाता । वर्षत्रया[नन्तरं] पुरी 20 तुरुष्कैर्भग्ना । अद्यापि भूमिगृहे तस्यां पित्तलानि विम्बानि सन्ति । ततः प्रभृति एष स्तवः सञ्जातः ।

॥ इति शान्तिस्तवप्रवन्धः ॥

५७. न्याये यशोवम्मनृपप्रवन्धः (B. Br. P.)

§२३३) कल्याणकटके पुरे यशोवर्म्मनृपितस्तेन धवलगृहद्वारे न्यायघण्टा बद्धा। एकदा राज्याधिष्ठात्री देवी नृपत्रतपरीक्षार्थं धेनुरूपं कृत्वा वत्सस्य तत्कालजातस्य मार्गे कृत्वा स्थिता। नृपस्नुर्विहलामारूढस्तत्रायातः। वेगेन 25 विहलां वृत्सचरणयोरुपिर भूत्वा गतां। वत्सस्तु मृतः। धेनुः कोक्र्यते, अश्रृणि मुश्चिति। केनाप्युक्तम्—राज-द्वारे गत्वा न्यायं याचस्व। सा गता। तया शृङ्गाग्रेण घण्टा चालिता। नृपस्तु भोजनायोपिवष्टः। शब्दं श्रुत्वा वभाषे—रे! कोऽयं घण्टां चालयिति?। सेवकैर्विलोक्योक्तम्—देव! कोऽपि न, श्रुज्यताम्। नृपः प्राह—निर्णयं लब्ध्वा भोक्ष्ये। नृपः स्थालं त्यक्तवा प्रतोल्यां स्वयमायातः। कमप्यदृष्ट्वा धेनुं प्राह—केन पराभूतासि?। तं मम दर्शय। साउग्रे भूता, नृपः पृष्ठौ लग्नः। तया वत्सो दर्शितः। नृपेणोक्तम्—केनेयं वाहिनी वाहिता?। स पुरो भवतु। 30

¹ B वाहिन्यधिरूढः। 2 B वाहिनी। 3 B याता।

कोऽपि न वक्ति । नृप आह—तदा मोक्ष्ये यदां स प्रकटीभविष्यति । लङ्क्षने जाते प्रातः कुमारेणोक्तम्—देवाहम-पराधी । मम दण्डं कुरु । नृपेण वाहिनीमानाय्य सार्चाः पृष्टाः—कोऽस्य दण्डः ? । तैरुक्तम्—देव ! राज्यधर एक एव कुमारस्तस्य को दण्डः । नृपः प्राह—कस्य राज्यम् , कस्य सुतः । मम नमाय एव महान् । यद्भवति तहू । तैरुक्तम्—यो यस्य कुरुते, तस्य तिह्रधीयते । नृपेणोक्तम्—इह स्वपिहि । स सुप्तः । नृपेणोक्तम्—वाहिनीसुपरि वेगेन वाह- । यो कोऽपि न कुरुते । नृपस्तदाह—(В नृपः कामाश्राविण्यामिदमवादीत्—) मे पुत्रसहो न, विनश्यतु वा जीवतु । यावत्स्वयसुपविश्य वेगेन वाह्यति कुमारचरणयोरुपरि तावहेवी प्रकटीभूय पुष्पवृष्टिं चके । न गौर्नवस्तः । राजन् ! मया तव चित्तपरीक्षणं कृतम् । नृपस्य सुतो वस्त्रभो न्यायो वा । पुत्रादिप न्यायस्तव वस्त्रभः । चिरं राज्यं कुरुं ।

॥ एवं न्याये यशोवर्म्मप्रवन्धः॥

५८. अम्बुचीचनृपप्रबन्धः (Br. P.)

§ २३४) एकदा द्वारिकायां कृष्णो राज्यं करोति। पाण्डविष्तृच्यो विदुरः कृष्णेन प्रधानः कृतः। दिनं प्रति १६ गद्याणा प्रासे कृतास्तर्यापरं न किमिप। एकदा विदुरेणोक्तम्—त्वं मेऽधिकं न द्वासि, अतः कस्याप्यन्यस्य पार्श्वे यास्यामि। कृष्णः प्राह—तव प्राप्तिरियती, नाधिकास्तीति। विदुरेणोक्तम्—प्राप्तिरस्ति परं त्वया वारिता। ति राजान्तरं व्रज—इत्युक्तः। कृष्णेन स प्रहितः। कृष्णेन सर्वेषां भूपतीनां कथापितम्—यद्विदुरस्य १६ गद्याणाधिकं 15 न देयम्। स सर्वत्र भ्रान्त्वा समायातः। कृष्णाग्ने बभाषे—मम त्वं काल इव पृष्ठे लग्नः। तवाज्ञयाऽधिकं कोऽपि न यच्छित। कृष्णः प्राह—ति द्विजरूपं कुरु। अहमिप तव बदुको भविष्यामि। हस्तिकलपपुरेऽम्बुचीचो नृपतिर्महात्यागी। परं कर्णयोर्न शृणोति। तृषितस्त्वम्बु इति विक्ति, बुश्चिक्षत्रश्चीचु इति वदिते। तस्य पुरे आव्राभ्यां गम्यते। गतौ तत्र। विदुरो भव्यविप्रवेषं चकार, कृष्णस्तु बद्धकरूपम्। विदुरेण नृपस्याद्यीर्वत्ता। नृपेण प्रधानसम्भुक्त्रालोकितम्। प्रधानैरुक्तम्—कलशे करं श्वस्वा चीरिकाया आकर्षणं कुरु। विदुरेणाधः करं श्वस्वा कृष्टा, 20 विलोकिता। ग० १६ तत्र लिखिताः। बद्धकरूपेण कृष्णेनोपरितनी गृहीता। तत्र चीरिकायां कोटिलिखिता। प्रधानैरवादि—अकिश्चित्करोऽयम्। एष च भाग्यवान्। अस्ताकं दाने पोड्य निकृष्टाः। कोटिः सर्वोत्तमा। ततः प्रयावृत्तौ। कृष्णेनोक्तम्—

(३२१) न विद्या धनलाभाय जनजाङ्यसमृद्धये। आत्मानमम्बुचीचं च मां च दृष्ट्वा सुखी भृव॥

25 त्वं विदुरोऽहं कृष्णो नृपस्त्विकश्चित्करः। इति विमृश्य विदुरः खस्थो जातः।

॥ इति अम्बुचीचप्रवन्धः ॥





(P.) सङ्ग्रहगता अवशिष्टां विधि-परोपकारादि्विषयकप्रकीर्णप्रबन्धाः ।

५९. विधिविषये उदाहरणम् ।

§ २३५) पोतनपुरे नरवाहनो नृपः । सुमित्रो मत्री । अन्यदा अन्तःपुरे पुत्री जाता । नृपेणोत्सवे कारिते, षष्ट्रीदिनेऽमात्यस्य विसायो जातः । षष्टीदिने विधिरेत्य ललाटेऽक्षराणि क्षिपति । तदेतत्सत्यं असत्यं वा-इति सन्देहे, खर्यं खङ्गमाधाय छन्नं स्थितः। अर्द्धरात्रौ स्त्रीरायाता। सा कुङ्कममादायाक्षराणि क्षित्रा यान्ती मन्त्रिणा 5 प्रणामपूर्वं पृष्टा-देवि ! प्रसादं कृत्वा कथयं, कान्यक्षराणि क्षिप्तानि ? । तयोक्तम्-मा पृच्छ । निर्वन्धेन पृष्टा आह-इयं कोरिकसुतस्य पत्नी भविष्यति । इत्युक्तवा तिरोद्धे । प्रातर्मत्री विषण्णस्तं वृत्तं नृपाय आचरूयौ । नृपेणोक्तम्-तस्य सुतो जातमात्रोऽस्ति, स बालोऽपि व्यापाद्यः । इत्युक्ते मित्रणोक्तम्-देव! बालहत्यां कः करोति । तदैव व्यापाद्यिष्यामः । ऋमेण कन्या वर्द्धिता, सोऽपि वर्द्धितः । राजगृहे कर्माणि कुरुते । षोडशवार्षिके तसिन्नमात्येनोक्तम्-देव! स डिम्भः कथं व्यापादनीयः? । इतः कस्मैचिन्नपपुत्राय कन्या दत्ता । पण्मासान्ते 10 लग्नं मत्वा नृपेण सं भूर्जानर्पयित्वा (१) विधिनिमत्रणाय उक्तः-रे वत्स! विधि निमन्त्रयागच्छ । तेनोक्तम्-स्वामिन्! सा कास्ते । तन्न जाने-मित्रणोक्तम् । लङ्कायां स चलितः । अग्रे गच्छन् कसिँश्रित्पुरे श्रेष्टिहट्टे उपविष्टः । तेन पृष्टम्-क यास्यसि ? । तेन स्वभावोक्तौ गृहे नीत्वा श्रेष्ठिना भोजितः । उक्तम्-विध्यग्रे मम सन्देशो वाच्यः-. मदीयं भवनं कथं ज्वलति ?। तेनोक्तम्-कथयिष्ये। तं श्रुत्वाऽग्रे गच्छन् पुरमेकमुद्धसं दृष्टा मध्ये प्रविष्टः। शोभा-भिरामं पश्यन् राजाङ्गणे नृपसिंहासनाऽग्रे निविष्टः । सन्ध्यायां पुरशोभा जाता । नृपः समाययौ । तेन नम-15 स्कृतः । को असि त्वम् ? । खरूपे उक्ते स०-मम सन्देशो विध्यग्रे वाच्यः-यन्मे पुरं प्रातर्दिशो दिशं कथं याति ? । तच्छुत्वा प्रा[त]श्रिलेतः । समुद्रोपकण्ठे गतः । चिन्तातुरो मत्स्येनैकेन व्याहृतः-भो मनुष्य! कोऽसि त्वम् १ . स्वभावोक्तौ तत्रापि तेनाप्युक्तम्-यदि मे सन्देशं कथयसि तदा तत्र नयामि । तेनोक्तम्-यद । तेनोक्तम्-मदीये जठरे दाघः कथम्?। स पृष्टिमिधरोप्य उपकण्ठे मुक्तः। तेनोक्तम्-वलनं कथम्?। सप्तप्रहरान् प्रतीक्षयिप्ये। इति श्रुत्वा स गतः। इतः प्रतोलीराक्षसेषु धावितेषु तेनोक्तम्-विधेः खरूपं समर्प्य वलन्नेष्यामि । तैर्मध्ये ग्रुक्तः । स 20 रावणनृपालयसप्तमभूमौ कुचेलां कोद्रवदलनपरां विधि राक्षसनिवेदितां ननाम । खरूपेऽपिंते सा हृष्टा जाता । वत्स! त्वं गच्छ । लग्नसमये एष्यामि । सन्देशान् पृष्ट्वा समुद्रोपकण्ठे गतः । तत्र तं मत्स्यं दृष्ट्वा, तेन पृष्टः-मत्स-न्देशं कथय । पूर्वभवे त्वं विद्यापारगो ब्राह्मणः । विद्यादाने कृपणो जातः । मृत्वा मत्स्यो जातः । पूर्वभव-विद्यया तव देहो दह्यते । यदि विद्यां ददासि, तदा ते स्वास्थ्यं भविष्यति । सोऽपि जातिं स्मृत्य तस्यैव विद्या-मदात् । पुनः परतटे नीतः स विद्यावान् । पुनः शून्यपुरे सन्ध्यासमये नृपाय मिलितः । तेन शून्यताकारणे 25 पृष्टे, उक्तम्-अत्रैव पुरे तव पिता दुर्गरोधे सन्नद्य बहिनिःसृतः । धारातीर्थे मृतः । मस्तकं विना त्वया अपि संस्कारः कृतः। करोटिका कालदण्डचण्डालगृहेऽस्ति । तया डिम्भानि रव्वापानं कुर्वन्ति । पश्चात्तव तातो व्यन्तरो जातः। स यथा यथा तां करोटिकां ताप्यमानां पत्र्यति तथा तथा कुद्धः सन् पुरं ग्रून्यं विघत्ते। रात्रौ तया शीतया जातया खास्थ्यं करोति । नृपेण तामानीयात्रिसंस्कारः कृतः । तस्मिन् पुरे खास्थ्ये जाते, खपुत्रीं दुन्ता बहुपरिकरः प्रेपितः । पुनः श्रेष्टिपुरे गतः । श्रेष्टिनातिथ्ये कृते वार्ता पृष्टा । तेनोक्तम्-वित्तवानपि त्वं 30 क्रुपणस्तव गृहे देवगुरुसुहासिण्यादयो निःश्वस्य शापं यच्छन्ति-ज्वलत्वस्य गृहम्। तेन सत्यं मत्वा दानेश्वरो जातः । खपुत्रीं दत्त्वा प्रेषितः । इतो लग्नदिने स खपुरे गतः । जनैर्वरो मत्वा मध्ये नीतः । केनाप्यलक्षितेन

20

किञ्चिनोक्तम् । इस्तमेलकवेलायां पुरे पूर्ववरः समाययो । स केनाप्र्यसत्कृतो मध्ये समागतः । विवाहं मत्वा युद्धसञ्जो जातः । इतो विधिना समेत्य नृप उक्तः—राजन् ! मा विषीदः भो मन्त्रिन् ! त्वमपि मा विषीद । किं विस्तरिस त्वया पृष्टाऽहम् ! । मयोक्तं पूर्व महाक्यमन्यथा कथं भवति । एषाऽस्यैव भवतु । अन्यां परिणाप्य द्वितीयः प्रेषितः । इति विधिर्यद्विधत्ते तद्भवति, मनुष्यकृतं न भवति ।

६०. परोपकारविषये उदाहरणम् ।

(३२२) नीचाः शरीरसौख्यार्थमृद्धिव्यापाय मध्यमाः । कसौचिदद्धुतार्थाय यतन्ते पुनरुत्तमाः ॥

§ २३६) कश्चित्परोपकारी न्यायी पुमान् अन्यायनगरे गतः । तत्र राजाप्रभृति सर्वेऽप्यन्यायिनो वसन्ति । तेन स्वजीवनार्थं विकेतुं कोहलकानि समानीतानि । विकेतुं लगः । 'ईछ' सम्बन्धेन नवकोहलकानि गतानि । 10 चत्वारो विलोक्यन्ते । खेटके पतितः । स आत्मानं विकेतुं कामोऽपि न छटति । तेन पुरुषेण चिन्तितम्—कथं अथापि प्रतीकारं करोमि १ । इमझानभूम्यां गतः । तत्र मृतकानां दाघं दातुं न ददते । मृतकमहत्त्वानुमानेन द्रच्यं याचते । लोकेः पृष्टम्—कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । तस्य द्रच्यं ददाति । ततोऽनन्तरं दाघो भवति । तेन कियद्भिदिनेर्द्रम्माः सहस्रदशो मेलिताः । राज्ञः (०ज्ञा १) पुरोहितः पृष्टः । तद्भम्यां समागतः । द्रम्मानां सहस्रं याचते । पश्चशत्या निर्वाहः । राज्ञोऽग्रे लोकेन रावा कृता । राज्ञा शब्दितः । स मुक्तकेशः कौपीनवासाः विनेत्वस्पिशाच इव दृष्टः । पृष्टः—कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । कोऽपि राज्ञीशालको वर्त्तते कस्मिन्नगरे १ । तेनोक्तम्—'नव कोहलां ईछ तेर' एवं कुत्रापि वर्तते । तेन समस्ता द्रम्मा राज्ञः समर्पिताः । तस्य राज्ञा व्यापारो दृष्टः । नगरेऽन्यायो रिक्षतः । समस्तलोकानामुपकारकरो वभूव ।

६१. उद्यमविषये उदाहरणम्।

(३२३) उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः। पुरुषस्य चोपविष्टस्य देवता न च सिद्धिदाः॥

§ २३७) केनापि पुंसा देवी चामुण्डा आराधिता। परितोषं गता क०-याचख। तेन कथितम्-यचिन्तयामि तत्प्राप्तिः। तव भविष्यति-इति कृत्वा देवीभवनान्निःसृतः। चिन्तितम्-मम शरीरे सर्वाङ्गीणानि आभरणानि भवन्तु। जातानि। गृहस्योपिर व्रजन्मार्गे सार्थेन सह चौरैर्दृष्टः। सार्थो गृहीतः। स उपविश्य स्थितः। केऽपि नंष्ट्रा गताः, केऽपि योधिताः। स लकुटैः कुट्टियत्वा गृहीतः। आभरणानि गतानि। शरीरे दृमितो गाढं देवीं 25 भज्जनाय लोढीं गृहीत्वा गतः। देव्या कथितम्-कथं मां भज्जसे १। त्वया चौरात् कथं न रक्षितः १। यदि युद्धं कुरुत त्वं तदा स्कन्धाभ्यामवतरामि, यदि पलायनं कुरुत तदा पादाभ्यामवतरामि। उपविश्य स्थितस्तदाऽहं किं करोमि १। देव्या स भङ्गं कुर्विन्निषद्धः। ततः स्वगृहे गतः। यदि उद्यमः कियते तदा सिद्धिर्भवति।

६२ दानविषये उदाहरणम्।

(३२४) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा न वा खलु । खहस्तेनैव यद्त्तं तदत्तमुपतिष्ठति ॥ (३२५) सदास्त्रपति भोकारं यस्योदेशोव तीग्रवे।

(३२५) सद्यस्तृष्यति भोक्तारं यस्योद्देशेन दीयते। सत्यं वदामि कौन्तेय! यो ददाति स भुञ्जते॥

§ २३८) कयाचित्रोपितभर्त्क्या पत्यागमनकारणं विलोकयन्त्या दिना घनतरा गताः । मर्तुः पार्थात्पश्चा-देको जनसत्थाः समाचारदर्शनार्थं समायातः । सा अन्यासक्ता दृष्टा । तया चिन्तितम्—अहमनेन ज्ञाता । स पुनरि भर्चारं प्रति चलनाय लग्नः । तस्य चलतो द्वौ मोदकौ समिपंतौ सम्बलार्थम् । एको विषमिश्रितो द्वितीयो न । यथैष विषमिश्रितमोदकभक्षणेन विनश्य भर्तुरग्रे गृहस्वरूपं न कथयति । स चलितः । तस्येव ग्रामगोन्द्रके निर्विण्णो भर्चा तस्या उपविष्टो दृष्टः । श्रुधाऽऽकान्तः । तत्र द्वौ जनावुपविष्टौ । तेनैको मोदकसास्या भर्तृयोग्यं 10 दृष्तः । एकस्तेन भक्षितः । विषमिश्रितमोदकभक्षणेन लहितः । मूर्च्छां प्राप्तः । तावता दृण्डपाश्चिकेर्न्तः ससला । लोको मिलितः । तस्योपद्रोतुं लग्नः । मारणार्थं नीतो जनः । भार्यायाः ग्रुद्धिर्जाता । मोदकभक्षणेन दृरदेशादायातो मम भर्चा विनष्टः । स जनो मारणार्थं नीतोऽस्ति । तया चिन्तितम्—मम विरूपदानतस्तात्कालिकं फलं जातम् । अहमेनं जनं मुश्चापयामि । तया तत्र गत्वा कथितः—याद्दशं दानं दत्तम्, तस्य तात्कालिकं. फलं दृष्टं ताद्दशम् । जनो मुश्चापितः । लोकानामग्रे कथितम्—याद्दशं दीयते ताद्दशं प्रत्यक्षं दृश्यते; याद्दग् दृत्तं 15 ताद्दग् लब्धम् । तस्याः सत्यकथनेन विषं जित्वोत्तारितम् । स निरामयो जातः । तद्दनन्तरं सा तस्य विषये एकचित्ता गृहस्थधम्मं पालयति । याद्दश्चितेऽन्यस्य तादक् प्रत्यक्षं दृश्यते—इति भावः ।

.(३२६) अपलपित रहिस दत्तं प्रत्ययदत्तेन संशयं कुरुते। तस्य हि नश्यित सर्वं मूलतस्तान्निशम्यैताम्॥

६३. कर्णवाराविषये उदाहरणम्।

§ २३९) देवदत्तेन व्यवहारिणा प्रवहणगतेन एकस्यात्मीयवणिक्षुत्रस्य हस्ते चत्वार्यमूल्यकानि रत्नानि गृहे कलत्रयोग्यानि प्रहितानि । तेन विणक्षुत्रेण चतुर्प्रामपूं(क्र्)टजनानां लक्षां दत्त्वा साक्षिणः कृताः । यदा देवदत्तः समायाति तदा युष्माभिरिति कथनीयम्—वयं साक्षिणः कृत्वा, तव कलत्रयोग्यानि चत्वारि रत्नानि प्रदत्तानि । कियद्भिर्दिनैः प्रवहणे समायाते देवदत्तः कुशलेनागतः । कलत्रपार्श्वे पृष्टम्—मया तव योग्यानि चत्वारि रत्नानि प्रहितानि, आनय तानि, प्रविलोक्यन्ते; रत्नपरीक्षकाणां दर्श्यते । तया कथितम्—मम योग्यं केनचिन्न समर्पितानि । 25 विणक्षुत्रः पृष्टः । तेन कथितम्—मया चतुरो नगरमध्यस्थान् व्यवहारिणः साक्षिणः कृत्वा तव प्रियायोग्यानि समर्पितानि वयं साक्षीकृत्य निश्चयेनासिन्नर्थे न सन्देहः । तेन चिन्तित्म्—अहमनेन विणक्षुत्रेण साक्षिभिश्च [म्रपितः] कोऽपि नगरमध्ये न यो न्यायान्यायं विलोकयति । कर्णवारां सत्यां कुरुते । केनचिज्ञनेन कथितम्—कर्णवारी मृतः । पुनस्तस्य लघुपुत्रो विद्यते एकः । देवदत्त-स्तस्य गेहे गतः । पुत्रस्य मात्रा स आवर्जितः । तया कथितम्—किमर्थं समायातः ? । कर्णवारां प्रच्छनाय । 30 तया कथितम्—अरे वत्स ! तव पिता नगरमध्यस्यां समग्रां कर्णवारां क्विन् लोकानां मध्याद्वहुतरं द्रव्यं समानयत् । त्वं किमपि न कुरुपं । अन्यत्वां लघुं भिगत्वा कोऽपि न मन्यते । मातरहमपि तस्य पुत्रो भवामि । समग्रं निर्णयं करिष्ये । यतः—

20

(३२७) सिंहशिशुरपि निपतित मदकुलझङ्कारभूषिते करिणि। न पुनर्नखमुखविल्लि(लिखि)तभूतलकुहरस्थिते नकुले॥

तस्य समीपे देवदत्त उपविष्टः। कर्णवारा कथिता। व्यवहारिणश्रत्वारोऽप्याकारिताः। पृथक् पृथगुपविशिताः। तेषां समीपे पृ०, तैः क०-वयं साक्षीकृत्य तस्य प्रियायोग्यं समिततानि। भव्यम्। तेन स्वबुद्ध्या पडस्यीलोअको विभन्य चतुर्णां समितिः। कथितं च-यावन्मात्राणि सन्ति तावन्मात्राणि कुर्वन्तु । चत्वार्यपि रत्नानि तैः कूट-साक्षिभिरन्याद्यानि २ कृतानि । तेन कर्णवारीपुत्रेण कथितम्-भोः विणक्पुत्र ! रत्नानि सकालेऽपि समर्पय, मा राजग्राज्यो(ह्यो) भव । एते कूटसाक्षिणश्र राजग्राह्या भविष्यन्ति । ततस्तेन श्रेष्टियोग्यानि रत्नानि समर्पितानि । पादयोश्र पतितः। कर्णवारीपुत्रस्य पदं जातम् । अतः सत्यां कर्णवारां कुर्वतां द्रव्यप्राप्तिर्यश्रश्र इह लोके परलोकेऽपि । श्रेष्ट्यपि रत्नानां सौक्यं विलसित्वा स्वर्गभाग्जातः।

॥ इति कर्णवाराविषयकप्रबन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहगता अविश्वाष्टाः प्रबन्धाः ।

§ २४०) श्रीवाक्पतिराजकविना भारतं कर्तुं प्रारब्धम् । तावता निश्चि द्वैपायनः समागतः । तेनोक्तम्-किमर्थं । पादमवधारिताः । तेनोक्तम्-तव पार्थे याचितुम् । किम् १ यत् त्वं भारतं मा कृथाः । पुस्तकमर्पय । तेन तथा-कृतम् । गीर्वाणवाण्यपि निषिद्धा । ततो गौडवधनामा प्राकृतग्रन्थो विहितः ।

15 § २४१) श्रीसारंगदेवप्रधानो राज्ञा रामदेवेन पृष्टो निजस्वामिनः कीर्तिस्कृर्तिं अवादीत्। राज्ञोक्तम्-सर्वं भव्यम्, परं पानं करोति । पानकः शशाङ्ककलङ्कः । तेनोक्तम्-देव! सत्यम्, परं मातृ-भगिनीं जानाति । रामदेवस्य पितृव्यसुता छस्वाईराणी अन्तःपुरेऽस्ति । इति श्रुत्वा लिजतः ।

§२४२) अथ अभयदेवनामा द्विजः प्रभासे सरखत्यां स्नानं विधाय समागत्य च श्रीसोमेश्वरं नमस्कृतः । तद्धर्मशिलायाः पुरः शफरी जीवन्ती पतिता तस्यैव शरीरे लगा मृता च । तेन सानुकम्पेन प्रायश्चित्तं पृष्टम् । 20 केनापीति गदितम्-सुवर्णरूपमयी दीयते शफरी । तेन न मानितम् । ततः सर्वत्र प्रायश्चित्तहेतोर्श्वमन् श्रीस्तम्भ-तीर्थे गुरुर्जीववधमांसभक्षणप्रायश्चित्तं सिद्धान्ते वाचयन्नभृत् । तेन श्चतम् । यद्यस्य जीवस्य यावन्तीन्द्रियाणि भवन्ति, तद्वधे तावन्मितशतोपवासा विधीयन्ते । तन्मानितम् । ततो दीक्षात्ता । श्रीअभयदेवसूर्यो जाताः ।

§ २४३) क्रम्भीपुरे यशोधनो व्यवहारी। तस्य पुत्रो विद्यानन्दो विस्तरेण परिणीतः। दीपालिकायामागता वधः। तेनोक्तम्—कथा कथ्यतामिति। तया लजया नोक्तम्। सा ग्रुक्ता। ततः पित्राऽपरां परिणायितः। पूर्व25 वदुक्ते सापि ग्रुक्ता। पुनः पित्रा दूरं गत्वा कन्यां याचियत्वा परिणायितः। तया पृष्टया कथितम्—कीद्दशीं कथां कथयामि? अनुभूतां, श्रुतां वा, दृष्टां वा। तेनोक्तमनुभूताम्। एवग्रुक्ते तया मन्दं २ द्रव्यं पितृगृहे प्रविष्टं कृतम्। एकदा निश्चि गृहं ज्वालितम्। तदनु निर्धनतयात्मचतुर्थकुदुम्बं निःसृतम्। कसिन्नपि नगरपाद्रे सम्बलमिषेण पिता गतः, मातापि गता, सोऽपि तां विहाय गतः। सा तु द्रव्यवलेन राजकुमारवेषं विधायावलगां जग्राह । तस्य पिता महिषविचोऽजनि । माता मासोपवासिन्यजनि । स कोरिको जातः। त्रयमपि तया संगृहीतम् । वर्षान्ते
30 तमाकार्य कथितम् । अद्यापि कथां कथयामि नो वा। जातम्। एवं पुनः व्यवहारी जातः विहितो भार्ययां।

ndira Gandhi Nationa Centre for the Arts \$ २४४) क्रेनापि राज्ञा वाह्यालिगतेन सश्चित्पुमान् करीरशिखरस्थानि करीराणि विचिन्वज्ञुदितः—रे सुप्राप्यानि अमूनि विहाय कथं कष्टप्राप्यानि चिनोषि । तेनोक्तम्—सुप्राप्यानि पश्चादिष ग्रहीष्यामि, पूर्वमहमसाध्यानि साधिय-ष्यामि । राज्ञा तुष्टेन व्यापारो दत्तः । स महासुखं भुद्गे । एकदा प्रातः पृष्टः—कथम्रुन्मना इव दृश्यसे १। तेनोक्तम्— क्रुसुमञ्जय्यायां वृन्तेन दूमितोऽसि । ततो राज्ञा उन्मत्त इति सर्वमादाय व्यापारान्निर्वासितः । एवं यावत्—

जा जा पडइ अवत्थडी० ॥

5

§ २४५) राजा-ऽमात्य-तलारक्ष-व्यवहारिणां पुत्राः मित्राणि च कर्म-बुद्धि-विक्रम-व्यवसायान् मन्यन्ते । विवादे जाते देशान्तरं प्रति चलिताः । एकेन व्यवसायप्रयोगात् कस्यापि हट्टे द्रव्यम्रपार्जितम् । द्वितीयेन [धाटीतो(१)] ग्रामो रक्षितः । तृतीयेन बुद्धिवशात् तटस्थेन सरोवरमध्यकीर्तिस्तंभपाशो दत्तः । चतुर्थस्य कर्म-वशात् पदाभिषेको जातः ।

(३२८) यद्भविष्याधिको धीरैव्यवसायी प्रकीर्त्तितः। तसाद्प्यधिको लोके भाग्यवान् राजिलो यथा॥

10

§ २४६) कर्मोपक्रमप्रशंसकं नरद्वयं राज्ञा केनापि क्षेप प्रक्षिप्तम् । दिनत्रयं जातम् । राज्ञा तयोर्मोदकदशकं प्रहितम् । उपक्रमवता गृहीतम् । मोदकपञ्चकं कर्मप्रशंसकस्यापितम् । तन्मध्ये रत्नपञ्चकमभूत् । राज्ञा तौ बाह्यनि - क्कासितौ । भाग्याधिकेन रत्नानि दर्शितानि । अतो भाग्यमेव श्रेयः ।

§ २४७) वंसन्तपुरे जितशत्रुराजा सभां सचित्रां कारयन्नित्त । अत्रान्तरे चित्रकरदारिका भक्तमादायागता । 15 - इतश्च बृद्धो बाह्यभूमो गतः । ततस्तया तत्र कीडया भ्रवि बर्हिवर्हं चित्रितम् । ततो विलोकनायागतेन नृपेण पिच्छभ्रान्त्या करः क्षिप्तः । नस्तावली भग्ना । सा हसिता । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तयोक्तम्-चत्वारोऽपि मूर्खाः । एकश्चतुष्पथे घोटकं त्वरयन् दृष्टः । द्वितीयो मम पिता, यो भक्ते समागते बहिर्गन्ता । तृतीयो राजा, यः समभूमि मत्पितुर्वृद्धस्य चित्रार्थं ददाति । तुर्यस्त्वम् । ततस्तेन सा परिणीता । ततः सा राज्ञोऽग्रे कथां कथयति—राजन् ! शृणु । कोऽपि अस्तमनं जातम् । स कथं जानाति । राजन् ! राज्यन्धत्वात् ।

द्वितीयदिने—राजन्! व्यवहारिस्ता काचित् पित्रा मात्रा आत्रा मातुलेन च चतुर्षु स्थानेषु दत्ता। लग्नदिने चत्वारोऽपि वरा विवादं विद्धते। सा विवादं विज्ञाय मृता। एकेन सह गमनं कृतम्। द्वितीयेन तस्या अस्थीनि तीर्थे प्रक्षिप्तानि । एकः पिण्डं ददाति । तुर्थो मृतसंजीविनीविद्याग्रहणार्थं देशान्तरे गतः । तेन कुत्रापि कृदमानं बालकं चुल्लके क्षिप्तवती कापि नारी दृष्टा। तेनोक्तम्—आः किमेतद्विहितम् १। तया पुनर्जीवितः। तेन 25 तत्र विद्यामादाय सापि जीविता। पुनश्चतुर्णां वादो मारुयकेन भगः। येन जीविता स पिता। येनास्थीनि तीर्थे क्षिप्तानि स आता। यः सहोत्पन्नः सोऽपि आता। पिण्डदाता भर्तो क्षेत्रः।

तृतीयदिने-केनापि राज्ञा चौरद्वयं [पेटीमध्ये निःक्षिप्य नद्यां] प्रवाहितम् । कस्मिन्नपि नगरे केनापि राज्ञा निष्कासितम् । पृष्टम्-कियन्ति दिनानि जातानि । ताभ्यां तुर्यं दिनं [कथितं] कथं ज्ञातम् ? । राजन् ! चातु-र्थिकज्वरप्रभावतः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 15

चतुर्थ दिने-कस्यापि राज्ञोऽन्तःपुरद्वयम् । एकया महे गन्तुकामगा निजाभरणपेटिका कस्याश्चित्रिजसख्याः समर्पिता । तया हारश्रीरितः । तया समेतया पेटिकां दृष्ट्वा कथितम्-मम हारः केनापि चोरितः । राजन ! कथं

ज्ञातः ?। काचमयपेटित्वात् ।

पश्चमिदने-कस्यापि राज्ञो रत्नचतुष्टयम्-नैमित्तिको, रथकारः, सहस्रयोधी, वैर्द्यश्च विद्यते । अन्यदा तस्य राज्ञः 5 सुता विद्याधरेणैकेनापजहे । ततो राज्ञोक्तम्-य आनेष्यति स परिणेष्यति । इत्थमुक्ते नैमित्तकेन मार्गो दार्शितः । रथकारेण गगनगामी रथश्रके । सहस्रयोधिना स जितः । सा राजपुत्री विद्याधरमारिता वैद्येन सञ्जीकृता । एषां को भर्ता ? । वादे जायमाने तया काष्ट्रभक्षणं कृतम् । नैमित्तिकेनापि तथा सह कृतम् । द्वाविष सुरंगान्त-र्भत्वा सुखं स्थितौ।

६ २४८) क्रुतापि केषामपि आचार्याणां जलोदरम्रत्पन्नम् । केनापि वैद्येन खरूपं विलोक्य पृष्टम्-यूयं किं 10 कुरुथ ? । तैरुक्तम्-ग्रन्थ एकः प्रारब्धोऽस्ति । तत्र सरोवर्णनं कियमाणमास्ते । तद्वगत्यौषधं कारितम् , इत्युक्तं च-यन्मरुदेशवर्णनं विधत्त । तथाकृते आचार्याणां जलोदररोगोऽगमत् ।

§ २४९) केचिदाचार्या अतीव विद्वांसः कर्मयोगात् कुष्टिनो जाताः । तत औषधोपचारैरपि रोगमनिवर्तमानं विध्य श्रीसेरीसके यात्रायां यात्वा देवाग्रे त्रिविधाहारप्रत्याख्यानं विधायोपविष्टाः । दिनसप्तकमजनि । पश्चा-चतर्थाहारोऽपि त्यक्तः । तदात्वागतव्यन्तरैः स्थितव्यन्तरपार्श्वे पृष्टमिति-कथं भवतामियन्तो दिवसा महाविदेहे 15 लगाः । तैरुक्तम्-महं तेजःपालकलत्रं भीमगान्धिकगृहे सुतात्वेनोत्पन्नमास्ते । तया परिणयनोचितया पाणि-ग्रहणं परित्यज्य श्रीसीमंधरस्वामिकरेण दीक्षा गृहीता। पित्रा पाणिग्रहणद्रव्यं तत्परित्रज्यायाः समये व्ययितम्। तदुत्सवं विलोकयतामसाकमियन्ति दिनानि लग्नानि । ततस्तैराचार्याणां कथितमिति-भवान् सप्तमभवे भाव-सारोऽभृत । तेन रङ्गभाण्डतप्तजलेन वाडिमध्ये नकुलनालकसप्तकं विनाशितम् । तेन कर्मणा त्वं सप्तमभवेऽस्मिन् कुष्टी जातः । तवायुः स्तोकमास्ते । कम्मापि परिक्षीणम् । यदि भणसि ततस्तवारोग्यतः दीयते । परमागामिभ-20 वेऽपि कर्म वेदयिष्यसि । तद्वचो निशम्य प्रातः श्रावकानापृच्छ्य सूरयस्तथैव स्थिताः ।

§ २५०) अन्यदा वामनस्थलीवास्तव्यः पण्डितवीसलो लोलीयाणके गतः । तत्र जायमाने जागरणे व्यासे-नैकेन वाहगसाग्रे लोलीयाणकं व्याख्यातम् । यद्द्य मनुष्याणामेकाद्शसहस्रा उपोषिताः सन्ति । स्नानं क्वनित च । वीसलेनोक्तम्-िकं स्नानेनामुना ? । पुरे मदीये लघुकासीरे वामनस्थलीनामनि गोलक्षमेकं वाल-ही-ओजेनिनदीह्रये स्नानं कृत्वा तृणमपि खादति ।

§ २५१) कस्यापि व्यवहारिणः स्त्रमे मुखे उन्दरिका प्रविष्टा । तेन रोगो जातः । पण्मासाः संजाताः । केनापि मतिमता वैद्येन भोजनं दत्त्वा ऊपालो दत्तः । तदन्तः कृत्रिमा मृपिकाः पतिताः । ततो नीरोगो जातः ।

§ २५२) बहूनां विदुषां सभाक्षोमो भवति, इत्यर्थे कथा-पण्डितौ द्वौ कुत्रापि पठित्वा कसिंश्विदेशान्तरे महति रायतने गतौ । ततो वीजपूरकमेकं भेटाकृते गृहीत्वा भूपसमीपं गतौ । सभां महतीं विलोक्य क्षुमितौ । राज्ञः पुरो बीजपूरकं मुक्तम् । राज्ञोक्तम्-पूर्णं पूर्णं किमेतत् ? । पण्डितेनोक्तम्-राज्ञो भेटायां 'लींबउस'केन 30 भाव्यम् । ततो हसितः । तावता द्वितीयेनोक्तम्-यत भवति 'भसाक्षोभः' ।

§ २५३) कच्छदेशे बहुचौरोपद्रवं विज्ञास राज्ञा जिणहा नामा व्यापारी प्रेषितः।स चौरं मारयत्येव । एकदा चारणेन चौरी कृता । स.धृतः आरक्षकेण । चारणं भिणत्वा मित्रजिणहाकस्य देवपूजां विद्धतो विज्ञप्तम् । करसंज्ञ्या वित्रणोक्तम् –मारयत । तदा चारणेनापाठि । 'इकु जिणहा इकु जिणवरह०'।

§ २५४) एकदा पारणादिनोपरि श्रीयशोभद्रस्तरीणां क्षमाश्रमणानि समागतानि । दाक्षिण्यात्सर्वत्र मानितम् । ततस्तिहिने ग्रामग्रामात् श्रीसङ्घः सकलोऽपि मिलितः । यत्र न यान्ति तत्र ते श्राद्धा विषादं कुर्वते । अतस्तां 5 बहुरूपिणीं विद्यां स्मृत्वा रूपान् विधाय सर्वेषां मनोरथाः पूरिताः ।

§ २५५) रावणविजयं विधाय समेतेन श्रीरामेणायोध्याप्रवेशे समस्तलोकपार्थे 'धान्यस्य कुशलं गृहे' इत्थं पृष्टम् । लोकानां चेतसीति जातम् –यद्वर्षाणि चतुर्दशयावद्वने स्थितः । अन्नप्राप्तिनं जाता । अतः प्रथममेवेदं पृष्टम् । इङ्गिते राज्ञा तदवगत्य महाजनो निमन्त्रितः। प्रहरद्वये आकारितः । तेषां सुवर्णस्थाले महामूल्यानि रत्नानि सुक्तानि । एकेकस्थामिम्रुखमालोकयति । एकेनोक्तम् –देव । नवीना रसवतीयम् । परं रत्नानि न शक्यंते भोक्तम् । 10 यद्येवं जानीथ तदा मम पृच्छायां कथं हसिताः ? । शृणुत – 'उत्पत्तिर्दुर्लभा यस्थं ।

(३२९) अन्नं प्राणा वलं चान्नम् अन्नं जीवितमुच्यते । परमौषधमन्नं हि सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम् ॥

§ २५६) खरतराणामाचार्याणां निश्च कोऽपि रंको दुर्मिक्षे परिश्रमन् शालाद्वारि समागतः प्रकरोति । गुरुभिः श्रुतो वारितोऽपि न याति । ततो गुरुभिर्विहिनिःसृत्य वारितः—अरे ! अन्यत्र याहि । वयं दर्शनिनः । ततो विशेषतश्ररणयोर्लिगित्वा स्थितः । ततो गुरुभिस्तपोधनम्रत्थाप्य श्रावकस्थैकस्थाकारणं प्रहितम् । तस्य भोज-15 नायार्पितः । तेन निजगृहै नीत्वा निजवालकशीताशनं भोजितः । अत्याहारेण विम्नचिकया मृतः । शुभध्यनिन व्यन्तरोऽजिन । ज्ञानेन ज्ञात्वा पुनरपि रंकवेषं विधाय तथैवागतः । गुरुभिरपि तथैवोत्थाय वारितः । स निजरूपं प्रकटीकृत्येति जगाद-भगवन् ! भवतां प्रसादेन ममेदशी संपत्तिरजिन । ततः किमपि याचध्वम् । तैरुक्तम्-वयं किं याचामहे । यस्तवानं दत्तं तानेव हि व्यवहारिणो विधेहि । अपरं यो गुरून् पूजियध्यति तस्य गृहे न दारिद्यम्-इत्युक्त्वा मम पूजां कारय सर्वत्र ।

§ २५७) कस्यापि राज्ञो राज्ञी वदति-नृप! मम श्रातुर्व्यापारं देहि। विपर्जोयम् (१)। राजाह-राज्ञि! व्यापारस्तस्य दीयते, यो व्यापारं कर्जुं जानाति। सा न तिष्ठति। ततो दत्ता हस्तिपदरक्षा। ततश्रतुष्पथे लोकैः सह
कलहं क्रत्वाऽऽगतः। ततो राज्ञा कस्यापि पूर्वव्यापारिणो नित्यमवलगां विद्धतः पदश्रष्टस्य हस्तिपदे रक्षाव्यापारो दत्तः। चतुष्पथे तत्र डालं दत्त्वा यो य आयाति तस्य तस्याग्रे वदति-अत्र राज्ञो गज्ञ्ञाला भविताः
अत्र पुनः पट्टहस्तिन आलानस्तम्भो भावी। एवं भणतस्तस्य व्यवहारिभिरुक्तम्-इह मा कृथाः, अस्मद्भृहाणि 25
पातियिष्यन्ति। इति च्छत्र कृत्वा द्रव्यं गृहीतम्। प्रातर्लक्षसंख्यधनान्यादाय राज्ञोऽग्रे ग्रुक्तानि। पृष्टं च नृपेण।
भणित्रो यथार्थः। हिपैतेन भूपेन महान् व्यापारो दत्तः।

dira Gandhi Nationa Centre for the Aris

परिशिष्टम्. १. 1

प्रबन्धचिन्तामणिगुम्फितकतिपयप्रबन्धसंक्षेपः।

§ २५८) अवन्तिदेशे प्रतिष्ठानपुरे विक्रमो राजपुत्रो भट्टमात्रयुतो रोहणे तदासन्नपुरे कुम्भकारगृहे खनित्रम्। प्रातः खनीपार्थे भट्टेन मातुर्भृतिः। हा दैविमिति। सपादलक्षमूल्यं रत्नम्। वलन् भट्टेन कुशलम्। तत्करा-5 दाच्छिद्य खनीकण्ठे-

(३३०) धिम् रोहणगिरिं दीनदारिक्र्यव्रणरोहणम् । दत्ते हा दैविमित्युंक्ते रत्नान्यर्थिजनाय यः॥
ततो अवन्तिदेशपार्थे पटहस्पर्शेन राजा । मुहूर्तं विनापि सो दध्यौ । कोऽपि कोपी सुरः प्रतिदिनं नृपं
हिन्त । निशीथे भोजनादीनि पल्यक्के निजदुक्लाच्छादितोच्छीर्पकम् । दीपच्छायामाश्रित्य कृपाणपाणिः । तुष्टोइहमित्रवेतालो भक्त्या । नित्यं देयम् । प्रतिपन्नम् । आयुःप्रश्ले खखामिप्रश्लः । शतमेकं नोनाधिकम् । यतः-

10 (३३१) सा नित्थ कला तं नित्थ ओसहं तं किं पि नित्थ विन्नाणं। जेण धरिज्ञइ काया खज्जंती कालसप्पेणं॥

रणेन जितो अग्निवेतालः सिद्धः । यतः-

(३३२) सत्त्वैकतानवृत्तीनां प्रतिज्ञातार्थकारिणाम्। प्रभविष्णुर्न देवोऽपि किं पुनः प्राकृतो जनः॥

§२५९) प्रियङ्कमञ्जरी कन्या पं० वेदगर्भः । आम्रसंबन्धे कोपितः । पतिविलोकनाय वने, तृषा, पशुपालः, 15 करचण्डी । योग्यं ज्ञात्वा गृहे आनीतः । षण्मासीं वपुःसमारणा । खिस्ति० । प्रधानमुहूर्ते नृपसभायाम् । श्वोभात् । उश्चरद् । नृपविस्थयम् । पण्डितः प्राहन

(३३३) उमया सहितो रुद्रः शंकरः शूलपाणियुग् । रक्षतात् तव राजेन्द्र ! टणत्कारकरं यशः ॥
ततो नृपेण खपुत्रीं । पण्डितोक्तं मौनमेव कु । तया परीक्षार्थं पुस्तकशोधने विन्दुमात्रारहितान्यक्षराणि ।
नख्न्छेदिन्या महिषीपाल एव निर्णीतः । अतःप्रभृति जामातृशुद्धिः । चित्रभित्तौ महिषीनिवहे द्शिते तदाह्वा20 नोचितानि वचांसि । महिषीपाल एव नि । कालीदेवीमारराध । पुत्रीवैधन्यभीतेन नृपेण दासी । देन्येव तुष्टा ।
तज्ज्ञात्वा राजसुताऽऽगता तत्र । अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः ? । कुमारसंभवादिकान्यत्रयम् । कालिदासप्रवन्धः ।
§ २६०) श्रे० दान्ताककारितावासगृहीतशयनेन पतामीत्युक्ते सुरे पत इत्युक्ते नृपे पतितं कनकपुरुषं प्राप्त-

वान् । [सुवर्ण] पुरुषसिद्धिः ।

30

§ २६१) अन्यदा कोऽपि विदेशी साम्राद्रिकज्ञः । अपलक्षणराजा पण्णवतिदेशस्वामी । कर्बुरात्रम् । कृपाणि-25 कामाकु० । अं० दर्शयामि तव । ३२ लक्षणाधिकं नावगतम् । पारितोपिकर्म् । सत्त्वपरीक्षाप्रबन्धः ।

§ २६२) अथ परकायप्रवेशं विना सर्वमफलम् । श्रीपर्वते भैरवानन्दयोगिपार्श्वे पूर्वं तत्रागतविप्रेण सह प्राप्य वलन्तौ खदेशे मृतपट्टहस्तिनमालोक्य-

(३३४) वर्ष्मप्राहरिके द्विजे निजगजस्याङ्गेऽविद्याद्विद्यया, विष्रो भूपवपुर्विवेदा रूपतिः क्रीडाद्यकोऽभूत्ततः। पह्णीगात्रनिवेदानात्मनि रूपे व्यासद्य देव्या सृतिम्, विष्रः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविकमो लब्धवान्॥

-परवपुःप्रवेशविद्यासिद्धिः।

१ नृपाभावे च देशं विनाशयति। (टिप्पनी)। २ प्रथमं धूमं ततो ज्वालां ततः साक्षात् सः। (टिप्पनी)। मैबदूत, रधुवंश। (टिप्पनी)।

15

§ २६३) श्रीविकमनृपो राजपाटिकायां श्रीसङ्घसहितं श्रीसिद्धसेनाचार्यं सर्वज्ञपुत्र इति । परीक्षार्थं मानसं नमस्कारम् । आचार्येण-.

(३३५) धर्मलाभ इति प्रोक्ते दूरादुच्छितपाणये। सूरये सिद्धसेनाय ददौ कोटिं नराधिपः॥ राज्ञा दीयमाने निरीहतया नाहतराचार्यभूरनृणी विधीयतामनेन कनकेन ततस्तथेव कृतम्'।

§ २६४) अन्यदा कोऽपि निःखः करात्तायसकृशदरिद्रपुत्रकः । उपालब्धेन भूपेन दत्तदीनारलक्षमादाय गतः । 5 राजा तं पुत्रकं कोशे नि०। यामत्रयेणागतगजाश्वलक्ष्म्यो निशि० सत्त्वादनुमता जग्धुः। चतुर्थयामे सत्त्वनामा पुरुषः । छुर्यात्मघातं यावत् । तावत् तसिन् तुष्टे स्विलते च पूर्वगता अप्याजग्धः । गमनसङ्केतव्याघातिना सत्त्वेन विप्रछुब्धानां न गतिर्योग्या वः । विक्रमादित्यसत्त्वप्रवन्धः ।

§ २६५) अथ श्रीभोजो नित्यं भावनाभावितः प्रातः रेटङ्कतान् ददौ । (३३६) रोदिको मन्नी-आपदर्थं धनं रक्षेत्। राजा-भाग्यभाजः क चापदः। राजा-सश्चितोऽपि विनद्यति॥ मन्त्री-दैवं हि कुप्यते कापि। सभाभारपट्टे । पश्चशतीपण्डिताग्रे राजा-

(३३७) इदमन्तरमुपकृतये प्रकृतिचला यावद्स्ति सम्पद्यम्। विपदि नियतोदयायां पुनरुपकर्तुं कुतोऽवसरः॥

निजकरनिकरसमृद्ध्या धवलय भुवनानि पार्वणदादााङ्क !। सुचिरं इन्त न सहते इतविधिरिह सुस्थितं कमि ॥

अयमवसरः [सरस्ते सलिलैरुपकर्त्तुमर्थिनामनिराम्। इदमपि सुलभमम्भो भवति पुरा जलाभ्युद्ये॥]

(३४०) कतिपयदिवसस्थायी पूरो दूरोन्नतश्च भविता ते। तटिनितटद्रुमपातनपातकमेकं चिरस्थायि³॥

(३४१) यदनस्तमिते सूर्ये न दत्तं धनमर्थिनाम् । तद्धनं नैव पश्यामि प्रातः कस्य भविष्यति ॥ -इति खकृतं श्लोकम् ।

§ २६६) अन्यदा राजा राजपा० । [काष्टवाहं प्रति−] (३४२) कियन्मात्रं [जलं विप्र! जानुदर्म नराधिप!। कथमीदगवस्था ते न सर्वत्र भवादशाः॥] (३४३) लक्षं लक्षं पुनः [लक्षं मत्ताश्च द्दा दन्तिनः। दत्तं भोजेन तुष्टेन जानुद्वप्रभाषिणे॥]25 § २६७) अन्यदा निशीथे राजा-

(३४४) यदेतचन्द्रान्तर्जलदलवलीलां प्रकुरुते तदाचष्टे लोकः दादाक इति नो मां प्रति तथा। चौर:- अहं त्विन्दुं मन्ये त्वद्रिविरहाऋान्ततरूणी-कटाक्षोल्कापातव्रणदातकलङ्काङ्किततर्नुम् ॥

1. एकदा रात्री नष्टचर्यायां तैलिकेन द्वीपदी पुनः २ प्रातः पृष्टः क०-अम्मीणउ संदेसडउ नारय कन्ह कहिज। जग दालिदिहि दुत्थिउ बलिबंधणह सुइज ॥

३. हिमसमयो वनविद्वर्जवपवनस्तिडच ते विभवम् । हन्त सहन्ते यावत् तावद् द्रुम ! कुरु परोपकृतिम् ॥

30

२. जाउ रुच्छि धणकणकलिय अन मयगल मयमत्त । तरल तुरंगम जाउ सिव तड म न जायसि सत्त ॥

15

25

(३४५) अमुष्मे चौराय प्रतिनिहितमृत्युप्रतिभिये प्रभुः पीतः प्रादादुपरितनपादद्वयकृते । सुवर्णानां कोटीर्दश दशनकोटिक्षतगिरीन् करीन्द्रानप्यष्टौ मदमुदितगुञ्जन्मधुलिहः॥

5 १२६८) खधर्मवहिकां ग्रेक्स-

(३४६) तत्कृतं यन्न केनापि तद्दतं यन्न केन चित् । तत्साधितमसाध्यं यत् तेन चेतो न दूयते ॥ इति दर्गान्धे पुरातनो मन्नी कोऽपि श्रीविक्रमादित्यधर्मवहिकायाँ प्रथमं काव्यम्-

(३४७) अष्टौ हाटककोटयस्त्रिनवतिर्मुक्ताफलानां तुलां पश्चाशन्मदमत्तगन्धमधुपक्तोधोद्धराः सिन्धुराः॥ तारुण्योपचयप्रपश्चितदृशां वाराङ्गनानां शतं दण्डे पाण्ड्यन्यपेण ढौकितमिदं वैतालिकस्यार्पितम्॥

इत्याकण्यं निर्गर्वनृपः।

§ २६९) आगतसरखतीकुटुम्बम् । दासी-

(३४८) बापो विद्वान् [बापपुत्रोऽपि विद्वान् आई विदुषी आई धूयापि विदुषी। काणी चेटी सापि विदुषी वराकी राजन् मन्ये विद्यपुक्षं कुदुम्बम्॥] ज्येष्ठं प्रति समस्यापदम्-'असारात्सारमुद्धरेत्'। दानं वित्ताः।

तत्पुत्राय-

हिमालयो नाम नगाधिराजः, प्रवालशय्या शरणं शरीरम्-इति भूपवाक्यम् । 20 (३४९) तव प्रतापज्वलनाज्ञगाल, हिमा०। चकार मेना विरहातुराङ्गी, प्रवाल०॥ ज्येष्टभार्यो प्रति-'कवणु पियावउं खीरु'।

> (३५०) जईय रावणु जाइयउ दहमुह इक्कु सरीरु। जणि वियंभी चिंतवइ कवणु पियावउ खीरु॥

§ २७०) अन्यदा गूर्जरदेशविद्वत्ताज्ञानाय श्रीभीमं प्रति गाथा-

(३५१) हेलानिइलियमहे भकुं भपयडियपयावपसरस्स । सीहस्स मएण समं न विग्गहो नेय संघाणं॥

(३५२) अंधयसुआण कालो भीमो पुहवीइ निम्मिओ विहिणा। जेण सयं पि न गणियं का गणणा तुज्झ इक्कस्स ॥

श्रीगोविंदाचार्यकृता गाथेयम् । अन्धधृतराष्ट्र १०० सुता हता भीमेनेति ।

1 ४० वाल १ सुवर्ण । एवंविधा अष्टा । 2 पलशतैरेका तुला (टिप्पनी) ।

§ २७१) द्वामरसन्धिविग्रही । अत्यन्तकुरूपः ।
(३५३) यौष्माकाधिपसन्धिविग्रहपदे दूताः कियन्त्रो द्विज!,
भादक्षा बहवोऽपि मालवपते! ते सन्ति तत्र त्रिधा।
प्रेष्यन्तेऽधममध्यमोत्तमगुणप्रेक्ष्यानुरूपक्रमं
तेनान्तर्गतमुत्तरं प्रददता धाराधिपो रञ्जितः ॥
§ २७२) अन्यदा श्रीत्तौं निशि कंचित्ररं प्रेक्ष्य प्रातः - कथं शीतं सोढम् ? - त्रिचेल्या । राजा-का सा ?
(३५४) रात्रौ जानु[दिवा भानुः कृशानुः सन्ध्ययोर्द्भयोः ।
राजन्! शीतं मया नीतं जानु-भानु-कृशानुभिः॥]
§ २७३) भूपतितकणाशं रोरं प्रति-
(३५५) नियउयरपूरणहा असमत्था तेहिं किं पि [जाएहिं।
सुसमत्था वि हु जे न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥
(३५६) परपत्थणापवन्नं मा जणि ! जणेसु एरिसं पुत्तं ।
मा उयरे वि घरिज्ञसु पत्थियभंगो कओ जेण॥
राज्ञोचे-कस्त्वम् ? तेनोचे-] राजशेखरनामाहम् । तस्य हिस्तिनीदानं कृतम् । पुनस्तेनोक्तम्-
(३५७) ज्ञीतत्रा न पटी०, निर्वाता न कुटी०, वृत्तिनीर भटी०,
श्रीमद्भोज तव प्रसादकरटी भंक्तां ममापत्तटी॥
§ २७४) अर्जुनसाध्यो दुःसाधो राधावेधो भोजेन साधितः । हट्टशोभायां तैलिकेन स्विकानेन
र्गर्वः कृतः । अत्याप्त विकास व्यवस्थाना विकास
(५८) भोजराज! मया ज्ञातं राधावेधस्य कारणम् । धाराया विपरीतं हि सहते न भवानपि ॥
§ २७५) सर्वदेवांगजौ शोभन-धनपालौ । तदुपाश्रये श्रीवर्द्धमानस्रित्संन्निमन्त्रितः प्राह- 2
(५९) भजेन्माधुकरीं [वृत्तिं मुनिम्लेंच्छकुलादपि । एकान्नं नैव मुझीत वृहस्पतिसमादपि ॥]
६०) अपमानात्तपोवृद्धिः सन्मानाच तप्ःक्षयः। अर्चितः पूजितो विप्रो दुग्धा गोरिव गच्छति॥
६१) पुनराप्याय्यते घेनुस्तृणैरमृतसंभवैः। एवं जापतपोभिश्च पुनराप्याय्यते द्विजः॥
-याज्ञवल्क्यः । संतोषतुष्ट आरव्धस्नाने धनपाले विहर्तुमागतसाधुभ्यां दिधसंवन्धेन बुद्धे-'कतिपयपुर-
ामी॰'।
बोधात्पूर्वं शोभनम् निम्-गर्दभदन्तं भदन्त ! नमस्ते । मर्कटकास्य वयस्य ! सुखं ते ।
§ २७६) अन्यदा नृपो मृगया॰ । एण वेघे । धनपालः-
(३६२) रसातलं यातु तवात्र पौरुषं कुनीतिरेषा शरणो ह्यदोषवान्।
निहन्यते यद् बिलनापि दुर्बलो हहा महाकष्टमराजकं जगत्॥
(३६३) किं कारणं तु धनपाल! मृगा यदेते च्योमोत्पतन्ति विलिखन्ति सुवं वराहाः?।
देव! त्वद्स्त्रचिताः श्रयितुं स्वजातिमेके मृगाङ्गमृगमादिवराहमन्ये॥
६४) वैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते [प्राणान्ते तृणभक्षणात्। सदैवैते तृणाहारा हन्यते पद्मवः कथम्॥]
संन्यसामृगयो नृपो नगरं प्रति०।

(३६५) नाहं खर्गफलोपभोग[तृषितो नाभ्यर्थित्त्त्वं मया, सन्तृष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव। खर्गं यान्ति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो, यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा वान्धवैः॥]

5 पुना राजप्रश्न:-यूपं कृत्वा०।

(३६६) सत्यं यूपं तपो ह्यग्निः कर्माणि समिधो मम । अहिंसामाहुतिं दद्यादेष यज्ञः सनातनः ॥
-इति शुक्रसंवादादर्हद्वर्माभिम्रुखो राजा ।

§ २७७) अन्यदा सरखतीकण्ठाभरणप्रासादे खत्तके रत्या सह हस्ततालदानपूर्व सरं मृर्तिमन्तमालोक्य हासायोक्तः पण्डितः प्राह−

10 (३६७) स एष भुवनत्रयप्रथितसंयमः शंकरो, विभर्ति वपुषाऽधुना विरहकातरः कामिनीम् । अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करं, करेण परिताडयन् जयति जातहासः स्मरः ॥

> (३६८) पाणिग्रहे पुलकितं वपुरैशं भूतिभूषितं जयति । अङ्करित इव मनोभूर्यस्मिन् भसावशेषोऽपि ॥

> > इत्यादिना प्रीतो नृपः।

15 § २७८) यानवणिग्मदनमयपद्धिकायां प्रशस्तिकाव्यानि । नृपोक्तः स आह । नीरधौ शिवायतने, मदन-पट्टिकां नियोज्येयं प्रशस्तिः ।

(३६९) अयि खलु विषमः पुराकृतानां भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः । सर्वेरिष पण्डितैरस्रोत्तरार्द्धे पूर्यमाणे विसंवदति नृपोक्तो धनपालः-

हरिशरिस शिरांसि यानि रेजुईरिहरितानि लुठन्ति गृधपादैः॥

- 20 चेद्विसंवादस्ततः कवित्वनियमः । राजा तदैव यानानि नीरधौ । तथैव कृते पण्मासैः काव्यार्द्वम् । § २७९) तिलकमञ्जरीग्रन्थे वाच्यमानेऽधः कचोलम् । [मामत्र कथानायकं, विनीता स्थाने अवन्ती, शका-वतारपदे महाकालं कुर्वन् यद्याचसे तत्तुभ्यं ददामीति ।]
 - (३७०) दोमुहय निरक्खर लोहमइय नाराय तुज्झ किं भणिमो । गुंजाहिं समं कणयं तुलंतु न गओसि पायालं॥
- 25 राज्ञा दग्धा कोपात सा प्रतिः । सुतासान्निध्यात पुनरुद्धरिता ।

§ २८०) कापि पर्वणि स्नानव्यये लोके अलब्धिमक्षो भार्याताडितो वियो राजनरैः सभानीतः । राजोक्तः-

(३७१) अंबा तुष्यति न मया न [स्नुषया सापि नाम्बया न मया। अहमपि न तथा न तया वद राजन्! कस्य दोषोऽयम्॥]

सर्वपण्डितानवबोधे खबुद्ध्या राजा ज्ञात्वा लक्षत्रयी प्रसादीकृता । कलहमूलं दारिद्यमेव ।

30 § २८१) अन्यदा सर्वदर्शनमुक्तिमार्गे पृष्टे पण्मासावधौ निशि श्रीशारदा नृपं प्रति—'श्रोतन्यः सौगतो०।' श्लोकमिमं राज्ञे दर्शनिभ्यश्च समादिश्य तिरोहिता।

(३७२) अहिंसालक्षणो धर्मो मान्या देवी सरखती। ध्यानेन मुक्तिमाप्नोति सर्वद्दीननां मतम्॥

§२८२) .परोत्रत्यां राज्ञोक्तः श्रीमानसुङ्गस्तरिरात्मानमापाद[४४]शृङ्खलाबद्धं कारयित्वा प्रति काव्यं शृङ्खला-भङ्गः । इत्थं प्रभावना । श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रबन्धः ।

(३७३) उत्थायोत्थाय बोद्धव्यं किमय सुकृतं कृतम् । आयुषः खण्डमादाय रविरस्तमयं गतः॥ (३७४) लोकः पूच्छति मे वार्ता श्रारीरे कुशलं तव । कुतः कुशलमस्माकं आयुर्याति दिने दिने॥

(३७५) श्वः कार्यमय कुर्वीत पूर्वाह्रे चापराह्निकम् । मृत्युर्ने हि प्रतीक्षेत कृतं चास्य न वा कृतम् ॥ 5 (३७६) मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा विपन्ना किं विपत्तयः। व्याधयो व्याधिताः किन्न दृष्यन्ति यदमी जनाः॥

॥ श्रीहर्षस्यानित्यताश्लोक ४ प्रवन्धः ॥

§२८३) श्रीभोजो भीमं प्रति वस्तु ४। वेश्यया स्पृष्टः पटहः। गणिका १, तपस्त्री २, दानेश्वर ३, द्यूत-कार ४-इति वेश्योक्तम्। श्रीभीमो भोजं प्रति प्रा०। वस्तुचतुष्टयप्रवन्धः।

§ २८४) अन्यदा निशि वीर०-

10 -

(३७७) माणसणा(डा) दस दस दसा सुणीइ लोअपसिद्ध । मह कंतह इक्क ज दसा अवर ति चोरिहिं लिद्ध ॥

प्रातः कृपयानीय प्रत्येकं लक्षमूल्यं बीजपूरद्वयं प्रच्छनं दत्तम् । तेन तत् खरूपमज्ञात्वा पत्रशाकाहे । तेना- प्यज्ञाते कस्यापि भेटार्थम् । तेन श्रीभोजाय ।

(३७८) वेलामहल्लकल्लोलपिल्लियं जइ वि गिरिनईपत्तं। अणुसरइ मञ्गलग्गं पुणोवि रयणायरे रयणं॥

15

परेषामद्शाः । यतः-

(३७९) प्रीणिताद्रोषविश्वासु वर्षास्वपि पयोलवम्। नाप्त्रयाचातको नृनं नालभ्यं लभ्यते कचित्॥

(३८०) सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा। पुराकृतं कर्म तदेव सुज्यते शरीर हे निस्तर यत्त्वया कृतम्॥

20

† टिप्पन्याम्-पुरा मयूर-बाणाख्यौ भावुकशालकौ राजमान्यौ । बाणः स्वभगिनीमिलनाय ययौ । मयूरेण निशि तामनुनीयमानाम-श्रणोत् ।

'गतप्राया रात्रिः कृशैतनु शशी शीर्यंत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशसुपगतो घूर्णित इव । प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि कुधमहो...

भूयो भूयः पठन् बाणः-

कुचप्रत्यासत्या हृदयमपि ते चंडि ! कठिनम् ॥'

सा लिखाता, कुष्टी भवेति शशाप बन्धुम् । शीततौँ नृपाधे मयूरेण बरकोडीति सोपहासमूचे । तेन खादिराङ्गारकुण्डोपिरि सिककं विधाय प्रतिकाव्यं सिककपदं श्चिरिकया छिन्दन् पंचिमः काव्यैनिरालम्बः, सूर्यप्रसादात् पुनर्नवो देहः । राज्ञो विस्मयः । मयूरस्तदीर्व्यया पादौ पाणी च छित्ता षष्ठेऽक्षरे भवानीप्रसादेन नवौ पाणी पादौ च जातौ । तथोमिहिमा वादश्च । राजादेशात् काश्मीरं प्रति चेछतुः । सरस्वत्यादेशेन जिताजितनिर्णये जितस्य पुस्तकानि अग्नौ ज्वाल्यानि-इति प्रतिज्ञा । धारासमीपे-रे रे शाटकमलिर्वाटक! नगरे का वार्ता? । अश्वावहं ० ॥ लोहकार०-सृतका यत्र० ॥ कुलाल.......लिकया-पर्वताग्रे० ॥ नापितस्य-जलनाडी पत्थरि० ॥ चित्रकरस्य-विहितानिर्विषा ॥ सरस्वतीपुरे देव्या समस्यापिता-'शतचन्द्रं नभस्तलं ।' 'दष्टं चाणूरमलेन' । वाणेन शीघ्रं-दामोदरकराघातविद्वलीकृतचेतसा दृष्टं ० ॥ मयूरस्य सूर्यसान्निध्यात् पुस्तकेष्वदग्धेषु द्वयोमानम् । शिवशासनं विनाःन्यत्र कास्तीदशी शक्तिसतो.....चाहूताः श्रीमान-तुङ्गाचार्याः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 16

15

(३८१) लोकं विलोक्य धनधान्यवरेण्यपुण्यं प्राप्य प्रधानवनिताजनिताभिरामम्। किं मृढ! कांक्षसि मुधा वसुधातलेऽस्मिन् रे जीव पीवरतरं सुकृतं कृतं न॥॥ वीजपुरप्रवन्धः॥ '

§२८५) एको न भव्य इति [रात्रौ] पाठितेन शुकेन सभायां [प्रातः] केनाप्युत्तरमददता पण्मासावधिं गाचित्वा वररुचिर्देशान्तरं भ्रमन् श्वमोचादानासमर्थपशुपालं लात्वा वस्नान्तरितस्कन्धारोपितश्वः। नृपसभां नृपप्रश्नः। स प्राह−देव! लोभ एको न भव्यः। यतः−

- (३८२) अहो लोभस्य [साम्राज्यमेकच्छत्रं महीतले । तरवोऽपि निधिं प्राप्य पादैः प्रच्छाद्यन्ति यत्॥]
- (३८३) तावन्नीतिर्विनीतत्वं मितः शीलं कुलीनता। यावन्नहि जयी लोभः क्षोभं नाभ्येति जन्तुषु॥ ॥ एको न भव्य-प्रवन्धः ॥
- (३८४) कविषु कामिषु भोगिषु योगिषु द्रविणदेषु जितारिषु साधुषु । धनिषु धन्विषु धर्मधनेषु च क्षितितले नहि भोजसमो दृपः ॥
- (३८५) किं नन्दी किं मुरारिः किम्र रितरमणः किं विधः किं विधाता, किं वा विद्याधरोऽयं किमथ सुरपितः किं नलः किं कुबेरः। नायं नायं न चायं न खलु निह न वा नापि नासौ न चैष, कीडां कर्तुं प्रवृत्तः खयमि च हले भूपितभों जदेवः॥
 - (३८६) क्षुद्राः सन्ति सहस्रदाः खभरणव्यापारमात्रोद्यताः, स्वार्थो यस्य परार्थ एव स पुमानेकः सतामग्रणीः।

† एतद्ग्रे टिप्पन्यां इमे श्लोका लिखिता लभ्यन्ते—

देव त्वं जय! कासि ? लुब्धकवध्ः पाणौ किमेतत्पलं, क्षामं किं सहजं ब्रवीमि नृपते यद्यस्ति ते कौतुकम्। गायन्ति त्वदरिप्रियाश्चतिटनीतीरेषु सिद्धाङ्गनाः, गीतान्धा न चरन्ति देव! हरिणासेनामिषं दुर्बलम्॥ सीतेति नाम। वादी नष्टः।

चेतोहरा युवतयः स्वजनोऽनुकूलः सद्बान्धवाः प्रणयगर्भागिरश्च भूत्साः ।
गर्जन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गा राजन् ! न किंचिदिह नेन्निनमीलनेऽस्ति ॥ १ ॥
शीतत्रा न पटी न चाग्निशकटी नास्ति द्वितीया पटी, निर्वाता न कुटी प्रिया न गुमटी भूमौ च घृष्टा कटी ।
वृत्तिनारमटी न तुन्दलपुटी नाथास्ति मे सङ्कटी, श्रीमद्भोज ! तव प्रसादकरटी भंकां ममापक्तटी ॥ २ ॥
वक्त्रांभोजं सरस्वत्यधिवसित सदा शोण एवाधरस्ते, बाहुः काकुःस्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणस्ते समुद्रः ।
वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नैव मुज्जन्त्यभीक्ष्णं, स्वच्छेऽत्र मानसेऽस्मिन् कथमवनिपते तेऽम्बुपानाभिलाषः ॥ ३ ॥

आबाल्याधिगमान्मयैव गमितः कोटिं परामुन्नतेरस्मत्संकथयैव पार्थिवसुतः संप्रत्यसौ लज्जते । इत्थं खिन्न इवात्मजेन यशसा दत्तावलम्भोऽम्बुधेर्यातस्तीरतपोवनानि तपसे वृद्धो गणानां गणः ॥ ४ ॥ शौर्यं शत्रुकुलक्षयाविष यशो ब्रह्माण्डामण्डाविषस्त्यागस्तर्कुकवाञ्चिताविष्ठिरंयं क्षोणी समुद्राविष्ठः । अद्धा पर्वतपुत्रिकापतिपदद्वन्द्वप्रणामाविष्ठः श्रीमद्भोजमहीपतेर्निरविष्ठः शेषो गुणानां गणः ॥ ५ ॥

> सुरताय नमस्तुभ्यं जगदानन्ददायिने । अत्र विजया-आनुषङ्गि फल्टं यस्य भोजदेव भवादशाः ॥ ६ ॥

婚

दुःपूरोदरपूरणाय पिबति स्रोतःपर्ति वाडवो, .जीमूतस्तु निदाघसम्भृतजगत् सन्ताप्विच्छित्तये॥

॥ श्रीभोजप्रबन्धः ॥

§ २८६) सपादलक्षप्रहितक्षुरिकातः पालिताब्दयुगशीला वकुलादेवी वेश्या श्रीमीमेनोहा । तसाः पुत्रः हर-पालदेवस्तदङ्गजिक्षभ्रवनपालदेवस्तस्य श्रीकुमारपालः । श्रीसिद्धभीतः कियन्त्यब्दानि देशान्तरे व्यतिक्रम्यागतः 5 पत्तने श्रीकर्णश्राद्धे । आलिगकुम्भकारगोपितः । ततः क्षेत्रे स्डमध्ये अन्वागतनरैः कुन्ताग्रेण । ततः प्रान्तरं व्यवन् उंदरदंका २०; ततो दिनत्रयक्षुधार्तः । कयापि करम्भकेन प्रीणितः । एवं परिश्रमन् उदयनपार्थे शम्बलार्थं स्तम्भतीर्थे पौषधागारं गतः । उदयनपृष्टाः श्रीहेमस्ररयः—राजायं भावी । द्वयोः प्रत्येकं राज्यप्राप्तिपत्र-मर्पितम् । कुमारः—यद्यदस्तथ्यम् , ततस्त्वमेव राजाऽहं सेवकः । प्रश्वभिर्जनशासनप्रभावकेन भाव्यमिति हृष्टो मित्रणा शम्बलादिना प्रीणितो मालवे । कुण्डिगेश्वरप्रासादे ।

(३८७) पुन्ने वाससहस्से संयमि वरिसाण नवनवह अहिए। होही क्रमरनिरंदो तह विक्रमराय सारिच्छो॥

गाथामालोक्य जातप्रत्ययः । श्रीसिद्धस्तं श्रुत्वा तमाचोरितर्व्वाकवाहडेन नामा(१) पत्तने मुहडासाप्रताप-मक्षपत्नी बा॰ ऊमादे बंधुर्वणिगद्दे ।

(३८८) पुत्रादिप प्रियतमैकवराटिकाणां मित्रादिप प्रथमयाचितभाटकानाम् । आजानुलम्बितमलीमसञ्चाटकानां वज्रं दिवः पततु मूर्प्ति किराटकानाम् ॥

त्रातर्भावुकेन राजसभां नीतः । संवृतांचल एकः । योजितकरोऽन्यः । कुमारपालः पश्चाशद्वर्षदेश्यो राज्यम् । हता राजवृद्धाः विश्वासघातकत्वात् । नर्भादिपरभावुकाङ्गभङ्गो नेत्रकर्षणम् । यतः−

(३८९) आदौ मयैवायमदीपि नृनं तन् नो दहन्मामवहेलितोऽपि। इति भ्रमादङ्गलिपर्वणाभिस्पृदोत नो दीपमिवावनीपम्॥

(३९०) प्रभासमृद्धिरेवैषा जीवितं राज्यसंपदः । यथाम्भः कमलशोभायै तैलं वा दीपदीधितेः॥ शास्त्रम् । ततः प्रोढिमा । आलिगक्कम्भकारस्य सप्तश्चतप्राममितचित्रक्र्टीयपट्टी । श्रीउद्यनाङ्गजो महामात्यो

बाहडदेवः । कर्षका अङ्गरक्षपदे ।

§ २८७) श्रीपत्तने लातानशनाम्बाविमानभङ्गे विश्रैरित्यस्यया श्रीहेमस्रिर्मालवे। 'आपण पइं प्रसु॰' इति चिंतापराः। श्रीउदयनोक्तागमाः कृतज्ञमौलिना श्रीकुमारेणोक्तम्-नित्यं आगन्तव्यम् । श्रीहेम॰-संजीम॰ ॥ 25 राजा एको वासः। इति प्रेत्य शुभायेति। ततः सदा गमनागमने। कोऽपि मत्सरी। विश्वा॰ ॥ सिंहो॰ ॥ रात्रौ भोजने। अधामधा॰ ॥ मृते खज॰ ॥

(३९१) पयोदपटलच्छने नाश्चन्ति रविमण्डले। अस्तं गते तु भुञ्जाना अहो भानोः सुसेवकाः॥
यश्चन्द्रगणिनासने प्र०।राजा-जीवं विना कथं प्र०१। गुरवः-भवतां गजाद्या रिपौ सजी०, उत नित्येवायं
राजच्यव०। तद्गुणरिक्षतेन पूर्वप्रतिपन्नराज्ये दीयमाने प्रभुः। राजप्रति०॥ संनिहीगि०॥ इति प्रीणितो ३०
राजा। श्रीहेमस्ररिचरित्रं पृष्टः श्रीउदयनः प्राह-

§.२८८) धन्धुके [मोढकुले] चाचिग-चाहिणिपुत्रश्राङ्गदेवोऽष्टाब्दः श्रीदेवचन्द्रसूरिभिस्तत्रागते रममाणो दृष्टः।

१ संवत् ११९९ वर्षे कार्तिक शुदि २ स्वी हस्ते पट्टाभिषेकः।

25.

लक्षणानि वीक्ष्य-यद्ययं क्षत्रियकुले तदा सार्वभौमः, यदि विणग्-विष्रकुले तदा महामात्यः, चेहर्शनं प्रतिपद्यते तदा युगप्रधान इवेति विचार्य तत्पुरसङ्घं मेलयित्वा गृहं गताः । चाचिगे प्रामान्तरे मात्रा स्वागतादिना
श्रीसङ्घर्तोषितः । श्रीसङ्घो मत्पुत्रार्थमागत इति हर्षाश्रूणि मुञ्चन्ती स्वं रत्नगर्भं मन्या विषणा । स्तस्तितिता
मिथ्यात्वी। ग्रामेऽपि नास्ति । स्वजनानुमता माता गुरुभ्यो निजं पुत्रं ददौ । आचार्थः प्रश्ने ओमित्युचरन् गृहीतः ।
तत् ज्ञानान्मुक्ताहारः पुत्रदर्शनावधि चाचिगः । उदयनः स्वावासे बांधवभक्त्या प्री० । तदनु चाङ्गदेवं तदुत्सङ्गे
निवेश्य पञ्चाङ्गप्रणामपूर्वं दुक्लत्रयं लक्षत्रयं च ढोकितवान् । चाचिगः प्राह-क्षत्रियमृत्ये १०८०, अश्वमृत्ये
१७५०, सामान्यस्थापि वणिजो मृत्ये नवनवति कलभा इति । त्वं लक्षत्रयं ददत् स्थूललक्षायसे । मत्मुतोऽनर्धस्तवभक्तिरनर्ध्यतमा तिहं अस्य मृत्ये भक्तिरस्तु। द्रव्यं न लामि। मन्नी-साधु साधुः युक्तं बृहि । चाचिगःयूयमेव प्रमाणम् । ततो गुरुभ्यो द० ।

10 (३९२) धनधान्यादिदातारः सन्ति कचन केचन । पुत्रभिक्षाप्रदः कोऽपि पुनरत्र न दृश्यते ॥ दीक्ष्या कुलयुगीज्ज्वलनम् । यतो महाभारते-

(३९३) तावद् भ्रमन्ति संसारे पितरः पिण्डकांक्षिणः। यावत् कुछे विशुद्धात्मा यती पुत्रो न जायते॥ श्रीहेमस्रिपादाः।

§ २८९) श्रीसोमेश राजादेशात् । यत्र तत्र समये ।। १ ॥ भववी ।। २ ॥ राज्ञाऽऽरात्रिकाद्यनु तमेकानते 15 देवगर्भागारे मत्समस्त्वत्समः शंभ्रसमो निह । भाग्यवशादेतत्रयसंपत्तिः । शिवदं देवं ब्रृहि । आचार्याः ईशमेव प्रादुःकुर्वे । यथा तन्मुखेन शिवमार्गं वेत्सि । नृपाश्चर्यम् । आवयोरेकाग्रयोः सर्वं सुकरम् । मया ध्यानं त्वया धूपोत्क्षेपः । जलाधारोपरिहेमाभः । दुरालोकश्चश्चपातिरूपः । असंभाव्यस्वरूपः । तपस्ती प्रादु । राज्ञः स्तुतिः । नृपेणादेशं देहीत्युक्ते, मोहनिशादिनमुखात्तन्मुखादिति तद्वाणी । राजन्त्रयं महर्षिः सर्वदेवतावतारः । ज्ञानमयः । एतिहृष्ट एवासन्दिग्धो मोक्षः । तिरोद्धे । श्रीहेमाचार्यो राजिन्निति यावद् ब्रृते, राजा तावन्ननाम 20 पादांभोजम् । तदादेशात्त्यक्तं मांसमद्यम् । ततः पत्तने बोधः । आज्ञावर्तिषु । तृतीयव्रताधिकारे मृतकद्रव्यद्वासप्तिलक्षमितं पद्वं पाटितवान् ।

§२९०) सुराष्ट्रासंसुमाररणे आखुनानीतद्शायां काष्ट्रप्रासादोऽपनीय नव्यपापाणरचनायां कृताभिग्रहो रण-भग्न उदयनो देवद्रव्यं २ याचन् खजनैरुक्तं बाहडामडसुतौ करिष्यथः। पात्राभावे तद्वेषधारिणं वण्ठं ननाम । आराधना ।

(३९४) जिने वसित चेतिस त्रिभुवनैकचूडामणी
कृतेऽनदानसिद्धधौ सकललोकबद्धाञ्जलिः।
समस्तभवभावनाप्रतिकृतिं समभ्यस्यतः
स चान्त्यसमयक्षणः कचिदुपैति पुण्येऽहिन ॥

स्वर्गः । वण्ठोऽपि तद्भावनाद्रैवतेऽनशनः । ततः स्वजनैः पत्तने उक्तौ वाहड-आम्बडौ कृताभिग्रहौ । वर्षत्रयेण संपूर्णः प्रासादः । मम्माणिविम्बम् ।

骄

(३९५) त एव जाता जगतीह जन्तवः खंकीयवैशस्य त एव भूषणम् । य एव देवे च गुरौ च बान्धवे यथाखमौचिखविधानतत्पराः ॥

> मोक्षार्थे खधनेन शुद्धमनसा पुंसा सदाचारिणा। बद्धं तेन नरामरेन्द्रमहितं तीर्थेश्वराणां पदम्, प्राप्तं जन्मफलं कृतं जिनमतं गोत्रं समुद्योतितम्॥ ॥ श्रीशत्रुञ्जयोद्धारः॥

§ २९१) कपर्दिनानुमतेन केनापि सभायां कामन्दकीनीतौ-

(३९६) पर्जन्य इव भूतानामाधारः पृथिवीपतिः । विकलेऽपि हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपतौ ॥ राज्ञोक्ते 'मेघस्य राज्ञ उपम्या ।' इति संसद्धेषें । श्रीकपर्दिनोक्तम्-उपमा १, औपम्यं २, उपमेयं ३ । ततो 10 नृपेण वर्षेण व्याकरणं काव्यम् । विचारचतुर्भुखप्रवन्धः ।

§ २९२) 'रोम्णां ग्रहणमाकरे' मूलपाठे पं० उदयचन्द्रः प्राह-'प्राणितूर्याङ्गाणा'मित्ये कत्वम्। ततो रोम्गो ग्र०॥

§ २९३) घृतपूरयोग्यायोग्ये । एकभिडवन्धप्रासादाः ३२ कारिताः । प्रायश्चित्तप्र० ।

§ २९४) उन्दरद्रव्येणोन्दरवसही कारिता। करम्भसम्बन्धे करम्बकविद्याः । सपादलक्षीयमारितयूकव्यवहा-रिसारेण यूकावसही ।

१२९५) नृपेणोक्त आलिगनामा प्रधानपुरुषः प्राह-श्रीसिद्धेऽष्टनवित्युणाः, द्वौ दोषौ । त्विय द्वौ गुणौ, दोषा अष्टनवितिरित्युक्ते, असमाधौ छुरिकां चक्षः। श्रीसिद्धस्य गुणाः ९८ रणासुमटता-स्त्रीलम्पटताम्यां तिरो-हिताः। तव कार्पण्यादयो दोषा रणश्रूरता-परनारीसहोदरताभ्यां तिरोहिताः। आलिगप्र०।

(३९७) यूकालिक्षदातावलीवलवल्रहोलोल्लल्कम्बलो दन्तानां मलमण्डलीपरिचयादुर्गन्धरुद्धाननः । नासावंद्यानिरोधनाद्गिणिगिणत्पाठप्रतिष्ठास्थितिः सोऽयं हेमडसेवडः पिलपिलत्खिल्लः समागच्छति ॥

अञ्चल्लो वधः । पौषधागारपार्थे । श्रीयोगञास्त्रं श्रुत्वा-

(३९८) आतङ्ककारणमकारणदारुणानां वक्त्रेषु गालिगरलं निरगालि येषाम् । तेषां जटाधरफटाधरमण्डलानां श्रीयोगशास्त्रवचनामृतमुज्जिहीते ॥

॥ वामराशिवित्रप्रबन्धः ॥

§ २९६) सुराष्ट्रातश्रारणीं─ (३९९़) लिच्छ वाणि मुहकाणि ए पइं भागी मुहु मरउं। हेमसूरि अत्थाणि जे ईसर ते पंडिआ।। नृषेण दत्तसहस्तप्रभुपादानां प्रा० आरात्रिकानं०─

20

25

15

20

(४००) हेम तुहाला कर मरू जिह अचन्मुअरिद्धि। जे चंपह हिठा मुहा तीह उपहरी सिद्धि॥

त्रिःपाठे लक्षत्रयम् । चारणप्रवन्धः ॥

§ २९७) यात्रामनोरथे नृपे युगलिका—डाहलदेशीयः श्रीकर्णस्त्वां प्रति । राजा खेदं गुर्वन्ते । श्रेयांसि० ॥१॥ ज्र प्रशः—प्रारम्यते० ॥ प्रारम्य विद्यनिहता । विद्यैः० ॥ २ ॥ द्वादशयामे धर्मेण विद्यापमः । किंकर्तव्यम्ढो नृपः । ताम्बूलत्यागे । युगलिका—रात्रौ प्रयाणे वटलप्रकण्ठहारेण मृतः श्रीकर्णः । द्वासप्ततिसामंतयुतः श्रीसङ्घेन सह सप्तदशहस्तमिते प्रश्चजन्मभूमिखयंकारितविहारे प्रभावनां कृत्वा श्रीशत्रुद्धये । त्वया चरणग० ॥ १ ॥ यत्त्वया जगतीनाथ । न्यहन्यत मनोभवः० ॥२॥ दुक्खक्खउ० ॥३॥ विविधप्रार्थनावसरे—इकह पुल्लह० ॥४॥ पठितनवे चारणे नवलक्षान् ददौ राजा । नृपादेशात् आंवडेन त्रिपष्टिलक्षे रैवतकपद्या । तीर्थयात्राप्रबंधः ।

10 § २९८) देशादाकारितश्रीदेवचन्द्रस्रिरिभः कनकोत्पत्त्यवसरे । मुद्गरसप्रायदत्तविद्यया त्वमजीर्णभाक्, कथ-मिमां विद्यां मोदक० तव मन्दाग्नेर्द्दामि इति । श्रीहेमचन्द्रस्रिरदेवत्वात् ६ मासै राजाऽपि ।

(४०१) स्वस्ति श्रीमति पत्तने न्द्रपगुरुं श्रीहेमचन्द्रं मुदा
स्वःशकः प्रणिपत्य विज्ञपयति स्वामिन् त्वया सत्कृतम् ।
चन्द्रस्याङ्कमृगे यमस्य महिषे यादस्सु यादःपतेविष्णोर्मतस्यवराहकच्छपकुले जीवाभयं तन्वता ॥

(४०२) नम्रं शिरः कुरु तुरुष्क कलिङ्ग लिङ्गं त्यक्तवा वनं व्रज गजवजमङ्ग यच्छ । मुश्रायुधं मगध मालव मालपोचैर्नन्वेष गूर्जरपतिः कुपितोऽभ्युपैति ॥

(४०३) मौिलं मालवनायको नमयति खामङ्गुलं जाङ्गल-खामी कृन्तित दक्षिणक्षितिपतिर्गृह्णाति दन्तैस्तृणम् । सिन्धौ सिन्धुपतिर्निमज्जति नगोत्सङ्गे च वङ्गेश्वरो नश्यलाग्रु निशम्य यस्य जयिनः प्रस्थानभेरीखरम् ॥

॥ श्रीकुमारपालप्रवन्धः ॥

§ २९९) [मरुवास्तव्यः] श्रीमाल ऊदाको विणिग् वर्षायां घृतक्रयार्थम् । [टिप्पण्याम्-रात्रौ व्रजन् कर्म-करैरेकसात्केदारादपरसिन्नीरैः पूर्यमाणे 'के यूयम् ?' अम्रकस्यामुकाः । ममापि क्वापि सन्ति ? । तैः कर्णावत्यां 25 तवापि सन्ति । शक्कनप्रन्थिः । सक्कदुम्बस्तत्र कर्णावत्यां [वायटीय]प्रासादे छीम्पिकाभोजनं तद्त्तस्थितिः । लक्ष्मीवृद्धौ नव्यावासस्वाते निधिः । ततः स उदयनमन्त्री । [टि०-तत्रातीतादिचतुर्विशतिजन ७२ सगलंकृतः प्रासादः कारितः ।]

(४०४) कृतप्रयत्नानिप नैति कांश्चन खयं शयानानिप सेवते परान्। द्वयेऽपि नास्ति द्वितयेऽपि विद्यते श्रियः प्रचारो न विचारगोचरः॥

30 तद्क्रजा बाहडदेव १, आम्बड २, चाहड ३, सील् ४ [अपरमातृकाः]।

JEFF dira Gandhi Nation §३००) सान्तू राजपा० स्वकारितप्रासादे वाराङ्गनास्कन्धन्यसहस्तं कमि चैत्यवासिनं ददर्श । देवान् विन्दित्वा स नतः । स लिजितः श्रीमलधारहेमान्ते प्रवज्य संवेगात् श्रीशृतुज्ञये १२ वर्षं तपस्तेषे । (४०५) रे रे चित्त कथं श्रातः प्रधावसि पिशाचवत्। अभिदं पश्य चातमानं रागत्यागातसुखी भव॥ (४०६) संसारमृगतृष्णासु मनो धावसि किं सुधा। सुधामयमिदं ब्रह्मसरः किं नावगाहसे ॥

देववन्दनाय तत्र गतः श्रीसान्त्र्सं प्रेक्ष्य विस्रयः । सः-

(४०७) जो जेग सुद्धधम्मंमि ठाविओ संजएण गिहिणा वा। सो चेव तस्स जायइ धम्मगुरू धम्मदाणाओ॥

॥ लजाप्रबन्धः ॥

§ ३०१) जित ८४ वादः कुमुद्चन्द्रः श्रीदेवस्तिशिष्यरत्नप्रभः प्रदोषे गुप्तवेषो रात्रौ कु० मठे । तेन कस्त्व-मित्युक्ते । अहं देवः । को देवः । अहम् । अहं कस्त्वं श्वा । श्वा कः । त्वम् । त्वं कः । अहं देवः । इति 10 चक्रश्रमदोषात् ।

(४०८) हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोक्तिसण्टिङ्कितैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे मुग्धो जनः पात्यते । तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सत्यं कौमुदचन्द्रमङ्गियुगरुं रात्रिंदिवं ध्यायत ॥

15

(४४९) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृश्चात्यंहिणा कः कुन्तेन सितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्क्षति । कः सन्नह्यति पन्नगेश्वरशिरोरत्नावतंसश्चिये यः श्वेताम्बरशासनस्य कुरुते वन्द्यस्य निन्दामिमाम् ॥

श्रीसिद्धराजसभावादावसरे कुमुदः श्रीहेमचन्द्रं प्रति । पीतं तक्रम् । श्रेतं तक्रम् , पीता हरिद्रा । युवयोः को 20 वादी ? । श्रीदेवस्रिरिमरयं वालः । अनेन को वादः । त्वमेव बालो योज्यापि कटीद० वस्तं न धत्ते ।

(४१०) खद्योतस्रतिमातनोति सविता जीर्णोर्णनाभालय-च्छायामाश्रयते शशी मशकतामायान्ति यत्राद्रयः । इत्थं वर्णयतो नभस्तव यशो जातं स्मृतेर्गोचरं तद्यस्मिन् भ्रमरायते नरपते! वाचस्ततो सुद्रिता॥

25

(४११) नारीणां विदधाति निर्वृतिपदं श्वेताम्बरपोछसत्-कीर्तिस्कातिमनोहरं नयपथपस्तारभङ्गीगृहम् । यस्मिन् केवलिनो विनिर्जितपरोत्सेकाः सदा दन्तिनो राज्यं तज्जिनशासनं च भवतश्चौछक्य! जीयाचिरम् ॥



dira Gandhi National Centre for the Arts § ३०२) ३६०००० ग्रामकन्यकु छादेशकल्याणकटकपुरे श्रीभूयराजा राजपा० । स्त्रीं प्रेक्ष्य कामार्तः । यतः-(४१२) न पद्यति दिवा घूकः काको नक्तं न पद्यति । कामार्तः कोऽपि पापीयान् दिवा नक्तं न पद्यति ॥

स्वनरेणानायि प्रोक्तस्वनीचत्वार्ते-पूर्वे धृतकरा सा मुक्ता लिजितेन राज्ञा । स्वकरो छेदितौ गवाक्षगौ निज-5 यामिकैरेव । महाकालाराधनादागतौ करौ । मालवदेशं तसौ दत्त्वा तापसः संजातः ।

§ ३०३) कन्य० एकदेशगूर्जर० वडीयारदे० पश्चासरग्रामे चापोत्कटवंश्यं झोलिकास्थं वालं वनाऽग्रे आरोप्य माता रन्धनादिः श्रीशीलगुणसूरिभिस्तन्मातुर्शृतं दत्त्वार्पितो वीरमितगिणिन्या पाल्यमानः। वनराजनामा ८ वर्षः। देवपूजा विना० मृषकान् मार०। गुरुणा निषिद्धोऽपि दण्डयोग्या अमी। तस्य जातके राजयोगं मत्वाऽयं महाराजा भावीति मातुः सम०। [चौर मातुलेन सह] धाट्यादिना चरित। काकरग्रामे धनिगेहं सुष्णन् दिधमाण्डे करे पतिते सुक्तोऽहमिति सर्वं हित्वा गतः। अन्यदा तद्भगिन्या श्रीदेव्या निश्चि गुप्तवृत्त्या बन्धुवात्सल्यात् स्थानादिनोपकृतो मम राज्ये त्वयैव तिलकं विधेयम्। अन्यदा चौरैः कापि वने रुद्धेन जाम्बाकेन ५ शरमध्यात् २ भग्ने। श्रीवन[रा]जेनोक्तं मे महामात्यो भावीति।

§ ३०४) अथ कन्यकु० तद्राजसुता महणका कंचुकसंबन्धे गूर्जर० पश्चकुलं पण्मासैरुद्राहित २४ लक्षपारुथ-कद्रमान्, ४००० तेजीतुरङ्गान्, [सौराष्ट्रघाटे] लात्वा यान् श्रीवनराजेन हत्वा वर्षं वने स्थित्वा, पुरनिवेशाय 15 भूमिं विलोकयता अणहिलगोपः प्राप्तस्तेन यत्र शशकेन श्वा त्रासितस्तत्र तन्नाम्नाणहिल्लपुरम्। [५० वर्षायः] प्रतिपन्नभगिन्या तिलकम्। जाम्बाको महामात्यः। आचार्यवचसा श्रीपार्श्वप्रतिमालंकृतं निजाराधकम् तियुतं पश्चासरं कारितम्। सं० ८०२।

§ ३०५) श्रीमृलराजा [स्वकारितप्रासाद] धर्मस्थानारश्चं विलोकयन् सरस्वतीतीरे एकान्तरोप पंचप्रास्याव कांथडिकं तपस्विनं आरोपिततृतीयज्वरकम्पमानकंथाकं प्रेक्ष्योवाच । सर्वथा कशं न हीयते । म्रुनिः-अभुक्तं

20 कर्म न० । नृपेण धर्मस्थानरक्षणायाभ्य० सः ।

(४१३) अधिकारात् त्रिभिर्मासैर्मठापत्यात्रिभिर्दिनैः । ज्ञीघं नरकवाञ्छा चेहिनमेकं पुरोहितः ॥ इति निषिद्धो नृपः ।

§ ३०६) श्रीपरमारवंश्यश्रीहर्षभूपो राज० शरवणमध्ये जातमात्रं वालं प्राप्य देव्यै० स मुझ इति नाम । ततः [राज्ञः] सीन्धलः मुतः । मुझे राज्यं रुद्रादित्यो महामात्यः । उत्कटत्वात्सीन्धलो निष्काशितः । गूर्जरदेशे 25 कासद्रासन्ने निजपल्लीं कृत्वोवास । दीपाली निशि मग० चौरवध्यभूमिपार्श्वे सूकरं प्रति वाणम् । शबेन सङ्केतः । सीन्धलेन निवार्य शरेण हतः किरिः । सीं० तव सङ्केतकाले शूकरवधः श्रेयानथाधुनेति । तत्साहसतुष्टः । प्रेतो भूम्यपाति वाणवरं श्रीमुझान्त्यसमयं प्रकाश्य गतः । मालवे गतः । श्रीमुझसम्पदैकदेशं प्राप्तः । पुनरुत्क० नेत्रे किर्पते । ग्राममेकं दत्तं ग्रासार्थम् । पझरगेन मोजः सुतः । तञ्जातकम् ।

३ टि०-१०९८ वर्षे मूलराज्याभिषेकः।

मुलार्कः श्रूयते शास्त्रे सर्वकल्याणकारकः । अधुना मूलराजेन योगश्चित्रं प्रशस्यते ॥ स्वप्रतापानले येन लक्षहोमं वितन्वता । सूचितस्तत्कलत्राणां बाष्पावग्रहनिग्रहः ॥ कच्छपलक्षं हत्वा सहसाधिकलम्बराजमायातम् । संगरसागरमध्ये धीवरता दर्शिता येन ॥

४ टिप्पन्यां-वयजलदेवनामानं निजं विनेयं तेन राज्ञोऽभ्यर्थनया जात्यघुसणसाष्ट्रौ पलानि सृगमद् ४ कर्प्र १ द्वात्रिंशद्वाराङ्गनाः । पुनं प्रा॰ कृत्वा स्थापितः स्वयं ब्रह्मचारी॰ । राज्ञा परीक्षा । ताम्बूलप्रहारेण कृष्टिनी सज्जां च॰ इत्यादि ।

५ दि०-गय गय रह गय तुरय गय, पायकडानि भिच । सम्मद्विड करि मंतणुं महंता रुदाइच ॥

१ टि०-सतीत्वं दासदास्य ऽहं सत्यम् । २ राज्यरक्षायै परमारराजपुत्रान्नियोज्य ।

(४१४) पश्चादात् पश्चवर्षाणि मासाः सप्त दिनत्रयम् । भोक्तव्यं भोजराजेन सगौडं दक्षिणापथम्॥

[ज्ञानिपार्थात्पुत्रभिक्षां याचितः । अभ्यस्तशास्त्रपद्त्रिंशदण्डायुधः, अधीत्य ७२ कलाऽक्र्पारपारंगतः समस्त-लक्षणलितः स वृष्ट्ये ।] इत्याकर्ण्य श्रीमुञ्जेनान्त्यजेभ्यः स० । तैः सानुकम्पैरभीष्टदेवं स० ।

(४१५) मान्धाता स महीपतिः कृतयुगालंकारभूतो गतः, सेतुर्येन महोदधौ विरचितः कासौ दशास्यान्तकः। अन्ये येऽपि युधिष्ठिरप्रभृतयो यावत् भवान् भूपते, नैकेनापि समं गता वसुमती मन्ये त्वया यास्यति॥

इति राज्ञे सम । श्रीमुझः खेदादि । यौवराज्ये भोजः।

§ ३०७) अथ तिलङ्गदेशपतैलपनृपरणे बद्धो मुझः । कारायां तद्भगिन्या सह भार्या सं० । मृणालवती स्वमुखं दर्पणे विलोकयन्ती विषण्णा मुझेनाभाणि ।

(४१६) पभणइ मुंज मुणालवइ जुवणु गियउं म झूरि। जइ सक्तर सयखंड थिय तोइ स मींटी चूरि॥

इति तां मो० । निजप्रधानदापितसुरङ्गासङ्केते राजा तां प्रतीक्षमाणस्तया स्वित्रातुः कथितम् । तैरुपेन प्रति-कुटं भ्राम्यमाणो मुझः-

(४१७) संउ चित्तहं [सड़ी मणहं बत्तीसडी हियाहं। अम्हे ते नर ढाढसी जे वीसस्या त्रीआहं॥ 15

(४१८) झोली त्र्टी किं न मूयउ किं न हूउ छारह पुंज । हींडइ दोरी दोरीयउ जिम मंकडु तिम मुंजु ॥

एकसिन् दिने एकां भिक्षोत्तरं कुर्वाणां स्त्रीं प्राह मुझ:-

(४१९) भोली मूधि म गबु करि पिक्खिव पहुसयाई। चऊदसहं बहत्तरहं मुंजह गयह गयाई॥

[इत्थं सुचिरं भिक्षां भ्रामयित्वा भूपादेशात्] अन्यदा वधकाले [नरैरुक्तमिष्टदैवतं सरेत्युक्तं] सुञ्जेन-(४२०) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे वीरश्रीवीरवेश्मिन । गते सुञ्जे यशःपुञ्जे निरालम्बा सरस्वती ॥ भूलीप्रोतं नित्यं दिधिलिप्तमौतिं तैलपः कारयामासामर्पादिति ॥

§ ३०८) कियतां कार्पटिकानां त्वं राज्यं ददासीति भवान्योक्तो भवस्तां गां पङ्कमग्रां कृत्वा नृरूपस्तटस्थः पान्थान् उ० । तैरासम्वश्रीसोमेश्वरदर्शनोत्कैरुपहसितः । केनापि कृपावता पथिकवृन्देनोद्धरणप्रारम्भे सिंहरूपेण व्यम्भुना त्रासिते कश्चिदेकोऽवज्ञातभयस्तस्याः पार्श्वे स्थितः । स एव योग्यो राज्यस्थेत्युक्ता गौरी भवेनेति ।

१ टि०-इदं काव्यं पत्रके आलिख्य नृपतेः समर्पयामास । तद्दर्शनात् नृपतिः खेदमेदुरौ भ्रूणहत्याकारिणं स्वं मन्यमानः । श्रीभोजो-नमानितयुवराज्यादिना । मुझस्तु तिळङ्गदेशीयराज्ञा तैळपदेवनाम्ना सह योद्धं गतः । तेन भग्नो बद्धश्च विडंब्य निपातितश्च ।

२ तत्र गतोऽसौ वृद्धां मां त्यक्ष्यतीति विमृशनया।

३ टि॰-आपद्गतं इसिस किं द्रविणान्धसुग्ध, लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीह किमत्र चित्रम् । किं त्वं न पर्यसि घटीर्जलयम्रचके, रिक्ता भवन्ति भरिताः पुनरेव रिक्ताः ॥ १ ॥

§ ३०९) कश्चित्कार्प० श्रीसोमेश्वरयात्रायां यान् पथि लोहकारौकिस निश्चि भार्यया खपितं छुर्या हैत्वा कार्पटिकशीर्षे छुरी मुक्ता बुम्बापातः। तलारकैस्तस्य करौ छिन्नौ। तेन दैवोपालम्भे निश्चि श्रीसोमेशः पूर्व एकेनाजा
कर्णयोर्धता परेण मारिता। ततः साऽजेयं नारी, येन मारिता स पितः। त्वया कर्णौ धृतौ। तवागमे उछसितकोपे त्वत्करौ गतौ। ततो मे उपालम्भः कथिमिति।। कृपाप्रबन्धः।।

§ ३१०) प्रतिष्ठाने श्रीशातवाहनो राजपा० आसन्ननद्यां झपहासे ज्ञानसागरसाधुना─त्वं पूर्वं काष्ठवाहको नित्यं सक्तुतीमनम् । अन्यदा मासोपवासिनं मुनिं प्रेक्ष्य पूर्वभवे कस्यापि न दत्तम् । यतः─

(४२१) रम्येषु वस्तुषु मनोहरतां गतेषु रे चित्त ! खेदमुपयासि कथं वृथा त्वम् । पुण्यं कुरुव्व यदि तेषु तवास्ति वाञ्छा पुण्यैर्विना नहि भवन्ति समीहितार्थाः ॥

तद्दानाच्वं श्रीशातवाहनः । देवग्रस्तझपेण ह० ।

10 (४२२) मीनानने प्रहसिते भयभीतमाह श्रीशातवाहनमृषिभेवतात्र नद्याम् । यत्सक्तुभिर्मुनिरकार्यत पारणं प्राक् दैवाद्भवन्तमुपलक्ष्य झषो जहास॥

जातस्मृतिः । अहोदानम् । यतः-

(४२३) दानपात्रमधमर्णमिहैकग्राहि कोटिगुणितं दिवि दायि। साधुरेति सुकृतैर्यदि कर्तुं पारलौकिककुसीदमसीदत्॥

(४२४) पूर्वपुण्यविभवन्ययबद्धाः सम्पदो विपद् एव विमृष्टाः । पात्रपाणिकमलार्पणमासां तासु शान्तिकविधिर्विधिदृष्टः ॥

ततः प्रभृति पात्रदानादि ॥ श्रीशातवाहनपात्रदानप्रबन्धः ॥

§ ३११) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता रूपवती बालविधवार्कसन्मुखावलोके तेनैव ग्रुक्ता, गर्भे, वने ग्रुक्ता । पुत्रजन्म । साष्टाब्दः । लेखशालिकपराभूतो मातृपार्थे पितृनामानवगम्य मर्तुकामोऽर्केण करे कर्करोऽर्पितः । साप-20 राघे शिलान्यथा तवैव शिलेत्युक्तः । ततः स शिलादित्यः । तत्पुरनृपेण परीक्षाये तथा कृते मृते राज्ञि स एव राजाः अर्कदत्ताश्वारूढो नभश्वर इवेच्छाविहारी महाप्रतापी जैनम्रुनिवासितः श्रीशत्रुद्धयोद्धारकः । कदाचित्सौगतैः श्रेताम्बरपराभवे श्रीशत्रु अधिष्ठितम् । तद्भागिनेयो महानामा श्रुद्धः । वेषपरावर्तेन बौद्धपार्श्वे पठन् निशीये खे यान्त्या भारत्योक्तः के मिष्टाः । बह्याः । पुनः षण्मासान्ते निश्येव केन सह । वृतगुडाभ्यामित्युक्ते तुष्टायां भारत्यां जिताः सौगता निःकाशिता देशात् शिलादित्ये सभापतौ। तत आचार्यपदं श्रीमह्नवादिस्तरः ॥ मह्नवादिप्रबन्धः ॥

25 § ३१२) श्रीमालपुरे माघपण्डितः । पित्राऽपि [टि०-कुम्रुदपण्डितेन] खपुत्रापन्निराकरणाय वर्षशतदिन-मितनाणकहारकान् दत्त्वा भोगायानेकशो दत्त्वा च विपेदे । तिहद्क्षयागतश्रीभोजं सवलं रञ्जयामास । मरकत-बद्धा भूमिर्दिन्या । काचबद्धा सञ्चारकभूः । दैवज्ञोक्तप्रान्ते पादे श्वयथुः । पुण्यक्षये देशमोचः । यतः-

९ टिप्पण्यां—भोजान्ते भोजनम् । शीतर्तौ प्रावरणम् । प्रच्छादककदशनं भोजितः लादितश्च रात्रौ स्तोकान्नं स्निन्धम्*। प्रतलमा-च्छादनम् । ग्रुषिरत्रम्बकस्तम्भान्तःप्रविष्टाभितापेन न शीतार्तौ राजा ।

^{*} टिप्पण्या उपरि टिप्पणी-५०० गवां दुग्धं २५० पानं यावत् ४ गावः । तापिते तस्मिन् कण्डारकेण शालिर्विधीयते पाके शर्करा-दिना संस्कृते स्रोके परिवेषिते राजा तृष्ठः ।

(४२५) देशं खमपि मुश्रन्ति मानम्लाने महाशयाः । दिवावसाने बजति द्वीपान्तरमहर्मणिः॥ धारायां गतः । पुस्तकग्रहणकार्पणपूर्वं श्रीभोजात्कियद् द्रव्यमानेयुमित्युक्ता भार्या गतोपलक्षिता नृपेण । विषादः। पुस्तकाद्यपत्रे काव्यम्-

(४२६) कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मुद्रमुद्धकः प्रीतिमांश्चकवाकः। उदयमहिमरिइमर्याति शीतांग्ररस्तं हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः ॥

अस्येव काव्यस्य सर्वोर्वीमूल्यम् । परं लक्षं १, सा मार्गे याचकैः । नाक्षराणि ० - प्रस्मृतः किमथवा ।। गृहागता पत्या प्रशंसिता । अन्यदा भिक्षा०-अर्था न सन्ति न च मुं० ॥ (४२७) दारिक्र्यानलसन्तापः शान्तः सन्तोषवारिणा । दीनाशाभङ्गजन्मा तु केनायमुपशाम्यति ॥ व्रजत व्रजत प्राणाः ।। ततो मृतः । नृषेण तञ्जातेर्भिक्षमाल इति ।। पण्डितमाघप्रवन्धः ।।

§ ३१३) डाहलदेशे देमतराज्ञी महायोगिनी गणकवचसोत्तिमतगर्भा १६ यामान् यावत् श्रीकर्णजन्म । 10 अष्टमयामे सापि मृता । मुखे हारावाप्तिर्नयन० ॥ श्रीकर्णप्रवन्धः ॥

§ ३१४) श्रीसिद्धराजोपरोधेन श्रीहेमव्याकरणं १ वर्षेण सम्पूर्णम् ।

(४२८) भ्रातः पाणिनि ! संवृणु प्ररुपितं कातस्त्रकन्था वृथा मा कर्षीः कटु शाकटायनवचः क्षुद्रेण चान्द्रेण किम्। कः कण्ठाभरणादिभिर्बठरयत्यात्मानमन्यैरपि

श्रुयन्ते यदि तावदर्थमधुराः श्रीसिद्धहेमोक्तयः॥

§३१५) मालवान्महास्थाने श्रीसिद्धराजा जैनप्रा० ध्वजं प्रेक्ष्य कुपितः। विप्राः-देव अयं ध्वजारोपः प्रापि । यतो नगरपुराणे-

पश्चादादौ किल मूलभूमेर्दशोर्द्धभूमेरपि विस्तरोऽस्य। उचैस्त्वमष्टैव तु योजनानि मानं वदन्तीति जिनेश्वराद्रेः॥

20

15

ततो जैनप्रा० ध्वजाः।

§ ३१६) डाहलदेशीयनृपसमंखागता । 'आयुक्तः प्राणदो लोके।' पूरिता श्रीप्रश्विः।

§ ३१७) जाम्बान्वयिश्रीसञ्जनदण्डेशेनोद्ग्राहितवर्षत्रयसुराष्ट्राद्रच्येण काष्ट्रप्रासादमपनीय श्रीनेमित्रासादो-द्धारः। चतुर्थवर्षे आनायिते सज्जने नृपेण द्रव्ये मार्ग्यमाणे तत्रत्यागतव्यवहारिभिदीयमाने । द्रव्यं पुण्यं वावधा-रयतु खामीत्युक्ते सजने राजा पुण्यमग्राहीत् । ततः पुनरप्यधिकारः । तीर्थद्वये योजन १२ ध्वजा दत्ता ।



१ टिप्पण्याम्-अर्था न सन्ति न च मुञ्जति मां दुराशा त्यागान्न सङ्कचिति दुर्केलितः करो मे । याच्चा च लाधवकरी स्ववधे च पापं प्राणाः स्वयं व्रजत किं परिदेवितेन ॥ श्चुत्क्षामः पथिको मदीयभवनं पृच्छन् कुतोऽप्यागतस्रात्कं गोहिनि किंचिदस्ति यदयं भुङ्के श्वधापीडितः । वाचास्तीत्मिधाय नास्ति च पुनः प्रोक्तं विनैवाक्षरैः स्थूलस्थूलविलोललोचनगलद्वाष्पाम्भसां विन्दुभिः ॥

श्रीमालेषु धनवत्सु सत्सु श्रुधाविनष्टे पुरुषरते भिल्लमा ।

२ टिप्पणी-दण्ड-मुण्ड-डम्भनानि सोमेश्वरे दृष्टा सिद्धेशस्य गिरिनारे हर्षः ।

(४३०) न्यव्यापारपापेभ्यः स्वीकृतं सुकृतं न यैः। तान् धूलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मूहतमान्नरान्॥ ॥ इति श्रीरैवतकोद्धारप्रवन्धः॥

§ ३१८) अन्यदा श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरयात्रां कृत्वा वलन् रैवतं गन्तुर्मिच्छुर्विप्रैर्मात्सर्याछिङ्गाकारमिति निषिद्धः श्रीश्चनुङ्जये आकृष्टकृपाणिकैर्विप्रैर्निषिद्धो रात्रौ कार्पटिकवेषेणारुरोह । सरोमाश्चं देववन्दनम् । द्वादश-5 ग्रामोद्वाहितं दत्तम् ।

§३१९) श्रीपत्तने आभडवणिग् कांस्यकारगृहे घर्घरादिना ५ विशोपकैराजीविकः । श्रीहेम० पार्श्वे २ प्रतिकामन् अधीतरत्तप० परिग्रहं प्रमाणीकुर्वन् प्रभुभिः साम्च० द्रमा ३ [लक्षाः-टि०] मोकला मोचिताः ।
अन्यदा कापि ग्रामेऽजाव्रजं चरन्तं प्रेक्ष्य कण्ठे पाषाणं मूल्येन लात्वा मणिकारपार्श्वादुत्तेजितं श्रीसिद्धराजमुक्कटावसरे लक्षद्रव्येण दत्तम् । तेन द्रव्येणागतमाञ्चिष्ठाठामानि क्रीत्वा तद्विक्रयावसरे सांयात्रिकैर्जलचौरभयात्तद10 न्तर्निहिता हैमकाम्ब्यः । ततः श्रीसिद्धराजमान्यो जैनप्रासादादि ॥ वसा० आभडस्य प्रवन्धः ॥

§ ३२०) अन्यदा श्रीसिद्धराजेन धर्मतत्त्वादिष्टष्टेषु सर्वदर्शनिषु निजस्तुतिपरनिन्दकेषु आकारितश्रीहेमस्ररिः १४ विद्यारहस्यं विमृस्य पौराणिककथा-

पुरा कश्चिद् व्यवहारी पूर्वोढां पत्नीं हित्वा सङ्गहिणीकृतसर्वस्वः पूर्वया वशीकरणायाभ्यर्थितगौडदेशीयेनोक्तम् रिम्बद्धां गामिव तव पतिं करोमीत्युक्त्वाऽचिन्त्यौषधं दन्त्वाऽऽहारान्तर्देयम्। तथाकृते पतिगौः। तत्य्रतीकारम15 जानन्ती विश्वविश्वाकोशान् स०। निजं निन्दन्ती एकदा मध्यन्दिने तापाकान्तापि शाङ्वलभूमिषु तं चारयन्ती कस्यापि तरोस्तले विश्वान्ता विलपन्ती खे वाणीम०। तत्रागतो विमानारूढो भवो भवान्या तद्दुःखकारणं पृष्टो यथावस्थितं निवेद्य च तस्थैव तरोश्लायायां पुंस्त्वहेतुमौषधं तिम्बन्धादादिश्य ति०। सा तद्तु तच्लायां रेखाक्रितां कृत्वा तन्मध्यवर्तिन औषधाङ्करान् लात्वा मुखे क्षि०। तेनाप्यज्ञातौषधेन स गौर्नरः। यथा तद्ज्ञातभेषजाङ्करः समीहितकार्यसिद्धं चकार, तथा कलियुगे मोहात् तिरोहितं पात्रपरिज्ञानम्। ततः सर्वदर्शनाराधनेन
20 तदिप मोक्षदं भवतीति निर्णयः।

तथा, द्वैपायन-युधिष्टिरभीमसंवादे पात्रपरीक्षायाम्-

(४३१) मूर्खस्तपस्ती राजेन्द्र! विद्वांश्च वृषलीपतिः।
उभौ तौ द्वारि तिष्ठेते कस्य दानं प्रदीयते॥
युषिष्ठिरः- (४३२) सुखासेव्यं तपो भीम! विद्या कष्टदुरासदा।
विद्वांसं पूजियष्यामि दारीरैः किं प्रयोजनम्॥

भीम:- (४३३) श्वानचर्मस्थिता गङ्गा क्षीरं मद्यघटस्थितम् । अपात्रे पतिता विद्या किं करोति युधिष्ठिर ॥

१ टिप्पण्याम्-पत्नी प्रसूता दुग्धं न प्राम्नोति बालकः सीदिति तदर्थमजां गृहीतुकामो गतः । नीलं जलं धूर्तव......ज्ञातं रत्नम् । गृहीता सा सटोकरा तन्मध्यरत्नम् ।

२ टिप्पण्यां-विसा॰ आभटेन पूर्वे निर्धनेन ९ लक्षाः परिग्रहपरिमाणे मुत्कलाः कृताः । पुनर्धने जाते तपोधनानां १ वृतघटं प्रति-दिनं सञ्जकारोऽवारितः । सदा साधर्मिकवात्सल्यम् । प्रतिवर्षे सर्वदर्शनार्चा । एवमप्रशस्तिप्रासाद-प्रतिमा-पुस्तकादि गुसवृत्त्या साधर्मिकादि दानादिपुण्यानि कृतानि । ८४ वर्षायुःप्रान्ते धर्मन्ययविहकायां ९८ लक्षदर्शने खेदः । पुनः सुतैः २ लक्षे सप्तक्षेत्र्यां दस्वा अष्टलक्षीं च मानयित्वा कोटिः पूर्णीकृता । पुनः सुतासादशा एवाऽभवन् ।

द्वैपायनः (४३४) न विद्यया केवलया तपसा वार्षि पात्रता। यत्र वृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रचक्षते॥

एवं गुणोपेतपात्रभक्त्या मुक्तिः। इति प्रभुनिवेदिते श्रीसिद्धराजः सर्वधर्मान् आ०॥ सर्वदर्शनमान्यताप्रवन्धः॥

§ ३२१) मांगूः क्षत्रियः पाराच्यौ भूम्याम् । भोजने घृतकुतपः । दाढायां सोहल १, अपाटवे पथ्ये यवागूः ५ माना । अर्द्धाहारे कं वैद्येनोक्ते पुनः ५ माना । निषिद्धः । नृपेण निरा० । समयोचितम् । स्नानावसरे गजः 5 श्वानेन । तद्वलेन पीडितो मृतः ।। मांगूप्रवन्धः ॥

§ ३२२) ओतुना खद्भगुकसाकमृतश्रीजयंकेशिराजानं श्रुत्वा निजतातपुण्याय श्रीमयणछदेवी श्रीसोमे०। त्रिवेदिनं विश्रं जलन्यासावसरे प्राह-यदि भवत्रयपातकं लासि, तदा ददामि नान्यथेति। गजादि तसै। सोऽपि ददानस्तयोक्तः प्राह-त्वं पूर्वार्जितपुण्येनेदृशी जाता। दानादिना भवेन भवः श्रेयस्करः। भवत्या भवत्रयपातकं मे पापघटं लात्वाधमः कश्चिद्विग्रः खं तद्दापकं च भवाम्भोधौ पातयति। मया तु वित्तमेतदादाय पुनर्ददता 10 लब्धादृष्टगुणं पुण्यमिति॥ पापघटप्रबन्धः॥

§ ३२३) श्रीसिद्धे निशि सुप्ते वण्ठौ पराक्रम-कर्मणि प्रा० ।

(४३५) यदिह कियते कर्म तत्परत्रोपभुज्यते । मूलसिक्तेषु वृक्षेषु फलं शाखासु जायते ॥

नृपेण तदाकर्ण्य कर्मवि० । अपरिदने खप्रशंसकस्य लेखः । असै वण्ठाय शताश्वसामन्तता देयेति । सान्त्-पार्श्वे निश्रेण्या अङ्गभङ्गे मञ्चकेन गृहे, अपरो लेखं लात्वा गतः । प्रातःसामन्तता इति श्रुत्वा राजा कर्मैव व०। 15 यतः—नैवाकृति० ॥

(४३६) यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम्। तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनु धावति॥

(४३७) नमस्यामो देवान्ननु हतविधेस्तेऽपि वदागाः विधिर्वन्ध्यः सोऽयं ननु विहितकर्मैकफलदः। फलं कर्मायत्तं तत्किममरैः किं च विधिना नमः सत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्यः प्रभवति॥

॥ कर्मप्राधान्यप्रबन्धः ॥

§ ३२४) जातस्मृतिः श्रीमयणछदेवी श्रीसोमेशयात्रायां ‡वाहुलोडपुरद्वासप्ततिलक्षपाटितपट्टा सपादकोटिम्ल्यां हेमपूजां तुलापुरुषादिना सर्वान् प्री० ।

(४३८) सङ्गहैकपरः प्राप समुद्रोऽपि रसातलम् । दाता तु जलदः पश्य भुवनोपरि गर्जति ॥

रात्रस्वगतेशेनागताऽत्र कार्पटिका पुण्यं याच्यमित्युक्ता दर्पान्धा निजनरानायिता सती याच्यमानाप्यददाना कियद् व्ययितमित्युक्ताह—अहं भिक्षावृत्त्या शतयोजनानिदीकृत्यात्रागता कल्ये कृतोपवासा पारणकदिने कसाद् अपि खलं प्राप्य तत्खण्डेनेशं सम्पूज्य तदंशमितथये दत्त्वा पारितम् । त्वं पुण्यवती यसा एवंविधं कुटुम्बदानादि । ममाल्पपुण्ये कथं लोभः । यदि न कुप्यसि तदा बुवे । ममाधिकं पुण्यम् । यतः –

idira Gandhi National Centre for the Arts

[ं] टिप्पण्यां-एकोऽपि यात्रिकः पञ्चशती द्रम्माणां याच्यते । नरस्त्रीयुग्ममपि एतदेव । पश्चान्मातृ-पुत्री हस्ते रूगित्वा गच्छतः । इत्यादि विद्वतं हद्वा मयणछदेवी० ।

15

20

(४३९) सम्पत्तौ नियमः शक्तौ सहनं यौर्वने व्रतम्। दारिक्रो द्वानमित्यलपमिष लाभाय कथ्यते॥ दानं दरिद्रस्थ ॥ निगर्वा जाता ॥ श्रीमयणछदेवीयात्राप्रबन्धः॥

§ ३२५) श्रीसिद्धराजः सागरकण्ठवर्ती । चारणौ-(४४०) को जाणइ नरनाह चित्तु तुहालउं चक्कवइ । लहु लंकह लेवाह मग्गु निहालइ करणउत्तु ॥ 5 (४४१) घाई घोया पाय जेसल! जलनिहि ताहिला । पइं लइया सविराय इक्कु विभिषणु मिलिह मुहु॥

§३२६) छलान्वेषिणं मालवाधीशमागतं याचितेशयात्रापुण्यं तदानेन सान्तः पराश्चाखीचकार । आगत-भूपकोपे तत्पुण्यं मया तव दत्तमिति बोधितः।

(४४२) यस्योवीतिलकस्य निर्मलयदाःसन्दोहसन्दोहितां सामग्रीमवलोक्य लोलनयनः कैलासदीले वसन्। कास्थीनि क वृषः क निर्जरनदी केन्दुः क भोगिप्रभुः पप्रच्छेति द्यावां समाधिविगमे देवः द्यावः साद्धतम्॥

(४४३) मद्रैर्निद्रादिरद्रैः कुरुभिरुरुभयैः सोपलिङ्गैः कलिङ्गै-रङ्गैरुत्सृष्टरङ्गैरवगणितधनुर्दण्डतूणैश्च हूणैः । सुद्धैः शौण्डीर्घजिद्धौरनुसुतविभवारण्यवादैर्विरादै-र्लाटैः खिचल्ललादैरजिन गजघटाभोगरुद्धेऽस्य युद्धे ॥

(४४४) मुद्गानुद्गतमुद्गरानुरुगदाघातोद्धतान् व्यन्तरान् वेतालानतुलानलाभविकटान् झोटिङ्गचेटानपि। जित्वा सत्वरमाजितः पितृवने नक्तंचराधीश्वरं बद्धा वर्वरमुर्वरापतिरसौ चक्रे चिरात्किङ्करम्॥

॥ श्रीजयसिंहप्रबन्धाः ॥

蟒

dira Gandhi Nationa Centre for the Arts

(G.) सज्ज्ञकसङ्ग्रहस्थान्ते पातसाहिनामाविलः।

- (१) तं० १२६३ वर्षे पातसाहि साहवदीनेन गजाणपुरात्समागर्त्य पृथ्वीराजं लाहउरमून्धउरयोरन्तराले निहत्य ढिल्ली गृहीता। वर्ष ३ राज्यं कृतम्।
- (२) ततः सं० १२६६ वर्षे मार्गमासे सुरत्राणसमसदीनो दाउदपुरात् ढिह्थां समागतः। वर्ष २६ राज्यं कृतम्।
- (३) ततः संवत् १२९२ वर्षे श्रावणशुदि २ द्वितीयायां कटकादागत्य क्टं कृत्वा पूर्वसुरत्राणं हत्वा पातसाहि 5 पेरोजः समजनि । मास ६ राज्यं कृतम् । पश्रादाखेटके गतो यम्रनातटे कयलोपरीग्रामे मारितः ।
- (४) ततस्तत्पुत्री दउलती। दिनपञ्चकं यावद्राज्यं कृतम्। पञ्चात्सा मुरूयैर्लम्पटत्वेन मलिका नाम्नी व्यापादिता।
- (५) ततः परं वर्ष ३ मास ६ शून्यं जातम् । तदा मिलकक् वडीपुत्र मोजदीन मिलको ढिल्ल्यां समभूत् । सं० १२९६ वर्षे राज्यं वर्षद्वयं यावत्कृतम् । स नानामिलकभेदेन मृतः ।
- (६) ततः पातसाहि पेरोजपुत्रः अलावदीनो नानामलिकेन राज्ये स्थापितः । वर्ष ३ राज्यं कृतम् ।
- (७) ततः सं० १३०१ वर्षे आसादमासे पूर्वस्यां दिशि बहडाइचनगरान्मलिक समसदीनः समागतः । तेन दिङ्ग्यां वर्ष २१ राज्यं कृतम् ।
- (८) ततः सं० १३२२ वर्षे फाल्गुनमासे त्रयोद्वयां शुक्रवारे नसरदीनसाहिना राज्यं कृतम् । वर्षं एकं यावत् ।
- (९) ततः सं० १३२३ वर्षे चैत्रवदि २ द्वितीयायां ग्यासदीनो राजा जातः । वर्ष २० राज्यं कृतम् ।
- (१०) सं० १३४३ वर्षे चैत्रमासे कोकामलिकभेदेन मोजदीन पातसाहिर्जातः। वर्ष ३ मास ३ राज्यं जातम्। 15
- (११) सं० १३४६ वर्षे फाल्गुनशुदि ६ पथ्यां खलचीवंशीय मलिकजलालदीनेन राज्यं कृतम्। वर्ष ६ मास ९ । स यम्रुनातीरे षंभराग्रामसमीपे मलिक अलावदीनेन मारितः।
- (१२) ततः जलालदीनपुत्रो रुक्मदीनो राज्यधरो वभूव । मास ३ राज्यं कृतम् ।
- (१३) सं० १३५२ वर्षे सुरत्राणः अलावदीनो जातः । वर्ष [२१] राज्यं कृतम् ।
- (१४) सं० १३७३ वर्षे माघशुदि ११ दिने पातसाहि अलावदीनपुत्रः सहावदीनः पातसाहिर्जातः । मास २॥० २० राज्यं चकार ।
- (१५) ततः सं० १३७३ वैशाखशुदि ३ दिने सुरत्राण अलावदीनपुत्रः कदुवदीनः पातसाहिर्जातः । वर्ष ५ राज्यं कृतम् ।
- (१६) ततः सं० १३७८ वर्षे ज्येष्टशुदि २ दिने कदुवदीन [पुत्रः] पोसरुपानु पातसाहि नसरदीनो राज्यघरः । मास ४ राज्यं कृतम् ।
- (१७) सं० १३७८ वर्षे भाद्रपद शुदि २ द्वितीयायां देपालपुरस्थानात् तुगलकगा.....तो दिल्ल्यां नसरदीनं हत्वा ग्यासदीन पातसाहिजीतः । वर्ष ४ राज्यं कृतम् । लपणावती नगरात्समागतः सुरत्राणः पुत्रेण महमूंदेन तुगलावाद......मध्ये कृटयत्रप्रयोगेण मारितः ।
- (१८) ततः सं० १३८० वर्षे आषादशुदि २ द्वितीयायां महमूंद्रपातसाहिर्जातः । वर्ष २७ राज्यं कृतम् । बालराजा जात ।
- (१९) ततः संवत् १४०७ वर्षे श्रीपातसाहि पेरोजनामाजनि ।



(P.) सञ्ज्ञकसङ्ग्रहस्य अन्तिमोहेखः।

सिरिवत्थुपालनंदणमंतीसरजयतसिंहभणणत्थं। नागिंदगच्छमंडणउद्यप्पहसूरिसीसेणं॥ जिणभद्देण य विक्रमकालाउ नवइ अहियबारसए। नाणा कहाणपहाणा एस पबंधावली रईआ॥

१४२९ श्रीजिराप० श्रीसावदेवस्र० स्वं चरित्रं न वेडितं पश्चात् ढिल्यां ग० खग्रुपार्ज्य पश्चात् संवत् १४३० भाद्र० मासे श्रीगिरनारे समभाव० त्वा परलो० जगाम ।

संवत् १५२८ वर्षे मार्गसिर १४ सोमे श्रीकोरण्टगच्छे श्रीसावदेवस्तरीणां शिष्येण स्निगुणवर्द्धनेन लिपीकृतः। स्व उदयराजयोग्यम्। श्रीः।

LEGI Idira Gandhi Nationa

a Gandhi Nation htre for the Arts

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहस्य

अकारायनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका



ुपुरातनप्रवन्धसङ्ग्रहे

पद्यानुक्रमणिका।

The first than the second					
	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क		पद्याङ्क	যুষ্ঠান্ধ
अंधयसुआण कालो	३५२	288	असिन्नूसारसंसारे	२०५	६९
	223	92	"	२५३	७६
अंबं तंबच्छीए		39	अहं सारामि तादात्म्यात्	२५१	७६
अंब[ड]हुंतु वाणीउ	388		अहलो पत्तावरिओ	२०	१२
अंबा तुष्यति न मया	३७१	१२०	अहिंसालक्षणो धर्मः	३७२	१२०
अकार्षीदनृणामुर्वीम्	3	8	अहो लोभस्य साम्राज्यम्	३८२	१२२
अगहु म गहि दाहिमओँ	२७६	८६	आः कण्ठशोषपरिपोष०	७७	२८
अजाते चित्रलिखिते	२८१	97	आकरः सर्वशास्त्राणाम्	२९०	68
अत्थि कहंत किंपि न दीसइ	६२	. 22	आचार्या बहवोऽपि सन्ति	११६	३७
अत्रास्ति सस्ति शस्तः	१५७	49	आतङ्ककारणमकारण०	396	१२५
अथैकदा तं निशि दण्डनायकम्	\$8\$	' ५२	आत्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति	388	१०६
अद्धां अद्धां नयणलां	३७	१५		368	१२३
अधिकारात् त्रिभिर्मासैः	883	१२८	आदौ मयैवायमदीपि नृतम्		220
अधीता न कला काचित्	२०६	६९	आपदर्थं धनं रक्षेत्	३३६ • ३२	58
अन्न प्राणा वलं चान्नम्	३२९	११५	आपद्गतान् हससि किम्		७२
अन्नदानैः पयःपानैः	१८५	६२	आयाताः कति नैव यान्ति	580	६६
अन्वयेन विनयेन विद्यया	२४६	50	आयान्ति यान्ति च परे	388	
अपमानात् तपोवृद्धिः	३६०	११९	आयुर्यीवनवित्तेषु	200	६९
अपलपति रहसि	३२६	355	आशाराज इहाजनिष्ट	१५३	40
अमुष्मे चौराय	384	११८	आसन्ने रणरंभे	22	१२
अम्ह एतल्इ संतोस	222	३५	आस्तां सुधा किमधुना	७३	२७
अयमवसरः [सरस्ते]	३३९	११७	आस्यं कस्य न वीक्षितम्	१७२	६०
अयसाभिओगमणदूमिअस्स	220	93	इकु बाणु पहुवीसु जु	२७५	58
अयि खळु विषमः	३६९	१२०	इको वि नमुकारो	३००	99
अर्था न सन्ति	86	- १८	इच्छउ इअरमणोरहाण	२८	\$8
अशाकभोजी घृतमत्ति	290	९६	इतोऽिधः परितो मृत्युः	२१५	90
अष्टौ महाङ्गाश्च चतुःशतानि	२२५	७१	इदं ज्योतिर्जालम्	248	७६
अष्टी हाटककोटयः	380	386	इदमन्तरमुपकृतये	३३७	११७
असकृन्मूर्स्तमप्यन्यम्	१५१	40	इयं कटिमत्तगजेन्द्रगामिनी	३५	54
		Aller Street		and the state of the	

חב

	पद्याङ्क	• দুষ্টাঙ্ক		पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क
इह नृपतिसभायाम्	. 68	२९	किं कृतेन यत्र त्वं	१२०	80
उचाटने विद्विषताम्	. २१२	90	किं नन्दी किं मुरारिः	३८५	१२२
उजिंतसेलसिंहरे	7. 308	99	किं वर्ण्यते कुचद्वनद्वम्	६०	२२
उत्क्षिप्य टिहिमः पादा	9	9	किमस्तु वस्तुपालस्य	२४३	७३
उत्तंसकीतुककृते	38	88	किमिह कलिनरेन्द्रम्	१६८	49
उत्थायोत्थाय बोद्धव्यम्	३७३	१२१	कियन्मात्रं जलं विप्र!	385	११७
उत्पन्नत्योत्पन्नत्य गतिं कुर्वन्	888	. 48	कीर्तिः कन्दलितेन्दु०	२२९	७१
उदयति यदि भानुः	42	28	कुमुद्वनमपश्चिश्चीमद्मभोज०		१८,१३१
उद्योग वाद गाउ	३२३	220	कृतप्रयत्नानिप नैति	808	१२६
उन्मीलन्मणिरिंदमजाल०	२७१	24	केविहुओ न मुंजइ	९२	२९
उपकारसमर्थस्य	२७७	66	केवलिहुओ वि मुंजइ	९३	79
	260	९०	को जाणइ नरनाह!	880	138
उमया सहितो रुद्रः	३३३	११६	कोशं विकाशय कुरोशय०	१५२	40.
एकं वासः सुरेशैः	१९६	48	कचिदुष्णं क्वचिच्छीतम्	२९६	९६
एकस्त्वं भुवनोपकारक इति	२१३,२५०	90,98	क तरुरेष महावनमध्यगः	३३	\$8
एतस्याः कुक्षिकोणे	22	२९	क्षिस्वा वारिनिधिसाले	१२३	85
एतावतैव वीसल !	200	६८	क्षुत्क्षामः पथिको मदीय०	.86	28
एषु श्रीजयसिंहदेवनृपतिः	१६०	46	क्षुद्राः सन्ति सहस्रशः	३८६	१२२
एहे टीलालेहिं धार न	. 888	३५	खद्योतद्युतिमातनोति	880	१२७
ओ आगिलंड जु होइ	. 856	40	गण्डूपदा किमधिरोहति	३०६	• १०३
91 911449 3 64	१३३	48	गतप्राया रात्रिः	83	१५
कं कं देशमहं न गतः	१८३	६२	गम्भीरगेयभरगज्जिरवो	१७५	६१
कः कण्ठीरवकण्ठकेसर०	04,809	२७,१२७	गयगय रहगय तुरयगय	२५	\$8
कतिपयदिवसस्थायी	380	११७	गया ति गंगह तीरि	888	३५
कलिकवलनजाग्रत्पाणि०	२३३	७२	गुरवः परःशतास्ते	१६९	49
कल्पद्धमस्तरुरसी	२१०	६९	गाम्भीर्ये जलिधः बलिः	२३७	७२
कविषु कामिषु भोगिषु	358	१२२	गुणचन्द्रजयांजनतः	८२	25
कसिणुज्जलो य रेहइ	१७	१२	गुणाली जन्महेतूनाम्	१९५	48
का त्वं सुन्धिरे! जल्प	२६८	८३	गुरुभिषक् युगादीशः	२१७	- 38
कान्ते कान्ते शीव्रमागच्छ	200	48	गोगाकस्य सुतेन	90	41
कालिका नहा नहा	६१	२२	गौरी रागवती त्विय	\$26	35
का हउं करिसि गमार	१०८	३५	घटिकाऽप्येकया घट्या	288	908
किं कारणं नु धनपाल !	३६३	888	चिक्कदुगं २ हरिपणगंप	300	/6
किं कुर्मः किमुपालभेमहि	२२१	90	चकः पप्रच्छ पान्थम्	२७३	1
			•		

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहे

					n
	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क	•	पद्याङ्क	् प्रशङ्क
चिन्तामणिं न गणयामि	१९७	48	तेजःपालोऽनुशास्ति	248	40
चौद्धक्यः परमार्हतः	206	६९	तेहि वि न किं पि	ч	4
च्यारि जोड नीसाण हय	98	३०	त्रिंशद्विमिश्रा त्रिशती चराणाम		७१
च्यारि पाय विचि	4	90	त्रिण्हि रुक्ष तुषार	२७८	- (6
जइतचंदु चक्कवइ	२७९	23	त्वं जानीहि मयास्ति	२३६	७२
जईय रावणु जाइयउ	340	386	दंसेमि तं पि ससिणं	१२१	88
जयन्ति पादलिप्तस्य	२८२	93	दन्तानां मलमण्डली	८६	39
जह जह पएसिणिं	368	97	दरिद्रान् सुजतो धातुः	२७२	24
जह सरसे तह सुकेवि	१२	88	दहनेन विनाशितं पुरा	290	६३
जाकुड्यमात्यसज्जन ०	१०१	38	दानपात्रमधमणेम्	823	१३०
जिने वसति चेतिस	368	१२४	दामोदरकराघातविह्नली ०	84	१६
जिम केतू हरि आजु	१२८	40	दारिद्यानलसंतापः	४२७	१३१
जीतउं छहि जणेहिं	२०३	93	दिगम्बरशिरोमणे!	96	26
ं जीर्णे भोजनमात्रेयः	२८९	68	दिग्वासाश्चन्द्रमौलिः	२३२	७२
जीवादिशेति पुनरुक्तम्	१४६	99	दीपः स्फूर्जिति सज्जकज्जलः	२३९	७२
जैसल मोडि म बाह	200	34	दीहरफणिंदनाले	266	98
जो जेण सुद्धधम्मंमि	800	१२७	दुःषमाजलधौ येन	६९	२६
झोली तुद्वी किं न मूउ	28	\$8	दुर्योधनः सकुलनाशकरो	380	308
झोली त्रुटी किं न मूयउ	885	१२९	[दूसा]जम्र (१) वीर	१२७	40
झोली ड्रगरवालणि वलिणि	३०२	99	देव! दीपोत्सवे रम्ये	. 48	
ण्हाणं कुंकुमकद्दमेहि	१७१	49	देव! द्विजप्रसादेन		13
त एव जाता जगतीह	३९५	१२५	देव! स्वर्नाथ! कष्टं	२६७ २५६	८२
तत्कृतं यन्न केनापि	३४६	386	देवाचार्यवलात् युक्तः		00
तत्र चित्रचरितः	६८	२६	देशं स्वमपि मुञ्चन्ति	<3 034	22
तन्वन्ति डंबरभैरः	२६१	60	दोमुहय निरक्लर	४२५	१३१
तव प्रतापज्वलनाज्जगाल	388	388	धनधान्यादिदातारः	300	१२०
ताण पुरओ य मरीहं	28	22	धर्मलाभ इति प्रोक्ते	३९२	858
ता किं करोमि माए	29	१२	धांगा दोस न वइजला	३३५	११७
तावचिअ गलगर्जि	७१	२६	धाई घोया पाय जेसल	१२६	85
तावद् अमन्ति संसारे	३९३	258	2 7 00	888	8 \$ \$ \$
तावन्नीतिर्विनीतत्वं	३८३ °	१२२	ध्यानव्याजमुपेत्य	३, ३३०	१, ११६
तिक्खा तुरिअ न माणिआ	५३	25	न कृतं सुकृतं किञ्चित्	288	१०६
तुह मूंडिए घणेहिं	६३	२३	नगरे वसिस है बाले	२०२	53
तेजःपाल! कृपालुधुर्यः	१८२ -	६ २	नमैर्निरुद्धा तरुणीजनस्य	२६६	22
	The state of the		त्वा राखा राख्याजनस्य	< 8	1726

	पद्याङ्क	• ঘূষাক্স	and the Marry	प द्याङ्क	দুষাঙ্ক
नमो यत्प्रविभाघमीत्	. ६६	24	नेत्रैर्निरीक्ष्य विषकण्टक०	\$ 28	908
न नद्यो मद्यवाहिन्यः	49	. 18	पइं गरूआ गिरनार	308	38
न पश्यति दिवा घूकः	885	१२८	पक्षपातं परित्यज्य	305	308
न भिक्षा दुर्भिक्षे	88	१७	पक्षपातो न मे वीरे	३०९	308
नमस्यामो देवान्	४३७	१३३	पङ्के पङ्कजमुज्झितम्	80	१५
न मानसे माद्यति	. 48	78	पञ्चाशत् पञ्चवर्षाणि	36	१५
नमेस्तीर्थकृतस्तीर्थे	२९३	, ९६	"	8 6 8	१२९
नमोऽस्तु हरिभद्राय	320	200	पञ्चाशदादौ किल	४२९	१३१
नम्रं शिरः कुरु तुरुष्क	४०२	१२६	पडिबोहिअ महिवलओँ	90	२६
नयणिहिं रोसु निवारि	\$88	4६	पणसइरी वासाइं	२६९	८३
नयनविषयं यातश्चाषः	58	२८	प्मणइ मुंजु मुणालवइ	888	१२९
न लाभयामो ललनाम्	98	79	पयोदपटलच्छन्ने	३९१	१२३
नवजलभरिआ मग्गडा	94	१९	परपत्थणापवन्नं	३५६	११९
नववाससएहिं नवुत्तरेहिं	२९९	90	परिओससुंदराइं	१८	१र
न विद्यया केवलया	8 \$ 8	१३३	पर्जन्य इव भृतानाम्	३९६	१२५०
न विद्या घनलाभाय	३२१	306	पल्योपमसहस्रेकम्	१६४	49
न वीतरागादपरोस्ति	३१५	\$08	पश्चाइतं परैर्दत्तम्	१९२	ξ 3
नाखानि खानितटतो	१०२	38	,,,	₹ ₹8	188
नादत्ते भसितम्	. 368	६१	पाणियहे पुलकितम्	३६८	१२०°-
नामिपङ्कजमङ्कजन्म०	. 388	७३	पाणिप्रभापिहितकल्पतरु ०	१७९, २४९	80,43
नारीणां विद्धाति	888	१२७	पालित्तय कहसु फुडं	२८६	63
नासाकं हृदि दर्पसर्प०	७९	26	पिब खाद च चारुलोचने	46	18
नाहं स्वर्गफलोपभोग०	३६५	१२०	पुण्डरीकनिवहैर्विराजितम्	१८९	६३
निअउअरपूरणंमि	8	4	पुत्रादपि प्रियतमैक०	366	१२३
निजकरनिकरसमृद्ध्या	रे३८	११७	पुनराप्याय्यते घेनुः	३६१	११९
नियउयरपूरणहा	३५५	११९	पुन्ने वाससहस्से	३८७	१२३
नियउयरपूरणासा	१६३	49	पुरा नागार्जुनो योगी	२९२	94
निरीक्ष्य मित्रन् ! द्विज०	२११	90	पूर्वं वीरजिनेश्वरे भगवति	148	85
निर्नामलम्बुधौ मजात्	११७	३८	पूर्वपुण्यविभवन्यय०	858	१३०
निवपुच्छिएण भणिओ	264	९३	प्रभाधिनाथैर्मुनिभिः	६७	२६
निव्वूढपोरिसाणं	२१	१२	प्रभासमृद्धिरेवेषा	\$60	१२३
नीचाः शरीरसौख्यार्थम्	३ २२	११०	प्रभोः श्रीमानतुंगस्य	39	१५
नीवारप्रसवायमुष्टिकवलैः	११५	३६	प्राग्वाटवंशाभरण म्	\$80	42
नृपव्यापारपापेभ्यः	२६०, ४३०	७८, १३२	प्रीणितारोषविश्वासु	३७९	858
				*	LEFF

			6		0
10 . 10	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क	•	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क
फणिपतिमघवाद्या यत्र	149	46	मित्रद्रोही कृतप्रश्च	२६४	6 68
बंभ अट्ट नव बुद्ध	७२	20	मिलिते तद्दलयुगे	१५०	90
बलि गरूआ गिरनार	१०९	३५	मीनानने प्रहसिते	४२२	१३०
बाणे गिर्वाणगोष्ठीम्	386	08	मुंज भणइ मिलाणवइ०	२६	\$8
बापो विद्वान् वापपुत्रो०	385	298	"	२७	\$8
बीजलिआ बीजी वार	१०५	३५	मुक्त्वापि पुण्डरीकाक्षम्	२४५	७३
बृहस्पतिस्तिष्ठतु मन्दबुद्धिः	90	38	मुखमुद्रया ,सहाऽन्ये	२२८	७१
बौद्धेर्बोद्धो वैष्णवैर्विष्णु०	२०१	33	मुञ्ज-भोजमुखाम्भोज०	२३५	७२
भजेन्माधुकरीं वृत्तिम्	349	199	मुद्रानुद्रतमुद्ररान्	888	858
भाऊ भराहिं काइं	१९३	43	मुनीनां को हेतुर्जरठ०	१५६	46
भीभदेवस्य नृपस्य	१३६	48	मूर्खस्तपस्वी राजेन्द्र!	838	१३२
भुङ्जीमहि वयं भैक्षम्	94	30	मृतो मृत्युर्जरा जीणी	३७६	१२१
भूपभूपलवपान्त०	288	90	मृद्वी शय्या प्रातरुत्थाय०	३१७	१०६
भूभृतां निजगृहेषु	१३९	48	मेरुणा मनुजदुर्रुभेन	१३८	48
भोजराज! मया ज्ञातम्	346	११९	मौलिं मालवनायकः	803	१२६
भोली मूधि म गव्व करि	888	१२९	यः सप्ताननसप्तिसोदर०	2.83	७३
ञ्रातः पाणिनि संवृणु	824	१३१	यत्त्वयोपार्जितं वित्तं	१३०	40
मइं नाईउं सिद्धेश	800	38	यथा घेनुसहस्रेषु	838	१३३
पंडी मुरकी रइ करउ	885	42	यदनस्तमिते सूर्ये	\$88	११७
मंसासी मज्जरओ	308	200	यदि विदितचरित्रैः	, 558	७२
मग्गुचिय अलहंतो	१६	१२	यदिह कियते कर्म	839	१३३
मजासी मंसरओ	३०३	१००	यदेतचन्द्रान्तर्जलद् ०	388	११७
मन तंबोल म मागि	१०६	३५	यद्दाये चूतकारस्य	२०९	६९
मद्रैर्निद्रादरिद्रैः कुरुभि०	883	8 \$ \$	यद्भविष्याधिको धीरैः	३२८	११३
मन्नीश ! गुरवस्तुभ्यम्	१५५	46	यद्यपि हर्षोत्कर्षम्	88	१६
महत्तराया याकिन्या	३१६	१०५	यन्मयोपार्जितं वित्तम्	२२०	90
मह वयरियस्स ठाणं	१७४	६०	यशःपुञ्जो मुञ्जो	28	18
मा गोलिणि मन गव्व	२३	\$8	यशोवीर! लिखत्याख्याम्	१३१	40
माणसणा(डा) दस दस	३७७	१२१	यस्योवीतिलकस्य निर्मल०	885	1838
मातृमोदकवद् बाला	383	808	यादोऽङ्गज्ञोणितकषायित०	20	79
मानं मुख्य खामिनी	88	१५	यावदुच्छ्वसति प्राणी	398	९६
मान्धाता स महिपतिः	884	१२९	या श्रीः स्वयं जिनपतेः	202	93
मा मण्डक कुरुद्वेगम्	३०	\$8	यूकालिक्षशतावली	३९७	१२५
मार्गे कईमदुस्तरे	₹08	६९	यो मे गर्भस्थितस्यापि	? 200	78
					LITT

				•	
123 229	पद्याङ्क •	पृष्ठाङ्क	12 137	पद्याङ्क	व्याष्ट्र
यौष्माकाशिपसन्धिविग्रह् ०	343	199	विष्णुः समुखतगदायुत०	388	508
रम्येषु वस्तुषु मनोहरतां	858	. 230	विस्फारस्फारधन्वा	4६	१९
रसातलं यातु तवात्र	३६२	. 189	वेलामहलकलोल०	305	१२१
राजस्त्वं राजपुत्रस्य	२६५	28	वेषः कोपि तुरुष्क०	64	२९
राजा खयं हरति माम्	१०	??	वेसा छंडि वडाइति	38	58
राणा सब्वे वाणिया	. 880	३५	वैधव्यसदृशं दुःखम्	9	99
रात्रौ जानुर्दिवा भानुः	348	. ११९	वैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते	३६४	188
रामनन्दशशिमौलिवत्सरे	96	38	वैरोचने रचितवत्यमरेश०	२५७	७७
रे रे ग्रामकुविन्द	749	७७	व्रजत व्रजत प्राणा	40	55
रे रे चित्त कथं भातः	804	१२७	शतानि चाष्टादश	२२३	७१
रे रे वातुललोकाः	१६७	49	शत्रु अये जिने दृष्टे	१६५	49
लक्षं लक्षं पुनः लक्षम्	\$8\$	११७	शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनम्	48	15
लक्ष्म प्रेयसि केयमास्य ०	१८७	६२	शीतत्रा न पटी०	३५७	188
लक्ष्मीं नन्दयता रतिम्	२३०	90	शूराः सन्ति सहस्रशः	१२२	85
लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे	३६, ४२०	१५,१२९	श्रीगर्वोष्मभिरुष्मलेषु	१७३	40
लच्छि वाणि मुहकाणि	399	१२५	श्री चौछुक्य! स दक्षिणः	१२५	8.3
रुव्धाः श्रियः सुखं स्पृष्टं	२१८	90	श्रीमत्कर्णपरंपरागतभवत्०	२१६	00
लिखतु लिखतु धाता	१७७	83	श्रीमत्प्राग्वाटवंशे	\$88	43
लिखन्नास्ते भूमिम्	• 85	१५	श्रीमानभयदेवोऽपि	798	95.
लोकं विलोक्य धनधान्य ॰	३८१	१२२	श्रीवस्तुपाल तव भारू०	१८६	. • ६२
लोकः प्रच्छति मे वार्ता	₹७8	१२१	श्रीवस्तुपाल! प्रतिपक्षकाल!	280	08
वंशार्द्धाद्भपरिस्फूर्त्या	२५५	७६	श्रीवस्तुपालः श्रियमेष	२३८	७२
वाढी तउं वढवाण	११३	३५	श्रीवस्तुपालस्य पत्नी	884	48
वर्ष्मप्राहरिके द्विजे	338	११६	श्रीविक्रमादित्यनृपस्य	३०५	१०१
वस्तुपालसचिवेन	, 868	६३	श्रीविक्रमादित्यनृपात्	१३५	48
वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय	६५	२५	श्रीशत्रुञ्जय-रैवताभिध०	१५८	46
वार्द्धिमाधवयोस्सौधे	99	३३	श्रीसिद्धपुरे रम्ये	९६	३०
वाहनौषिषपाथेय०	१६६	49	श्रोतव्यः सौगतो धर्मः	५७	. १९
विद्याधिसंहर्त्री	१३७	48	श्वःकार्यमद्य कुर्वीत	३७५	१२१
विधाय योगनीरोधम्	२९५	९६.	श्वानचर्मस्थिता गङ्गा	833	१३२
विषे प्राहरिके नृपः	٤	9	श्वेताम्बराः कलितकम्बल०	. 60	२८
विभुता-विक्रम-विद्या	885	99	षडहडीयां षंगार	१०३	38
विमलदण्डपतिर्विमल०	. 883	4३	सउ चित्तहं सट्टी मणहं	880	१२९
विश्वासप्रतिपन्नानाम्	२६२	८ १	स एष भुवनत्रयप्रथित०	३६७	1830
					to pass all it

		•			C
	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क		पद्याङ्क	प्रशाङ्क
सुवर्णमीवामण्डने	२५२	० ७६	समुद्र त्वं श्लाघेमहि	488	, ७३
सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्ग०	१९९	६७	सम्पत्तौ नियमः शक्तौ	836	8 \$ 8
सेजपालकसहस्रचतुष्कं	222	१०	सयलजणाणंदयरो	\$8	१२
सेतुं गत्वा समुद्रस्य	२६३	28	सरिसे माणुसजम्मे	१३	18
सोऽयं कुमारदेवी कुक्षि०	880	44	सा नित्य कला	३३१	११६
सीरभ्यमालगुणमाल०	260	६१	सिंहशिशुरपि निपतति	३२७	११२
स्नायुद्धद्वकरङ्ककुट्टनरता	१६२	46	सीसं कहव न फुट्टं	298	68
स्रस्ति क्षत्रियदेवाय	208	24	सुकृतं न कृतं किञ्चित्	२१९	90
स्रस्ति श्री भूमिवासात्	२२७	७१	सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि	360	१२१
स्रस्ति श्रीब्रह्मलोकात्	२२६	७१	मुखासेव्यं तपो भीम	४३२	१३२
स्रस्ति श्रीमति पत्तने	808	१२६	सुन्दरसरि असुरांह	१३२	40
स्वामिन् समुद्रविजयात्मज०	१७६	88	हंसैर्रुब्धप्रशंसै:	२३१	७२
स्वार्थारंभप्रणतशिरसाम्	388	808	हंहो श्वेतपटाः किमेष	98,806	२७,१२७
संतः समंतादि तावकीनम्	848	48	हरिहर! परिहर गर्व	२५८	90
संसारमृगतृष्णासु	808	१२७	हा कस्स पुरोहं	३ ७६	२७
सङ्ग्रहेकपरः प्राप	४३८	१३३	हारो वेणीदंडो	१५	१२
सङ्घो वाग्भटदेवेन	१६१	46	हूणवंशे समुत्पन्ने	?	?
सत्यं यूपं तपो ह्यमिः	३६६	१२०	हृदि बीडोदरे वहि०	\$58	६२
•सत्त्वैकतानवृत्तीनाम्	३३२	११६	हेम तुहाला कर मरू	. 800	१२६
सद्यस्ट्रप्यति भोक्तारम्	३२५	999	हेलानिइलियमहेभ०	* 348	288

पुरातनप्रबन्धसङ्गहान्तर्गतविशेषनामां स्चिः।

ॐंअकाराद्यक्षरानुक्रमेण ﴾३∻

		We the second second			
ओं		अमृतवत्सला	58	आडि	900
	93	अम्बड	३९, ४०, ६२	आन्नेय	88
ओंकार [नगर]	34	अम्बा	49, 42, 96	आदिदेव }	49
अ अ	5/17	अम्बावीदेवीप्रासाद	30	आदिनाथ ∫	45
अइबुक मिलक	40	अभ्विका	90	आनाक	५४, ३८
अग्निक वेताल	2	अम्बुचीच	906	आभड ३३, ४	३, ४७, ४८ १२४,
अग्निपखालंड [पंछेबंडड]	४६	अयोध्या	994		938
	6, 00	अरिट्टनेमि]	99	आभीर	३६,८२
अङ्ग [जनपद]	938	अरिष्टनेमि ∫	90	आभू	45
अचलेश्वर	43	अरिष्टनेमिप्रासाद	२७	आम	86
अच्छोदक [सरोवर]	28	अरिसिंह [राजवैद्य]	७९	आमड ो	928
अजमेरीय [संघ]	39	अर्जुन	998	आम्बड ∫	३२, ४६, १२६
	0-89	अर्बुद्गिरि १३, ५९	१, ५२, ६३, ६५,	आम्बा (38
attend I man I	903		0, 00, 68, 64	आम्बाक ∫	३४, ४७
अजय रा	94	अर्बुद्चैत्य	vo l	आंबासण	98
अजितसिंह सूरि	30	अलवि	28	आम्र	8.5
अढारहीउ	1000	अलवेसरी	28	आम्रेश्वर	96
अणपन्नी	900	अलावदीन [सुरताण]	934	आरासण	३०, ३१
अणहिल [राय]	907		996	आहेत	- 98
अणहिल गोप	356	अवन्तिदेश	98	आलति	. 48
अणहिलपुर	43	अवन्ती [नगरी]	90	आछि	28
अणहिलवाड	३५	अवन्तीसुकुमाल	38	आलिग [कुम्भकार]	923
अणहिल्पत्तन	2, 33	अवलोकनशिखर	76		924
अणहिल्लपुर ,, पुरी	20	अशोकचन्द्र		आछिग [प्रधान]	30
अणुपमडी (अनुपमा)	£ 3	अशोकवनिका	30	आलिग [पुरोहित]	
अनादि राउल [तपसी]	36	अश्वपति	२१	आवश्यक [प्रन्थ]	903
अनाद राउल [तपला]	36	अश्वराज	५४, ५७	आशराज }	99
9 37	N FAMILY	अश्विनीकुमार	९६	-आशाराज ∫	40
अनुपम देवी ५४, ५७, ६३, ६		अश्वेश्वर	35	आशापल्ली	₹२, ८०
अनुपम सर	\$ ₹	अष्टकवृत्ति [प्रन्थ]	904	आशी [नगर]	८६, ८७
	90, 64	अष्टादशशती [देश]	58	आषाड [श्रावक]	९६
अन्धय (अन्धक)	996	अष्टापद [पर्वत]	४२, ९३	आसपाल	३३, ६१
अभय	४२	असणिदेवी	908	आसराज	५२-५४, १०२
	13, 94	अहम्मद	680	आसराज-प्रवंध	43
अभयदेव सूरि ४३, ९५, ९६		आ		आसराजवसही	£4.
अभिनवार्जुन	२०		88	आसापछी	२७
अभिनव राम	6	आकाशयान [विद्या]	४७, ७५०	आहडग्राम	39
असर [पण्डित, कवि]	96	आकृष्टिविद्या	80,093	आर्ट	1903
असृतमयी	58	आकेवालीय [ग्राम]	00		1 - 1-1-1
पु॰ प्र॰ स॰ 19		AND CHARLEST AND A		•	11

-3(0)					
इ		कटक [नगर]	934	कान्यकुब्ज	66, 903, 926
इन्द्रजाल विद्या	34	कडी [ग्राम]	४६	कान्हड देव [नड्डला]	४५, ४६
इन्द्रजाल विद्या	11	कंण्टेश्वरी [देवी]	४१, ४२	कान्हाक	0 88
		कण्ठाभरण [व्याकरण]	939	कामन्दकीनीति	924
ई श्वरसूरि	88	कदुबदीन [पातसाहि]	934	कार्मल	२४
उ		कन्यकुब्ज	92, 96	कामला	92
उ ज्जयन्त	४२, ९८	कपर्दि [मंत्री]	३७, ४३	कामिकतीर्थ	68
उज्जयिनी १, २, ९	12, 23, 39,	कपर्दि [यक्ष] ४८,६	A STATE OF THE PARTY OF THE PAR	कालदण्ड	908
	३८, ९७	कपर्दिबारिका	960	कालिका [देवी]	22
डाजिंत सेल }	99	कपर्दियक्षप्रासाद	68	कालिकाचार्य	99, 88
उ ज्ञिलसिहर ∫	38	कपिछ	98, 908	कालिङ्गीयक	86
उत्तरमथुरा	99	कपिलकोट	93	कालिदास	90, 08, 996
उत्तररामचरित्रगान	20	कपूरी	28	काली देवी	998
उदयचन्द्र	924	कमलकेदारा [वापी]	58	काशी	6, 903
उद्यन ३२,३४,४		क्मलादित्य	. 98	काइमीर	7,
	१२४, १२६	कमलादेवी	36	कासद्रह)	63
उदयप्रभ उदयप्पह	६४, ७६० १३६	कयलोषरी [प्राम]	934	कासद्रा [ग्राम]	926
उद्यराज	936	करणउत्र (कर्णपुत्र)	34	कासहद	93
उदयसिंह]	88, 40	करडाक	47	काह्नडदेव	902
उदयसीह	902	करम्बकविहार	924	किराडू	23
उपदेशमाला [प्रन्थ]	908	कर्णउत्त (त्र) २३,		कीत्	903
उपदेशमाला-वृत्ति	900	कर्ण [चौछक्यवंशीय]	86 923	कुङ्कण	38
उ मा	90, 998	कर्ण [डाहलदेशीय]	3 936 930	कुण्ड(ण्डि)गेश्वरप्रासाद	
उमापतिधर	90	कर्णदेव	33	कुन्ती "	46
उरंगल [पत्तन]	98, 88	कर्णवारी	999	कुबेर	933
ः ज		कर्णाट	20	कुमर (जुमारपाल)	923
ऊदा (उदयन)	२६	कर्णाटेश	98	कुमरविहार	80
उ दाक	२७, १२६	कर्णावती	२७, २८, १२६	कुमरिक (कुमारपाल)	३८, ३९
ऊदावसही	२७	कर्मसिंह	88, 49	कुमारदेव (कुमारपाल)	
ऊपरमालपर्वत	88	कर्पूरदेवी	66-90	कुमारदेवी ३७, ३८	, ३९, ४१,४४-
ऊपरवट [अश्व]	49	कस्तुरी	38		, ५३, ५५,५८,
ऊ मादे	986	कस्मीर	90		६५, १२३
来		कलिङ्ग	924, 938	- कुमारदेवीसर	60
ऋषभदेव	909	कल्याणकटक	900, 926	कुमारपाल	83
ऋषभप्रासाद	30	कांऊ	58	कुमारसंभव [काव्य]	90, 998
ऋषभविम्ब	30	कांथडिक [तापस]	926	कुमुद [पण्डित]	930
ओ	4.	काकरय्राम	92, 926	कुमुदचन्द्र (२७५३०, १२०
		काकू	63	कुम्भीपुर	998
ओजेनिनदी ओढरजाति	998	कातच्च [व्याकारण]	939	कुमरड (कुमारपाल)	80
	88	कादिक	44	कुरु	938
क	Jan Variation	कानडा [राग]	44	कुरुचन्द	६ ९
कइंबास [मंत्री]	८६, ८७	कान्ति)	23	कुलचन्द	98, 29
कच्छदेश	994	्कान्ती र	२५, ३८	कुहाडि	1900
कच्छेश्वर	93	कान्तीपुरी	28, 99, 94	कृष्ण	93, 88, 906
				The state of the s	the new and it

विशेषनाम्नां सूचिः ।

,					
कृष्णदेव े	84	गाज्ञणपति	४७	चिण्डकास्तुति	9६
केतु	40, 902	गाडर	88	चतुर्भुज	69
केदार ,	\$ 44	गिरनार)	३५, ३८, ५१, ७८	चन्दनबाला	२६
केदारयात्रा	36	गिरिनार∫	१३६	चन्दनवसही	40
केल्हण	909	गुणचन्द्र	२६, २८	चन्दना	48
कैलाशहास	22	गुणवर्द्धन	१३६	चन्द्नाचरित	७५
कोका मलिक	934	गुणाकरसूरि	98	चन्दबलहिअ)	42
कोडीनार	90	गूडमहाकालप्रासा	द १०	चन्दबलिद् }	٥٤, ۵۵
कोणाग्राम	49	गूर्जर	१२, २१, २७, २९,	चन्द्बलिद्दिक	35
कोरण्टक [प्राम]	900		५०, ६९, ७९, ११८,	चन्दोमाणा [ग्राम	
कोरण्टगच्छ	936	2	१२६, १२८	चन्द्रज्योत्स्रा	28, 24
कोरिक कोरिक	908, 998	गूर्जरत्रा	१९,२३, २५, २८, ५०	चन्द्रभ	४३, ६१, ८३
कोलिक	960	गूजरात	34	चन्द्रभादितीर्थ	8.5
कोशला	9, 99	गूर्जरी	७९	चन्द्रावती	45
कोङ्कण	,, ,,	गोऊ	908	चांपलदे	8.5
काङ्गण	999	गोगा	3.0	चाङ्गदेव	9२३, १२४
	90	गोगाक	39	चाचरीयाक	७६
क्षिति [पुर]	58	गोगामठ	do	चाचिग	923, 928
क्षीरोदवापी	70	गोदावरी	११, १३, १४, २०	चाचिगदेव	६७, १०२
ख		गोध्रईयाक	84	चाणूरमछ	95
खंगार [रूप]	३२, ९८	गोध्रा	48	चान्दण	908
खंडेराय [सांखुलाक]	७४	गोध्रियक	49	चान्द्र	939
खरतर	994	गोपगिरि	२०, २६	चापोत्कट	92, 926
खर्पर	ę	गोपालपुर	38	चामुण्ड	92
.खलची	934	गोमण्डल	96	चामुण्डराज	£8
खापरका	, 4	गोला (गोदावर्र	70	चामुण्डा	99, 990
खेड [महास्थान]	Ac2, 930	गोविन्द	94, 928		१, ३४, ३५, ४७, ५२५
ग		गोविन्द [चाचरी	याक] ७८	चारुकीर्ति	94
शंगा [नदी] ७,८	, ३५, ६६, ९३	गोविन्दाचार्य	996	चारूपग्राम	99
गंगाधर	२६	गौड [देश]	98, 88, 988, 938	चालुक्य	46
गगनगामिनी [विद्या]	94	गौडवध [काव्य] 993	चाहड	३२, १२६
गगनधूछि [नायक]	88	गौरी	928	चाहमान	۷६, ۹۰۹
राजणपुर	१३५	गौर्जर	39	चाहिणी	923
गणपति [व्यास]	60	ग्यासदीन [पात	साहि] १३५	चाहिल	48
गद्य भारत	96	ग्रथिल-भीमदेव	88	चित्रकवछी	25
गन्धर्वसर्वस्व	28	341	घ		36, 88, 903, 908
गन्धर्वसेन,	9	-	68	चित्राङ्गद	908
गन्धवह [इमशान]	4	बूबलमण्डलिक	62	चीच	
गयणा [इन्द्रजालिक]	3 4	घृतवसतिका		चैत्रगच्छ	*** ***
गया	34		ਬ	चौलुक्य	३७, ४३, ६१, ६९, ७४, १२७
गर्जनक	٥٤, ٥٩	चकेश्वरी	७०		
गांगिल	75	चण्ड	98		छ
गांगाक	3 4	चण्डप	45	छाडाक [ठकुर]	
गाङ्गेयकुमार	20	चण्डप्रसाद	५३, ५५	छित्तिप	150
-।।श्रथकुमार	P. T. A. S.				LILI

•		0			0
छिंपिका	60	जिनभद्र सूरि	903, 904	तिहुअणसिंह	. 38
छेकभारत	29	जिनभुवन	49	तिहुअणसीह ∫	\$5
ज	TEO COST	जिनमत	96	तुगलाबाद }	0 071
	The second	जिनवल्लभसूरि	680	तुगलकगाबाद \$	934
जइचन्द }	66	जिनशासन	98, 00	तुरक	9, 6
जइतचन्द ∫	66	जिनसिंहसूरि	908	तुरष्क }	४९, ५०, ९०, १२६
जइतलदेवी	48	जिनेश्वरसूरि	34		-40, 57, 55-09,
जगड	8.5	जिराप-(ही)	936	dentité 11	७३, ७५, ११२
जगडू)	60	जीन्द्राज	902	तेजपुर	90
जगडूक र्	60	जीर्णदुर्ग	Ęo	तेजल(तेजःपाल)	६६, ६७
जगद्देव	74, 64	जेठेया	20 0	तेजलपुर	44, 45
जयकेशी	२९, ३६, १३३	जेसल (जयसिंह)	२३, ३५, १३४	तेज्वा	42, 43
जयचन्द	24,90	जेसल	34		
जयतलदेवी	49	जैत्र	88	तैलपदेव	98, 29, 928
जयतसिंह	936	जैत्रचन्द	68,68	त्रिपुर	908
जयमङ्गलसूरि	40	जैन	६८, ८३, १०५	त्रिभुवनपाल	३७, ४४, १२३
जयसिंघ सिद्धराय	३१, ४४	जैनप्रासाद	28, 54	त्रिभुवनसिंह	48
जयसिंह सिद्धराज	२३, २५, ३४	जैनयाचक	48	त्रिभुवनस्वामिनी	88
	३७, ४५, ४७,	जैनव्यन्तर	49	त्रिषष्टिशलाकापुरुषच	
	46, 938		to the second	त्रिषष्टिशलाकापुरुषच	गरितभण्डार ७७
जया	900	झ	1 100	35/3	4
जलालदीन [सुरत्राण]	५०, १३५	झींझरीयाग्राम	44	थारापद्गीयप्रासाद	38
accept [Sen .]	, , , ,	males.		21,11,21,111,112	
जल्द किही	66	2			
जल्हु [कई]	34	टी म्बाणा ग्राम	99		4
	34	Contract to the contract of th	99	द्उलती	1934
जसपडह ह [हस्ती]	34 40,49	टीम्बाणाग्राम ड	wang to take	द्उलती दक्षमणी	१३५
जसपडह जसवीर जाकुडि	३५ ५०, ५१ ३४	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम]	£4	द्उलती दक्षमणी दक्षिणक्षिति [देश]	934 94 946
जसपडह जसवीर जाकुडि जाकुडि	३५ ५०, ५१ ३४ १२६	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम]	६५ ६५	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा	934 94 936 93
जसपडह जसवीर जाऊडि जाऊडि जाऊक	३५ ५०, ५१ ३४ १२६ १६१	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [प्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक	६ ५ ६५] २१, २३	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणमथुरा	934 94 946
जसपडह जसवीर जाकुडि जाकुड जाम्ब जाम्ब	३५ ५०, ५१ ३४ १२६ १६१ ३१	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविग्रहिक डाहल [देश]	६५ ६५	दउलती दक्षमगी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त	934 94 936 93
जसपडह जसवीर जाऊडि जाऊडि जाऊक जाम्ब जाम्बड [वर्ग] जाम्बाक	३५ ५०, ५१ ३४ १६१ ३१ १२	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविग्रहिक डाहल [देश]	६५ ६५] २१, २३ २३, १२६, १३१	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दन्तकश्रेष्ठि	934 94 946 99 98, 988
जसपडह जसवीर जाकुडि जाकुडि जाकुड जाम्ब जाम्बड [वर्ग] जाम्बाक जावड	३५ ५०, ५१ ३४ १२६ १६१ ३१ १२	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] डंकपर्वेत	€₩ €₩] २१, २३ २३, १२६, १३१	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्वनर]	934 926 936 93, 938 90, 904 2
जसपडह जसवीर जाकुडि जाकुडि जाकुडि जाकुडि जाम्य जाम्य जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्यक जावड जावडि	३५ ५०, ५१ १२६ १६१ ३१ १२ ९९, १०२	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] डंकपर्वत ढंका [पुरी]	€₩ €₩] ₹9, ₹₹ ₹₹, 9₹€, 9₹9 	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल	934 946 946 99 94, 944 96, 964 8
जसपडह जसवीर जाकुडि जाकुडि जाकुड जाम्य जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्याक जावड जावडि जावाछिपुर	३५ ५०, ५१ १२६ १६१ १९ १९ ९९, १०२ ३२, ४९, ५०	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] डंकपर्वत ढंका [पुरी]	€₩ €₩] २१, २३ २३, १२६, १३१	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल	934 926 936 93, 938 90, 904 2
जसपडह } [हस्ती] जसवीर के जाकुढि जाफ़ुल , जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्याक जावड जावडि जावालिपुर जावालिपुरी	40, 49 40, 49 926 929 929 929 929 929 929 929 929 92	टीम्बाणाग्राम ड इमाणी [ग्राम] डाक [ग्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ड ढंकपर्वत ढंका [पुरी] डिछी	€₩ €₩] ₹9, ₹₹ ₹₹, 9₹€, 9₹9 	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणमथुरा दक्षिणपथ दत्त दन्तकश्रेष्ठि दरिद्रमर } दशरथ दशार्णमण्डप	934 946 946 99 98, 988 90, 904 8 8
जसपडह } [हस्ती] जसवीर } विस्ति] जाऊढि जाऊढि जाऊक , जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्यक जावड जावडि जावालिपुर जावालिपुरी जासिल	40, 49 924 924 924 929 928 928 928 939 928 939 939	टीम्बाणाग्राम ड इमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढ ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी	€₩ €₩] ₹9, ₹₹ ₹₹, 9₹€, 9₹9 	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणमथुरा दक्षिणपथ दत्त दन्तकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल } दशाणमण्डप दशास्य	934 926 939 93, 934 90, 904 2 2 46 38
जसपडह जसवीर जाकुडि जाकुडि जाकुड जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्यक जावड जावडि जावाछिपुर जावाछिपुरी जासिल जिनभइ	३५ ५०, ५१ ३६ १६१ १६१ १९, १० ३९, ४०, ५० ६७ ३१	टीम्बाणाग्राम ड इमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढ ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तक्षिशिला	\$44 \$49 \$1 \$29, \$2 \$3, \$2 \$4, \$2 \$3 \$6, \$2 \$4, \$2 \$6	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल दशरथ दशार्णमण्डप दशास्य दशस्य	934 926 93 93, 928 96, 964 2 2 46 38 926
जसपडह जसवीर जाऊडि जाऊडि जाऊड जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्यक जावड जावडि जावाळिपुर जावाळिपुरी जासिळ जिनभइ	२५ ५०, ५१ १६६ १६१ १९ १९, १०२ १९, ५० ६७ ११६	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तस्मिला तस्मलाला हेका [क्या]	\$4 \$4 \$4 \$7, \$2 \$3, \$2 \$3, \$2 \$3 \$9, \$2 \$3 \$9, \$2 \$3 \$9, \$2 \$3 \$9, \$2 \$3 \$9, \$2 \$4 \$9, \$2 \$4 \$9, \$2 \$9	दउलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दन्तकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल दशार्थ दशार्थमण्डप दशास्य दशास्य दाउदपुर दान्ताक	934 926 939 93, 934 90, 904 2 2 46 38
जसपडह हे [हस्ती] जसवीर है जाई है जा है	40, 49 924 924 924 924 924 924 924 924 924 9	टीम्बाणाग्राम ड इमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिवित्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तर्गलोला तरंगलोला तरंगमाला हारणगढी	\$44 \$47 \$49, \$28 \$23, 926, 929 \$3, \$28 \$4, 926 \$4, 926 \$4, 926 \$4	दउलती दक्षमणी दक्षिणकिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दम्तकश्रेष्ठि दरिद्रपुत्तल } दशरथ दशाणमण्डप दशास्य दशस्य	934 926 93 93, 928 96, 964 2 2 46 38 926
जसपडह है [हस्ती] जसवीर काकुडि जाकुडि जाकुडि जाकुडि जाकुड जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्यक जावड जावडि जावाछिपुर जावाछिपुरी जासिल जिनभइ जिनहा—°हाक जितशतु	40, 49 40, 49 949 949 949 949 949 949 994 994 998	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तरंगलोला तरंगलोला तरंगमाला तरंगमाला तारणगढ } तारणगढ ो	\$4 \$4 \$7, \$2 \$2, \$2, \$29 \$4, \$2 \$3 \$6, \$2 \$6 \$7, \$2 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6 \$6	दअलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणमथुरा दक्षिणपथ दत्त दनतकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल } दशाणमण्डप दशाणमण्डप दशास्य दाउदपुर दान्ताक दामोदर दाहिमा	934 926 93 93, 928 90, 904 2 2 46 88 926 934
जसपडह जसवीर जाऊडि जाऊडि जाऊडि जाऊडि जाऊडि जाफ्य जाम्य जाम्यड [वर्ग] जाम्यक जावडि जावाछिपुर जावाछिपुर जावाछिपुरी जासिल जिनभह जिनहा—°हाक जितराञ्ज जिनदन्त	40, 49 40, 49 40, 49 49 49 49 49 49 49 49 49 49 49 49 49 4	टीम्बाणाग्राम ड इमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढ ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तक्षिशिला तरंगलोला तरंगलोला तरंगमाला तारणगढ } तारणगढ कारणहर्गी	\$44 \$49 \$2, 23 \$2, 23 \$	दउलती दक्षमणी दक्षिणकिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दम्तकश्रेष्ठि दरिद्रपुत्तल } दशरथ दशाणमण्डप दशास्य दशस्य	934 946 97 98, 928 90, 904 8 946 946 976
जसपडह हे [हस्ती] जसवीर का कुढि जा कुछ के जाम्य जाम जाम्य जाम जाम्य जाम जाम्य जाम जाम्य जाम जाम्य जाम्य जाम्य जाम्य जाम्य जाम जाम्य जाम्य जाम्य जाम्य जाम जाम्य जाम जाम्य जाम जाम जाम्य जाम	40, 49 40, 49 48 944 949 49 49 49 49 49 49 49 49 49 49 4	टीम्बाणाग्राम ड इमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तस्मिला तरंगलोला तरंगलोला तरंगमाला तरंगमाला तारणदुर्ग तारणदुर्गप्रासाद तारादेवी	\$4 \$4, \$2 \$3, \$2\$, \$2\$ \$3, \$2\$, \$2\$ \$4, \$2\$ \$5, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$2\$ \$6, \$6, \$6, \$6, \$6, \$6, \$6, \$6, \$6, \$6,	दअलती दक्षमणी दक्षिणक्षिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दन्तकश्रेष्ठि दरिद्रनर हिरद्रपुत्तल } दशाणमण्डप दशाणमण्डप दशास्य दशाद्युर दान्ताक दामोदर दाहिमा दिगम्बर	934 926 93 93, 928 96, 904 2 2 34 46 934 996 96
जसपडह हे [हस्ती] जसवीर है जाई है जाई है जाई है जाई है जाई है जाई है जामबाक जावड जावडि जावालिपुर जावालिपुरी जासिल जिनहा—°हाक जिनहा—°हाक जिनहा— है है जिनहत्त्व जिनदीक्षा जिनदेवी	40, 49 40, 49 40, 49 40, 49 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तर्भालोला तर्गमाला तर्गमाला तारणगढ है तारणदुर्गप्रासाद तारादेवी तिलकमक्षरी [कथा]	\$4 \$4, 23 23, 22, 939 39, 22 39, 22 39, 22 38 38 30 38 38 38 38 38 38 38 38 38 38	दअलती दक्षमणी दक्षिणकिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दम्तकश्रेष्ठि दरिद्रमर हिरद्रपुत्तल हिरद्रपुत्तल हिर्मा दश्य दशाणमण्डप दशाणमण्डप दशस्य दश्य	934 926 93 93, 925 94, 925 946 934 934 936 946 946 947
जसपडह } [हस्ती] जसवीर के लिला	40, 49 40, 49 40, 49 40, 49 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तस्मिला तरंगलोला तरंगलोला तरंगमाला तारणगढ } तारणदुर्ग } तारणदुर्ग प्रासाद तारादेवी तिलकमक्षरी [कथा] तिलंग [देश]	\$4 \$4 \$7, 23 23, 926, 939 \$9, 92 \$3 \$00, 934, 936 \$8 \$8 \$8 \$8 \$8 \$8 \$8 \$8 \$8 \$8	दअलती दक्षमणी दक्षिणिकाते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दन्तकश्रेष्ठि दरिद्रनर दरिद्रपुत्तल } दशरथ दशाणमण्डप दशास्य दशस्य	934 926 93 93, 928 90, 904 2 34 926 934 936 946 946 947 948 948 948 948 948 948 948 948 948 948
जसपडह हे [हस्ती] जसवीर है जाई है जाई है जाई है जाई है जाई है जाई है जामबाक जावड जावडि जावालिपुर जावालिपुरी जासिल जिनहा—°हाक जिनहा—°हाक जिनहा— है है जिनहत्त्व जिनदीक्षा जिनदेवी	40, 49 40, 49 40, 49 40, 49 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40 40	टीम्बाणाग्राम ड डमाणी [प्राम] डाक [प्राम] डाक [प्राम] डामर [सान्धिविश्रहिक डाहल [देश] ढंकपर्वत ढंका [पुरी] ढिछी तर्भालोला तर्गमाला तर्गमाला तारणगढ है तारणदुर्गप्रासाद तारादेवी तिलकमक्षरी [कथा]	\$4 \$4, 23 23, 22, 939 39, 22 39, 22 39, 22 38 38 30 38 38 38 38 38 38 38 38 38 38	दअलती दक्षमणी दक्षिणकिते [देश] दक्षिणमथुरा दक्षिणापथ दत्त दम्तकश्रेष्ठि दरिद्रमर हिरद्रपुत्तल हिरद्रपुत्तल हिर्मा दश्य दशाणमण्डप दशाणमण्डप दशस्य दश्य	934 946 97 98, 928 90, 904 8 94 94 94 94 95 96 96 96 97 98 98 98 98 98 98 98 98 98 98

दुर्लभराज १०२	धवलक [[पुर] ५२,६९	नागड ४९, ५०, ६७,६८, ७७,८०
दुसाज ४९	धवलक ,, ५४, ५५ ६१, ६७	नागपुर २६, ६६, ९९
दुसाजुत्र , ' ५०	भवलक्क ,, २६, २७, ३२, ३३,	नागपुरीय ३१, ७०
देपाक ७३-७५	धव्लका) ,, ६३, ६६, ७५, ९५,	नागर
देपालपुर "१३५	९६ २६	नागराज ३३, ४३
	धवलार्जुन ४०	नागलदेवी ७९
- Zing a Company of the Company of t	धांगा, धांगाक ४८	नागहस्ति ९२
देमता २३	धामदेव ३१	नागार्जुन ९१, ९३-९५
देवगिरि ५४, ५९	धारा [नगरी] १४, १७, १९, २०,	नागिंद १३६
देवचन्द्र ८३, १०७, १२३, १२६	२१, २३, २६, ३५,	नाटसारि [राग] ७९
देवदत्त १११, ११२	४४, ५१, ५२, ९५,	नानाक [किव]
देवधर ८८	९८, ११९, १३१	नानामलिक १३५
देवपत्तन ३८,४३,५४,६१,१००	धाराक ९८	नामलदेवी ३८
देवप्रभ [स्रि]	धारागिरि ३५	नायक ४४
देवल [महं०] ३२	धारागिरिवाटिका ४९	नारायण १०४
देवशर्मा ९७	धारिणी [विद्या]	निर्वृणशर्मा २१
देवशाखा [रागिणी]	धारिणी [श्रेष्टिनी]	निर्वाणकलिका [प्रन्थ]
देवसूरि] २५-३१, १०७, १२७	धारू ४३	निहाणा [प्राम] ३१
देवाचार्य रू. २८, ३१, ४३, ४४	धृतराष्ट्र ११८	नीत [ठकर] ५२
देवाचार्यपौषधागार २७	न	नीलपट [संप्रदाय]
garana man	नगरपुराण १३१	
	नद्दनारायण ७९	नेमि [नाथ, जिन] ३१, ३४, ४३ ५३,
daradic	The state of the s	६५, ६९, ८४, ९१,
grantarini	नड्डल १०७ १०१ १०१	92, 90
द्वात्रिंशतिका [प्रन्थ]	नडला(कान्हडदेव) ४५	नेमिचैत्य ९८
द्वारमङ ४६, ७९	3(नेमिप्रासाद १३१
द्वारवती । १९	नन्द	नेमिमन्दिर १६३
Sucar)	नन्दिवर्धन ु ५१	नेह(ढ)
द्वैपायन ११२, १३२, १३३	नन्दिवर्द्धनपर्वत ८४	नोडा सईद ७३
घ	नन्दी १९७०	ч
धनदेव १५	नन्दीश्वरप्रासाद ६३	पंचम [राग] ७९
धनदेवी ५४, ९५	नमि ५८	पंचाल [देश] ९४
धनपति ९१	illulant att.	पंचासर [ग्राम] १२, १२८
94410	नयसार [भट्ट]	पंपा [सरोवर] २४
Fill of the second seco	नरचन्द्र सूरि 💮 ६२, ६९	प्खाउज ७९
वनासा [राज]	नरदेव १०२	पणपन्नी १००
धन्ध १६	नरपति २१	पत्तन [अणहिलपुर] २१, २३, २५,
धन्धुक १२३	गर्यगपुत्र	26-33, 34, 34, 34-80,
धन्ध् परमार	गर्यमा	४३-४५, ४७-५०, ५४, ५५,
धन्याधार [देश]	नरवाहन ११, ९७, १०९	५७, ६२, ६५, ६६, ६८, ७५,
भरणिग ४८, ५४	नरसमुद्र [पत्तन] २८, २९	७९, ८०, ८९, ९५, ९६, १२३,
भरणीश्वर २६	नल १२२	926, 932
धरणेन्द्र १६	नसरदीन १३५	पद्म ७८
धर्मसूरि ४३	नसरदीनसाही १३५	पद्मलदेवी ॥ ५४
धवल [मंत्री]	नांदउदी ७८	पमण्ड्या १०
		· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·

			0			•
पद्माकर	. 24	पुलकेशी		34	बङ्गअ	96
पद्मानन्द [काव्य, प्रंथ]	७६	पुष्करिणी		24	बङ्ग्या [चाचरीया	क] ' ७८
पबंधावली	938	पुक्लावतीविजय	4	£9	बनास नदीं	, 88
परकायप्रवेशविद्या	63	पुच्पाभरण		. 48	व(ध ?)न्धुराज	49
परसहंस	905	पुष्फचूला		83	वप्पभद्दसूरि	36, 98
परमर्दी	90	पूनड [साधु]		90	बर्बर [वेताल]	9, 938
परमार [वंश] १२, २३, २५	, 83,	पूर्णचन्द्र		२६	बर्बरक	23
	926	पूवा		. ७२	बिछ [राजा]	८२, ९७, १०२
परिमल	20	पृथिवीस्थान [पर	त्तन]	- 59	र्बहडाइच	934
पल्यपुर	34	पृथ्वीराज		८६, ८९, १३५	बहुरूपिणी [विद्या] 994
पङ्घीद्राम	63	पेटलाउद		* 40	ब्रह्मक्षत्रिय	94
पहुविराय, पहुवीस (पृथ्वीराज)	65	पेथू		. 74	त्रह्मा	७४, ८७
पाटलिपुत्र } [पत्तन]	33	पेथूहर		. 24	बाकरी [वेश्या]	903
पाटलिपुर रियतन र	9, 62	पेरोज		934	बाण [किव]	94, 48
पाणिनि	939	पोतनपुर		906	बापड [राजपुत्र]	
पाण्डव	906	प्रतापमञ्ज	30,	३९, ४३, १२३	बालचन्द्र	88
पातसाहि ८३, ८७,	934	प्रतापसिंह		८६, ८७	बालधवला	89
पाताक	65	प्रतिष्ठानपत्तन		. 99	बालभारत	96
	3,89	प्रतिष्ठानपुर		98, 998	बालइंससूरि	
	9-68	प्रतिमाणा		99	बावन	७६
	29	प्रथिमराज		60	बाहडदेव	58
	, 89	प्रद्योतनसूरि		900	बार्टेड्स	३२, ३९, ४०, ४६,
पारस [श्राद्ध]	39	प्रफुछ [श्रेष्ठी]		93	बाहुक [शल्यहस्त	१२३, १२४, १२६
	933	प्रभास [तीर्थ]	£9, €1	१, ११२, १२३	बाहुडदेव	
पारूथक } [द्रम्म]	49	प्रश्नप्रकाश [प्रन्थ]]	38		36
पार्वती	30	प्रल्हादनपुर		83, 50	बाहुलोडपुर	933
	29	प्राकृत [भाषा]		६, ९२, ११२	बीजलिआ	34
पार्श्व [नाथ, जिन] ६८, ८३, ९१,	20 000	प्राग्वाट [वंश]	34,	४३, ५२, ५३,	बुद्धि [योगिनी]	36
	900			६२, ६८, १०१	बुद्धिसागरसूरि	99
पार्श्वचन्द्र	२६	प्राचीमाधव		88	बृहद्गच्छ	२६, १०३
पार्श्वतीर्थ पार्श्वनाथचेत्य ६०	39	प्रियंगुमञ्जरी		999	बृहस्पति	78 87
पार्श्वनाथचत्य ६० पार्श्वनाथप्रतिमा	, 94	प्रियमलेक [तीर्थ]]	. ६9	बोटिक	89
	89	प्रेमलदेवी		36	बीसरिक]	38
पार्श्वनाथविम्ब	90		फ		ंबोसरी	३२
पार्श्वमूर्ति	90	फणिपति			बोहित्थ [वंश]	35
पालित्तय [सूरि]	39	फत्		. 46	बौद्ध	६८, ८३, ९८, १०५,
पालीताणक	44	फलवर्द्धिका ग्राम		58	100	१०६, १३०
पासिल [श्रावक]	30	फलू		39	बह्मदेवकुल	58
पाहिणी	30	क्लड		28		भ
पिपलाचार्य	4	81.0.0		92	भक्तामरस्तव	98
	, 40	100	व	50 San	भट्टमात्र	9, 4, 0, 998
पुण्डरीकिणी [नगरी]	48	बडली		७९	भद्रबाहु	99
पुण्यसार	30	बकुलादेवी		1993	भद्रेश्वर	. 00
पुरन्दर	33	बङ्गालदेश		66	भयहरस्तव	195
		The second second				the new loans

भरत [राजा, चर्क	7] 82, 46
भव (शिव)	9३२
भवानी (पर्वती)	932
भाऊ	48
भाण्डागारिक	*902
भानुमती	69
भारती	98, 69-63
भारत, छेक	96
— गद्य	30
— बा ल	20
— (महाभारत)	
भावड	
भिल्लमाल	96, 939
	२३, ५४, ६५, ११८,
\1,	129, 123, 133
भीमगान्धिक	998
भीमडाक	
भीमदेव	49, 42, 84
भीमशी[य]द्राम	₹₹, ₹¥, ६५
भुण्डपर्वत	96
भुवनपाल	
अवनपालेश्वरप्रासाद	46
THE RESIDENCE OF THE PROPERTY OF THE PARTY O	
भूणपाल	80
भूण्डपर्वत '	9.8
भूयराज	1.986
भूयराज भृगुकच्छ	२६, ४०, ७५
भूयराज	२६, ४०, ७५ ४०, ५६, ६२, ६५,
भूयराज भृगुकच्छ भृगुपुर	२६, ४०, ७५ ४०, ५६, ६२, ६५, ६९, ७४
भूयराज भृगुकच्छ भृगुष्ठर भैरव [राग]	२६, ४०, ७५ ४०, ५६, ६२, ६५, ६९, ७४
भूयराज भृगुकच्छ भृगुपुर भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी]	२६, ४०, ७५ ४०, ५६, ६२, ६५, ६९, ७४
भूयराज भृगुकच्छ भृगुपुर भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती	4 6, 80, 64 80, 46, 67, 64, 68, 68 68
भूयराज भृगुकच्छ भृगुदुर भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह	4 6, 80, 64, 80, 68, 68, 68, 68, 68, 68, 68, 68, 68, 68
भूयराज शृगुकच्छ शृगुदर मैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र	976 76, 80, 64 80, 46, 67, 68, 68, 68 68, 68 68, 68 68, 68
भूयराज भृगुकच्छ भृगुदर भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज [तृप] 9४,	976 76, 80, 04 80, 46, 67, 64, 68, 08 6 6 78 90-77, 49, 09
भूयराज शृगुकच्छ शृगुदर भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज [तृप] १४,	9 9 2 2 4 5 5 5 6 5 6 5 6 6 6 6 6 6 6 6 6 6 6 6
भूयराज शृगुकच्छ शृगुदर भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज [तृप] १४, ७२,	9 9 2 2 4 5 5 5 6 5 6 5 6 6 6 6 6 6 6 6 6 6 6 6
भूयराज शृगुकच्छ शृगुदर मैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज [तृप] १४, ७२, १२१	976 76, 80, 64 80, 46, 67, 68, 68, 68 68, 68 78 79 70 70 70 70 70 70 70 70 70 70
भूयराज शृगुकच्छ शृगुपुर मैरव [राग] मैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज[चृप] १४, ०२, १२१	9 9 2 2 4 5 7 5 9 5 9 5 9 5 9 5 9 5 9 5 9 5 9 5 9
भूयराज शृगुकच्छ शृगुदर मैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज [तृप] १४, ७२, १२१	976 76, 80, 64 80, 46, 67, 68, 68, 68 68, 68 78 79 70 70 70 70 70 70 70 70 70 70
भूयराज शृगुकच्छ शृगुपुर मैरव [राग] मैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द्र भोज[चृप] १४, ०२, १२१	926 26, 80, 64 80, 46, 62, 64, 62, 68 63 24 90 90-23, 49, 69 36, 990, 992, 922, 923-939 90 83 89
भूयराज श्रृगुकच्छ श्रृगुकच्छ श्रृगुक्द भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द भोज [तृप] १४, ०२, १२१ भोजस्वामिधासाद भोपळदे भोपळा	9 9 2 2 4 5 5 6 7 6 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 7 6
भूयराज श्रृगुकच्छ श्रृगुकच्छ श्रृगुक्द सैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द भोजीन्द भोजीन्द भोजीन्द भोजस्वाभिश्रासाद भोजस्वाभिश्रासाद भोपळदे भोपळा	9 9 2 2 4 5 5 6 7 6 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 7 6
भूयराज श्रृगुकच्छ श्रृगुकच्छ श्रृगुक्द भैरव [राग] भैरवानन्द [योगी] भोगवती भोगावह भोगीन्द भोज [तृप] १४, ०२, १२१ भोजस्वामिधासाद भोपळदे भोपळा	9 9 2 2 4 5 5 6 7 6 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 8 7 6 7 6

	, "
मघव	40
मङ्गाहडपुर	24
मण्डनगणि	32
मतौडातीर्थ	66
मथुरा	99, 98
सद्न	00
मदनपाल	५३, ५४
मदनब्रह्म	२३-२५
मद्नायतन	0
मद [देश]	932
मधुमती	99-909
मधुसूदन	99
मनोरमा	99
सम्माणनगर	909
मम्माणाकर	909
मम्माणी [खिन]	99
मयण	34
मयणल(ह)देवी	२८, ३५, ३६,
	933, 938
मयणसाहार	४६, ७९
मयूर [कवि]	94, 98
मरहट्टदेश	99
मरु [भूमि]	925
मरुदेवी	99
मरुमण्डल	52
मरुखली	३२, ८४
मलधार [गच्छ]	920
मलयपर्वत	49
मलिककूबडी	934
मलिका	934
मछदेव	५४, ६५, ९०
मछवादि [सूरि]	८३, ९६, १३०
मिल्लिक	40
मिह्नकार्जुन	३९, ४०, ४६, ४७
महणक	92
महणका	926
महमद	90
महमूंद	१३५
महाप छि	90
महाभारत	928
महाविदेह	68, 998
महाराष्ट्रीय	96
महावीर	63.

•	848
महिणल पट्टिलक	39
महिरावण	\$4
महिषपुर	36
महीधर	34
महुआ	X4
महेश्वर	25
मांगू	955
माइंदेव	
माऊ	२५, ५४
माऊहर	17, 70
मागध	09
माघ [कवि]	90, 08, 904,
14	130, 939
माघकाव्य	90
माणिकड [पछेडउ]	80
माणिक्य	२७, २८, ३१,
माणिक्यसूरि	५०, ६४, ७६
माधव	22, 22, ^
माधवदेव	28, 24
माधवपंडित	28, 24
मानखे(षे)टपुर	९३, ९४
मानतुङ्ग सूरि	94, 94, 929
मानदेव सूरि	900
मानस [सरोवर]	58
मारव	. 99
मालदे	49
मारुक रे	३२, ५०
मारुयक ∫	४८, ११३
मालव १७, २०	, २३, २४, ३१,
३५, ४४, ६	७, १०२, ११९,
	२६, १२८, १३१
मालवक	90, 29, 96
मालवपति	७९
मालवमण्डल मालवराज्य	२७
मालवा	93
मालवेश	38
माल्दश माल्हणादेवी	98
माहिन्द	90
माहेच	902
माहे श्वरप्रासाद	93
माहेश्वरी	58
मिणालवई	11
	38

121				1 - 1 - 1/6	•
[]	93, 94-42,	याकिनी [साध्वी]	903	रुद्दाइच (रुद्दादित्य)	38
मुझ [नृग]	926, 928	याज्ञवल्क्य	999	रुद्र [शिव]	995
	928		६, ८३, १००	रुद्रमहाकाल	U 58
मुणालवई	938	युगादिदेवप्रासाद	२३, ५२	रुदादित्य [मंत्री]	१३, ४४, १२८
मुद्रल	60	युगादिदेवभाण्डागार	28	रूपवती	950
मुद्रलबंदी	64	युगादिफलही	30	रैवत [गिरि, तीर्थ]	१४, ४७, ५२, ५३,
मुद्रलपातसाहि	24.72.65	युधिष्ठिर	928, 938	€0, €	५, ६९, ८२, १३२
मुनिचन्द्र	25, 39	युगंधराचार्य	960	रैवतक [पर्वत]	४, ४३, ६१, ९३,
मुनिसुव्रत [देव]	32		924		, ९८, १२६, १३२
मुनिसुवतचैत्य	४५, ६२	यूकावसही	924	रैवतकपद्या	994
मुनिसुवतप्रासाद	33	योगशास्त्र योगिनीपुर	٤٤, ٤٥, ٤٩	रैवततलहट्टिका	36
मुरंडनरपति	52		4,00,00	रोदिक (रुद्रादिख)	999
मुरारि	938	₹	2 1 7 7 1	रोहणगिरि, रोहणाच	
मुहडासा [प्राम]	923	रंक [वणिक्]	१, ८२, ८३		to a second
मुहुयानगर	- 99	रघुपति	७२	6	
सून्धउर	934	रणसिंह	39	लंका	24
मूलराज	93, 00, 926	रति	920	लक्ष्मण	909
मृणालवती	98, 928	रतिरमण (कामदेव)	122	लक्ष्मी	928
े सेघ [राग]	vo	रतपुञ्ज 👙 💆	82	लक्ष्मीधर	94
मेडतकपुर	93	रत्नपुर हा है	68	लख[म]णसेन	68,66
मेद [जाति]	909, 902	रत्नप्रभ	920	लखणावतीपुरी	68, 66
मेद्रपाट	88, 902	रत्नदोखर	83	लघु वाग्भट	९६
मेरी	28		68	ललितविस्तरा [वृत्ति	
मेर	20,49	रसीअड } [योगी]	64	छछिता छछिता	, ६२, ६३
	32	राजपुत्रवाटक	86		48, 43, 44
मेलगपुर	39	राउल	40, 49	ललि(लू)तादेवी	48, 54
मेवाड	48	राजविडम्बननाटक	२१, २२	लवणप्रसो र	70, 47
मेहशा [माम]	64	राजविहार	30	लवणसमुद्र	30
मोगा		राजशेखर	998	लवदोसिक	
मोजदीन [सुरत्राण]		राजस्थापनाचार्य [बिरुद]	६७	लपणावती	934
मोढकुल	923	राजिल	993	लहर [ठक्कर]	48
मोडेरपुर	63	राजीमती	60	लाखण	909, 903
य	St. Jan July	राम (रामचन्द्र) ८,९	36,80-85,	लूाछलदेवी	33
यक्षदेवकुल		650 20 300	994		३२, ६८, ९३, १३४
यक्षनाग	34	रामकथा	3	ला डदेश	80
यसुना [नदी]	82, 934	रामदेव	993	लापाक	93
यवनव्यंतर	63	रामराज्य	3	लाहउर	१३५
यशःपटह [हस्ती]	23	रामशेन [ग्राम]	32	छी लादेवी	0 33
यशश्चनद	923	रामायण		लीलावती	28
यशोधन	912	रायविड्डार [बिरुद]	39	छी ऌ.	8.5
यशोधर		रायविहार	30	लुखाई	993
यशोभ <i>द</i>	\$3		9, 994, 996	ल्लापसा रे	48
	७५, ११५	राष्ट्रकृटीय	., 11 ,, 11	ऌ् णप्रसाद	५५, ६७
यशोराज	32		43	ॡणसीह	
	२३, २४, ३५, १०९	ग्रासि छस् रि	934	रह्मिग	45 48
यशोवीर ४९-	-५३, ६७, ७०, ७१	रुक्मदीन	14.7	100.00	Linia

		0			
ॡणिगवसही	५३, ६५	वरणारसी	94, 20, 44	विष्णु	68, 908
चोचियामारू	994	वादी देवसूरि	30	वीकम	35 TO 1 90R
लोहटिक लोहडिय	71 40	वामणी	२४	वीकमओॅ	3
लोहडिय र्ि रम	41 64	वासंदेव	4	वीघरा	903
3	व	वामन	90	वीर [जिन]	३२, ४२, ९४, १०४
वईंजलिया		वामनस्थली	६२, ६८, ११४	वीरणाग	3 €
वङ्गश्वर	86	वामराशि	984	वीरप्रतिमा	45
वज्ञनवत्सला	926	वायडज्ञातीय	30	वीरदेव	32, 900
वज्रस्वामी	2.3	वायडपुर	38	वीरधवल	५४-५६, ६५-६७,
वज्राकर	\$\$, 9 0 9		£, 66-30, 900		£9, vc
	68	वाराहीसंहिता	80	वीरम	५४, ६५-६७
वटकूपपुर वटपद्रपुर	88	वालही	998	वीरमति	926
		वालीनाह	49	वीरराज (वीरध	बल) ५७
वडीयारदेश	976	वासुकि	39	वीराचार्य	8.3
वडूयाग्राम	७६	वासुपूज्यचैत्य	२७	वीॡ	58
वढवाण	३५	विक्रम (विक्रम)	934	वीसल्)	£4-£6, 99x
वरथुपाल (वस्तुपाल		विक्रमकाल	63	वीसलदेव वीसलिक	५०, ६८, ७७-८०
वद्धमाण (वर्द्धमान		विक्रमराय	923		1 2 2 20
वनराज	१२, १२८		90, 998, 990	वृद्धसरस्वती वृषभ [जिन]	69
वयजू	39	विक्रमसेन	4, 6	वेणीकृपाण [बिर	
वयजूका	48	24 2	,49,909,996	वेदगर्भ	994
वररुचि ,	- 69	विक्रमार्क		वैदिक	95
वराहमिहिर	90, 99	विखि	8-6	वैष्णव	42
वर्द्धमानपुर .	ę v	विजयचन्द्र	66	व्याघ्रपञ्जी	48
वर्द्धमानसूरि	६८, ८३, ९५, ११९	विजयब्रह्म	94	व्यास	08, 06, 60
बलभी [पुर]	62,63	विजयसेनसृरि	44, 68, 04	व्यासविद्या	20
वलही	63	विजया	900	- Alichard	The second second
वहुभराज	903	विदुर	906	- W	श
वलुभा	58	विद्याधर [मंत्री]	66, 90, 922	शंकर 💮	98, 998, 980
वसंत [राग]		विद्यारधरगच्छ	93	शंख	५६, ५७, ७४
वसन्तपुर	993		992	शक शकावतारतीर्थ	20
वसाह	\$\$, 8\$, 88, 8°	विद्यानन्द	ξυ	शकावतारताय शङ्खेश्वर [प्राम]	920
	86, ६9, 60 .	विद्यापुर विनमि	46	शङ्खेश्वर [श्राम]	48
वस्तुपाछ	५२-५५, ५७, ५९,	विभीषण	158	शङ्ख्यरपाचनाय	39 48
	६१-६४, ६६-७५,	विमल [मंत्री]	49-43		३२, ४२, ४३, ५९,
10	44, 46, 60	विमलचन्द्र	95		8-66, 66, 64, 75, 8-66, 66, 64, 63,
वस्त्रापथ [बीर्थ]	40	विमलवसति	49		93, 99-909, 925,
वांका [प्राम]	39	The second secon	48	, 1,	120, 120, 122
वाक्पतिराज	993	विमलवसहि		शत्रुअयतलहद्दिक	
वाग्भट [मंत्री]	३२, ४०, ४२, ४३,	विमलादि	६३, ९४, ९८	शतुज्ञयत्तवहाटक	46
Aller .	46, 90	विमानविश्रम	958	शतुज्ञयमाहारम	, vy
वाग्भट [वैद्य]	96,90	विराट [देश] विवेकबृहस्पति [विरुद		शरुभलीश	903
वाघरामाम	32		10, 12	शस्भ	908, 988
वाचस्पति	υ ર	विश्वमञ्ज	44]		
yo y	ा∘ स॰ 20		The state of the s		A STATE OF THE PARTY OF THE PAR

शाकसैन्य	25
शाकंभरी [पुरी]	३१, ८६, ८७, १०१
शाकटायन [व्याव	हर्ण] १३१
शाक्यसिंह	906
शातवाहन	९४, १३०
शान्तिकलश	7 6
शान्तिनाथ	900
शान्तिस्तव	900
शारदा [देवी]	920
शासनदेवी	२६
शिलादि त्य	८२
शिव	१०, १९, ४८, ६८
शिवपत्तन	63
शिवपुर	903
शिवभूति	24
शिवमार्ग	928
शिवशासन	88
शिशुपावलध [क	ाव्य] १७
शीलगुणसूरि	१२, १२८
ग्रुभंकर	904
शृङ्गारकोडि (सा	डी) ४०, ४६
शैव	53
शोभन [मुनि]	998
शोभनदेव [सूत्रध	गर] ५३
श्री [कन्या]	94
श्रीदेवी '	92, 926
श्रीधर	88
श्रीपर्वत	६, ६५, ११६
श्रीपाल [किव]	४२, ४३
श्रीपुंजराज	५१, ८४, ८५
श्रीप्रभसूरि	900
श्रीमाता	49, 42, 68-66
श्रीमाल [पुर]	90, 96, ३२, ३४,
	४२,४९,८३, १०५,
	904, 924, 930
श्रीमालज्ञातीय	904
श्रीराग	90
श्रीहर्ष [किव]	996
श्रेणिक [राजा]	83
श्वेतपट	२७, २९
श्वेताम्बर	94, 20, 20, 909,
	१०५, १२७, १३०
श्वेताम्बरीय	२७, ९८

ष	
षं(खं) गार	38
षं(खं)भराग्राम	934
षड्दर्शनमाता [बिरुद]	£ 3
षोसरुषानु (खुशरुखान)	934
स	
सइंभरी (शाकंभरी)	25
सइंवाडीघाट	Ęu
सईद [नोडा]	५६, ७३
संखराज	. 86
संखेश्वर	92
संग्रामराजा	83
संमेत [गिरि, तीर्थ]	83
संयोगसिद्धि [शिप्रा] ४०	, ४१, ४७
संस्कृत [भाषा]	8,90
सगर [चक्रवर्ती]	46
सज्जन [कुलाल]	35
सज्जन [दण्डनायक] ३४,	४९, १३१
सजन [साकरीयाक]	3 €
सण्डेरगच्छ	88
सण्डेराज (खण्डेराज) [शंख	छ] ५६
सत्यपुर	२६
सपादलक्षत्रनथ (महाभारत)	30
समरसिंह	88
समरसीह	905
समराक	58
समरादित्य	904
समरादित्यचरित	904
समसदीन [पातसाहि]	934
समुद्रविजय	49, 69
	२७, ४३,
997, 93	२०, १२९
सरस्वती [नदी] सरस्वतीकण्ठाभरण प्रासाद	926
सरस्वतीकण्डामरण प्रासाद सरस्वतीकुटुम्ब	350
	996
सर्वदेवाचार्य	900
सहस्रकला	28, 88
सहस्रकिरण [ताडङ्क] ४०	,४१,४७
सहस्रहित [सरोवर]	६७
सहावदीन [पातसाहि] साइंदेव	१३५
साइदव	38
सागर [द्विज]	28, 48
Curre [1841]	34,80

	6
साङ्गण-चामुण्डराज	£9
साङ्गण [डोडिआक]	32
साजण (सज्जन) [मं	
सातवाहन	99, 89
सात्कै [महं॰]	60
सान्तू [मंत्री]	३१, ३५, १०७,
and Family	933, 938
साभ्रमती	30
सामंतसीह	907
सामाचारी [प्रन्थ]	38
साम्ब	32
सारंगदेव	992
सारस्वतमंत्र	20
सालाहण	92
सावदेवसूरि	936
साहबदीन [पातसाहि]	
साहारण	२७
सिंघरा	905
सिंह	93
सिंहणदेव	७९
सिद्धराज [जयसिंह] २	३-२५,२८,३०,
38-3€	, ३८, ३९, ४७,
, , , ,	, , , , , ,
	५, १२३, १२५,
८५, १०	५, १२३, १२५,
८५, १०	
८५, १०	4, 9२३, 9२५, २७, 9३१–9३४ २८, २९
८५, १० १ सिद्धचेश्चर्ती सिद्धनाथ	4, 9२३, 9२५, २७, 9३१–9३४ २८, २९ २३, २५
८५, १० १ सिद्धचीश्चर्ती सिद्धनाथ सिद्धपाल [कवि]	4, 9२३, 9२५, २७, 9३१–9३४ २८, २९ २३, २५ ४२, ४३
८५, १० १ सिद्धचिश्चर्ती सिद्धनाथ सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर	4, 9२३, 9२५, २७, 9३१–9३४ २८, २९ २३, २५
८५, १० १ सिद्धचीश्चर्ती सिद्धनाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपुर सिद्धपुर	4, 9२३, 9२५, २७, 9३१–9३४ २८, २९ २३, २५ ४२, ४३ ३०, ४४, ४५
८५, १० १ सिद्धचिक्ष्मतीं सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपि सिद्धपारस्वत	4, 9२३, 9२५, २७, 9३१–9३४ २८, २९ २३, २५ ४२, ४३ ३०, ४४, ४५ १०५
८५, १० १ सिद्धचित्र्ञ्जतीं सिद्धनाथ सिद्धपाल [किव] सिद्धपुर सिद्धपिं सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत	4, 9२३, 9२५, २७, १३१–१३४ २८, २९ २३, २५ ४२, ४३ ३०, ४४, ४५ १०५ ८६ ३८, ११७
८५, १० १ सिद्धचित्र्यां सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [सिद्धपाल] सिद्धपाल सिद्धपाल सिद्धपाल सिद्धपाल सिद्धपाल स्वित्र स्वार्थ सिद्धपाल स्वार्थ स्वार्थ सिद्धपाल स्वार्थ स्वार्थ सिद्धपाल स्वार्थ स्वार्थ सिद्धपाल स्वार्थ स्वार्य स्वार्थ स्वार्थ स्वार्थ स्वार्थ स्वार्थ स्वार्थ स्वार्य स्वार्थ स्वार्य स्वार्य स्वार्य स्वार्थ स्वार्थ स्वार्य स्वार्थ स्वार्य स्वार्य स्वार्थ स्वार्य स्वार्थ स्वार्य स्वार्थ स्वार्य स्व	4, 923, 924, 26, 929-938 26, 28 27, 28 28, 84 28, 84 29, 88, 84 26 26, 996 90
८५, १० १ सिद्धचित्र्वर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वर सिद्धसारस्वर सिद्धसारस्वर सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण]	24, 923, 924, 26, 939-938 26, 28, 24 27, 83 20, 88, 84 20, 88, 84 20, 994 26 26, 996 90
८५, १० १ सिद्धचित्र्वर्तीं सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी]	4, 923, 924, 20, 939-938 20, 93, 84 21, 83 20, 88, 84 20, 990 90 92
८५, १० १ सिद्धचित्र्यां सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल किव सिद्धसारस्वत सिद्धसोन स्परि सिद्धसोन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्ध [योगिनी]	4, 9२३, 9२4, २७, १३१-१३४ २८, २९ २३, २५ ४२, ४३ ३०, ४४, ४५ १०५ ८६ ३८, ११७ १० १२
८५, १० १ सिद्धचित्र्वर्ती सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन स्परि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धलु	4, 9२३, 9२4, २७, १३१–१३४ २८, २९ २३, २५ ४२, ४३ ३०, ४४, ४५ १०५ ८६ ३८, ११७ १० १३१ १५
८५, १० १ सिद्धचित्र्य सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धल सिन्धल	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 82 20, 82 20, 990 90 92 90 92 90 92 90 92 90
८५, १० १ सिद्धचित्र्यां सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन स्वि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धल सिन्धल सिन्धल	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 924 20, 920 90 929 90 929 90 929 90 929 90
८५, १० १ सिद्धचित्र्यां सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्ध हेम [व्याकरण] सिद्ध [योगिनी] सिन्धल सिन्धल सिन्धल सिराणा [ग्राम]	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 924 20, 924 20, 920 90 929 929 929 929 929 929 929 929 9
८५, १० १ सिद्धचित्र्य सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धल सिन्धल सिन्धल सिराणा [ग्राम] सींघण सीता	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 924 20, 920 90 929 90 929 929 929 928 928 928 928 928 928
८५, १० १ सिद्धचित्र्यां सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन स्वि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धल सिन्यल सिन्धल सिन्धल सिन्यल स सिन्यल सिन्यल स सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल स	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 924 20, 924 20, 920 90 929 929 929 929 929 929 929 929 9
८५, १० १ सिद्धचिक्क्क्तीं सिद्धनाथ सिद्धपाल [कवि] सिद्धपाल [कवि] सिद्धपारस्वत सिद्धसेन सूरि सिद्धसेन दिवाकर सिद्ध हेम [व्याकरण] सिद्ध [बोगिनी] सिन्धल सिन्धल सिराणा [ग्राम] सींवण सीता सीतारामप्रवन्ध	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 924 20, 920 90 929 90 929 929 929 928 928 928 928 928 928
८५, १० १ सिद्धचित्र्यां सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धपाल [किव] सिद्धसारस्वत सिद्धसारस्वत सिद्धसेन स्वि सिद्धसेन दिवाकर सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धि [योगिनी] सिन्धल सिन्यल सिन्धल सिन्धल सिन्यल स सिन्यल सिन्यल स सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल सिन्यल स	4, 923, 924, 20, 929-938 20, 929-938 20, 924 20, 920 90 929 90 929 929 929 928 928 928 928 928 928

सीन्धल .	926
सीमंधर [खामी, जिन]	२६, ६९, ९५,
	998
सीमंधरप्रासाद	२६
सीलण	४७, ४८
सुंदर सर	40
सुंसुमार	928
सुगति	38
सुधर्मस्वामी	99
सुधानिधि वापी	38
सुन्दरिसरित्	40
सुभट '	99
सुभद्रा	२०
सुमतिप्रभ [गणी]	39
सुमाया	२४
सुमित्र	909
सुमेसर (सोमेश्वर)	८६
सुरत्राण	49, ६६, ८६
सुरपति	922
सुराष्ट्रा ३४, ५८,	६३, ९३, ९७,
	४, १२५, १३१
सुललित	58
सुवर्णनर	3
सुवर्णगिरि •	902
सुवर्णपुरुष	1 . 3
सुवर्णसिद्धि	88
सुव्रता	93
सुव्रताचार्य	88
सुशीला	58
सुहादेवी	32
सुहागदेवी ४८, ४९,	
सुह्म	8€6
सूमेसर (सोमेश्वर)	c &.
सूर्यशतक	98
सेडउ [इस्ती]	४६
सेडिका	94

सेडी [नदी]	. 99
सेड्यक [इस्ती]	80
सेरिसक ो ा नी	7 %
सारसक } [तीर्थ	1 998
सेषर	92
सेहर	92
सोनल	३४, ३५
सोपारक	४२
सोम	५३, ५५, ९८
सोमचन्द्र	२६
सोमनाथ [महादेव] 86
सोमनाथयात्रा	38
सोमभट	30, 86,
सोमभद्र	8
सोमेश	933
सोमेश्वर [महादेव]	३५, ३६, ३८, ४७,
	६१, ६९, ७२, ७८,
	८६, ९८, ११२,
	२६, ९८, ११ २ , १२९, १३२
सोमेश्वरदेव [कवि	१२९, १३०, १३२
सोमेश्वरदेव [कवि सोमेश्वरयात्रा	१२९, १३०, १३२
	१२९, १३०, १३२ ७४, ८०
सोमेश्वरयात्रा	9२९, १३०, १३२] ७४, ८० ८२, १३२
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग]	9२९, १३०, १३२] ७४, ८० ८२, १३२ ७९
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोऌ	9२९, १३०, १३२ ७४, ८० ८२, १३२ ७९ १२६
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोऌ सोहगा	9२९, १३०, १३२ ७४, ८० ८२, १३२ ७९ १२६ ५४
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ सोहगा सोहालक [प्राम]	9२९, १३०, १३२ ७४, ८० ८२, १३२ ७९ १२६ ५४
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ, सोहगा सोहालक [प्राम]	928, 930, 932 08, 20 22, 932 08 926 43 43 902 8, 23, 930, 930
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोल्द्र सोहगा सोहालक [प्राम] सोही	928, 930, 932 08, 60 62, 932 926 926 43 43 902 8, 63, 930, 930 66
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ, सोहगा सोहालक [प्राम] सोही सोगत [मत] १ सोभाग्यदेव सोभाग्यदेव	928, 930, 932 08, 20 22, 932 08 926 48 48 902 8, 23, 930, 930 22 23
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ सोहगा सोहालक [प्राम] सोही सोगत [मत]	928, 930, 932 08, 60 62, 932 926 926 43 43 902 8, 63, 930, 930 66
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ सोहगा सोहालक [प्राम] सोही सोगत [मत] सौभाग्यदेव सौरमन्त्र सौराष्ट्र	928, 930, 932 08, 20 22, 932 08 926 48 48 902 8, 23, 930, 930 22 23
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ सोहगा सोहालक [प्राम] सोही सौगत [मत] १ सौभाग्यदेव सौरमन्त्र सौराष्ट्र सौराष्ट्रिक	928, 930, 932 98, 20 22, 932 926 926 938 938 938 938 938 938 938 938
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ, सोहगा सोहालक [प्राम] सोही सोगत [मत] सौभाग्यदेव सौरमन्त्र सौराष्ट्र सौराष्ट्रिक साम्भतीर्थ	928, 930, 932 98, 20 22, 932 926 48 48 902 8, 23, 930, 930 24 24 48 48, 48, 48, 48, 48, 48, 48, 48, 48, 48,
सोमेश्वरयात्रा सोरठी [राग] सोछ सोहगा सोहालक [प्राम] सोही सौगत [मत] १ सौभाग्यदेव सौरमन्त्र सौराष्ट्र सौराष्ट्रिक	928, 930, 932 98, 20 22, 932 926 48 48 902 8, 23, 930, 930 24 28 48, 28, 940, 940, 940 48, 48, 48, 48, 48, 48, 940, 940, 940, 940, 940, 940, 940, 940

स्तम्भनप्राम	99
स्थूलभद्रचरित	३७
स्वर्गारोहणप्रासाद	46
स्वर्णगिरि	49
स्वर्णगिरिदुर्ग	40
	₹
हंस	
हस हंसगति	४३, १०५
हंसविश्रामवा पी	28
हजयात्रा	ξ ξ
हम्मीरी	28
हरदेव [चाचरीयाक	
हरपा लदेव	923
हरपाल देव हरिचन्द्र	75
हरिभद्र सूरि	903-904, 900
हरिसिद्धि [देवी]	4
हरिहर	פט
हर्ष [राजा]	94
	906
हस्तिकल्पपुर हांसी	30
हासा हारीज	43
हाराज हिंदुक	55
हिसादिः	49
हिमालय	996
हूण	918
हूणवंश	. 9
हेमचन्द्र [स्रि	३७, ४२, ४३,
	१२६, १२८
हेमडसेवड	924
हेमप्रभ सूरि	45
हेमब्याकरण	१३१,
हेम[चन्द्र]सूरि	३७, ३८, ४४, ४६,
	४९, ५८, १२३,
	१२४, १३२
हेमाचार्य	३३, ४४, ४५, ४७

प्रबन्धचिन्तामणिग्रन्थान्तर्गतविशेषनाम्नां सूचिः।

॥ अकाराद्यक्षरानुक्रमेण ॥

27	
अ	
अकालजलद [बिहद]	३०
अगस्य	६९, ७६
अग्नि [राजा]	६२
भग्निवेताल	२, ३, ३२
अच्छोद [सरोवर]	4.5
अजयदेव चालुक्य] ९६,९७
अजितनाथ [जिन]	९६
अणहिल्ल [भारूयाङ]	93
अणहिल्लपुर [पत्तन]	93, 94, 90,
	2, 80, 50, 08,
	७, ७८, ८१, ८६,
	, ९१, ९२, १२६
अनादिभूपति [तपस्वी]	99
अनुपम देवी।	4 6 9 9 4
अनुपमा	96, 903-4
अनुपमासर	900
अन्धय [अन्धक]	36
अन्ध्र [देश]	39
अभयदेव [सूरि]	900, 930
अभिनन्द [कवि]	902
अस्वा)	909
अस्विका 🕽	923
भयोध्या	93
अरिष्टनेमि-प्रासाद	44
अरू=धती	.36
अर्जुन	३१, ५५
अर्जुनदेव [मालवभूपित]	90
अणोराज [शाकमभरीश]	७६
अर्द्धाष्टम [देश]	, <3
अर्बुद [नाग]	990
अर्बुद्र गिरि	60,90,909
अर्बुद तलहदिका	39
अर्हन् [देव]	43
अर्हन्तश्री [प्रनथविशेष]	38
अलका [नगरी]	93
अवस्ति [नगरी]	2, 2, 24, 89,
	40, 904, 989

─	
	9
अवन्ति [देश]	2
अवन्ति सुकुमाल [मुनि]	७ (हि॰)
अश्विनीकुमार	923
अष्टापद [पर्वत]	915
अष्टापद-प्रासाद	909
• आ	
आकृष्टि विद्या	998
आकेवालीया [ग्राम]	904
आगडदेव	94
आगडेश्वर	94
भानाक (अणीराज) [सपादल	क्षीय] ७६,७९
आनाक [व्याघ्रवाहीय]	38, 96
आभड [वसाह]	६९-७०
आभीरराणक [नवघण]	£&
आम [नृपति]	983
आम्बड } [मंत्री]	44, 60, 69
	८६-८८, ९७
आईत [दर्शन, मत]	४२
आलिग [कुलाल]	00,60
आछिग (°मिग?) [पुरोहित] ६० (टि०),
1-0-11	63
आलिग [प्रधान]	49,89
आल्या [गूर्जराश्ववार]	28
भावश्यकवन्दनानिर्युक्ति [प्रं	909
आशराज [मंत्री]	96
आशराज-विहार	909
आशा [भिल्ल]	44
आशापल्ली	44
आशास्त्रर [दिगम्बर]	998
आसांबिली [प्राम]	9
इ	
इन्द्र [नृपति]	63
उ	
उच्चा [नगरी]	34
उज्जयन्त [पर्वत, तीर्थ] ६	५, ९३, १००,
	909
उज्जयन्त-प्रासाद	£4
उज्जयिनी [नगरी]	८, १३
उञ्झा [प्राम]	७१, ७२

- 15-17 JULY	
उत्तराध्ययन [सूत्र] बृहद्वृत्ति	44
उद्यचन्द्र [पण्डित]	50
उदयन [मंत्री] ५६, ७७, ७९	, 69, 63,
	, 20, 90
उदयन-चैत्य	20
उदयन-विहार	44
उदयप्रभदेव	58
उदयमति [राज्ञी]	48, 44
उदा [उदयन]	५६
उपासकद्शा [सूत्र]	98
उमा	×
	992, 923
उर्वशी ,	30
'डवसग्गहर' [स्तोत्र]	998
来	
	(हि॰) ६२
ऋषभनाथ-प्रासाद	£\$
	80
ऋषभपञ्चाशिका [स्तुति]	The second second
ए	
एकपद [क्षेत्रपाल]	903
क	~ 0
	, 00 04
कच्छ [देश] १६, १	
कच्छप [लक्षराज]	98
कण्टेलीया [पाषाणविशेष]	900
कण्टेश्वरी-प्रासाद	93, 94
कण्ठाभरण [ब्याकरण]	69
कन्थादुर्ग	95
कन्यकुज ११, १२	, ३१, १२३
कन्ह (कृष्ण)	
	6, 90, 94
कपर्दि [यक्ष]	900, 928
कपिलकोट [दुर्ग]	98
करणडत्तु (कर्णपुत्र=करणोत)	
1	46
करम्बक-विहार	99
कर्ण [पुराणकालीन] १३, ५५,	104, 117
कर्णदेव [डाहलदेशीय] ४९-	3465, 54
कर्णदेव [चालुक्यवंशीय] प	18-46, 00
	e sale

	कीर्तिराज १	गुणचन्द्र [विद्वान्]
कर्णमेरु [प्रासाद] ५५, ७०, ७१	कुकुण [देश]	गृह महाकाल-प्रासाद ' ७ (टि॰)
कर्णसागर [तडाग]	कुङ्केश्वर-प्रासाद	गूर्जर १३, ३१, ४४, ६३, ९५
कर्णाट [देश] ३१, ५४, ६६, ७४, ९५	कुन्तल मण्डल ११४, ११५	,, गोपाल
कर्णाटेश २५	क्रवेर ३९	,, देश १२, १४, १६, २१, २८,
कर्णावती ५५, ५६, ६६, ८३	कुमरनरिन्द (°नरेन्द्र) [कुमारपाल] ८,७८	३१, ३२, ४५, ४६, ५३,
कर्णोङ्गज [सिद्धराज] ५६, ५९	कुमारदेवी ९५	५८, ६६, ९४, ९७
कर्णेश्वर ५५	कुमारदेवीसर १०१	थ्या यह देश विस्तान
कर्पूर [किव]	Q,	,, • नाथ
कर्मप्रकृति [प्रन्थविशेष] ३७	कुमारपाक ४६-४९, ८१, ८६-९०, ९२, ९४, ९५, ९७,	
कलविणि [नदी]	909, 928, 926	,, नृपात ५०
कलंहपञ्चानन [हस्ती]		गूर्जराधीश्वर ७२
कलिकालसर्वज्ञ [बिरुद] १२६	कुमारविहार [प्रासाद] ८९, ९१, ९३, ९६	गूर्जरेश्वर १६, ५४
कलिङ्ग [देश] ३१	9	गोदावरी [नदी] ९, २२
कर्त्याणकटक ११	कुमुदचन्द्र [पण्डित, वारी] ६६-६६	गोलानई (गोदावरी नदी) २४
कह्याणत्रयचैत्य १०१	कुरुकुला देवी ६८	गोवर्द्धन [राजा]
कविबान्धव [विरुद] ९०	कुळचन्द्र [पण्डित] ३२	गोविन्द ९,२५
कंक्लोल १८	कुसुमपुर ११२	गोविन्दाचार्य २८
कंस १९५	कृत्वा ११६	
काकर [प्राम] १२, १३	केशव ८१	गौड [देश] २२, ७६, ११२
काकल [पण्डित] ६८	केळास ८५	गौडदेशीय
काकुत्स्थवीर्थ २७	कोछरबा [देवी]	गौरी
काक् } [वणिक्] १०७,१०८	कोपकाळानळ [विहद]	च । कार्य
काक्याक)	कोल्लापुर ७३	चउलिग [हस्ती]
कातम्र [व्याकरण] ६१	कोल्ह्या [गूर्जराश्ववार] ४८	चिण्डिका.
कात्यायिनी २३	कोशल [देश]	चिण्डका आसाद ४४, ६० (टि०)
कानीन [मुनि] ४२	कौङ्क(ङ्क)णक [देश] ३१,८०,८८,	चन्द्रनाचार्य ४९
कान्ती [पुरी] १३, १११, १२०	९५, ११८	चन्दनाथदेव २०
कान्थडि [तापस]	कै।तुकी [सीलग]	चन्द्रप्रभ [जिन] १०१
कान्हडदेव	कौरतेश्वर १३	चन्द्रप्रभविम्ब १०८ १०९
कान्हू [व्यवहारी]	क्षपणक ११४	चन्द्रप्रससूरि 9
कापिल [दर्शन] ६३	क्षेमराज १४, १५	चन्द्रलेखा [राज्ञी] १२०
कामन्दकीय [नीतिशास्त्र]	ख	चन्द्रावती [नगरी] १०१
कामलता १८	खंगार [आभीरराणक] ५४, ७६	चनपा [नगरी]
कामिततीर्थं ११०	खण्डपशस्ति [काव्य] ४१	चरटराज्य १४
कालभैरवीय ६० (टि०)	खेडा [महास्थान] १०६	चाङ्गदेव ८३
कालमेघ १२३	ग	चाचिग ८३
कालिका [देवी]	गंगनगामिनी [विद्या]998	चाचिणेश्वर-प्रासाद २०
कालिदास [किव] ३, ४, ५, १०२	गङ्गा [नदी] ७४, १०४, ११३	चाणक्य ६७
कालिन्दी [नदी] ७५	गाङ्गेय १३	चान्द्र [व्याकरण] ६१
काशहद [नगर] २१	गांडर [अरघट] ९७	चापोत्कट वंश १२, १५, १६
काशि [नगरी] १३, ५०, ७४, ८९,	गाथांकोश [गाथासप्तशतीप्रंथ] १०	चासुण्डराज [चापोत्कटवंशीय] १५
993	गिरिनगर १२२	,, [चालुक्यवंशीय] १९,२०
काइमीर [देश] ६० (टि०)	ब्रिरिनार ६५	,, [राष्ट्रकूटान्वयी]
कीर [देश] ९५		चामुण्डा [गोत्रजा देवी]
	A CONTRACTOR OF THE PROPERTY O	The state of the s

चारण [जाति] ५८,९२,९३	f
चाहड [उदयनपुत्र, राजघरह] ९४	f
चाहड [सचिव]	f
चाहडकुमार ७९	f
चाहुमान [वंश]	f
चित्र ९९	
चित्रकसिद्धि [विद्या] १०८	f
चित्रकूटपट्टिका	1
चिन्तामणि (गणेश)	1
चूडामणि प्रन्थ (अर्हन्तश्री) ३९	1
चेदि [देश]	1
चोड [देश] ३१, १११	N.
चौलुक्य [वंश] ६१,६८,७३,७९-	1
6 69, 924, 929	16
चौलुक्यचकवर्ती २५, ७९०, ८०	717
छ	1.0%
छन्नशिला १३	1
छाला [प्राम] ६९	100
छित्तप [कवि]	410 410
34975	1
ज्यातर्दे [यमनावदी] १९	1
modulas [adduna]	1
MINISTER TO THE STATE OF THE ST	
जगहेव १९४, १९५, १९६	-
90	anatom
	-
जयचन्द्र ७४, ११३	
जयतलदेवी ९८, १०४	
जयदेव [पण्डित] ९६, १०३	-
1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	
alaten [dat]	
जयमङ्गल [सूरि] ६३ जयसिंह [सिद्धराज] ५५, ६०, ७१, ७६	1
6 1 2	
and [Net]	
and and	
जाम्ब [मंत्री] १२, १३, ६५ जामदम्य	
जालन्धर [देश]	4
जावाछिपुर १०१	
andino34	1
जाह्नवी ११४ जिन ६२,८१	200
जिनदत्तसूरि १०१	100
madualit	

जिनधर्म :	30, 43
जिनप्रासाद	1923
जिनपूजा	48
जिन बिम्ब	90, 920
	३७, ३९, ६८, ७८,
20 00	63, 938
जिनेन्द्रव्याकरण	Ę0
जीमृतवाहन ।	903
जेसल [जयसिंह, सिंद	
जासक ि जनावह, ति	७५
जैत्रमृगारि [जयसिंह	
AND REAL PROPERTY AND ADDRESS OF THE PARTY O	" "
जैत्रसिंह [तेजःपालपुः	. 1
	त] ८, १३, ३६,
	६३, ९४, ९७, १०७
जैनप्रासाद	२८, ६१, ६२, ६३
ARROW TO THE REAL PROPERTY OF THE PARTY OF T	0, 88, 900, 998
जैनविचारप्रन्थ	३७
जैनागम 💮	63
जैनाचार्य	97, 900, 996
जैनालय	36
जोगराज	98
ज्ञानसागर [मुनि]	90
3.50	A STATE OF THE STA
3	A
	a militar
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार	4
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार	\$ 93
झाळा [ज्ञाति] झोळिकाविहार	्र इ
झाळा [ज्ञाति] झोळिकाविहार	९३ ड ान्धिविप्रहिक] ३०,
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स	९३ ड निधविप्रहिक] २०, ३१, ३३, ३४
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश]	९३ ड निधविप्रहिक] ३०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९ २
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश]	९३ ड ान्धिविप्रहिक] २०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश]	९३ इ इश्चिविम्रहिक] २०, ३१,३३,३४ ४९,६४,९२
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल दिश] टक्क [पर्वत] दिल्ली [नगरी]	९३ इ इन्हिंचवित्रहिक] २०, ३१,३३,३४ ४९,६४,९२ इ
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल दिश] टक्क [पर्वत] दिल्ली [नगरी]	ड हिंचवित्रहिक] २०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ १९९ ९५
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल दिश] टक्क [पर्वत] दिल्ली [नगरी]	९३ इ इ १, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ १ ११९ १ ११
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डङ्क [पर्वत] डिल्ली [नगरी]	९३ हिंचविग्रहिक] ३०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ १९९ ९५
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डङ्क [पर्वत] दिल्ली [नगरी]	ड हिध्यविप्रहिक] २०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ ह ११९ ९५
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डक्क [पर्वत] डिल्ली [नगरी] तापसी दिक्षा तारङ्गदुर्ग तिलकमश्रसी [कथा]	ड [निधविप्रहिक] २०, ३१,३३,३४ ४९,६४,९२ इ ११९ १५ १५ १५,२२,३१
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डक्क [पर्वत] ढिल्ली [नगरी] तापसी दिक्षा तारङ्गदुर्ग तिलकमश्ररी [कथा] तिलङ्ग [देश] तङ्ग [समट]	९३ हिंचिविम्रहिक] ३०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ ११९ ९५ ११, ११, १२, ३१
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डङ्क [पर्वत] डिछी [नगरी] तापसी दिक्षा तारङ्गदुर्ग तिलकमश्रसी [कथा] तिलङ्क [देश] नुङ्ग [सुभट]	ड हिचवित्रहिक] २०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ ४९, ६४, ९२ १९, ६५, ९१ १०, २२, ३१ १०, ११, ११७, ११८
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] ढङ्क [पर्वत] ढिछी [नगरी] तापसी दिश्चा तारङ्गदुर्ग तिलकमश्चरी [कथा] तिलङ्क [देश] नुङ्क ९५	ड [निधविप्रहिक] २०, ३१,३३,३४ ४९,६४,९२ १९,६४,९२ १९,६४,९२ १९,६४,९२ १९,११,९१ १९,११,९१ १९,११
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डङ्क [पर्वत] ढिङ्की [नगरी] तापसी दिक्षा तारङ्गदुर्ग तिलकमअरी [कथा] तिलङ्ग [देश] नुङ्क	ह [निधविम्रहिक] ३०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ १९, ६४, ९२ १९, ११, ११ १०, २२, ३१ १०० ९८, ९९, १०३–५
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डङ्ग [पर्वत] ढिङ्घी [नगरी] तापसी दिश्चा तारङ्गदुर्ग तिलकमञ्जरी [कथा] तिलंङ्ग [देश] नुङ्ग [सुमट] नुङ्क देजांपाल	ह [निधविम्रहिक] ३०, ३१, ३३, ३४ ४९, ६४, ९२ १९, ६४, ९२ १९, ११, ११ १०, २२, ३१ १०० ९८, ९९, १०३–५
झाला [ज्ञाति] झोलिकाविहार डामर (दामर) [स डाहल [देश] डङ्क [पर्वत] ढिङ्की [नगरी] तापसी दिक्षा तारङ्गदुर्ग तिलकमअरी [कथा] तिलङ्ग [देश] नुङ्क	ड [निधविप्रहिक] २०, ३१,३३,३४ ४९,६४,९२ १९,६४,९२ १९,६४,९२ १९,६४,९२ १९,११,९१ १९,११,९१ १९,११

	त्रिपुरुष [प्रासाद, धर्मस्थान] 1 90, 90,
1	43, 69, 69
1	त्रिभुवनपाल ७७
1	
1	
1	त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र (१५०८६, १२८
1	त्रैलोक्यपाद १२३
1	Service Williams
1	थाहड (१) [बाहड, टिप्पणी] ६९
1	द
1	दक्षिण [देश]
-	दक्षिणापथ २२
	दण्डक [राजपुत्र]
1	दण्डाहि [देश ?] ५३
	द्धीचि [ऋषि] १०३, ११५
The same	दरिद्रपुत्रक
1	दशस्य
1	दशवैकालिक [सूत्र] ३६
1	दससिरु (दशशिरस्, रावण) २३
1	दहमुहु (दशमुख ")
1	दान्ता [श्रेष्ठी]
	dua [NOI]
	दामर [सान्धिवित्रहिक] ३०-३२, ३४, ५१, ५२
	दिगम्बर (दिग्वासस्) ३२, ६६-६८, ११४,
1	923-933
	30 Helm
	दुर्रुभसर १° दूहाविद्या ९२
	देउलवाडउ ६५
	देमति [राज्ञी]
	देवचन्द्र [सूरि] ६० (टि०), ८३, ९३
	देवराज [पृष्टिकल]
	dating Lieura
1	देवसूरि }[वादी] ६६, ६७, ६९ ६९ देवाचार्य }
	देवादित्य १०६
	द्वारवती [नगरी]
	इयाश्रय [महाकाव्य] ६१
	a
	धनद १२३, १२४
	Mark /
	धनपति १९० धनपाल [कवि] ३६-४२
	धनेश्वर १२०
	धरणिग १०५
	धरणेन्द्र १९२०
	GIVING

ATT I					
धर्म [वादी]	. 89	नेमि [नाथ, जिन]	६५, १९०	वृक्ष	. 94
धर्मदेव	9	नेमिनाथ-प्रासाद	. 99	पृथ्वीराज [सपादलक्षीय]	
धर्मवहिका	20	नेमिनाथविम्ब	909	-2	• 996
धर्मशिला	64	ų	the state of	प्रतापदेवी	20
धाता (विधाता)	94	पञ्चप्राम	908	प्रतिष्ठानपुर	do.
धामणडिल [प्राम]	933	पञ्चासर [प्राम]	92, 93	प्रद्युन्नाचार्य	49
धारा [नगरी] १३, २०,		पञ्चासरचैत्य	93	प्रबन्धचिन्तामणि [प्रन्थ]	9, 924
89, 84, 86, 4		पत्तन [अणहिलपुर पा	टण] १३, १४, १५,	प्रबद्धशत [प्रन्थविशेष]	90
धारा [पणस्री]	35		५३-५५, ५८-६२,	प्रभासक्षेत्र	69, 909
धारादुर्ग	46,49	६५, ६६,	६९, ७७, ८२-८४,	प्रवर नगर	9
धारानाथ	- 64	60,69-	99, 98, 96	प्राकृत [भाषा]	88,68
धारापति	७६	पत्तन-पाटलीपुत्र	904	प्राकृतसूत्र	४६
धाराश्रेष्ठी	933, 933	पत्तन-सोमनाथ	909	प्राग्वाट [वंश]	96
भुन्युक्क ो हिन्सरी	63	पद्माकर	६० (हि०)		3
धुन्धुका } [नगर]	53	पद्मावती [देवी]	998	प्रियङ्कमञ्जरी प्रियन्नत	63
न		पम्पा [सरोवर]	63		-41
नगरमहास्थान	42	परपुरप्रवेशविद्या	4, 904	फ	- 33
नगरपुराण	6 2	परमाईं [चपति]	90, 998-994	फूलड [पशुपाल]	96
नन्द [नृप]	904, 996	परमार [वंश]	96, 29, 48, 04	ब	
निद्वर्धन	992	परमार राजपुत्र	99	बप्पभट्टिसूरि	923
नन्दी	38	परमाईत [बिहद]	७७, ८६	बम्बेरानगर	98
नन्दीश्वरावतार [प्रासाद]	900	पराशर [ऋषि]	६० (हि०), ८२	बर्बर [वेताल]	७३, ७६
नल [चपित]	38	पहीव्राम	900	बिछ [राजा]	6, 98, 994
नरवर्मा	७६	पाटलीपुत्र [पत्तन]	904, 996	बहार [चपति]	94
नरवाहन [खङ्गार]	48	पाणिनि [व्याकरण]	69, 939	बाउलाग्राम	33
नर्भद्र	69	पाण्डव	88	बाण [किव]	88
नयचक [प्रन्थ]	900	पाण्ड्यनृप	२७	बारप [सेनापति]	94, 90
नवघण (°न)	68, 64	पाताक	900	बालचन्द्र [पण्डित]	903
नवाङ्गवृत्ति [प्रन्थ]	900, 920	पादलिसपुर	900, 998		30
नहुष [राजा]	25	पापखड [हाह]	- 69	बाल-मूलराज	
नाइकिदेवी	90	पापघट	80	बाहड (वाग्भट) [मंत्री]	44
	, 998, 980	पारूथक [द्रम्मविशेष] 93	बाहडपुर	03
नाचिराज [कवि]	40	पार्थकथा	994	बाहुलोड [नगर]	५४, ५७
नाडोल [प्राम]	६० (टि०)	पार्वती	36	बाहुलोडकर	46
नाणाग्राम	89	पार्श्वनाथ [जिन, तीर्थ	1] 60, 920	बीज [राजपुत्र]	94
नाभाग [रूपति]	25	पार्श्वनाथप्रतिमा	93	बुद्ध [देव]	900
नाभि [रूपति]	47, 43	पार्श्वनाथबिम्ब	920	बृहस्पति [गण्ड]	68, 64, 89
नाभिभू [प्रथमजिन]	9	पाछिताणक [स्थान]		बृहस्पतिमत	909
नारय (नारद)	6	पालिता (पादलिसा			£₹, £8, 900
नारायण	90	पावक [पर्वत]	900	ब्रह्मपुरी	33
नास्तिक [दर्शन]	63	पाहिणि	69,63	ब्रह्म-प्रासाद	£ ₹
. नीतिशास्त्र	98	पीपलुका [तडाग]	93	ब्रह्मा	64
नीलक्ण्ठ [महादेव]	88	पुरवसार	111	ब्राह्म [दर्शन]	LÉ S3
नीलकण्डेश्वर	43	पुस्कर	७६	ब्राह्मी [देवी, सरखती]	1903
		0	94	माला [प्या, वरवाता]	

प्रबन्धचिन्तामणिविशेषनामसूचिः ।

Carling to the same	• н		मारव ९५
भक्तामर स्त्रोत्र ४५	मख(मका)तीर्थं	903	मालदेव 900
भहमात्र • १,२,८	मण्डलीकसत्रागार [बि		
भहारिका-भीरूआणी - ५३	मण्डलीनगर	90	मालवक } [देश, मण्डल] १९-२२,२५,
भद्दारिका-योगीश्वरी 9४	मतिसागर	999	३२, ४५, ५१, ५८, ५९,
भद्रबाहु [स्रि] ११८, ११९	मथुरा [पुरी]	93	६१, ६२, ७१, ७४, ७६,
भरत [नृपति] ६२, ६३, ८६, ८७	मद्नपाछ	५५, ५६	७८, ८१, ९५, १२१
भरतखण्ड ६२	मदनराज्ञी	46	मालवपति ३१, ९७
भर्तृहरि १९१	मदनरेखा	996	मारुविक मारुवी
भव [शिव] ६३, १२३	मदनशङ्करप्रासाद	२०	मालवीय ४६
भवानी १२३	मध्यदेश"	३६, ७२	मालिम १०३
भागीरथी १२७	मनु	F3	माहेच १९
भारत (महाभारत) १, १०७	मम्माण [खनी]	८७, १०३	मिथिला १३
भारती ४२, ५०, १०७	मयणञ्जदेवी '	18, 40, 40, 08	मुझ [राज, चृप] २०-२५, २८, ३१, ५०
भारूयाड [साखड]	मयूर [किव]	88	मुआड [मंत्री] ५४, ५९
भार्गव ११५	मरुदेव	£3	,, [महोपासक] ९९
भिल्लमाल ३६	मरुदे वि	63	मुआलदेव १५
भीम, भीमसेन २८, ९७	मरुदेश रे	62	मुञ्जालदेव-प्रासाद १७
भीम, भीमदेव [चौछक्य १] २०, २५,	मरुमण्डल ∫	५६, १०७	,, स्वामी ,, ५६
२८, ३३, ३४, ४५, ४६,	मस्वृद्ध	98, 900	मुणाळवई (मृणाळवती) २३
५१-५४, ७७	मकधारी [बिहद]	40	मुनिदेवाचार्थ ६९
भीमदेव [चौछुक्य २] ९७,९८	मह्रवादी [सूरि]	900	मुनिसुत्रत [जिन]
भीमडीयाक (टिप्पणीगत) ३१	मिल्लिकार्जुन	60, 69, 84	मुरारि ३९
भीमेश्वरदेव • ५३	महणका	6, 89, 89	मूलराज [चालुक्य १] १६-१९,३९,६१,९५
भीरूआणी [भट्टारिका]-प्रासाद ५३	महाकाल	The second secon	मूलराज [बाल, "१] ९६
भूणपाल १०२	महाकाल-प्रासाद	३० (टि॰), ६१ ८५	मूलराज, कुमार
भूणपाळेश्वर-प्रासाद १०२	महादेव	996	मूलराजवसहिका १७
भूपछ [कुमारी]	महानन्द	83	मृळेश्वर-प्रासाद १७
भूय [ग] डदेव १४, १५	महाभारती कथा	49	मृणालवती २३
भूय [ग] डेश्वर-प्रासाद १४, १५	महाराष्ट्र [देश] महालक्ष्मी [देवी]	şv.	मेघनाद १२२
भूयराज ११, १५	महावीर [जिन]	60	मेरुतुङ्गाचार्य १, ६९
ऋगुपुर ८८, १८२	महावीरचैत्य	900	मेवाड [देश]
भैरव १२३	मही नदी	88	मोढ वंश ८३
भैरवदेवी ५५	महेश्वर	64	मोढनसहिका ८३
भैरवानन्द [योगी]	महोदय	७६	मोढेरपुरावतार [प्रासाद]
भोगपुर	माघ [कवि, पण्डित]	₹४-३६, 90२	इलेस्क ७३, ११७, ११८
भोगीन्द्र १०६	माङ्ग [झाला]	७२	उ रहेंच्छदेश
भोज, भोजदेव २२, २५, २६, २८,	माङ्गस्थिण्डल	७२	,, मण्डल १०८
३०, ३१–३६, ३९, ४१,	माणिक्य [पण्डित]	\$,, राजा ९७
४३, ४५-४७, ४९-५१, ५२,	माणिकड पछेवडड	69	य य
१०४, १०५, १२१	मानतुङ्गाचार्य	88	यमुना [नदी]
March 111 and 12	मानस [सरोवर]	43	यशःपटह [हस्ती]
मायदेव (माजदेव)	मान्धाता [नृपति]	82	यशश्चन्द्र [गणी] ८२,८८
भंभेरी [नगरी]			

		A STATE OF THE PARTY OF THE PAR
बशोधवल ५९	ज़ुबर, १२३	वस्तुपाल [महामाल] ९८, १००, १०२,
वशोभद्र [सूरि]	रोहक [महामाल्य]	1,903,905
यशोराज १८	रोइण, रोइणाचल १, ३	वारभट [मंत्री] । ५६,८६,८७
यशोवमी ५८-६१, ७४, ७६	S and man .	EN
यशोवीर १०१, १०२	लंक [गड] (लड्डा) २३, ५८	,, • (लघु, बृहत्) [बैद्य]
युगादिदेव [जिन] ४५, ६६, ८६,	क्रवंखड (लाखाक)) क्राक्ट किया १९	,, [बैद्यक प्रन्थ] । १९
904, 900	लक्ष ,, }	वाणारसी [नगरी]
युविधिर २३,८२	लक्षराज ,,	29,998
युकावहार ९१	ळक्ष्मणसेन - ११२	वादिवेतालीय [विरुद]
योगराज	लक्ष्मी	वामराशि [विप्र]
योगशास्त्र ८६, ९०, ९२, १०८	व्यक्तापात	वायटीय [गच्छ]
सोगीश्वरि [भट्टारिका]-प्रासाद १४	लप (ख) णावती [पुरी]	वायटीय जिनायतनः
T	लघु भैरवानन्द [योगी] ै ६० (टि॰)	वाराही प्राम (१०००), ७१
रघु [कुल, राजा] ७३, ८६	ळघु वारभट [वैद्य]	वाराहीय व्रच
रङ्क [वणिक्] १०८, १०९	लङ्का [नगरी] १३, ३२, ३९, ६६, ७२	वाराही संहिता [प्रथ]
रणसिंह ११९	छच्छि (लक्ष्मी)	वालाक [देश]
रति (भश्रामिक्षाक्षेत्र) क्षामान्युः	क्लितसर क्लिका अनुभवन	वाल्मीकि [ऋषि]
्रतिरमण ३९	ळवणप्रसाद [राजा] ९४, ९४, १००,	वासाक [नागराज]
रत्नपरीक्षा प्रन्थ	19 15 19 1903, 908	वासुदेव
रतप्रभ [पण्डित]	लाखाक [फुलउत्र] १८, १९	विक(क)मकाल १५,१९९
-रतमाल [पुर]	लाछि [छिम्पिका]	विक्रम] [नृप] २, ४, ६, ७, ९
रत्नशेखर १०९, ११०	लाट [देश] ३१, ९५	विक्रमार्क
रताकर [पण्डित] ६७	लुद्धिर १	विक्रमादिस 3, ८
रतादित्य	, लीला [ठकुर, राजवैद्य]	विक्रमार्क संवत्सर • १३
राज [राजपुत्र, क्षत्रिय] १५	लीलादेवी १५	विप्रहराज
राज्ञघरह [विरुद] ९४	ल्णिग [मंत्री] १००, १०१	विचार चतुर्भुख [बिहद]
राजपितामह [,,] ८०,८१	ळ्णिगवसहि [प्रासाद] भारती के किन्	विजयसेन सूरि ९६, १०४
राजमदनशङ्कर[,,] २०		विजया [पण्डिता] ४३
राजविडम्बन [नाटक] ३१	वटपद [प्राम]	विदिशा [नगरी]
राजशेखर [कवि, अकालजलद]	वडसर "	विद्याधर [मंत्री] , ११३, ११४
राजिराज (?)	वढवाण	विद्यापति [महाकवि]
राम [दाशरथी] १९, २४, ५५, ७३	वडीयार [देश]	निवायक [गणपति] निद्रा ३८
रामचन्द्र [कवि, प्रबन्धशतकर्ता] ६३, ६४	वनराज १२, १३, १४	विनीता [नगरी]
29,90	वयज्ञहदेव [तपस्तिभूपति]	बिभी गा ५८, ७३
रामेश्वर-प्रासाद ४,9	वयज्ञ देव [प्रतीहार] ९७	विमल्जीरि ८६, १०७
शवण [लङ्कापति] २४,२८	वररुचि [पण्डित] ३, ४७	विमलवसहिका १०१
राष्ट्रकृट [वंश] ९८	वराहमिहिर [पण्डित] ११८, ११९	विमलवाहन ६३
रव	वृद्धमानपुर ६४,८६,१२५	विरिश्चि १९६
रुद्रमहाकाल-प्रासाद		विरहक [वृक्ष विशेष] ८०
रुद्राद्श्य } [मंत्री] २१, २३, २३	55 - C - C - C - C - C - C - C - C - C -	विशाला [नगरी] ३६
रेवा [नदी] ९, ७५	THE PARTY BOOK TO A STATE OF THE PARTY OF TH	विशोपक [देश?] ५३ विश्वल ९०
रैवन)	वरुमीभंग हाहास- १०७-९, १२२	A DE TOTAL OF A STATE
रैवर्तक [पर्वत] ६५, ८७, १०८,	बल्लभराज २०	विश्वामित्र (टि॰), ८२
649		triade 1
		The state of the s

ACC NO P 122

